Table of Contents

अध्याय 1

अध्याय दो

अध्याय 3

अध्याय 4

अध्याय 5

अध्याय 6

अध्याय 7

अध्याय 8

अध्याय 9

अध्याय 10

अध्याय 11

अध्याय 12

परमेश्वर का राज्य

यह आपके भीतर है

ईसाई धर्म एक रहस्यवादी धर्म नहीं है

लेकिन जीवन के एक नए सिद्धांत के रूप में

रूसी से अनुवादित

लियो टॉल्स्टॉय

द्वारा

कॉन्स्टेंस गार्नेट

न्यूयॉर्क
कैसल पब्लिशिंग कंपनी

1894

स्वरूपित और संपादित
WWW.NONRESISTANCE.ORG

2006

द्वितीय

अंतर्वस्तु

अध्याय पृष्ठ

प्रस्तावना v

परिचय vi

1. बुराई का बलपूर्वक प्रतिरोध न करने का सिद्धांत 1
इसकी स्थापना के समय से ही कुछ ही पुरुषों ने इस पर विश्वास किया है।
ईसाई धर्म का

2. बुराई के प्रति अहिंसा के सिद्धांत की आलोचनाएँ 13
विश्वासियों और अविश्वासियों दोनों की ओर से बल प्रयोग

3. विश्वासियों द्वारा ईसाई धर्म को गलत समझा जाना 21

4. विज्ञानियों द्वारा ईसाई धर्म को गलत समझा गया 37

5. हमारे जीवन और हमारे ईसाई धर्म के बीच विरोधाभास 48
अंतरात्मा की आवाज

6. युद्ध के प्रति वर्तमान समय के पुरुषों का दृष्टिकोण 58

7. अनिवार्य सेवा का महत्व 72

8. बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने का सिद्धांत अवश्य लागू होना चाहिए 81
आज के समय के पुरुषों द्वारा इसे अनिवार्य रूप से स्वीकार किया जाएगा

9. ईसाई जीवन अवधारणा की स्वीकृति से 92

हमारे मूर्तिपूजक जीवन के दुखों से मनुष्यों को मुक्ति दिलाओ

10. बुराई को शारीरिक बल से दबाया नहीं जा सकता। 104
सरकार – मानवता की नैतिक प्रगति न केवल सत्य की व्यक्तिगत पहचान से होती है, बल्कि
साथ ही जनमत की स्थापना के माध्यम से भी

11. जीवन की ईसाई अवधारणा हमारे 117 वें युग में पहले ही उत्पन्न हो चुकी है।
समाज, और निश्चित रूप से वर्तमान स्थिति का अंत करेगा।
बल पर आधारित हमारे जीवन का संगठन – यह कब होगा?

12. निष्कर्ष – पश्चाताप करो, क्योंकि स्वर्ग का राज्य निकट है 124

तृतीय

तुम सत्य को जानोगे, और सत्य तुम्हें स्वतंत्र करेगा।

यूहन्ना 8:32

“उनसे मत डरो जो शरीर को मार सकते हैं, परन्तु आत्मा को नहीं मार सकते;
बल्कि उससे डरो जो आत्मा और शरीर दोनों को नरक में नष्ट करने में सक्षम है।
– मत्ती 10:28

“तुम्हें कीमत देकर खरीदा गया है; इसलिए मनुष्यों के दास मत बनो।”
– 1 कुरिन्थियों 7:23

चतुर्थ

प्रस्तावना

जिस पुस्तक का अनुवाद करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, वह निःसंदेह सबसे उल्लेखनीय अध्ययनों में से एक है।
आधुनिक विश्व की सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति के बारे में जो यूरोप में कई वर्षों से दिखाई दे रही है
वर्षों बीत चुके हैं, और इसका प्रभाव निःसंदेह स्थायी और दूरगामी होगा। टॉलस्टॉय की प्रतिभा निर्विवाद है। सभ्य जगत ने उन्हें हमारी पीढ़ी का शायद सबसे महान उपन्यासकार घोषित किया है। लेकिन
उनके बाद के वर्षों में लिखे गए दार्शनिक और धार्मिक कार्यों को कुछ हद तक उदासीन प्रतिक्रिया मिली है।
इन रचनाओं के बारे में बहुत चर्चा हुई है, सिर्फ इसलिए कि ये उनकी रचनाएँ थीं, लेकिन जैसा कि स्वयं टॉल्स्टॉय शिकायत करते हैं, इन पर कभी गंभीरता से विचार-विमर्श नहीं हुआ। मुझे नहीं लगता कि उन्हें इन्हें दोहराना पड़ेगा।
वर्तमान खंड के संबंध में शिकायत। कोई उनके विचारों से असहमत हो सकता है, लेकिन कोई भी गंभीरता से उनकी आलोचना नहीं कर सकता।
उनके द्वारा इतनी सशक्तता से विकसित सामाजिक अवधारणा की मौलिकता, साहस और गहराई से इनकार करना संभव नहीं है।
तर्क। उपन्यासकार ने इस पुस्तक में पैगंबर की धार्मिक भावना और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि को दर्शाया है; फिर भी यह देखकर खुशी होती है कि कलाकार पूरी तरह से विचारक में विलीन नहीं हो गया है। सूक्ष्म सहज बोध
सामाजिक स्थिति के मनोवैज्ञानिक आधार, उत्पीड़कों की मानसिकता के विश्लेषण और
दमन, सत्ता और दासता के नशे, साथ ही अंतिम अध्याय में विशुद्ध रूप से वर्णनात्मक अंश - ये सब केवल 'वॉर एंड पीस' के लेखक से ही आ सकते थे।
यह पुस्तक निश्चित रूप से सभी वर्गों के पाठकों को बहुत कुछ सोचने के लिए प्रेरित करेगी और निश्चित रूप से बहुत आलोचनाओं को जन्म देगी। जो लोग इसकी शिक्षाओं को अस्वीकार करते हैं, उन्हें इसका खंडन करना होगा, यदि वे नहीं चाहते कि इसका बहुत अधिक प्रभाव हो।
कोई भी यह अनुमान नहीं लगा सकता कि अंग्रेज लोग, जो विचारों से धीरे-धीरे प्रभावित होते हैं, और
स्वाभाविक रूप से हर तार्किक चीज़ पर अविश्वास करने वाला, वह अंधेरे में छलांग लगाएगा और टॉलस्टॉय के सिद्धांतों को लागू करने का प्रयास करेगा।
जीवन के सिद्धांत को व्यवहार में लाना। लेकिन कम से कम इस बात का तो यकीन किया जा सकता है कि वर्तमान सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था की उनकी विनाशकारी आलोचना विघटन और सामाजिक परिवर्तन के कार्यों में एक शक्तिशाली ताकत बन जाएगी।
हमारे चारों ओर चल रहे पुनर्निर्माण में। कई गंभीर विचारक, जो टॉलस्टॉय की तरह संघर्ष कर रहे हैं...
हमारे सामाजिक व्यवस्था के विरोधाभासों से बाहर निकलने का रास्ता खोजने वाले लोग उन्हें अपना आध्यात्मिक मार्गदर्शक मानेंगे। लेखक की विशिष्टता उनकी रचना की हर पंक्ति में झलकती है, और यहां तक कि सबसे पूर्वाग्रही व्यक्ति भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।
उनकी सच्चाई, निष्ठा और गहन लगन का आकर्षण। जो कुछ भी दिल से आता है, वह अद्भुत होता है।
उनकी रचनाएँ, जो मानवता के कष्टों पर क्रोध और दया से भरी हुई हैं, दूसरों के दिलों को छूने में अचूक नहीं होतीं। कोई भी पाठक इस पुस्तक को पढ़े बिना स्वयं को बेहतर और सत्य के प्रति अधिक प्रेमशील महसूस किए बिना नहीं रह सकता।
इसे पढ़ने के बाद।

कई पाठक पुस्तक के शुरुआती अध्यायों से निराश हो सकते हैं। टॉल्स्टॉय सभी को तिरस्कार की नज़र से देखते हैं।
वह पाठक को आकर्षित करने का प्रयास करता है। वह अपने सिद्धांतों की तार्किक नींव रखने से शुरुआत करता है, कम ज्ञात धर्मशास्त्रीय लेखकों के उद्धरणों को एक साथ पिरोता है, और वह अपने स्वयं के विचारों को भी शामिल रखता है।
पुस्तक के उत्तरार्ध के लिए तीक्ष्ण तर्क।
अनुवाद के बारे में एक बात कहना चाहूंगा। टॉलस्टॉय की धार्मिक और दार्शनिक रचनाओं में शैली उनके उपन्यासों से काफी भिन्न है। अब उन्हें अपनी रचनाओं के स्वरूप की परवाह नहीं है, और उनकी शैली
अक्सर लापरवाही से लिखा गया, जटिल और अस्पष्ट होता है। मेरा उद्देश्य मूल रचना का सटीक प्रतिरूप प्रस्तुत करना रहा है।

कॉन्स्टेंस गार्नेट, जनवरी 1894

मेरा उद्देश्य हमेशा से एक ही रहा है – मूल रचना का सटीक पुनरुत्पादन करना – लेकिन स्पष्ट गलतियों को क्यों दोहराना या किसी पुरानी शैली का हठपूर्वक पालन करना, विशेष रूप से अनुवाद में? कृपया देखें
अतिरिक्त टिप्पणियों के लिए 'व्हाट आई बिलीव' की प्रस्तावना देखें। एक बार फिर, कृपया मेरे द्वारा की गई किसी भी त्रुटि को इंगित करें। मैं इन्हें ठीक कर सकता हूँ। यह प्रतिलेख किसी भी कॉपीराइट संरक्षण के अंतर्गत नहीं है। यह मेरी ओर से आपको उपहार है। आप इसे स्वतंत्र रूप से कॉपी, प्रिंट और प्रसारित कर सकते हैं, लेकिन कृपया इसे बदलें या बेचें नहीं।

टॉम लॉक, फरवरी 2006

परिचय

वर्ष 1884 में मैंने 'व्हाट आई बिलीव' शीर्षक से एक पुस्तक लिखी, जिसमें मैंने वास्तव में ईमानदारी से अपनी राय व्यक्त की थी।
मेरे विश्वासों का विवरण।
ईसा मसीह की शिक्षाओं में अपने विश्वास की पुष्टि करते हुए, मैं यह बताए बिना नहीं रह सका कि मैं चर्च के उस सिद्धांत पर विश्वास क्यों नहीं करता और उसे गलत क्यों मानता हूँ, जिसे आमतौर पर ईसाई धर्म कहा जाता है।
मैंने जिन अनेक बिंदुओं पर इस सिद्धांत को मसीह के सिद्धांत से भिन्न पाया है, उनमें से एक यह भी है:
सबसे प्रमुख बात यह है कि बुराई का बलपूर्वक विरोध न करने की कोई आज्ञा नहीं है। चर्च की शिक्षाओं द्वारा मसीह की शिक्षाओं का विकृतीकरण इस बिंदु पर अन्य किसी भी बिंदु की तुलना में अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।
अंतर।
मैं—हम सभी की तरह—पूर्व समय की प्रथाओं और मौखिक एवं लिखित सिद्धांतों के बारे में बहुत कम जानता हूँ।
बुराई का प्रतिरोध न करने के विषय पर। मैं जानता था कि इस विषय पर चर्च के पिताओं - ओरिजन, टर्टुलियन और अन्य - ने क्या कहा था। मैं कुछ तथाकथित संप्रदायों के अस्तित्व से भी परिचित था।
मेनोनाइट, हेर्नह्यूटर और क्वेकर, जो किसी ईसाई को हथियारों का इस्तेमाल करने की अनुमति नहीं देते हैं, और न ही
मैंने सैन्य सेवा में प्रवेश किया; लेकिन मुझे इस बात की बहुत कम जानकारी थी कि इन तथाकथित संप्रदायों ने इस प्रश्न की व्याख्या करने के लिए क्या किया था।
जैसा कि मैंने अनुमान लगाया था, मेरी पुस्तक को रूसी सेंसरशिप द्वारा दबा दिया गया; लेकिन आंशिक रूप से मेरे कारण
साहित्यिक प्रतिष्ठा, आंशिक रूप से इसलिए क्योंकि पुस्तक ने लोगों की जिज्ञासा जगाई थी, यह रूस में पांडुलिपि और लिथोग्राफ प्रतियों में तथा विदेशों में अनुवादों के माध्यम से प्रसारित हुई, और इसने एक ओर से दूसरी ओर
जो लोग मेरे विचारों से सहमत थे, उन्होंने इस विषय पर बहुत सारी जानकारी देने वाले निबंधों की एक श्रृंखला लिखी।
दूसरी ओर, मेरी पुस्तक में प्रतिपादित सिद्धांतों पर आलोचनाओं की एक श्रृंखला है।
मुझे विरोधी और सहानुभूतिपूर्ण आलोचनाओं के साथ-साथ हाल के वर्षों की ऐतिहासिक घटनाओं से भी बहुत कुछ स्पष्ट हुआ; और मैं नए निष्कर्षों और परिणामों तक पहुंचा, जिन्हें मैं अब साझा करना चाहता हूं।
व्याख्या करना।
सबसे पहले मैं बुराई का प्रतिरोध न करने के प्रश्न के इतिहास के बारे में मुझे प्राप्त जानकारी पर चर्चा करूँगा; फिर इस प्रश्न पर आध्यात्मिक आलोचकों, अर्थात् स्वयं को विश्वासी कहने वालों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों पर चर्चा करूँगा।
ईसाई धर्म के लोगों द्वारा, और साथ ही सांसारिक लोगों द्वारा, अर्थात् उन लोगों द्वारा जो ईसाई धर्म को नहीं मानते; और अंत में मैं इन सब बातों के आलोक में उन निष्कर्षों के बारे में बात करूँगा जिन पर मैं पहुँचा हूँ।
हाल के वर्षों की ऐतिहासिक घटनाएँ।

एल. टॉल्स्टॉय

YASNAÏA POLIANA

14/26 मई, 1893

छठी

अध्याय 1

बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने के सिद्धांत का प्रतिपादन एक व्यक्ति द्वारा किया गया है।
ईसाई धर्म की नींव से ही पुरुषों का अल्पसंख्यक वर्ग

'व्हाट आई बिलीव' नामक पुस्तक के बारे में - इससे प्रेरित पत्राचार - क्वेकर्स के पत्र - गैरीसन की घोषणा - एडिन बैलो, उनके कार्य, उनकी कैटेकिज़्म - हेलचिट्स्की का 'नेट ऑफ फेथ' - मसीह की शिक्षाओं को स्पष्ट करने वाली रचनाओं के प्रति विश्व का दृष्टिकोण - डायमंड की 'ऑन वॉर' पुस्तक - मुसर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा - 1818 में सेना में सेवा करने से इनकार करने वाले पुरुषों के प्रति सरकार का दृष्टिकोण - आम तौर पर सरकारों और उदारवादियों का उन लोगों के प्रति शत्रुतापूर्ण दृष्टिकोण जो राज्य हिंसा के कृत्यों में सहायता करने से इनकार करते हैं, और ईसाई अहिंसा की इन अभिव्यक्तियों को चुप कराने और दबाने के उनके सचेत प्रयास।

मेरी पुस्तक पर मिली पहली प्रतिक्रियाओं में से एक अमेरिकी क्वेकर समुदाय के कुछ पत्र थे।
इन पत्रों में, एक ईसाई के लिए युद्ध की गैरकानूनीता के बारे में मेरे विचारों के प्रति उनकी सहानुभूति व्यक्त की गई है और
किसी भी प्रकार के बल प्रयोग के बारे में, क्वेकर्स ने मुझे अपने तथाकथित संप्रदाय के बारे में विस्तार से बताया, जो कि अधिक जानकारी के लिए
दो सौ वर्षों से अधिक समय से वास्तव में वे ईसा मसीह की उस शिक्षा का पालन कर रहे हैं जिसमें बुराई का बलपूर्वक विरोध न करने की बात कही गई है, और वे आत्मरक्षा में हथियारों का प्रयोग नहीं करते हैं। क्वेकर्स ने मुझे अपने पैम्फलेट और पत्रिकाएँ भी भेजीं।
और उन किताबों से, जिनसे मैंने सीखा कि कैसे उन्होंने वर्षों पहले, एक व्यक्ति के कर्तव्य को निर्विवाद रूप से स्थापित कर दिया था।
उन्होंने बुराई का बलपूर्वक विरोध न करने के आदेश का पालन करने के ईसाई धर्म का समर्थन किया और युद्ध और मृत्युदंड की अनुमति देने वाली चर्च की शिक्षा की त्रुटि को उजागर किया।
कई तर्कों और लेखों की एक पूरी श्रृंखला यह दर्शाती है कि युद्ध – यानी पुरुषों को घायल करना और मारना –
- यह शांति और मनुष्यों के प्रति सद्भावना पर आधारित धर्म के साथ असंगत है, क्वेकर्स का मानना है और वे यह साबित करते हैं कि किसी भी चीज ने गैर-ईसाइयों की नजरों में ईसाई सत्य को धुंधला करने में इतना योगदान नहीं दिया है।
और इस अनदेखी ने विश्व भर में ईसाई धर्म के प्रसार में बहुत बाधा डाली है।
स्वयं को ईसाई कहने वाले लोगों द्वारा आदेश देना, और ईसाइयों को युद्ध और हिंसा करने की अनुमति देना।
वे कहते हैं, “ईसा मसीह की शिक्षा, जो हिंसा और तलवार के बल पर नहीं, बल्कि बुराई का प्रतिरोध न करने, कोमलता, नम्रता और शांति के माध्यम से मनुष्यों तक पहुँची, केवल इसी प्रकार से समझी जा सकती है।”
अपने अनुयायियों के बीच शांति, सद्भाव और प्रेम के उदाहरण के माध्यम से यह विश्व भर में फैला हुआ है।
“ईश्वर की स्वयं की शिक्षा के अनुसार, एक ईसाई सभी मनुष्यों के प्रति केवल शांतिपूर्ण व्यवहार कर सकता है, और इसलिए कोई भी सत्ता ईसाई को ईश्वर की शिक्षा के विरुद्ध कार्य करने के लिए विवश नहीं कर सकती।”

और अपने पड़ोसियों के साथ संबंधों में ईसाई के प्रमुख सद्गुण के बारे में।
वे कहते हैं, "राज्य की आवश्यकता का नियम केवल उन्हीं लोगों को ईश्वर के नियम को बदलने के लिए विवश कर सकता है जो सांसारिक लाभों के लिए असंगत को सुलझाने का प्रयास करते हैं; लेकिन एक सच्चे ईसाई के लिए जो यह मानता है कि
ईसा मसीह की शिक्षाओं का पालन करने से उसे मुक्ति मिलेगी, इसलिए राज्य संबंधी ऐसे विचारों का कोई महत्व नहीं रह जाता।
क्वेकरों के कार्यों और उनके कार्यों से और अधिक परिचित होना - फॉक्स, पेन और विशेष रूप से
डायमंड का काम (1827 में प्रकाशित) – ने मुझे न केवल यह दिखाया कि ईसाई धर्म को बल और युद्ध के साथ सामंजस्य बिठाना असंभव है, यह बात बहुत पहले ही स्वीकार कर ली गई थी, बल्कि यह भी कि यह असंगति
यह बात बहुत पहले ही इतनी स्पष्ट और निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुकी है कि कोई केवल यह सोचकर आश्चर्यचकित हो सकता है कि यह असंभव कैसे संभव है।
ईसाई शिक्षा और बल प्रयोग के बीच सामंजस्य स्थापित करने का सिद्धांत, जिसका प्रचार चर्चों में किया जाता रहा है और अभी भी किया जा रहा है, इसके बावजूद कायम रखा जा सकता था।
क्वेकर समुदाय से जो कुछ मैंने सीखा, उसके अतिरिक्त मुझे लगभग उसी समय अमेरिका से भी कुछ जानकारी प्राप्त हुई।
मुझे इस विषय पर एक ऐसे स्रोत से कुछ जानकारी मिली जो मेरे लिए पूरी तरह से भिन्न और पहले अज्ञात था।
अश्वेतों की मुक्ति के प्रसिद्ध समर्थक विलियम लॉयड गैरीसन के पुत्र ने लिखा
मुझे बताया कि उसने मेरी किताब पढ़ी थी, जिसमें उसे अपने पिता द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से मिलते-जुलते विचार मिले थे।
वर्ष 1838 में, और यह सोचकर कि मुझे यह जानना दिलचस्प होगा, उसने मुझे एक घोषणा भेजी या
लगभग पचास साल पहले उनके पिता द्वारा तैयार की गई 'अहिंसा' की घोषणा।
यह घोषणा निम्नलिखित परिस्थितियों में हुई। विलियम लॉयड गैरीसन ने इसमें भाग लिया।
शांति स्थापना समिति में युद्ध को दबाने के साधनों पर हुई चर्चा में

1838 में अमेरिका में मौजूद एक विचारधारा के आधार पर, उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि सार्वभौमिक शांति की स्थापना केवल हिंसा द्वारा बुराई का प्रतिरोध न करने के सिद्धांत की खुली घोषणा पर ही आधारित हो सकती है।
(मत्ती 5:39), अपने पूर्ण अर्थ में, जैसा कि क्वेकरों द्वारा समझा गया था, जिनके साथ गैरीसन संयोगवश थे।
मैत्रीपूर्ण संबंधों पर। इस निष्कर्ष पर पहुँचने के बाद, गैरीसन ने एक घोषणापत्र तैयार किया और उसे समाज के समक्ष प्रस्तुत किया, जिस पर उस समय - 1838 में - कई सदस्यों ने हस्ताक्षर किए थे।

बोस्टन, 1838 में शांति सम्मेलन द्वारा अपनाई गई घोषणापत्र

हम, नीचे हस्ताक्षर करने वाले, इसे अपने प्रति, अपने प्रिय उद्देश्य के प्रति और अपने देश के प्रति अपना कर्तव्य मानते हैं।

जिस वातावरण में हम रहते हैं, उसके आधार पर एक घोषणा प्रकाशित करना जिसमें उन उद्देश्यों को व्यक्त किया गया हो जिन्हें हम पूरा करना चाहते हैं और

हम शांतिपूर्ण सार्वभौमिक सुधार के कार्य को आगे बढ़ाने के लिए जो उपाय अपनाएंगे।

हम किसी भी मानव सरकार के प्रति निष्ठा नहीं रखते। हम केवल एक ही राजा को मानते हैं और

कानून निर्माता, एकमात्र न्यायाधीश और मानव जाति के शासक। हमारा देश ही विश्व है; हमारे देशवासी ही समस्त मानव जाति हैं।

हम अपनी जन्मभूमि से उतना ही प्रेम करते हैं जितना कि अन्य सभी देशों से। अमेरिकी नागरिकों के हित और अधिकार हमारे लिए संपूर्ण मानव जाति के हितों और अधिकारों से अधिक प्रिय नहीं हैं। इसलिए हम किसी भी प्रकार की अपील स्वीकार नहीं कर सकते।

देशभक्ति का उद्देश्य किसी भी राष्ट्रीय अपमान या चोट का बदला लेना है...

हम मानते हैं कि किसी राष्ट्र को विदेशी शत्रुओं से अपना बचाव करने या अपने आक्रमणकारियों को दंडित करने का कोई अधिकार नहीं है, और किसी व्यक्ति को भी अपने मामले में यह अधिकार प्राप्त नहीं है, और इकाई इससे अधिक महत्वपूर्ण नहीं हो सकती।

कुल योग से अधिक महत्व। यदि विदेशों से सैनिक लूटपाट करने के इरादे से उमड़ रहे हों और

यदि जीवन को नष्ट करने का विरोध जनता या न्यायपालिका द्वारा नहीं किया जा सकता है, तो फिर इसका कोई प्रतिरोध नहीं किया जाना चाहिए।

सार्वजनिक शांति या निजी सुरक्षा में बाधा डालने वाले घरेलू उपद्रवी।

यह हठधर्मिता कि विश्व की सभी सरकारें ईश्वर द्वारा स्वीकृत हैं, और यह कि

अमेरिका, रूस और तुर्की में सत्ताधारी सत्ताधारी लोग उसकी इच्छा के अनुरूप ही काम कर रहे हैं, इसमें कोई संदेह नहीं है।

यह अधार्मिकता से भी अधिक हास्यास्पद है। यह हमारे अस्तित्व के निष्पक्ष रचयिता को असमान और अत्याचारी बना देता है। यह दावा नहीं किया जा सकता कि किसी भी राष्ट्र में सत्ताधारी सत्ताधारी ईश्वर की भावना से प्रेरित हैं या उनके उदाहरण से निर्देशित हैं।

शत्रुओं के प्रति मसीह का व्यवहार; इसलिए वे ईश्वर की इच्छा के अनुरूप नहीं हो सकते, और इसलिए

उनकी प्रजा के आध्यात्मिक पुनरुत्थान द्वारा उनका पतन अपरिहार्य है।

हम न केवल सभी युद्धों को, चाहे वे आक्रामक हों या रक्षात्मक, बल्कि सभी प्रकार के युद्धों को भी अईसाई और गैरकानूनी मानते हैं।

युद्ध की तैयारियाँ; हर नौसैनिक जहाज, हर शस्त्रागार, हर किला, हम उसे अईसाई मानते हैं और

गैरकानूनी; किसी भी प्रकार की स्थायी सेना का अस्तित्व, सभी सैन्य प्रमुख, सभी स्मारक

किसी पराजित शत्रु पर विजय के उपलक्ष्य में मनाए जाने वाले सभी समारोह, युद्ध में जीती गई सभी ट्राफियां, सैन्य पराक्रम के सम्मान में आयोजित सभी उत्सव, शस्त्र रक्षा के लिए किए गए सभी विनियोग; हम इनमें से प्रत्येक को अईसाई और गैरकानूनी मानते हैं।

सरकार का वह फरमान जिसमें नागरिकों को सैन्य सेवा करने के लिए बाध्य किया गया था।

अतः हम शस्त्र धारण करना गैरकानूनी मानते हैं, और हम ऐसा कोई पद धारण नहीं कर सकते जो अपने पदाधिकारी पर कारावास या मृत्युदंड के दंड के तहत लोगों को सही कार्य करने के लिए बाध्य करने का दायित्व डालता हो। इसलिए हम

हम स्वेच्छा से सभी विधायी और न्यायिक निकायों से खुद को अलग कर लेते हैं और सभी मानवीय राजनीति का त्याग करते हैं।

सांसारिक सम्मान और अधिकार के पद। यदि हम विधायिका या न्यायालय में स्थान प्राप्त नहीं कर सकते, तो हम किसी अन्य को अपने स्थान पर ऐसे किसी भी पद पर नियुक्त नहीं कर सकते। इसका अर्थ यह है कि हम मुकदमा नहीं कर सकते।

किसी भी व्यक्ति को कानून के तहत उसे वह सब कुछ लौटाने के लिए मजबूर करने का अधिकार है जो उसने हमसे गलत तरीके से लिया हो; यदि उसने हमारी कोई वस्तु जब्त कर ली हो
हम उसे दंड देने के बजाय अपना लबादा भी उसे सौंप देंगे।
“हमारा मानना है कि पुराने नियम की दंड संहिता – आँख के बदले आँख, दाँत के बदले दाँत – को यीशु मसीह ने रद्द कर दिया है, और नए नियम के तहत दंड संहिता के स्थान पर क्षमा प्रदान की जाती है।
उनके सभी शिष्यों को हर हाल में शत्रुओं को दंडित करने का आदेश दिया गया है। धन उगाही करना
शत्रुओं को जेल में डालना, निर्वासित करना या उन्हें मृत्युदंड देना स्पष्ट रूप से क्षमा करना नहीं बल्कि प्रतिशोध लेना है।
मानव इतिहास ऐसे प्रमाणों से भरा पड़ा है जो यह साबित करते हैं कि शारीरिक बल प्रयोग उपयुक्त नहीं है।
नैतिक पुनरुत्थान, और यह कि मनुष्य की पापी प्रवृत्तियों को केवल प्रेम से ही वश में किया जा सकता है; कि बुराई का नाश केवल अच्छाई से ही किया जा सकता है; कि हमें किसी भी प्रकार की शक्ति पर भरोसा करना सुरक्षित नहीं है।

हानि; कि नम्र, सहनशील और दयालु होने में बड़ी सुरक्षा है; कि केवल नम्र लोग ही पृथ्वी के उत्तराधिकारी होंगे; क्योंकि जो तलवार उठाते हैं वे तलवार से ही नष्ट हो जाएंगे।
अतः, सुचारु नीति के एक उपाय के रूप में – संपत्ति, जीवन और स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए – सार्वजनिक शांति और निजी आनंद के लिए – साथ ही राजाओं के राजा और प्रभु के प्रति निष्ठा के आधार पर भी।
महोदय, हम सहर्ष अहिंसा के सिद्धांत को अपनाते हैं, क्योंकि हमें विश्वास है कि यह सभी संभावित उपायों का प्रावधान करता है।
परिणामस्वरूप, वह सर्वशक्तिमान शक्ति से लैस है, और अंततः उसे हर हमलावर शक्ति पर विजय प्राप्त करनी होगी।
हम किसी भी जैकोबिनवादी सिद्धांत का समर्थन नहीं करते। जैकोबिनवाद की भावना प्रतिशोध और हिंसा की भावना है।
और हत्या। यह न तो ईश्वर से डरता है और न ही मनुष्य का आदर करता है। हम मसीह की आत्मा से परिपूर्ण होना चाहते हैं। यदि हम
हम बुराई का मुकाबला बुराई से न करने के अपने मूलभूत सिद्धांत का पालन करेंगे; हम राजद्रोह, देशद्रोह या हिंसा में भाग नहीं ले सकते। हम सरकार के हर अध्यादेश और हर आवश्यकता का पालन करेंगे, सिवाय इसके कि
जो सुसमाचार के आदेशों के विपरीत हैं, और किसी भी स्थिति में कानून के संचालन का विरोध नहीं करते हैं, सिवाय इसके कि
अवज्ञा के दंड को विनम्रतापूर्वक स्वीकार करना।
लेकिन यद्यपि हम शत्रुओं के प्रति अहिंसा और निष्क्रिय समर्पण के सिद्धांत का पालन करेंगे, हम नैतिक और आध्यात्मिक रूप से उच्च और निम्न स्थानों में अन्याय पर प्रहार करने और अपने संसाधनों का प्रयोग करने का संकल्प लेते हैं।
सभी मौजूदा बुराई, राजनीतिक, कानूनी और धार्मिक संस्थाओं के सिद्धांतों को दूर करने और उस समय को शीघ्र लाने के लिए जब इस दुनिया के राज्य हमारे प्रभु यीशु मसीह के राज्य बन जाएंगे। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि
यह स्वयंसिद्ध सत्य है कि सुसमाचार जिस भी चीज़ को संसार के किसी भी काल में नष्ट करने के लिए बनाया गया है, वह इसके विपरीत होने के कारण अब त्याग दी जानी चाहिए। यदि ऐसा होता है, तो तलवारों के प्रहार का समय आ गया है।
हल और भाले में बदल जाएंगे, छंटाई करने वाले औजारों में बदल जाएंगे, और मनुष्य अब युद्ध कला नहीं सीखेंगे।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जो भी इन घातक हथियारों का निर्माण, बिक्री या उपयोग करते हैं, वे इस प्रकार पृथ्वी पर ईश्वर के पुत्र के शांतिपूर्ण शासन के विरुद्ध स्वयं को संगठित करते हैं।

अपने सिद्धांतों को इस प्रकार स्पष्ट करने के बाद, हम उन उपायों को निर्दिष्ट करने के लिए आगे बढ़ते हैं जिन्हें हम अपनाने का प्रस्ताव करते हैं। अपने उद्देश्य को साकार रूप देना।

“हम उपदेशों की मूर्खता के माध्यम से विजय प्राप्त करने की आशा रखते हैं। हम अपने विचारों का प्रचार-प्रसार करने का प्रयास करेंगे। सभी व्यक्तियों के बीच विचार, चाहे वे किसी भी राष्ट्र, संप्रदाय या समाज के किसी भी वर्ग से संबंधित हों। इसलिए हम आगे बढ़ेंगे। सार्वजनिक व्याख्यान आयोजित करना, पर्चे और प्रकाशन वितरित करना, समितियाँ बनाना और प्रत्येक शासी निकाय से याचिका करना हमारा मुख्य उद्देश्य युद्ध की पापपूर्णता और शत्रुओं के प्रति व्यवहार के संबंध में समाज के विचारों, भावनाओं और प्रथाओं में आमूलचूल परिवर्तन लाने के तरीके और साधन तैयार करना होगा।

"अपने सामने मौजूद इस महान कार्य को शुरू करते समय, हम इस बात से अनभिज्ञ नहीं हैं कि इसे आगे बढ़ाने में हमें कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है।"

यह हमें अग्नि परीक्षा की तरह हमारी ईमानदारी की परीक्षा लेने के लिए बुलाया गया है। यह हमें अपमान, आक्रोश, पीड़ा, यहाँ तक कि मृत्यु का भी सामना करवा सकता है। हमें बड़ी मात्रा में गलतफहमी, गलत बयानी और बदनामी की आशंका है।

हमारे विरुद्ध उपद्रव उठ सकते हैं। अभिमानी और पाखंडी, महत्वाकांक्षी और अत्याचारी, प्रधानताएँ

और शक्तियाँ हमें कुचलने के लिए एकजुट हो सकती हैं। उन्होंने मसीहा के साथ भी ऐसा ही व्यवहार किया था, जिनके उदाहरण का हम विनम्रतापूर्वक अनुकरण करने का प्रयास कर रहे हैं। हम उनके आतंक से नहीं डरेंगे। हमारा विश्वास प्रभु में है।

सर्वशक्तिमान ईश्वर में निहित है, मनुष्य में नहीं। मानवीय संरक्षण से मुक्त होने के बाद, विश्वास के सिवा और क्या सहारा दे सकता है?

जो संसार पर विजय प्राप्त करता है? हमें उस अग्नि परीक्षा के विषय में आश्चर्य नहीं करना चाहिए जो हमारी परीक्षा लेने वाली है, लेकिन आनन्द मनाओ क्योंकि हम मसीह के कष्टों में भागीदार हैं।

इसलिए हम अपनी आत्माओं की रक्षा का जिम्मा परमेश्वर को सौंपते हैं। क्योंकि जो कोई अपने घर या

भाई, बहन, पिता, माता, पत्नी, बच्चे या जमीन, मसीह के खातिर, इनमें से कोई भी प्राप्त करेगा।

सौ गुना, और वे अनन्त जीवन के उत्तराधिकारी होंगे।

इस बात पर दृढ़ विश्वास रखते हुए कि इसमें निहित भावनाएँ निश्चित और सार्वभौमिक विजय प्राप्त करेंगी

हम यह घोषणा करते हैं कि, चाहे उनके विरुद्ध खड़ा विरोध कितना भी दुर्जेय क्यों न हो, हम इसके द्वारा अपना संकल्प लेते हैं।

इस पर हस्ताक्षर करते हुए; इसे मानव जाति की बुद्धि और विवेक के समक्ष प्रस्तुत करते हुए, और प्रभु परमेश्वर की शक्ति में, शांतिपूर्वक और नम्रता से परिणाम को स्वीकार करने का संकल्प लेते हुए।"

इस घोषणा के तुरंत बाद गैरीसन द्वारा अहिंसावादी समाज की स्थापना की गई, और एक

अहिंसावादी नामक पत्रिका में, अहिंसा के सिद्धांत का पूर्ण अर्थ और उसके सभी परिणामों के साथ समर्थन किया गया था, जैसा कि घोषणापत्र में प्रतिपादित किया गया था। आगे

मुझे इस संस्था और पत्रिका के अंतिम भाग्य के बारे में जानकारी डब्ल्यू. एल. गैरीसन की उत्कृष्ट जीवनी से मिली, जो उनके बेटे द्वारा लिखी गई थी।

यह संस्था और पत्रिका लंबे समय तक अस्तित्व में नहीं रहीं। गैरीसन के अधिकांश सहकर्मी...

दासों की मुक्ति के आंदोलन में, इस डर से कि 'अनादर-प्रतिरोध' पत्रिका का अति-उग्रवादी कार्यक्रम लोगों को अश्वेतों की मुक्ति के व्यावहारिक कार्य से दूर रख सकता है, उन्होंने इसे त्याग दिया।

घोषणापत्र में व्यक्त किए गए अहिंसा के सिद्धांत का पालन करना, और समाज दोनों

और पत्रिका का अस्तित्व समाप्त हो गया।

गैरीसन की इस घोषणा ने आस्था की स्वीकारोक्ति को इतनी शक्तिशाली और प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया।

पुरुषों के लिए इतना महत्वपूर्ण कि कोई भी यह सोच सकता था कि इसने उन पर गहरा प्रभाव डाला होगा।

लोग उन्हें जानने लगे हैं, और वे पूरी दुनिया में प्रसिद्ध हो गए हैं और हर तरफ चर्चा का विषय बन गए हैं। लेकिन

ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। यह न केवल यूरोप में अज्ञात था, बल्कि गैरीसन के प्रति इतनी उच्च प्रतिष्ठा रखने वाले अमेरिकियों को भी इस घोषणा के बारे में शायद ही कोई जानकारी थी।

अहिंसा के एक और समर्थक को भी इसी तरह नजरअंदाज कर दिया गया है - अमेरिकी एडिन।

बैलू, जिनका हाल ही में निधन हो गया, उन्होंने पचास वर्षों तक इस सिद्धांत का प्रचार किया। अहिंसा के प्रश्न से संबंधित हर चीज के बारे में अज्ञानता कितनी अधिक है, यह इस तथ्य से देखा जा सकता है कि उनके पुत्र गैरीसन,

जिन्होंने मेरे प्रश्न के उत्तर में अपने पिता की चार विशाल खंडों में उत्कृष्ट जीवनी लिखी है।

जब मैंने उनसे पूछा कि क्या अब भी अहिंसा के लिए कोई समाज मौजूद हैं, और क्या इस सिद्धांत के अनुयायी हैं, तो उन्होंने मुझे बताया कि जहाँ तक उन्हें पता है, वह समाज टूट चुका है, और अब उस सिद्धांत के कोई अनुयायी नहीं हैं।

जिस समय वह मुझे पत्र लिख रहे थे, उसी समय मैसाचुसेट्स के होपडेल में एडिन बैलो रह रहे थे, जो

उन्होंने गैरीसन पिता के कार्यों में भाग लिया था और अपने जीवन के पचास वर्ष वकालत करने में समर्पित कर दिए थे।

अहिंसा का सिद्धांत मौखिक और लिखित दोनों रूपों में प्रचलित था। बाद में मुझे बैलू के शिष्य और सहकर्मी विल्सन का एक पत्र मिला और मैंने बैलू से पत्राचार शुरू किया। मैंने बैलू को पत्र लिखा, और

उन्होंने मुझे उत्तर दिया और अपनी रचनाएँ भेजीं। यहाँ उनमें से कुछ अंशों का सारांश दिया गया है:

“यीशु मसीह मेरे प्रभु और गुरु हैं,” बालू ने अपने एक व्यंग्यात्मक निबंध में उन ईसाइयों की असंगति को उजागर करते हुए कहा, जिन्होंने आत्मरक्षा और युद्ध के अधिकार की अनुमति दी थी। “मैंने वादा किया है,

सब कुछ छोड़कर, उसका अनुसरण करने के लिए, अच्छे और बुरे में, मृत्यु तक। लेकिन मैं एक नागरिक हूँ।

मैं संयुक्त राज्य अमेरिका के लोकतांत्रिक गणराज्य का निवासी हूँ; और इसके प्रति निष्ठा रखते हुए, मैंने अपने देश के संविधान की रक्षा करने की शपथ ली है, यदि आवश्यकता पड़े तो अपने प्राणों की आहुति देकर भी। मसीह मुझसे अपेक्षा करता है कि मैं दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करूँ जैसा मैं उनसे चाहता हूँ।

मुझे। संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान मुझसे यह अपेक्षा करता है कि मैं उस समय के दो मिलियन गुलामों के साथ ऐसा करूं।

वहाँ गुलाम थे; अब कोई 'मजदूर' शब्द का प्रयोग करने का साहस कर सकता है) जो कि मेरे द्वारा वर्णित बात के बिल्कुल विपरीत है।
वे मुझसे यही चाहेंगे कि मैं उनके साथ ऐसा ही व्यवहार करूँ – यानी, उन्हें उनकी वर्तमान गुलामी की स्थिति में बनाए रखने में मदद करूँ। और इसके बावजूद, मैं चुनाव लड़ता हूँ या निर्वाचित होता हूँ, मैं मतदान करने का प्रस्ताव रखता हूँ, मैं यहाँ तक कि नियुक्त होने के लिए भी तैयार हूँ। सरकार के अधीन कोई भी पद। इससे मुझे ईसाई होने में कोई बाधा नहीं आएगी। मैं अब भी ईसाई होने का दावा करूंगा।
मैं ईसाई धर्म का पालन करता हूँ, और मुझे मसीह और सरकार के साथ किए गए अपने अनुबंध को पूरा करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।
“यीशु मसीह मुझे दुष्टों का विरोध करने और उनसे आँख के बदले आँख, दाँत के बदले दाँत लेने से मना करते हैं।”
दांत के बदले खून, खून का बदला खून, और जान के बदले जान।
मेरी सरकार मुझसे बिल्कुल विपरीत मांग करती है, और आत्मरक्षा की एक प्रणाली को इस पर आधारित करती है
फांसी का फंदा, बंदूक और तलवार, जिनका इस्तेमाल उसके विदेशी और घरेलू दुश्मनों के खिलाफ किया जाएगा। और वह भूमि भर गई है।
इसी प्रकार फांसी के फंदे, जेलें, शस्त्रागार, युद्धपोत और सैनिक भी मौजूद थे।
हत्या के लिए इस्तेमाल होने वाले इन महंगे उपकरणों के रखरखाव और उपयोग में, हम अपने ऊपर चोट पहुंचाने वालों को क्षमा करने, अपने शत्रुओं के प्रति प्रेम रखने और दूसरों को आशीर्वाद देने जैसे गुणों का पूर्ण रूप से अभ्यास कर सकते हैं।
जो हमें कोसते हैं, उनके साथ भलाई करते हैं, और जो हमसे नफरत करते हैं, उनके साथ भी भलाई करते हैं।
"इसके लिए हमारे पास ईसाई पुरोहितों की एक श्रृंखला है जो हमारे लिए प्रार्थना करते हैं और वध के पवित्र कार्य पर स्वर्ग का आशीर्वाद मांगते हैं।"
मैं यह सब (अर्थात पेशे और व्यवहार के बीच का विरोधाभास) देखता हूँ, और फिर भी मैं अपने पेशे का पालन करता रहता हूँ।
धर्म का पालन करना और सरकार में भाग लेना, और साथ ही साथ एक धर्मनिष्ठ ईसाई होने पर गर्व करना।
मैं सरकार का एक निष्ठावान सेवक हूँ। मैं अहिंसा के इन बेतुके विचारों से सहमत नहीं हूँ। मैं अपनी सत्ता का त्याग नहीं कर सकता और सरकार की बागडोर केवल अनैतिक लोगों के हाथों में नहीं छोड़ सकता।

4

संविधान कहता है कि सरकार को युद्ध घोषित करने का अधिकार है, और मैं इससे सहमत हूँ और इसका समर्थन करता हूँ, और शपथ लेता हूँ कि मैं इसका समर्थन करता रहूँगा। और इसके कारण मैं ईसाई होना नहीं छोड़ता। युद्ध भी एक ईसाई कर्तव्य है।
क्या लाखों साथी मनुष्यों को मारना, महिलाओं का अपमान करना, शहरों को ध्वस्त करना और जला देना तथा हर संभव क्रूरता करना ईसाई धर्म का कर्तव्य नहीं है? अब समय आ गया है कि इन सभी झूठे सिद्धांतों को खारिज कर दिया जाए।
भावुकता। यही चोटों को क्षमा करने और शत्रुओं से प्रेम करने का सबसे सच्चा साधन है। यदि हम इसे केवल इसी तरह करें तो...
प्रेम की भावना के संदर्भ में, इस प्रकार की हत्या से अधिक ईसाई कुछ भी नहीं हो सकता।"
एक अन्य पुस्तिका में, जिसका शीर्षक है "किसी अपराध को सद्गुण में बदलने के लिए कितने पुरुषों की आवश्यकता होती है?", उन्होंने लिखा है कि
कहता है, “एक व्यक्ति हत्या नहीं कर सकता। यदि वह किसी साथी प्राणी की हत्या करता है, तो वह हत्यारा है। यदि दो, दस या सौ लोग हत्या करते हैं, तो भी हत्यारा हत्यारा है।

अगर पुरुष ऐसा करते हैं, तो वे भी हत्यारे हैं। लेकिन कोई सरकार या राष्ट्र जितने चाहे उतने लोगों को मार सकता है, और वह हत्या नहीं बल्कि एक महान और नेक कार्य होगा। बस लोगों को एक बड़े सम्मेलन में इकट्ठा करें।
पैमाने के हिसाब से देखें तो दस हजार सैनिकों की लड़ाई एक साधारण सी कार्रवाई बन जाती है। लेकिन वास्तव में कितने लोग?
क्या ऐसा होना ज़रूरी है? यही सवाल है। एक अकेला व्यक्ति लूटपाट नहीं कर सकता, बल्कि एक संपूर्ण व्यवस्था ही ऐसा कर सकती है।
एक राष्ट्र ऐसा कर सकता है। लेकिन इसे जायज़ ठहराने के लिए वास्तव में कितने लोगों की आवश्यकता है? ऐसा क्यों है कि एक व्यक्ति, दस या सौ लोग ईश्वर के नियम को नहीं तोड़ सकते, लेकिन बड़ी संख्या में लोग तोड़ सकते हैं?
और यहाँ बैलो द्वारा अपने अनुयायियों के लिए रचित धार्मिक शिक्षा का एक संस्करण है:

अहिंसा का उपदेश

प्रश्न: 'अप्रतिरोध' शब्द कहाँ से आया है?
ए. "बुराई का विरोध न करो" (मत्ती 5:39) की आज्ञा से।
प्रश्न: यह शब्द क्या व्यक्त करता है?
ए. यह एक उच्च ईसाई सद्गुण को व्यक्त करता है जिसे मसीह ने हम पर लागू करने का आदेश दिया है।
प्रश्न: क्या 'अप्रतिरोध' शब्द को उसके व्यापकतम अर्थ में लिया जाना चाहिए – यानी, इसका तात्पर्य यह है कि हमें बुराई के विरुद्ध किसी भी प्रकार का प्रतिरोध नहीं करना चाहिए?
ए. नहीं, इसे हमारे उद्धारकर्ता की शिक्षा के सटीक अर्थ में ही लिया जाना चाहिए - अर्थात्, बुराई का बदला बुराई से नहीं चुकाना चाहिए। बुराई। हमें अपनी शक्ति के अनुसार हर उचित तरीके से बुराई का विरोध करना चाहिए, न कि बुराई का।
प्रश्न: ऐसा क्या प्रमाण है जिससे यह सिद्ध होता है कि मसीह ने उस अर्थ में अहिंसा का आदेश दिया था?
ए. यह उनके द्वारा उसी समय कहे गए शब्दों से स्पष्ट होता है। उन्होंने कहा, "तुमने सुना है, ऐसा कहा गया था कि
पुराने समय में, 'आँख के बदले आँख, दाँत के बदले दाँत' कहा जाता था। परन्तु मैं तुमसे कहता हूँ, बुराई का विरोध मत करो। परन्तु यदि कोई तुम्हें दाहिने गाल पर मारे, तो उसे दूसरा गाल भी फेर दो; और यदि कोई तुम्हारा दायाँ गाल छीनने के लिए तुम्हारे विरुद्ध न्यायालय जाए, तो तुम अपना कोट उसे दे दो, अपना लबादा भी उसे दे दो।
प्रश्न: "तुमने सुना है, यह बात पुराने समय में कही गई थी" इन शब्दों में वह किसके बारे में बात कर रहा था?
ए. पुराने नियम में वर्णित कुलपतियों और भविष्यवक्ताओं के बारे में, जिसे इब्रानी लोग सामान्यतः व्यवस्था और भविष्यवक्ता कहते हैं।
प्रश्न: "यह पुराने समय से कहा जाता रहा है" शब्दों में यीशु मसीह ने किन कथनों का उल्लेख किया था?
ए. नूह, मूसा और अन्य नबियों के वे कथन जिनमें वे नुकसान पहुंचाने वालों को शारीरिक क्षति पहुंचाने के अधिकार को स्वीकार करते हैं, ताकि बुरे कर्मों को दंडित किया जा सके और उन्हें रोका जा सके।
प्रश्न: ऐसे कथन उद्धृत कीजिए।
उ. "जो कोई मनुष्य का लहू बहाएगा, मनुष्य द्वारा ही उसका लहू बहाया जाएगा।" (उत्पत्ति 9:6)

“जो कोई किसी व्यक्ति को इस प्रकार मारे कि उसकी मृत्यु हो जाए, उसे निश्चय ही मृत्युदंड दिया जाएगा... और यदि इसके परिणामस्वरूप कोई हानि होती है,

तब तुम जान के बदले जान, आँख के बदले आँख, दाँत के बदले दाँत, हाथ के बदले हाथ, पैर के बदले पैर, जलते हुए के बदले जान दोगे।

"जले के बदले घाव, और चोट के बदले चोट।" (निर्गमन 21:12,23-25)

“जो कोई किसी मनुष्य की हत्या करेगा, उसे निश्चय ही मृत्युदंड दिया जाएगा। और यदि कोई मनुष्य अपने पड़ोसी को कलंकित करे, जैसा उसने किया है, तो उसके साथ भी वैसा ही किया जाएगा: जैसे घाव के बदले घाव, आँख के बदले आँख, और दाँत के बदले दाँत।” (लैव्यव्यवस्था) 24:17,19-20)

तब न्यायाधीश गहन जांच करेंगे; और यदि गवाह झूठा साबित हो जाए, और उसने अपने भाई के विरुद्ध झूठी गवाही दी हो, तो तुम उसके साथ वैसा ही व्यवहार करोगे जैसा उसने अपने भाई के साथ करने की सोची थी।

भाई... और तुम्हारी आँख दया न करे; बल्कि जान के बदले जान, आँख के बदले आँख, दाँत के बदले दाँत, हाथ के बदले हाथ लिया जाएगा।

“हाथ के बदले पैर।” (व्यवस्थाविवरण 19:18,21)

नूह, मूसा और पैगंबरों ने सिखाया कि जो अपने पड़ोसियों को मारता है, अपंग करता है या चोट पहुँचाता है, वह बुराई करता है। ऐसी बुराई का विरोध करने और उसे रोकने के लिए, बुराई करने वाले को मृत्युदंड, अपंगता या किसी अन्य दंड से दंडित किया जाना चाहिए।

शारीरिक चोट। अन्याय का विरोध अन्याय से, हत्या का विरोध हत्या से, चोट का विरोध चोट से और बुराई का विरोध बुराई से होना चाहिए।

बुराई। नूह, मूसा और भविष्यवक्ताओं ने यही सिखाया। लेकिन मसीह इन सब बातों को अस्वीकार करते हैं। सुसमाचार में लिखा है, “मैं तुमसे कहता हूँ, बुराई का विरोध मत करो,” चोट का जवाब चोट से मत दो, बल्कि बार-बार सहन करो।

दुष्ट से हुई हानि। जो अनुमत था, वह निषिद्ध है। जब हम समझते हैं कि किस प्रकार का

उन्होंने जिस प्रतिरोध की शिक्षा दी, हम अच्छी तरह जानते हैं कि ईसा मसीह ने किस प्रकार के प्रतिरोध को मना किया था।

प्रश्न: तो क्या प्राचीन काल में लोग चोट से चोट का प्रतिरोध करने की अनुमति देते थे?

ए. हाँ। लेकिन यीशु इसकी मनाही करते हैं। किसी भी परिस्थिति में ईसाई को अपने पड़ोसी को जान से मारने का अधिकार नहीं है।

उसने उसके साथ बुराई की है, या बदले में उसे चोट पहुँचाने की कोशिश कर रहा है।

प्रश्न: क्या वह आत्मरक्षा में उसे मार सकता है या घायल कर सकता है?

वर्ष।

प्रश्न: क्या वह न्यायाधीश के समक्ष शिकायत दर्ज करा सकता है कि जिसने उसके साथ अन्याय किया है उसे दंडित किया जाए?

ए. नहीं। वह दूसरों के माध्यम से जो कुछ भी करता है, वास्तव में वह स्वयं ही कर रहा होता है।

प्रश्न: क्या वह विदेशी शत्रुओं या शांति भंग करने वालों के साथ संघर्ष में लड़ सकता है?

ए. बिलकुल नहीं। वह युद्ध या युद्ध की तैयारियों में कोई हिस्सा नहीं ले सकता। वह इनका उपयोग नहीं कर सकता।

एक घातक हथियार। वह किसी भी तरह से नुकसान का बदला नुकसान से नहीं ले सकता, चाहे वह अकेला हो या दूसरों के साथ, चाहे स्वयं उपस्थित हो या दूसरों के माध्यम से।

प्र. क्या वह स्वेच्छा से मतदान कर सकता है या सरकार के लिए सैनिक मुहैया करा सकता है?

ए. यदि वह मसीह के नियमों के प्रति वफादार रहना चाहता है तो वह ऐसा कुछ भी नहीं कर सकता।

प्र. क्या वह स्वेच्छा से ऐसी सरकार की सहायता के लिए धन दे सकता है जो सैन्य बल, मृत्युदंड और सामान्यतः हिंसा पर आधारित हो?

उ. नहीं, जब तक कि पैसा किसी विशेष उद्देश्य के लिए न हो, जो अपने आप में सही हो और उद्देश्य में भी अच्छा हो।

और साधन।

प्रश्न: क्या वह ऐसी सरकार को कर चुका सकता है?

ए. नहीं। उसे स्वेच्छा से करों का भुगतान नहीं करना चाहिए, लेकिन उसे करों की वसूली का विरोध भी नहीं करना चाहिए।

कर सरकार द्वारा लगाया जाता है और यह प्रजा की इच्छा से स्वतंत्र रूप से वसूला जाता है। किसी न किसी प्रकार की हिंसा का सहारा लिए बिना इसका विरोध करना असंभव है। चूंकि ईसाई इसका उपयोग नहीं कर सकता,

हिंसा के कारण हुए नुकसान की भरपाई के लिए, वह तुरंत अपनी संपत्ति का त्याग करने के लिए बाध्य है।

अधिकारियों।

प्रश्न: क्या एक ईसाई चुनाव में वोट दे सकता है, या सरकार या कानून के कामकाज में भाग ले सकता है?

ए. नहीं। चुनाव, सरकार या विधि संबंधी कार्यों में भाग लेना सरकार में भागीदारी माना जाता है।

बल।

प्रश्न: अहिंसा के सिद्धांत का मुख्य महत्व किसमें निहित है?

ए. इस तथ्य में कि केवल यही व्यक्ति अपने हृदय से बुराई को मिटाने की संभावना प्रदान करता है, और

अपने पड़ोसी से भी। यह सिद्धांत उन कार्यों को करने से मना करता है जिनसे सदियों से बुराई चली आ रही है और

संसार में यह बुराई कई गुना बढ़ गई है। जो किसी दूसरे पर हमला करके उसे चोट पहुँचाता है, वह दूसरे के मन में घृणा की भावना उत्पन्न करता है, जो हर बुराई की जड़ है। किसी दूसरे को इसलिए चोट पहुँचाना कि उसने हमें चोट पहुँचाई है, भले ही हमारा उद्देश्य उसे हराना ही क्यों न हो, घृणित है।

बुराई, उसके और स्वयं के लिए नुकसान को दोगुना कर रही है; यह उसे जन्म दे रही है, या कम से कम उसे मुक्त कर रही है और उकसा रही है।

दुष्ट आत्मा जिसे हम भगाना चाहते हैं। शैतान को शैतान कभी नहीं भगा सकता। त्रुटि को कभी नहीं भगाया जा सकता।

गलती से ही सुधारा जा सकता है, और बुराई को बुराई से नहीं हराया जा सकता।

सच्ची अहिंसा ही बुराई के विरुद्ध एकमात्र वास्तविक प्रतिरोध है। यह सर्प का सिर कुचलने के समान है। यह उसे नष्ट कर देती है।

और अंत में यह बुरी भावना को जड़ से उखाड़ फेंकता है।

प्रश्न: लेकिन यदि अहिंसा के नियम का यही सही अर्थ है, तो क्या इसे हमेशा व्यवहार में लाया जा सकता है?

ए. इसे ईश्वर के नियम द्वारा निर्धारित प्रत्येक सद्गुण की तरह व्यवहार में लाया जा सकता है। एक सद्गुण को

बिना आत्म-बलिदान, अभाव, पीड़ा और चरम मामलों में हानि के बिना सभी परिस्थितियों में इसका अभ्यास किया जाता है।

जीवन ही। लेकिन जो व्यक्ति ईश्वर की इच्छा पूरी करने से अधिक जीवन को महत्व देता है, वह पहले से ही एकमात्र सच्चे जीवन के लिए मृत है।

अपने जीवन को बचाने के प्रयास में वह उसे खो देता है। इसके अलावा, सामान्यतः, जहाँ अहिंसा की कीमत चुकानी पड़ती है, वहाँ

एक जीवन या किसी भौतिक कल्याण के बलिदान की कीमत पर, प्रतिरोध के लिए ऐसे हजारों बलिदानों की कीमत चुकानी पड़ती है।

अहिंसा ही मुक्ति है; प्रतिरोध ही विनाश है।

अन्याय करने की तुलना में न्यायपूर्ण कार्य करना, और चोटों का विरोध करने की तुलना में उन्हें सह लेना कहीं अधिक सुरक्षित है।

हिंसा के साथ, वर्तमान जीवन से जुड़े संबंधों में भी कम खतरा होता है। यदि सभी मनुष्य बुराई का विरोध करने से इनकार कर दें।

बुराई से ही हमारी दुनिया खुशहाल होगी।

लेकिन जब तक केवल कुछ ही लोग ऐसा करते रहेंगे, उनका क्या होगा?

ए. यदि केवल एक व्यक्ति ने ऐसा किया और बाकी सभी ने उसे सूली पर चढ़ाने पर सहमति जताई, तो क्या यह उसके लिए अधिक श्रेष्ठ कार्य नहीं होगा?

क्या अपने शत्रुओं के लिए प्रार्थना करते हुए, अप्रतिरोधकारी प्रेम की महिमा में मरना, मारे गए लोगों के खून से सने सीज़र के मुकुट को धारण करने के लिए जीवित रहने से बेहतर है? हालाँकि, एक व्यक्ति हो या हज़ार व्यक्ति, दृढ़ निश्चय के साथ,

बुराई का मुकाबला बुराई से करने वाले लोग हिंसा का सहारा लेने वालों की तुलना में हिंसा के खतरे से कहीं अधिक सुरक्षित होते हैं।

चाहे पड़ोसी सभ्य हों या असभ्य। लुटेरा, हत्यारा और धोखेबाज उन्हें वहीं छोड़ जाएंगे।

शांति में रहने वाले लोग हथियारों से उनका विरोध करने वालों से पहले मरते हैं, और जो तलवार उठाते हैं वे तलवार से ही मरेंगे, परन्तु जो शांति की तलाश करते हैं, दयालु और अहिंसक व्यवहार करते हैं, क्षमाशील और

घावों को भूलकर, अधिकांशतः शांति का आनंद लेते हैं, या यदि उनकी मृत्यु होती है, तो वे धन्य होकर मरते हैं। इस प्रकार, यदि सभी ने ऐसा किया

यदि अहिंसा का नियम लागू हो जाए, तो स्पष्टतः कोई बुराई या अपराध नहीं होगा। यदि बहुमत इस प्रकार व्यवहार करे, तो वे दुष्टों पर भी प्रेम और सद्भावना का शासन स्थापित कर देंगे, कभी भी बुराई का प्रतिकार बुराई से नहीं करेंगे।

और कभी भी बल का प्रयोग नहीं करते। यदि ऐसे पुरुषों की संख्या अपेक्षाकृत कम होती, तो वे बल का प्रयोग करते।

समाज पर ऐसा सकारात्मक नैतिक प्रभाव पड़ेगा कि हर तरह की क्रूर सजा समाप्त हो जाएगी, और हिंसा और झगड़े की जगह शांति और प्रेम का बोलबाला हो जाएगा। भले ही उनकी संख्या बहुत कम हो, फिर भी वे

दुनिया की अवमानना से बदतर शायद ही कभी कुछ अनुभव किया जाएगा, और इस बीच दुनिया,

हालांकि वह इससे अनभिज्ञ होगा और इसके लिए कृतज्ञ नहीं होगा, फिर भी वह निरंतर बुद्धिमान और बेहतर बनता रहेगा।

इस पर उनकी अदृश्य कार्रवाई। और यदि सबसे बुरे हालात में अल्पसंख्यक समुदाय के कुछ सदस्यों को सताकर मार डाला गया, तो सत्य के लिए मरते हुए वे अपने पीछे अपना सिद्धांत छोड़ जाएंगे, जो उनके रक्त से पवित्र किया गया है।

उनकी शहादत। इसलिए, शांति चाहने वालों को शांति मिले, और सर्वोपरि प्रेम अविनाशी हो।

जो भी आत्मा स्वेच्छा से मसीह के वचन का पालन करती है, उसे यह विरासत प्राप्त होती है, “बुराई का विरोध मत करो।”

“एडिन बल्लू”

पचास वर्षों तक बैलू ने मुख्य रूप से बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने के प्रश्न पर आधारित पुस्तकें लिखीं और प्रकाशित कीं। इन रचनाओं में, जो अपने विचारों की स्पष्टता और
व्याख्या की वाक्पटुता, प्रश्न को हर संभव पहलू से देखा जाता है, और बाध्यकारी प्रकृति
बाइबल को ईश्वर की वाणी मानने वाले प्रत्येक ईसाई पर यह आदेश दृढ़तापूर्वक लागू होता है।
स्थापित हो गया। पुराने और नए नियम से अहिंसा के सिद्धांत पर सभी सामान्य आपत्तियां उठाई गई हैं, जैसे मंदिर से धन विनिमय करने वालों का निष्कासन, इत्यादि।
और फिर उन सभी का खंडन करने वाले तर्क दिए जाते हैं। इस आचरण नियम की व्यावहारिक तर्कसंगतता यह है कि
इसे शास्त्र से स्वतंत्र रूप से दिखाया गया है, और इसकी व्यावहारिकता के विरुद्ध सामान्यतः उठाई जाने वाली सभी आपत्तियों को बताया और खंडित किया गया है। इस प्रकार उनकी एक पुस्तक का एक अध्याय असाधारण मामलों में अहिंसा पर विचार करता है, और
इस संबंध में वह स्वीकार करता है कि यदि ऐसे मामले हों जिनमें अहिंसा का नियम लागू करना असंभव हो
यदि इसे लागू किया जाए, तो यह सिद्ध हो जाएगा कि कानून सार्वभौमिक रूप से आधिकारिक नहीं है। इन मामलों का हवाला देते हुए, वह दर्शाता है कि इन्हीं मामलों में नियम का अनुप्रयोग आवश्यक और तर्कसंगत दोनों है।
प्रश्न का वह पहलू, चाहे वह उनकी ओर से हो या उनके विरोधियों की ओर से, जिसका उन्होंने अपने भाषण में अनुसरण नहीं किया है।
लेखन। मैं यह सब इसलिए बता रहा हूँ ताकि यह स्पष्ट हो सके कि ऐसे कार्यों में मनुष्यों की कितनी रुचि होनी चाहिए।
जो लोग ईसाई धर्म का पालन करने का दावा करते हैं, और क्योंकि यह सोचा जा सकता था कि बैलू का काम काफी प्रसिद्ध होगा, और उनके द्वारा व्यक्त किए गए विचारों को या तो स्वीकार किया जाएगा या खारिज कर दिया जाएगा; लेकिन ऐसा नहीं हुआ।
ऐसा नहीं हुआ है।
गैर-प्रतिरोधक समाज की स्थापना और उनकी घोषणा के माध्यम से गैरीसन, जो इस आंदोलन के संस्थापक थे, के कार्यों ने, यहाँ तक कि क्वेकरों के साथ मेरे पत्राचार से भी कहीं अधिक, मुझे इस तथ्य के प्रति आश्वस्त किया कि
ईसाई धर्म के शासक स्वरूप का बलपूर्वक प्रतिरोध न करने संबंधी ईसा मसीह के नियम से विमुख होना एक त्रुटि है।
यह बात लंबे समय से देखी और बताई जाती रही है, और इसे सुधारने के लिए लोगों ने प्रयास किए हैं और अभी भी कर रहे हैं। बैलू के काम ने इस दृष्टिकोण को और भी पुष्ट किया। लेकिन गैरीसन का भाग्य, और उससे भी अधिक बैलू का भाग्य,
पचास वर्षों तक उसी क्षेत्र में अथक और निरंतर परिश्रम करने के बावजूद पूरी तरह से अनदेखे रहने में

इस दिशा ने मुझे इस विचार में और भी पुख्ता कर दिया कि इस तरह के सभी प्रयासों के बारे में एक प्रकार की मौन लेकिन दृढ़ साजिश मौजूद है।
बैलू की मृत्यु अगस्त 1890 में हुई थी, और एक अमेरिकी पत्रिका में उनके निधन की सूचना प्रकाशित हुई थी।
ईसाई दृष्टिकोण (धार्मिक-दार्शनिक पत्रिका, 23 अगस्त)। इस प्रशंसात्मक समीक्षा में यह दर्ज है कि बल्लू एक पल्ली के आध्यात्मिक निर्देशक थे, और उन्होंने आठ से नौ हजार उपदेश दिए थे।
उन्होंने एक हजार जोड़ों की शादी करवाई और लगभग पांच सौ लेख लिखे; लेकिन एक भी शब्द ऐसा नहीं कहा गया है

जिस उद्देश्य के लिए उन्होंने अपना जीवन समर्पित किया, उसका उल्लेख नहीं किया गया है; यहाँ तक कि 'अहिंसा' शब्द का भी जिक्र नहीं है।
ठीक वैसे ही जैसे दो सौ वर्षों तक क्वेकरों के सभी उपदेशों में और गैरीसन के प्रयासों में भी यही बात थी।
पिता, उनकी संस्था और पत्रिका की नींव, और उनकी घोषणा, ठीक वैसे ही उनके जीवन कार्य के साथ भी है।
बल्लू। ऐसा लगता है मानो इसका कोई अस्तित्व ही नहीं था और यह कभी अस्तित्व में ही नहीं था।
हमारे पास उन रचनाओं की अस्पष्टता का एक आश्चर्यजनक उदाहरण है जिनका उद्देश्य बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने के सिद्धांत का प्रतिपादन करना और इस आज्ञा को न मानने वालों का खंडन करना है।
चेक लेखक हेलचिट्स्की की यह पुस्तक, जिस पर हाल ही में ध्यान गया है और जो अब तक मुद्रित नहीं हुई है।
मेरी पुस्तक के जर्मन भाषा में प्रकाशित होने के कुछ ही समय बाद, मुझे प्राग से एक पत्र मिला, जो वहाँ के विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर का था, जिसमें उन्होंने मुझे हेलचिट्स्की की एक ऐसी कृति के अस्तित्व के बारे में सूचित किया, जो अभी तक छपी नहीं थी।
पंद्रहवीं शताब्दी की चेक भाषा की रचना, जिसका शीर्षक है 'विश्वास का जाल'। प्रोफेसर ने मुझे बताया कि इस रचना में हेलचिट्स्की का योगदान है।
उन्होंने सच्चे और झूठे ईसाई धर्म के बारे में ठीक वही विचार व्यक्त किए जो मैंने अपनी पुस्तक 'व्हाट आई बिलीव' में व्यक्त किए थे। प्रोफेसर ने मुझे लिखा कि हेलचिट्स्की का काम पहली बार प्रकाशित होने वाला था।
यह लेख सेंट पीटर्सबर्ग एकेडमी ऑफ साइंस के जर्नल में चेक भाषा में प्रकाशित हुआ था। चूंकि मुझे यह पुस्तक प्राप्त नहीं हो सकी।
मैंने हेलचिट्स्की के बारे में जो कुछ भी ज्ञात था, उससे खुद को परिचित कराने का प्रयास किया, और मुझे निम्नलिखित जानकारी प्राप्त हुई।
मुझे प्राग के प्रोफेसर द्वारा भेजी गई एक जर्मन पुस्तक और पाइपिन की चेक साहित्य के इतिहास से जानकारी मिली। पाइपिन का विवरण इस प्रकार था:
“विश्वास का जाल मसीह की शिक्षा है, जो मनुष्य को समुद्र की अँधेरी गहराइयों से बाहर निकालने में सहायक होनी चाहिए।”
सांसारिकता और अपने स्वयं के अधर्म के कारण। सच्चा विश्वास ईश्वर के वचन पर विश्वास करने में निहित है; लेकिन अब ऐसा समय आ गया है जब लोग सच्चे विश्वास को विधर्म समझ लेते हैं, और इसलिए यह बताना तर्कसंगत है कि क्या
यदि कोई इसे नहीं जानता है, तो सच्चा विश्वास इसमें निहित है। यह मनुष्यों से अंधकार में छिपा हुआ है, और वे इसे नहीं जानते।
मसीह के सच्चे नियम को पहचानो।
इस नियम को स्पष्ट करने के लिए, हेलचिट्स्की ईसाई समाज के आदिम संगठन की ओर इशारा करते हैं -
उनका कहना है कि यह संगठन अब रोमन चर्च में एक घृणित विधर्म के रूप में देखा जाता है।
प्रारंभिक चर्च सामाजिक संगठन का उनका विशेष आदर्श था, जो समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व पर आधारित था।
हेल्चित्स्की के विचार में, ईसाई धर्म अभी भी इन तत्वों को संरक्षित रखता है, और समाज के लिए केवल अपने शुद्ध सिद्धांतों पर लौटना आवश्यक है ताकि राजाओं और शासकों सहित अन्य सभी प्रकार की सामाजिक व्यवस्था अनावश्यक हो जाए।
पोप अनिवार्य हैं; प्रेम का नियम ही हर मामले में पर्याप्त होगा।
"ऐतिहासिक रूप से, हेलचिट्स्की ईसाई धर्म के पतन का श्रेय कॉन्स्टेंटाइन द ग्रेट के समय को देते हैं, जिन्हें पोप सिल्वेस्टर ने उनके सभी मूर्तिपूजक नैतिक मूल्यों और जीवन के साथ ईसाई चर्च में प्रवेश दिया था।"
बदले में, कॉन्स्टेंटाइन ने पोप को सांसारिक धन और शक्ति से संपन्न कर दिया। उस समय से आगे

ये दोनों सत्ताधारी शक्तियाँ एक-दूसरे की सहायता कर रही थीं, केवल बाहरी वैभव के लिए। धर्मगुरु और चर्च के पदाधिकारी केवल पूरी दुनिया को अपने अधीन करने में ही लगे हुए थे।

उन्होंने अपने अधिकार के आगे झुककर लोगों को एक-दूसरे के विरुद्ध हत्या और लूटपाट के लिए उकसाया, और धर्म और जीवन में उन्हें विवश कर दिया।

ईसाई धर्म को निरर्थक बना दिया। हेल्चित्स्की ने युद्ध करने और अत्याचार करने के अधिकार को पूरी तरह से नकार दिया।

मृत्युदंड; हर सैनिक, यहाँ तक कि 'शूरवीर' भी, केवल एक हिंसक अपराधी है – एक हत्यारा है।"

जर्मन पुस्तक में भी यही विवरण दिया गया है, जिसमें कुछ जीवनी संबंधी विवरण भी जोड़े गए हैं।

हेल्चित्स्की के लेखन से कुछ अंश।

इस प्रकार हेलचिट्स्की की शिक्षाओं का सार समझने के बाद, मैं अकादमी की पत्रिका में 'द नेट ऑफ फेथ' के प्रकाशन की और भी अधिक बेसब्री से प्रतीक्षा करने लगा। लेकिन एक वर्ष बीत गया, फिर दो और तीन वर्ष भी बीत गए।

और फिर भी वह किताब प्रकाशित नहीं हुई। मुझे 1888 में ही पता चला कि उस किताब की छपाई, जो

काम शुरू हुआ था, फिर रुक गया। मैंने छपे हुए प्रतियों को प्राप्त किया और उन्हें पढ़ा। यह हर दृष्टि से एक अद्भुत पुस्तक है।

8

इसका सामान्य सार पाइपिन द्वारा पूर्ण सटीकता के साथ दिया गया है। हेलचिट्स्की का मूल विचार यह है कि ईसाई धर्म ने कॉन्स्टेंटाइन के दिनों में लौकिक सत्ता के साथ गठबंधन करके और आगे भी ऐसा करना जारी रखकर...

ऐसी परिस्थितियों में विकसित होने पर, यह पूरी तरह से विकृत हो गया है, और पूरी तरह से ईसाई होना छोड़ दिया है।

हेल्चित्स्की ने अपनी पुस्तक का शीर्षक "विश्वास का जाल" रखा, और इसके लिए उन्होंने सुसमाचार के उस श्लोक को अपना आदर्श वाक्य बनाया जिसमें शिष्यों को मनुष्यों को पकड़ने वाले मछुआरे बनने के लिए बुलाया गया है; और इस रूपक को विकसित करते हुए वे कहते हैं, "मसीह, द्वारा

अपने शिष्यों के माध्यम से, वह अपने विश्वास के जाल में पूरी दुनिया को फँसा सकता था, लेकिन बड़ी मछली ने जाल तोड़ दिया।

जाल तोड़कर भागने वाले कुछ लोग, और बाकी सभी बड़ी मछलियों द्वारा बनाए गए छेदों से फिसलकर निकल गए, जिससे जाल बिल्कुल खाली रह गया। जाल तोड़ने वाली बड़ी मछलियाँ शासक, सम्राट, पोप आदि हैं।

वे राजा जिन्होंने सत्ता का त्याग नहीं किया है, और सच्चे ईसाई धर्म के बजाय उन्होंने केवल दिखावटी वस्त्र धारण कर लिए हैं।

"इसका मुखौटा।" हेलचिट्स्की ठीक वही सिखाते हैं जो अहिंसक लोग इन दिनों सिखाते आ रहे हैं और सिखाते रहे हैं।

मेनोनाइट्स और क्वेकर्स, और पूर्व में बोगोमिलिट्स, पॉलिसियन्स और कई अन्य लोगों द्वारा। वह सिखाता है कि ईसाई धर्म अपने अनुयायियों से कोमलता, नम्रता, शांति और क्षमा की अपेक्षा रखता है।

चोटों के प्रति सम्मान, चोट लगने पर दूसरा गाल आगे करना, और शत्रुओं के प्रति प्रेम, ये सभी बातें धार्मिक नियमों के प्रयोग के साथ असंगत हैं।

बल का प्रयोग, जो अधिकार की एक अपरिहार्य शर्त है।

हेल्चित्स्की के तर्क के अनुसार, एक ईसाई न केवल शासक या सैनिक नहीं हो सकता; वह यह भी नहीं कर सकता

वह सरकार या व्यापार में कोई भी भूमिका नहीं निभा सकता, यहाँ तक कि भूस्वामी भी नहीं बन सकता; वह केवल एक कारीगर या व्यापारी हो सकता है।

किसान।

यह पुस्तक आधिकारिक ईसाई धर्म पर हमला करने वाली उन कुछ कृतियों में से एक है जो जलाए जाने से बच गई है।

इस प्रकार की तथाकथित विधर्मी रचनाओं को उनके लेखकों सहित जला दिया गया, जिससे अब ऐसी रचनाएँ बहुत कम बची हैं।

प्राचीन कृतियाँ आधिकारिक ईसाई धर्म की त्रुटियों को उजागर करती हैं। इसी कारण से यह पुस्तक विशेष महत्व रखती है।

अकेले। लेकिन हर दृष्टिकोण से इसकी रुचि के अलावा, यह अपने उद्देश्य की गहराई, और जिस राष्ट्रीय भाषा में यह लिखा गया है उसकी अद्भुत शक्ति और सुंदरता के लिए विचार के सबसे उल्लेखनीय उत्पादों में से एक है।

यह लिखा गया है, और इसकी प्राचीनता के लिए भी। फिर भी चार शताब्दियों से अधिक समय से यह मुद्रित है, और है

कुछ विद्वान विशेषज्ञों को छोड़कर, यह बात अभी भी अज्ञात है।

किसी ने सोचा होगा कि क्वेकर्स, गैरीसन, बैलू या अन्य किसी भी प्रकार की ऐसी सभी रचनाएँ

हेल्चित्स्की, सुसमाचार के सिद्धांतों पर आधारित होकर, यह दावा और सिद्ध करते हैं कि हमारी आधुनिक दुनिया

अगर कोई व्यक्ति मसीह की शिक्षाओं के बारे में गलत धारणा रखता, तो वह आध्यात्मिक शिक्षकों और उनके अनुयायियों के बीच समान रूप से रुचि, उत्साह, बातचीत और चर्चा को जागृत कर देता।

इस प्रकार की रचनाएँ, जो ईसाई धर्म के मूल सिद्धांतों से संबंधित हैं, उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे

ऐसा सोचा गया था कि इसकी जांच की गई है और इसे सत्य माना गया है, या इसका खंडन किया गया है और इसे अस्वीकार कर दिया गया है। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ।

ऐसा हो चुका है, और उन सभी रचनाओं का भी वही हाल हुआ है। विभिन्न विचारों वाले लोग, आस्तिक और, हैरानी की बात है, नास्तिक उदारवादी भी, मानो आपसी सहमति से, सभी इन रचनाओं को संरक्षित रखते हैं।

उनके बारे में वही लगातार चुप्पी, और लोगों द्वारा इसके सही अर्थ को समझाने के लिए किए गए सभी प्रयास।

ईसा मसीह के सिद्धांतों को या तो नजरअंदाज कर दिया गया है या भुला दिया गया है।

लेकिन इससे भी अधिक आश्चर्यजनक बात यह है कि दो अन्य पुस्तकें, जिनके बारे में मैंने अपनी पुस्तक के प्रकाशन के समय सुना था, इतना कम ज्ञात होना चाहिए। मेरा मतलब डायमंड की पुस्तक 'ऑन वॉर' से है, जो पहली बार लंदन में प्रकाशित हुई थी।

1824 में लिखी गई डेनियल मुसर की अहिंसा पर लिखी पुस्तक, और 1864 में लिखी गई डेनियल मुसर की अहिंसा पर लिखी पुस्तक, विशेष रूप से आश्चर्यजनक है। यह विशेष रूप से आश्चर्यजनक है कि ये पुस्तकें अज्ञात हैं, क्योंकि अपनी आंतरिक खूबियों के अलावा, दोनों पुस्तकें बहुत अधिक विषयों पर चर्चा नहीं करती हैं।

सिद्धांत के साथ-साथ जीवन में सिद्धांत के व्यावहारिक अनुप्रयोग, सैन्य मामलों के प्रति ईसाई धर्म के दृष्टिकोण के बारे में।

सेवा, जो सार्वभौमिक अनिवार्य सैन्य सेवा के इन दिनों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण और रोचक है।

लोग शायद पूछेंगे, "उस नागरिक को कैसा व्यवहार करना चाहिए जो मानता है कि युद्ध उसके धर्म के विपरीत है जबकि सरकार उससे सैन्य सेवा में प्रवेश करने की मांग करती है?"

मुझे लगता है कि यह प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण है, और इसका उत्तर इन दिनों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

सार्वभौमिक अनिवार्य सैन्य सेवा। सभी लोग – या कम से कम अधिकांश लोग – ईसाई हैं, और सभी पुरुषों को सैन्य सेवा के लिए बुलाया जाता है। एक ईसाई होने के नाते, एक व्यक्ति को इस मांग को कैसे पूरा करना चाहिए? यही इसका सार है।

डायमंड के उत्तर के बारे में:

"उनका कर्तव्य है कि वे विनम्रतापूर्वक लेकिन दृढ़ता से सेवा करने से इनकार कर दें।"

कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो बिना किसी ठोस तर्क के सीधे इस निष्कर्ष पर पहुँच जाते हैं कि

सरकारी उपायों की जिम्मेदारी पूरी तरह से उन पर निर्णय लेने वालों पर होती है, या यह कि

सरकारें और शासक ही अपने नागरिकों के लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा है, इसका निर्णय करते हैं, और नागरिकों का कर्तव्य केवल आज्ञापालन करना है। मेरा मानना है कि इस प्रकार के तर्क केवल मनुष्यों की अंतरात्मा को भ्रमित करते हैं।

मैं सरकार की बैठकों में भाग नहीं ले सकता, इसलिए मैं उसके कुकर्मों के लिए जिम्मेदार नहीं हूं।

बेशक, लेकिन हम अपने कुकर्मों के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। और हमारे शासकों के कुकर्म हमारे अपने बन जाते हैं, यदि हम जानते हुए भी कि वे कुकर्म हैं, उन्हें अंजाम देने में सहायता करते हैं। जो लोग यह मानते हैं कि वे

वे सरकार का पालन करने के लिए बाध्य हैं, और उनके द्वारा किए गए कुकर्मों की जिम्मेदारी उन पर स्थानांतरित हो जाती है।

वे अपने शासकों को धोखा देते हैं। वे कहते हैं, “हम अपने कर्म दूसरों की इच्छा पर छोड़ देते हैं, और हमारे कर्म अच्छे या बुरे नहीं हो सकते; अच्छे कर्मों में कोई गुण नहीं है और बुरे कर्मों की कोई जिम्मेदारी नहीं है।”

क्योंकि ये कार्य हमारी अपनी इच्छा से नहीं किए जाते हैं।

यह उल्लेखनीय है कि सैनिकों को दिए गए निर्देशों में भी ठीक यही बात कही गई है कि वे उन्हें कैसे बनाते हैं।

यह सीखें कि अधिकारी अपने आदेश के परिणामों के लिए स्वयं ही जिम्मेदार है। लेकिन यह सही नहीं है। कोई भी व्यक्ति अपने कार्यों की जिम्मेदारी से बच नहीं सकता। और यह बात स्पष्ट है।

निम्नलिखित उदाहरण। यदि आपका अधिकारी आपको अपने पड़ोसी के बच्चे को मारने, अपने पिता को मारने या

क्या तुम अपनी माँ की बात मानोगे? अगर तुम नहीं मानोगे, तो सारा तर्क ही बेमानी हो जाएगा, क्योंकि अगर तुम एक मामले में शासकों की अवज्ञा कर सकते हो, तो फिर तुम किस हद तक उनकी आज्ञा मान सकते हो?

ईसाई धर्म द्वारा निर्धारित रेखा के अलावा कोई अन्य रेखा नहीं है, और वह रेखा तर्कसंगत और उचित दोनों है।

व्यावहारिक।

और इसलिए हम इसे हर उस व्यक्ति का कर्तव्य मानते हैं जो युद्ध को ईसाई धर्म के विपरीत मानता है।

विनम्रतापूर्वक लेकिन दृढ़ता से सेना में सेवा करने से इनकार कर दें। और जिन लोगों को ऐसा करने का दायित्व सौंपा गया है, वे याद रखें कि एक महान कर्तव्य का निर्वहन उन्हीं पर निर्भर है। विश्व में मानवता का भविष्य, जहाँ तक संभव हो, उन्हीं पर आधारित है।

यह सब पुरुषों पर निर्भर करता है, उनकी अपने धर्म के प्रति निष्ठा पर। उन्हें अपने विश्वास को स्वीकार करना चाहिए और उसके लिए खड़े होना चाहिए, न केवल शब्दों से, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर कष्ट सहकर भी। यदि आप मानते हैं कि ईसा मसीह ने मना किया था...

हत्या करते समय, उन लोगों के तर्कों या आदेशों पर ध्यान न दें जो आपको इसमें शामिल होने के लिए कहते हैं।

बल प्रयोग न करने के इस दृढ़ संकल्प से आप स्वयं पर उस आशीर्वाद को आमंत्रित करते हैं जो उन लोगों को दिया गया है जो "इन बातों को सुनते हैं और उन पर अमल करते हैं", और वह समय आएगा जब दुनिया आपको पहचान लेगी।

मानव जाति के सुधार में सहायक होने के नाते।

मुसर की पुस्तक का नाम है 'अप्रतिरोध अभिकथन, या मसीह का राज्य और इस दुनिया के राज्य पृथक'। यह पुस्तक भी इसी प्रश्न पर केंद्रित है और इसे अमेरिकी सरकार के समय लिखा गया था।

गृहयुद्ध के समय, यह देश अपने नागरिकों से सैन्य सेवा की मांग कर रहा था। और इसमें कुछ मूल्यों का भी समावेश है।

हर समय, इस सवाल से निपटना कि ऐसी परिस्थितियों में लोग प्रवेश करने से कैसे और किस प्रकार इनकार कर सकते हैं।

सैन्य सेवा। लेखक की प्रारंभिक टिप्पणियों का सार इस प्रकार है: “यह सर्वविदित है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में ऐसे कई व्यक्ति हैं जो अंतरात्मा के आधार पर युद्ध में भाग लेने से इनकार करते हैं। उन्हें कहा जाता है...

‘निरक्षिप्त’ या ‘अप्रतिरोधी’ ईसाई। ये ईसाई अपने देश की रक्षा करने से, बोझ उठाने से इनकार करते हैं।

हथियार उठाने या सरकार के आदेश पर अपने शत्रुओं से युद्ध करने के लिए। हाल तक यह धार्मिक झिझक सरकार के लिए एक वैध बहाना प्रतीत होती थी, और इसका हवाला देने वालों को सेवा से मुक्त कर दिया जाता था। लेकिन शुरुआत में

गृहयुद्ध के दौरान इस विषय पर जनमत में काफी हलचल थी। यह स्वाभाविक था कि जो लोग इस विषय पर विचार करते थे, वे ऐसा सोचते थे। अपने देश की रक्षा में युद्ध की सभी कठिनाइयों और खतरों को सहने के अपने कर्तव्य के कारण, उन्हें उन लोगों के प्रति आक्रोश महसूस करना चाहिए जिन्होंने लंबे समय से उनके साथ सुरक्षा के लाभों को साझा किया है।

सरकार, और अब आवश्यकता और संकट के समय में कौन श्रम और खतरों को वहन करने में भागीदार नहीं होगा?

इसके बचाव में। यह तो स्वाभाविक ही था कि वे ऐसे लोगों के रवैये को राक्षसी घोषित करें।

अतार्किक और संदिग्ध।"

हमारे लेखक बताते हैं कि अनेक वक्ताओं और लेखकों ने इस दृष्टिकोण का विरोध करने के लिए आवाज़ उठाई और इसे साबित करने का प्रयास किया।

प्रतिरोध न करने का पाप शास्त्रों और सामान्य ज्ञान दोनों के आधार पर है। और यह बिल्कुल सही था।

यह स्वाभाविक था, और कई मामलों में लेखक सही थे - यानी उन व्यक्तियों के संबंध में जिन्होंने सरकार से प्राप्त लाभों का त्याग नहीं किया और सैन्य कठिनाइयों से बचने की कोशिश की।

सेवा तो है, लेकिन स्वयं अहिंसा के सिद्धांत के संदर्भ में सही नहीं है। सबसे बढ़कर, हमारे लेखक यह सिद्ध करते हैं कि

ईसाई के लिए अहिंसा के नियम की बाध्यकारी प्रकृति पर विचार करते हुए, यह बताया गया है कि यह आदेश पूरी तरह से स्पष्ट है, और प्रत्येक ईसाई पर मसीह द्वारा बिना किसी गलत व्याख्या की संभावना के अनिवार्य किया गया है।

“तुम स्वयं विचार करो कि क्या परमेश्वर से अधिक मनुष्य की आज्ञा मानना उचित है,” पतरस और यूहन्ना ने कहा। और यह

ठीक-ठीक यह सवाल उठता है कि हर उस व्यक्ति का क्या रवैया होना चाहिए जो ईसाई बनना चाहता है, जब उससे सैन्य सेवा के लिए कहा जाता है, जबकि मसीह ने कहा है, "बुराई का बलपूर्वक विरोध मत करो।" सिद्धांत के प्रश्न के संबंध में

लेखक स्वयं इसे पूर्वनिर्धारित मानता है। दूसरे प्रश्न के संबंध में, कि क्या लोगों को अधिकार है...
लेखक इस बात पर विस्तार से विचार करता है कि जो लोग बल पर आधारित सरकार द्वारा प्रदत्त लाभों को अस्वीकार नहीं करते, वे सेना में सेवा करने से इनकार क्यों करते हैं, और इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि कानून का पालन करने वाला एक ईसाई...
ईसा मसीह, क्योंकि वह युद्ध में नहीं जाते, इसलिए उन्हें किसी भी संस्था का लाभ नहीं उठाना चाहिए।
सरकार, अदालतों या चुनावों से उसे कोई लेना-देना नहीं होना चाहिए, और उसे अपने निजी मामलों में अधिकारियों, पुलिस या कानून का सहारा नहीं लेना चाहिए। पुस्तक में आगे चलकर वह पुराने नियम के संबंध पर विचार करता है।
नए दृष्टिकोण में, ईसाइयों के लिए सरकार का महत्व बताया गया है, और कुछ टिप्पणियाँ भी की गई हैं।
अहिंसा का सिद्धांत और उस पर किए गए हमले। लेखक अपनी पुस्तक का समापन यह कहते हुए करते हैं,
“ईसाइयों को सरकार की आवश्यकता नहीं है, इसलिए वे न तो मसीह की शिक्षाओं के विपरीत किसी बात में सरकार का पालन कर सकते हैं और न ही उसमें भाग ले सकते हैं।” वे कहते हैं कि मसीह ने अपने शिष्यों को संसार से बाहर निकाला।
वे सांसारिक सुख-सुविधाओं और सांसारिक सुख की आशा नहीं रखते, बल्कि अनन्त जीवन की आशा रखते हैं। जिस आत्मा में वे रहते हैं उनका जीवन उन्हें हर परिस्थिति में संतुष्ट और खुश रखता है। यदि संसार उन्हें सहन करता है, तो वे हमेशा सुखी रहते हैं। यदि संसार उन्हें शांति से रहने नहीं देता, तो वे कहीं और चले जाते हैं, क्योंकि वे तीर्थयात्री हैं।
वे पृथ्वी पर रहते हैं और उनका कोई निश्चित निवास स्थान नहीं है। उनका मानना है कि "मृतक अपने शवों को दफना सकते हैं।"
मृत।” उनके लिए केवल एक ही चीज़ आवश्यक है, “अपने स्वामी का अनुसरण करना।”
इन दोनों पुस्तकों में ईसाई धर्म के संबंध में प्रतिपादित सिद्धांत के प्रश्न को भी एक तरफ रख दें तो भी...
युद्ध के प्रति उनके कर्तव्यपरायण रवैये को देखते हुए, व्यावहारिक महत्व और तत्काल आवश्यकता को समझना अपरिहार्य है।
प्रश्न का निर्णय करना।
ऐसे लोग हैं, लाखों की संख्या में क्वेकर्स, मेनोनाइट्स, हमारे सभी डौहोबोर्त्सी, मोलोकानी और अन्य जो किसी निश्चित संप्रदाय से संबंधित नहीं हैं, जो मानते हैं कि बल का प्रयोग – और,
परिणामस्वरूप, सैन्य सेवा ईसाई धर्म के अनुरूप नहीं है। परिणामस्वरूप हर साल
रूस में हमारे बीच कुछ ऐसे पुरुष हैं जिन्हें सैन्य सेवा के लिए बुलाया जाता है, लेकिन वे अपनी धार्मिक मान्यताओं के आधार पर सेवा करने से इनकार कर देते हैं। क्या सरकार उन्हें तब छूट देती है? नहीं। क्या वह उन्हें जाने के लिए मजबूर करती है, और
अवज्ञा के मामले में उन्हें दंडित किया जाए? नहीं। 1818 में सरकार ने उनके साथ ऐसा व्यवहार किया था। यहाँ एक उदाहरण है।
कार्स के निकोलस मिराविथोव की डायरी का वह अंश, जिसे सेंसरशिप से मंजूरी नहीं मिली थी और जो रूस में ज्ञात नहीं है:

तिफ्लिस, 2 अक्टूबर, 1818। सुबह कमांडेंट ने मुझे बताया कि एक परिवार के पाँच किसान
टैम्बोफ़ सरकार में एक ज़मींदार को हाल ही में जॉर्जिया भेजा गया था। इन लोगों को सैनिक के रूप में भेजा गया था, लेकिन उन्होंने सेवा करने से इनकार कर दिया; उन्हें कई बार कोड़े मारे गए और कठिन परीक्षाएँ दी गईं, लेकिन
वे सेवा करने के बजाय सबसे क्रूर यातनाओं और यहाँ तक कि मृत्यु को भी सहने के लिए तैयार थे। 'हमें जाने दो,' उन्होंने कहा।

उसने कहा, ‘हमें अकेला छोड़ दो; हम किसी को नुकसान नहीं पहुँचाएँगे; सभी मनुष्य समान हैं, और ज़ार भी हम जैसा ही एक इंसान है; हमें उसे कर क्यों देना चाहिए; मुझे युद्ध में किसी ऐसे व्यक्ति को मारने के लिए अपनी जान जोखिम में क्यों डालनी चाहिए जिसने...
क्या तुमने मुझे कोई नुकसान नहीं पहुँचाया? तुम हमें टुकड़े-टुकड़े कर सकते हो, हम सैनिक नहीं रहेंगे। जो हम पर दया करता है
'सरकार हमें दान तो देगी, लेकिन सरकारी राशन हमें नहीं मिला है और न ही हम उसे चाहते हैं।' ये उन किसानों के शब्द थे, जिन्होंने बताया कि रूस में उनके जैसे अनगिनत किसान हैं।
वे उन्हें चार बार सरकारी मंत्रियों की समिति के सामने लाए और अंत में उन्हें स्थगित करने का निर्णय लिया।
यह मामला ज़ार के समक्ष प्रस्तुत किया गया, जिन्होंने आदेश दिया कि इन्हें सुधार के लिए जॉर्जिया ले जाया जाए, और
उन्होंने सेनापति को आदेश दिया कि वे इन किसानों की मानसिकता में सुधार लाने में मिली क्रमिक सफलता की रिपोर्ट हर महीने उन्हें भेजें।

यह सुधार कैसे समाप्त हुआ, यह ज्ञात नहीं है, क्योंकि पूरी घटना ही अज्ञात थी, जिसे गहन गोपनीयता में रखा गया था।
पचहत्तर साल पहले सरकार का यही रवैया था – और एक महान युग में भी सरकार का यही रवैया रहा है।
कई मामलों को जनता से जानबूझकर छिपाया गया है। और सरकार अब भी इसी तरह व्यवहार कर रही है, सिवाय खेरसोन प्रांत में रहने वाले जर्मन मेनोनाइट्स के मामले के, जिनकी याचिका के खिलाफ अपील की गई है।

11

सैन्य सेवा को उचित आधार माना जाता है। उन्हें अपनी सेवा अवधि पूरी करने के लिए जंगलों में श्रम करना पड़ता है।
लेकिन हाल के मामलों में मेनोनाइट समुदाय के लोगों ने धार्मिक कारणों से सेना में सेवा करने से इनकार कर दिया है।
इन आधारों पर, सरकारी अधिकारियों ने निम्नलिखित तरीके से कार्रवाई की है:
सबसे पहले तो, वे हमारे समय में इस्तेमाल होने वाले हर तरह के दबाव के साधनों का सहारा लेते हैं ताकि ‘सुधार’ किया जा सके।
अपराधी को पकड़ने और उसे 'सुधारने' के लिए, ये उपाय अत्यंत गोपनीयता के साथ किए जाते हैं।
यह जान लें कि 1884 में मॉस्को में सेवा करने से इनकार करने वाले एक व्यक्ति के मामले में, उनके इनकार के दो महीने बाद ही इस विषय पर आधिकारिक पत्राचार एक बड़े फ़ोलियो में संकलित हो गया था, और इसे पूरी तरह से गुप्त रखा गया था।
मंत्रालय के बीच गुप्त।
वे आम तौर पर अपराधी को पुजारियों के पास भेजकर शुरुआत करते हैं, और बाद वाले, यह कहना शर्मनाक होगा,
उसे हमेशा आज्ञापालन के लिए प्रेरित करते रहो। लेकिन चूंकि मसीह के नाम पर मसीह को त्यागने के लिए किया गया प्रोत्साहन अधिकतर असफल रहता है, इसलिए आध्यात्मिक अधिकारियों की नसीहतें प्राप्त करने के बाद, वे उसे भेज देते हैं।
पुलिस को यह मामला सौंप दिया जाता है, और पुलिस को आमतौर पर उसमें कोई राजनीतिक आपत्ति का कारण नहीं मिलता, इसलिए वे उसे भेज देते हैं।
फिर उसे वापस लाया जाता है, और फिर उसे विद्वानों, चिकित्सकों और पागलखाने भेज दिया जाता है। इन सभी उतार-चढ़ावों के दौरान उसे स्वतंत्रता से वंचित रखा जाता है और उसे एक रोगी के रूप में हर प्रकार के अपमान और पीड़ा सहनी पड़ती है।
दोषी अपराधी। (यह सब चार मामलों में दोहराया गया है।) डॉक्टरों ने उसे पागलखाने से छुट्टी दे दी।

और फिर उसे रिहा होने से रोकने के लिए हर तरह की गुप्त चालें चली जाती हैं – जिससे दूसरों को उसकी तरह सेवा करने से इनकार करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके – और साथ ही उसे लोगों के बीच छोड़े जाने से भी बचा जा सके।

सैनिकों को डर था कि कहीं वे भी उससे यह न सीख लें कि कानून के अनुसार सैन्य सेवा करना उनका कर्तव्य नहीं है।

उन्हें विश्वास दिलाया जाता है कि ईश्वर ऐसा करेगा, लेकिन यह इसके बिल्कुल विपरीत है।

सरकार के लिए सबसे सुविधाजनक तरीका यह होगा कि वह अहिंसक व्यक्ति को कोड़े मारकर या किसी अन्य तरीके से मार डाले, जैसा कि पहले किया जाता था। लेकिन किसी व्यक्ति को खुलेआम मौत के घाट उतार देना, सिर्फ इसलिए कि वह...

जिस पंथ को हम सब मानते हैं, उसमें विश्वास करना असंभव है। आज्ञापालन से इनकार करने वाले व्यक्ति को अकेला छोड़ देना भी असंभव है। यह असंभव है। इसलिए सरकार या तो दुर्व्यवहार करके उस व्यक्ति को ईसाई धर्म त्यागने के लिए मजबूर करने की कोशिश करती है, या किसी न किसी तरह से उसे चुपके से, खुलेआम मौत के घाट उतारे बिना, उससे छुटकारा पाने और उसे छिपाने का प्रयास करती है।

किसी न किसी तरह, दूसरों से क्रिया और स्वयं व्यक्ति दोनों को अलग किया जाता है। और इसलिए, हर तरह के बदलाव, छल और उसके विरुद्ध क्रूरताएँ रची जाती हैं। या तो उसे सीमा पर भेज दिया जाता है या उसे अवज्ञा के लिए उकसाया जाता है, फिर अनुशासन भंग करने के आरोप में उस पर मुकदमा चलाया जाता है और उसे जेल में बंद कर दिया जाता है।

अनुशासनात्मक बटालियन में, जहां वे किसी की नजरों से दूर, उसके साथ खुलकर दुर्व्यवहार कर सकते हैं, या उसे पागल घोषित कर सकते हैं। और उसे पागलखाने में बंद कर दिया। उन्होंने एक आदमी को इस तरह ताशकेंद भेजा – यानी, उन्होंने

उन्होंने उसे ताशकेंद सेना में स्थानांतरित करने का नाटक किया; दूसरे को ओम्स्क में; तीसरे को उन्होंने अवज्ञा का दोषी ठहराकर जेल में बंद कर दिया; चौथे को उन्होंने पागलखाने भेज दिया।

हर जगह वही कहानी दोहराई जा रही है। न केवल सरकार, बल्कि उदारवादियों का विशाल बहुमत भी।

तथाकथित उन्नत लोग, बल के सबसे भयावह, घोर और स्पष्ट रूप में असंगति को सिद्ध करने के लिए मनुष्यों द्वारा कही, लिखी या की गई हर बात से जानबूझकर मुंह मोड़ लेते हैं।

रूप में – यानी, सैनिकों की एक ऐसी सेना के रूप में जो किसी को भी, चाहे वह कोई भी हो, मारने के लिए तैयार हो –

ईसाई धर्म की शिक्षाएं, या यहां तक कि उस मानवता की शिक्षाएं जिसे समाज अपने पंथ के रूप में स्वीकार करता है।

परिणामस्वरूप, उच्च शासक वर्गों के रवैये के बारे में मुझे जो जानकारी प्राप्त हुई है, वह न केवल

रूस में नहीं बल्कि यूरोप और अमेरिका में, इस प्रश्न के स्पष्टीकरण की दिशा में मुझे यह विश्वास हो गया है कि

इन शासक वर्गों में सच्चे ईसाई धर्म के प्रति जानबूझकर शत्रुतापूर्ण रवैया मौजूद है, जो पहले से ही प्रदर्शित होता है-

वे इसके सभी अभिव्यक्तियों के संबंध में अपनी चुप्पी को प्रमुखता से दर्शाते हैं।

अध्याय दो

बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने के सिद्धांत की आलोचनाएँ
विश्वासियों और अविश्वासियों के बारे में

मेरी पुस्तक "व्हाट आई बिलीव" का भाग्य - मेरी पुस्तक के सिद्धांतों की धार्मिक आलोचनाओं का टालमटोल भरा स्वरूप - पहला उत्तर: बल का प्रयोग ईसाई धर्म के विरुद्ध नहीं है - दूसरा उत्तर: दुष्टों को रोकने के लिए बल का प्रयोग आवश्यक है - तीसरा उत्तर: अपने पड़ोसी की रक्षा में बल का प्रयोग करना कर्तव्य है - चौथा उत्तर: अहिंसा के आदेश का उल्लंघन मात्र कमजोरी माना जाना चाहिए - पाँचवाँ उत्तर: यह कहकर उत्तर टाल दिया गया कि प्रश्न का निर्णय बहुत पहले हो चुका है - इस तरह के छल-कपट करना और चर्च, प्राचीनता और धर्म के अधिकार की आड़ लेना ही वह सब है जो चर्च के आलोचक सिद्धांत और व्यवहार में बल के प्रयोग और ईसाई धर्म के बीच विरोधाभास से बचने के लिए कर सकते हैं - सच्चे ईसाई धर्म के प्रचार के प्रति चर्च जगत और अधिकारियों का सामान्य दृष्टिकोण - रूसी स्वतंत्र विचारक आलोचकों का सामान्य स्वरूप - विदेशी स्वतंत्र विचारक - गलत तर्क ये आलोचक मसीह की शिक्षाओं के सच्चे अर्थ को गलत समझने का परिणाम हैं।

मुझे ऐसा आभास हुआ कि लेखक ने मेरी किताब में व्यक्त की गई बातों को छिपाने, दबाने की इच्छा जताई थी।
इससे मुझे पुस्तक का नए सिरे से मूल्यांकन करने का अवसर मिला।
जैसा कि मैंने अनुमान लगाया था, इसके प्रकट होने पर यह प्रतिबंधित था और इसलिए कानून के अनुसार इसे जला दिया जाना चाहिए था।
लेकिन, उसी समय, अधिकारियों के बीच इस पर चर्चा हुई और यह बड़ी संख्या में प्रसारित हुआ।
हस्तलिखित और लिथोग्राफ प्रतियों में, और विदेशों में मुद्रित अनुवादों में।
और किताब प्रकाशित होने के तुरंत बाद ही, धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष दोनों प्रकार की आलोचनाएँ सामने आने लगीं।
ये सब बातें सरकार ने बर्दाश्त कीं, बल्कि प्रोत्साहित भी किया। परिणामस्वरूप, एक ऐसी किताब का खंडन, जिसके बारे में किसी को कुछ पता नहीं होना चाहिए था, उसे भी धर्मशास्त्रीय चर्चा का विषय बना दिया गया।
अकादमियों में शोध प्रबंध।
मेरी पुस्तक की आलोचनाएँ, चाहे रूसी हों या विदेशी, दो सामान्य भागों में विभाजित हैं - धार्मिक आलोचनाएँ उन लोगों द्वारा की गई हैं जो स्वयं को आस्तिक मानते हैं, और धर्मनिरपेक्ष आलोचनाएँ, अर्थात् स्वतंत्र लेखकों द्वारा की गई आलोचनाएँ।
विचारकों।
मैं पहले वर्ग से शुरू करूंगा। अपनी पुस्तक में मैंने चर्च के शिक्षकों पर यह आरोप लगाया है कि उनकी शिक्षा मसीह के उन आदेशों के विपरीत है जो स्पष्ट रूप से और निश्चित रूप से व्यक्त किए गए हैं।
पर्वतीय उपदेश, और विशेष रूप से बुराई के प्रतिरोध के संबंध में उनके आदेश का विरोध किया, और यह कि
इस तरह वे मसीह की शिक्षाओं को पूरी तरह से महत्वहीन कर देते हैं। चर्च के अधिकारी इस शिक्षा को स्वीकार करते हैं।

पर्वतीय उपदेश में बुराई का बलपूर्वक प्रतिरोध न करने को ईश्वरीय रहस्योद्घाटन बताया गया है; इसलिए यह सोचा जा सकता था कि यदि उन्हें मेरी पुस्तक के बारे में लिखने की प्रेरणा मिली होती, तो उन्हें यह विषय अवश्य पसंद आया होता।

सबसे पहले, मेरे द्वारा उन पर लगाए गए आरोप के मुख्य बिंदु का उत्तर देना और यह कहना अपरिहार्य है।

स्पष्ट रूप से, क्या वे पर्वतीय उपदेश की शिक्षा और बुराई का प्रतिरोध न करने की आज्ञा को एक ईसाई पर बाध्यकारी मानते हैं या नहीं? और उन्हें इस प्रश्न का उत्तर देना ही था, इससे पहले कि...

सामान्य फैशन (अर्थात, "कि यद्यपि एक तरफ तो इसे पूरी तरह से नकारा नहीं जा सकता, फिर भी दूसरी तरफ

कोई फिर से पूरी तरह से सहमत नहीं हो सकता, खासकर यह देखते हुए कि, "आदि)। नहीं; उन्हें प्रश्न का उत्तर उतनी ही स्पष्टता से देना चाहिए था जितना मेरी पुस्तक में दिया गया है - क्या मसीह ने वास्तव में अपने शिष्यों से यह अपेक्षा की थी कि वे

क्या एक ईसाई को वही करना चाहिए जो उसने पर्वतीय उपदेश में सिखाया था? और क्या वह ऐसा कर सकता है, या क्या वह ऐसा कर सकता है?

हमेशा ईसाई रहते हुए, कानून का सहारा न लें, न ही कानून का कोई उपयोग करें, और न ही अपनी सुरक्षा की तलाश करें।

कानून क्या है? और क्या एक ईसाई, ईसाई रहते हुए, अपने पड़ोसियों के खिलाफ बल प्रयोग करके सरकार के प्रशासन में भाग ले सकता है या नहीं? और – सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न जो अधर में लटका हुआ है

आज के इस दौर में, जब सार्वभौमिक सैन्य सेवा अनिवार्य है, हम सभी के मन में यह प्रश्न है कि क्या एक ईसाई ऐसा कर सकता है या नहीं।

क्या मसीह के प्रत्यक्ष निषेध के विरुद्ध ईसाई बने रहना, भविष्य में उनकी शिक्षाओं के सीधे विपरीत कार्यों में आज्ञाकारिता का वादा करता है?

और क्या वह सेना में अपनी सेवा का हिस्सा लेकर स्वयं को इसके लिए तैयार कर सकता है?

पुरुषों की हत्या करना, और यहां तक कि वास्तव में उनकी हत्या करना?

ये प्रश्न स्पष्ट और सीधे तौर पर पूछे गए थे, और इनका उत्तर भी स्पष्ट और सीधा होना चाहिए था; लेकिन मेरी पुस्तक की सभी आलोचनाओं में ऐसा कोई स्पष्ट और सीधा उत्तर नहीं था। नहीं, मेरी पुस्तक को मिली

चर्च के शिक्षकों पर उनके धर्मत्याग के कारण हुए सभी हमलों के समान ही व्यवहार किया गया।

ईसा मसीह का वह नियम, जिसका इतिहास कॉन्स्टेंटाइन के समय से ही भरा पड़ा है।

मेरी किताब के संबंध में बहुत कुछ कहा गया कि मैंने इसकी गलत व्याख्या की है और

सुसमाचार के अन्य अंश, त्रिमूर्ति, मुक्ति और अन्य बातों को न पहचानने में मेरी त्रुटि के बारे में।

आत्मा की अमरता। इस विषय पर बहुत कुछ कहा गया, लेकिन उस एक बात पर एक शब्द भी नहीं कहा गया जो हर ईसाई के जीवन का सबसे आवश्यक प्रश्न है - क्षमा, नम्रता आदि के कर्तव्य को कैसे संतुलित किया जाए।

धैर्य और सभी के प्रति प्रेम, चाहे पड़ोसी हों या शत्रु, जो हमारे शब्दों में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया है।

शिक्षक के रूप में, और हममें से प्रत्येक के हृदय में – इस कर्तव्य को बल प्रयोग करने की बाध्यता के साथ कैसे सामंजस्य बिठाया जाए

अपने ही लोगों या किसी विदेशी जनता के खिलाफ युद्ध।

इस प्रश्न के उत्तर कहे जाने योग्य सभी विकल्पों को निम्नलिखित पांच शीर्षकों के अंतर्गत लाया जा सकता है।

मैंने इस संबंध में अपनी पुस्तक पर हुई आलोचनाओं से ही नहीं, बल्कि सभी संबंधित जानकारियों को एकत्रित करने का प्रयास किया है।
इस विषय पर अतीत में जो कुछ लिखा गया है, उससे।
इसका सबसे पहला और सबसे भद्दा जवाब यह कहना है कि बल प्रयोग का विरोध नहीं किया जाता।
ईसा मसीह की शिक्षाओं के अनुसार; यह ईसाई धर्म में पुराने और नए धर्मग्रंथों द्वारा अनुमत और अनिवार्य भी है।
वसीयतनामे।
इस प्रकार के दावे अधिकतर उन लोगों द्वारा किए जाते हैं जो सर्वोच्च पदों पर आसीन हो चुके हैं।
शासक या चर्च के पदानुक्रम, और जो परिणामस्वरूप पूरी तरह से आश्वस्त हैं कि कोई भी नहीं करेगा
उनकी बात का खंडन करने की हिम्मत करने वालों को कुछ भी सुनने को नहीं मिलेगा।
विरोधाभास। सत्ता के नशे में चूर होकर ये लोग ईसाई धर्म की सही अवधारणा को इस कदर खो बैठे हैं कि वे उस ईसाई धर्म को ही भूल गए हैं जिसके नाम पर वे अपना पद संभाले हुए हैं।
ईसाई धर्म उनके सामने विधर्म के रूप में प्रस्तुत होता है, जबकि पुराने और नए नियम में जो कुछ भी है, वह सब कुछ उनके लिए विधर्मी है।
वे इसे ईसाई धर्म की नींव मानते हैं और इसे ईसाई-विरोधी और विधर्मी अर्थ में विकृत कर देते हैं। इस दावे के समर्थन में कि ईसाई धर्म बल प्रयोग के विरुद्ध नहीं है, ये लोग आमतौर पर,
सबसे बड़ा दुस्साहस, पुराने और नए नियम के सभी सबसे अस्पष्ट अंशों को एक साथ लाना,
अनानियास और सफ़ीरा की सज़ा, जादूगर साइमन की सज़ा आदि की वे सबसे अधार्मिक तरीके से व्याख्या करते हैं। वे मसीह के उन सभी कथनों का हवाला देते हैं जिन्हें संभवतः धर्म के औचित्य के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है।
क्रूरता: मंदिर से निष्कासन; “इस देश की अपेक्षा सदोम देश के लिए यह अधिक सहनीय होगा।”
शहर,” इत्यादि। इन लोगों की धारणाओं के अनुसार, एक ईसाई सरकार किसी भी तरह से बाध्य नहीं है।
शांति, क्षमा, और शत्रुओं के प्रति प्रेम की भावना से प्रेरित रहें।
इस प्रकार के दावे का खंडन करना व्यर्थ है, क्योंकि जो लोग यह दावा करते हैं वे स्वयं इसका खंडन करते हैं।
या यूँ कहें कि वे स्वयं मसीह का त्याग कर, उनके स्थान पर अपना स्वयं का ईसाई धर्म और मसीह गढ़ लें।
जिसके नाम पर चर्च अस्तित्व में है, और साथ ही उसमें उनका पद भी। यदि सभी मनुष्यों को पता चल जाए कि चर्च क्षमा के नहीं, बल्कि दंड और युद्ध के मसीह में विश्वास करता है, तो कोई भी चर्च में नहीं आएगा।
चर्च में विश्वास है और यह किसी को भी वह साबित नहीं कर सका जो वह साबित करने की कोशिश कर रहा है।
तर्क का दूसरा, कुछ हद तक कम घृणित रूप, यह घोषित करने में निहित है कि यद्यपि ईसा मसीह ने वास्तव में उपदेश दिया था कि हमें बायां गाल आगे करना चाहिए और अपना वस्त्र भी देना चाहिए, और यही सर्वोच्च नैतिक कार्य है।
कर्तव्य तो है, फिर भी संसार में दुष्ट लोग मौजूद हैं, और यदि इन दुष्ट लोगों को बलपूर्वक नियंत्रित न किया जाए,
उनके कारण पूरी दुनिया और सभी भले लोग बर्बाद हो जाएंगे। यह तर्क मुझे पहले के लिए मिला।
मैंने जॉन क्रिसॉस्टम के समय का वर्णन किया है, और अपनी पुस्तक "व्हाट आई बिलीव" में दिखाया है कि वह कैसे गलत हैं।
यह तर्क निराधार है, क्योंकि यदि हम किसी भी पुरुष को स्वाभाविक रूप से
यदि हम दुष्ट पुरुषों को नष्ट कर देते हैं, तो सबसे पहले हम ऐसा करके ईसाई शिक्षा के संपूर्ण विचार को ही रद्द कर देते हैं।

जिसके अनुसार हम सब बराबर और भाई हैं, स्वर्ग में एक ही पिता के पुत्र हैं। दूसरे, यह निराधार है, क्योंकि भले ही दुष्टों के विरुद्ध बल प्रयोग करना ईश्वर द्वारा अनुमत होता, फिर भी
ऐसा कोई सटीक और अचूक भेद खोजना असंभव है जिससे दुष्टों को निश्चित रूप से पहचाना जा सके।
यदि अच्छे और बुरे में अंतर करना संभव भी हो, तो सभी व्यक्ति और समाज एक-दूसरे को दुष्ट समझने लगेंगे, जैसा कि अभी है। तीसरा, भले ही दुष्टों को अच्छे और बुरे में भेदना संभव हो,
भले ही अच्छाई कभी असफल न हो, फिर भी इन दुष्टों को मारना, घायल करना या जेल में बंद करना असंभव होगा।

पुरुषों को, क्योंकि ईसाई समाज में ऐसा दंड देने वाला कोई नहीं होगा, क्योंकि प्रत्येक ईसाई को, एक ईसाई होने के नाते, दुष्टों के विरुद्ध बल का प्रयोग न करने का आदेश दिया गया है।
तीसरे प्रकार का उत्तर, जो पिछले उत्तर से भी अधिक सूक्ष्म है, इस बात पर जोर देने में निहित है कि यद्यपि
बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने का आदेश ईसाई पर तब तक बाध्यकारी है जब तक कि बुराई स्वयं ईसाई के विरुद्ध निर्देशित न हो; यह तब बाध्यकारी नहीं रह जाता जब बुराई उसके पड़ोसियों के विरुद्ध निर्देशित हो।
ईसाई न केवल आज्ञा का पालन करने के लिए बाध्य नहीं है, बल्कि वह इसके विपरीत कार्य करने के लिए भी बाध्य है।
अपने पड़ोसियों की रक्षा में और अपराधियों के विरुद्ध बलपूर्वक कार्रवाई करने के लिए। यह दावा एक निरपेक्ष धारणा है, और मसीह की संपूर्ण शिक्षाओं में इस तरह के तर्क की कोई पुष्टि नहीं मिलती।
ऐसा तर्क न केवल एक सीमा है, बल्कि प्रत्यक्ष विरोधाभास और खंडन भी है।
आज्ञा। यदि प्रत्येक व्यक्ति को किसी खतरे का सामना करने में बल प्रयोग करने का अधिकार है
दूसरे, बल प्रयोग का प्रश्न दूसरे के लिए खतरे की परिभाषा के प्रश्न तक सीमित हो जाता है। यदि मेरा निजी निर्णय ही यह तय करे कि दूसरे के लिए खतरा क्या है, तो फिर बल प्रयोग का कोई अवसर ही नहीं रह जाता।
किसी अन्य व्यक्ति को धमकाने वाले खतरे के आधार पर उचित न ठहराए जा सकने वाले बल का प्रयोग।
उन्होंने चुड़ैलों को मार डाला और जला दिया, उन्होंने अभिजात वर्ग और गिरोंडिस्टों को मार डाला, और उन्होंने अपने दुश्मनों को मार डाला, क्योंकि सत्ता में बैठे लोग उन्हें जनता के लिए खतरनाक मानते थे।
यदि यह महत्वपूर्ण सीमा, जो मूल रूप से इस आज्ञा के संपूर्ण मूल्य को ही नकार देती है,
यदि यह बात मसीह के अर्थ में समाहित हो गई होती, तो इसका उल्लेख कहीं न कहीं अवश्य होता। हमारे उद्धारकर्ता के जीवन या उपदेश में कहीं भी इस प्रतिबंध का उल्लेख नहीं है। इसके विपरीत, इसके विरुद्ध स्पष्ट रूप से चेतावनी दी गई है।
विश्वासघाती और निंदनीय प्रतिबंध जो आज्ञा को निरर्थक बना देता है। त्रुटि और असंभवता
इस प्रकार की सीमा सुसमाचार में विशेष रूप से स्पष्ट रूप से न्याय के विवरण में दिखाई गई है।
कैफास ने ठीक यही अंतर किया। उसने स्वीकार किया कि निर्दोष यीशु को दंडित करना गलत था, लेकिन उसने उसमें अपने लिए नहीं, बल्कि पूरी प्रजा के लिए खतरे का स्रोत देखा, और
इसलिए उसने कहा, “सारे लोगों के नाश होने से बेहतर है कि एक आदमी मर जाए।” और

इस प्रकार की सीमा की त्रुटि उन शब्दों में और भी स्पष्ट रूप से व्यक्त होती है जो पतरस से तब कहे गए थे जब उसने यीशु के विरुद्ध निर्देशित बुराई का बलपूर्वक विरोध करने का प्रयास किया था (मत्ती 26:52)। पतरस स्वयं का बचाव नहीं कर रहा था, बल्कि अपने
प्रिय और स्वर्गीय गुरु। और मसीह ने तुरंत इसके लिए उसे फटकारा और कहा, जो कोई भी उठाता है
तलवार का नाश तलवार से ही होगा।
इसके अलावा, अपने पड़ोसी की रक्षा में अपने पड़ोसी के खिलाफ की गई हिंसा के लिए माफी मांगना भी उचित नहीं है।
अधिक हिंसा हमेशा अविश्वसनीय होती है, क्योंकि जब बल का प्रयोग किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध किया जाता है जिसने अभी तक
अगर उसने अपने बुरे इरादे को अंजाम दिया, तो मैं कभी नहीं जान पाऊंगा कि कौन सा ज़्यादा बुरा होगा – मेरे द्वारा की गई हिंसा का कृत्य या जिस कृत्य को मैं रोकना चाहता हूँ। हम अपराधी को इसलिए मारते हैं ताकि समाज उससे छुटकारा पा सके, और हम कभी नहीं जान सकते कि आज का अपराधी कल बदल जाता या नहीं, और क्या हमारा
उसे दंडित करना व्यर्थ की क्रूरता नहीं है। हम समाज के उस खतरनाक सदस्य को चुप करा देते हैं, जैसा कि हम सोचते हैं।
लेकिन कल शायद यह आदमी खतरनाक न रहे और उसकी कैद व्यर्थ हो जाए। मैं देखता हूँ कि एक बदमाश, जिसे मैं जानता हूँ, एक युवती का पीछा कर रहा है। मेरे हाथ में बंदूक है - मैं उस बदमाश को मार डालता हूँ।
और लड़की को बचाओ। लेकिन बदमाश की मौत या घायल होना निश्चित रूप से हो चुका है, जबकि क्या
अगर ऐसा न होता तो क्या होता, यह मैं नहीं जान सकता। और भविष्य में क्या हो सकता है, इसका अनुमान लगाने का अधिकार मनुष्यों को देने से कितना भयानक दुष्परिणाम अवश्य ही उत्पन्न होता है, और वास्तव में होता भी है।
दुनिया की 99 प्रतिशत बुराई इसी तर्क पर आधारित है – धर्म जांच से लेकर
डायनामाइट बमों का इस्तेमाल और हजारों राजनीतिक अपराधियों को फांसी देना या उन्हें सजा देना।
“बुराई का बलपूर्वक विरोध न करने के संबंध में मसीह के आदेश के प्रति ईसाई का क्या दृष्टिकोण होना चाहिए?” इस प्रश्न का चौथा, और भी परिष्कृत उत्तर यह घोषणा करना है कि वे इसका खंडन नहीं करते।
बुराई का प्रतिरोध न करने की आज्ञा को वे स्वीकार करते हैं; परन्तु वे इस आज्ञा को केवल यही नहीं मानते कि
संप्रदायवादियों द्वारा इसे विशेष और अनन्य महत्व दिया जाता है। गैरीसन, बैलो, डायमंड, क्वेकर्स, मेनोनिट्स और शेकर्स की तरह इस आदेश को ईसाई जीवन की अपरिहार्य शर्त मानना।
अब ऐसा ही करें, और जैसा कि मोराविय़न बंधुओं, वाल्डेन्सिस, अल्बिजेन्सिस, बोगोमिलिट्स और अन्य लोगों ने किया था।
पॉलिसियों ने अतीत में जो किया, वह एकतरफा विधर्म है। इस आज्ञा का अन्य सभी आज्ञाओं से न तो अधिक और न ही कम महत्व है, और जो व्यक्ति कमजोरी के कारण किसी भी आज्ञा का उल्लंघन करता है,
अहिंसा के आदेश को शामिल करने के बावजूद, यदि कोई व्यक्ति सच्चे विश्वास को धारण करता है तो वह ईसाई होना नहीं छोड़ता। यह एक

यह एक बहुत ही कुशल युक्ति है, और कई लोग जो धोखा खाना चाहते हैं, वे आसानी से इसके झांसे में आ जाते हैं। इस युक्ति में किसी आदेश के प्रत्यक्ष सचेत इनकार को उसके आकस्मिक उल्लंघन में बदल दिया जाता है। लेकिन केवल इतना ही काफी है।
चर्च के शिक्षकों के इस और अन्य आदेशों के प्रति दृष्टिकोण की तुलना करें जिनका वे वास्तव में पालन करते हैं।

यह पहचानना, इस बात से आश्वस्त होना कि इस मामले में उनका रवैया अन्य कर्तव्यों के प्रति उनके रवैये से पूरी तरह अलग है।
वे व्यभिचार के विरुद्ध आदेश को वास्तव में मानते हैं, और इसलिए वे यह स्वीकार नहीं करते कि
किसी भी स्थिति में व्यभिचार करना गलत नहीं रह सकता। चर्च के उपदेशक कभी भी उन मामलों की ओर इशारा नहीं करते जिनमें व्यभिचार के विरुद्ध आज्ञा का उल्लंघन किया जा सकता है, और हमेशा यही सिखाते हैं कि हमें उन प्रलोभनों से बचना चाहिए जो व्यभिचार की ओर ले जाते हैं।
व्यभिचार का प्रलोभन। लेकिन अहिंसा के आदेश के साथ ऐसा नहीं है। सभी चर्च उपदेशक
उन मामलों को पहचानें जिनमें उस आदेश का उल्लंघन किया जा सकता है, और लोगों को तदनुसार शिक्षित करें। और वे नहीं
वे न केवल यह नहीं सिखाते कि हमें इसे तोड़ने के प्रलोभनों से बचना चाहिए, जिनमें प्रमुख सैन्य शपथ है, बल्कि वे स्वयं इसका संचालन करते हैं। चर्च के उपदेशक किसी अन्य मामले में कभी भी इसकी वकालत नहीं करते।
किसी अन्य आज्ञा का उल्लंघन करना। लेकिन अहिंसा की आज्ञा के संबंध में वे
खुले तौर पर सिखाएं कि हमें इसे शाब्दिक रूप से नहीं समझना चाहिए, बल्कि ऐसी परिस्थितियाँ और स्थितियाँ होती हैं जिनमें हमें ठीक इसके विपरीत करना चाहिए, अर्थात् कानून का सहारा लेना चाहिए, लड़ना चाहिए, दंडित करना चाहिए। परिणामस्वरूप, ऐसे अवसर उत्पन्न होते हैं जिनमें...
बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने की आज्ञा का पालन करना अधिकतर अवसरों पर सिखाया जाता है।
इसका पालन न करने पर दंड मिलता है। वे कहते हैं कि इस आदेश का पालन करना बहुत कठिन है और केवल पूर्णता से ही संभव है। और यह कठिन क्यों न हो, जब इसका उल्लंघन न केवल निषिद्ध नहीं है, बल्कि कानून है।
क्या अदालतें, जेलें, तोपें, बंदूकें, सेनाएं और युद्ध चर्च की सीधी स्वीकृति के अधीन हैं?
तो यह सच नहीं हो सकता कि चर्च के उपदेशक इस आदेश को एक समान स्तर पर मान्यता देते हैं।
अन्य आदेश।
चर्च के उपदेशक इसे स्पष्ट रूप से नहीं पहचानते; केवल इसे स्वीकार करने का साहस न करके, वे
वे इसे न पहचानने की बात को छिपाने की कोशिश करते हैं।
चौथे जवाब के लिए बस इतना ही।
पाँचवाँ प्रकार का उत्तर, जो सबसे सूक्ष्म, सबसे अधिक प्रयोग किया जाने वाला और सबसे प्रभावी है, उसमें शामिल है:
जवाब देने से बचते हुए, यह जताते हुए कि इस सवाल का फैसला बहुत पहले ही हो चुका है।
यह बात पूरी तरह स्पष्ट और संतोषजनक ढंग से कही गई है, और इस बारे में बात करना व्यर्थ है। उत्तर देने की यह विधि कमोबेश सभी सुसंस्कृत धार्मिक लेखकों द्वारा अपनाई जाती है, अर्थात् वे जो नियमों को समझते हैं।
स्वयं के लिए मसीह को बांधना। यह जानते हुए कि मसीह की शिक्षाओं के बीच विरोधाभास मौजूद है।
जिसे हम अपने होठों से कहते हैं और जो हमारे जीवन की संपूर्ण व्यवस्था है, उसे शब्दों से बदला नहीं जा सकता, और यह कि
इस विषय पर चर्चा करने से यह और भी स्पष्ट हो जाएगा; वे कमोबेश चतुराई से इससे बचते हैं, यह दिखावा करते हुए कि ईसाई धर्म और बल प्रयोग के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रश्न पहले ही तय हो चुका है, या नहीं।
अस्तित्व में ही है। 1

मेरी पुस्तक के अधिकांश धार्मिक आलोचक इसका उत्तर देने के लिए इस पाँचवें तरीके का उपयोग करते हैं। मैं ऐसे दर्जनों आलोचकों का हवाला दे सकता हूँ, जिनमें से सभी में, बिना किसी अपवाद के, हमें एक ही बात बार-बार दोहराई हुई मिलती है; सब कुछ
पुस्तक के मुख्य विषय को छोड़कर अन्य विषयों पर चर्चा की गई है। इसका एक विशिष्ट उदाहरण यह है कि
आलोचनाओं के संबंध में, मैं एक प्रसिद्ध और प्रतिभाशाली अंग्रेजी लेखक और उपदेशक - फैरर - के लेख का हवाला दूंगा, जो कई विद्वान धर्मशास्त्रियों की तरह, किसी प्रश्न को घुमा-फिराकर टालने की कला में माहिर हैं।
यह लेख अक्टूबर 1888 में एक अमेरिकी पत्रिका, द फोरम में प्रकाशित हुआ था।

1. मैं केवल एक ही ऐसी रचना को जानता हूँ जो इस सामान्य परिभाषा से कुछ भिन्न है, और वह शब्द के सटीक अर्थ में आलोचना नहीं है, बल्कि एक लेख है जो उसी विषय पर मेरी पुस्तक को ध्यान में रखते हुए लिखा गया है। मेरा तात्पर्य श्री ट्रोइज़्की (कज़ान में प्रकाशित) के पत्र, "जनता के लिए उपदेश" से है। लेखक स्पष्ट रूप से मसीह की शिक्षा को उसके सच्चे अर्थ में स्वीकार करते हैं। वे कहते हैं कि बलपूर्वक बुराई का विरोध करने का निषेध ठीक वही अर्थ रखता है जो उसका है; और शपथ लेने के निषेध के साथ भी यही बात लागू होती है। वे दूसरों की तरह मसीह की शिक्षा के अर्थ को नकारते नहीं हैं, लेकिन दुर्भाग्य से वे इस स्वीकृति से उन अनिवार्य निष्कर्षों को नहीं निकालते जो मसीह की शिक्षा को उस तरह से समझने पर हमारे जीवन में स्वतः ही प्रकट होते हैं। यदि हमें बलपूर्वक बुराई का विरोध नहीं करना चाहिए, न ही शपथ लेनी चाहिए, तो हर कोई स्वाभाविक रूप से पूछता है, "तो फिर सैन्य सेवा और आज्ञाकारिता की शपथ का क्या?" इस प्रश्न का लेखक कोई उत्तर नहीं देते, लेकिन इसका उत्तर देना आवश्यक है। और यदि वे उत्तर नहीं दे सकते, तो बेहतर होगा कि वे इस विषय पर बिल्कुल भी न बोलें, क्योंकि ऐसी चुप्पी त्रुटि की ओर ले जाती है।

16

मेरी पुस्तक की विषयवस्तु को संक्षेप में सावधानीपूर्वक समझाने के बाद, फैरर कहते हैं, "टॉल्स्टॉय इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि दुनिया पर एक घिनौना धोखा किया गया था जब ये शब्द कहे गए थे, 'बुराई का विरोध मत करो,'"
नागरिक समाज का मानना था कि ये चीजें युद्ध, न्याय न्यायालयों, मृत्युदंड और तलाक के साथ संगत हैं।
शपथ, राष्ट्रीय पूर्वाग्रह, और वास्तव में, नागरिक और सामाजिक जीवन की अधिकांश संस्थाओं के साथ। अब उनका मानना है कि ईश्वर का राज्य तभी आएगा जब सभी मनुष्य मसीह की इन पाँच आज्ञाओं का पालन करेंगे: (1)
(1) सभी मनुष्यों के साथ शांति से रहो, (2) पवित्र रहो, (3) शपथ न लो, (4) बुराई का विरोध न करो, और (5) राष्ट्रीयता का त्याग करो।
भेद।
“टॉल्स्टॉय,” वे कहते हैं, “पुराने नियम की प्रेरणा को अस्वीकार करते हैं; इसलिए वे प्रमुख सिद्धांतों को अस्वीकार करते हैं।”
चर्च के – रक्त द्वारा प्रायश्चित, त्रिमूर्ति, पवित्र आत्मा का अवतरण
प्रेरितों और पुरोहिती के माध्यम से उनके संचरण को।" और वह केवल शब्दों को ही पहचानता है और
ईसा मसीह के आदेश। “लेकिन क्या ईसा मसीह की यह व्याख्या सही है?” वह कहते हैं। “क्या सभी मनुष्य टॉल्स्टॉय की शिक्षाओं के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य हैं – अर्थात्, ईसा मसीह के इन पाँच आदेशों का पालन करने के लिए?” तब आप उम्मीद करते हैं कि
इस मूलभूत प्रश्न का उत्तर दीजिए, जो एकमात्र ऐसा प्रश्न है जो किसी व्यक्ति को इस विषय पर लेख लिखने के लिए प्रेरित कर सकता है।

पुस्तक के संदर्भ में, वह या तो यह कहेंगे कि मसीह की शिक्षा की यह व्याख्या सत्य है और हमें इसका पालन करना चाहिए, या वे कहेंगे कि ऐसी व्याख्या असत्य है, कारण बताएंगे और कोई अन्य सही व्याख्या प्रस्तुत करेंगे।

उन शब्दों की व्याख्या जो मैंने गलत समझी। लेकिन ऐसा कुछ नहीं किया गया। केवल फैरर।

वह अपनी इस 'मान्यता' को व्यक्त करते हैं कि, "यद्यपि सर्वोत्कृष्ट ईमानदारी से प्रेरित होने के बावजूद, काउंट टॉल्स्टॉय सुसमाचार के अर्थ और मसीह के मन और इच्छा की आंशिक और एकतरफा व्याख्याओं से गुमराह हो गए हैं।"

यह त्रुटि किस बात में निहित है, यह स्पष्ट नहीं किया गया है; केवल इतना कहा गया है, "इसका प्रमाण देना असंभव है।"

इस लेख में, क्योंकि मैं पहले ही अपनी निर्धारित जगह से अधिक लिख चुका हूँ।"

और वह शांत भाव से अपनी बात समाप्त करते हैं:

"इस बीच, वह पाठक जो इस बात से चिंतित है कि कहीं उसे भी सभी शर्तों को त्यागना अपना कर्तव्य न मानना पड़े,"

अपने जीवन का कुछ हिस्सा और एक आम मजदूर की भूमिका और काम संभालने के लिए, फिलहाल वह आराम कर सकता है।

सिद्धांत, securus judicat orbis terrarum. कुछ दुर्लभ अपवादों को छोड़कर," वे आगे कहते हैं, "प्रेरितों के समय से लेकर आज तक संपूर्ण ईसाई जगत इस दृढ़ निष्कर्ष पर पहुंचा है कि यह

ईसा मसीह का उद्देश्य महान शाश्वत सिद्धांतों को स्थापित करना था, न कि आधारभूत सिद्धांतों को भंग करना।

मानव समाज की सभी संस्थाओं में क्रांति लाना, जो स्वयं दैवीय स्वीकृति के साथ-साथ अपरिहार्य परिस्थितियों पर भी आधारित हैं। यदि मेरा उद्देश्य यह सिद्ध करना होता कि साम्यवाद का सिद्धांत कितना अस्थिर है,

काउंट टॉल्स्टॉय द्वारा दैवीय विरोधाभासों (sic) पर आधारित, जिनकी व्याख्या केवल ऐतिहासिक आधार पर ही की जा सकती है।

यीशु की शिक्षा पद्धति के अनुसार सिद्धांतों का पालन करने के लिए, अधिक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता होगी।

मेरे पास यहाँ जो कैनवास उपलब्ध है, उससे कहीं अधिक कैनवास उसके पास नहीं है।" कितना अफ़सोस की बात है कि उसके पास "अधिक बड़ा कैनवास" नहीं है! और यह कितनी अजीब बात है कि इन पंद्रह शताब्दियों में किसी के पास भी "पर्याप्त कैनवास" नहीं रहा है।

यह साबित करने के लिए पर्याप्त है कि जिस मसीह में हम विश्वास करने का दावा करते हैं, वह अपने कार्यों से बिलकुल विपरीत बातें कहता है।

वाह! फिर भी, अगर वे चाहें तो इसे साबित कर सकते हैं। लेकिन जो बात सबको पता है उसे साबित करने की कोई ज़रूरत नहीं; इतना कहना ही काफी है, "securus judicat orbis terrarum" (पृथ्वी के चारों ओर सुरक्षित न्याय होता है)।

और इसी प्रकार की आलोचनाएँ, बिना किसी अपवाद के, शिक्षित विश्वासियों की सभी आलोचनाएँ हैं, जिन्हें, इस रूप में, अवश्य ही करनी चाहिए।

वे अपनी स्थिति के खतरे को समझते हैं। इससे बचने का उनका एकमात्र रास्ता इस आशा में निहित है कि वे चर्च, प्राचीन काल और अपने पवित्र पद के अधिकार का उपयोग करके, दूसरों को भयभीत कर सकते हैं।

पाठक को स्वयं सुसमाचार पढ़ने और प्रश्न पर विचार करने के विचार से दूर ले जाना।

अपने मन में अपने लिए। और इसमें वे सफल भी हैं; क्योंकि वास्तव में, यह विचार उसके मन में कैसे आ सकता था?

सदियों से उन सभी आर्कडीकनों, बिशपों, आर्कबिशपों, पवित्र धर्मसभाओं और पोप द्वारा इतनी गंभीरता और श्रद्धा के साथ दोहराई गई हर बात एक घिनौना झूठ और बदनामी है।

उन्होंने विलासितापूर्ण जीवन जीने के लिए आवश्यक धन को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से इसे ईसा मसीह पर थोप दिया।

क्या ये दूसरों की गर्दन पर बोझ है? और यह एक ऐसा झूठ और झूठा आरोप है जो इतना स्पष्ट है कि इसे कायम रखने का एकमात्र तरीका लोगों को अपनी गंभीरता और ईमानदारी से डराना है। यही वह तरीका है जिसने इसे संभव बनाया है।

हाल के वर्षों में भर्ती सत्रों में; ज़ार के अधिकार के प्रतीक ज़र्टज़ल के सामने एक मेज पर।

ज़ार के आदमकद चित्र के नीचे सम्मान की सीट पर, पदकों से सुसज्जित, गरिमापूर्ण वृद्ध अधिकारी बैठे हैं, वे स्वतंत्र रूप से और सहजता से बातचीत कर रहे हैं, नोट्स लिख रहे हैं, लोगों को अपने सामने बुला रहे हैं और उन्हें निर्देश दे रहे हैं।

आदेशों के अनुसार। यहाँ, उनके पास, अपनी छाती पर क्रॉस धारण किए हुए, रेशमी वस्त्र पहने एक समृद्ध दिखने वाला बूढ़ा पुजारी है।

17

एक पादरी, जिसके लंबे भूरे बाल उसके चोगे पर लहरा रहे हैं, एक मंच के सामने बैठा है जिसने सोने का क्रॉस पहना हुआ है और जिसके पास सोने में बंधी हुई बाइबिल है।

वे इवान पेट्रॉफ को बुलाते हैं। एक युवक आता है, दयनीय हालत में, फटेहाल कपड़ों में, और डरा हुआ।

उसके चेहरे की मांसपेशियां फड़क रही थीं, उसकी आंखें चमकीली और बेचैन थीं; और टूटी हुई आवाज में, लगभग फुसफुसाते हुए, उसने कहा, "मैं - ईसा मसीह के नियम के अनुसार - एक ईसाई होने के नाते - ऐसा नहीं कर सकता।" "वह क्या बुदबुदा रहा है?" राष्ट्रपति ने पूछा।

वह अधीरता से भौंहें चढ़ाते हुए और अपनी किताब से नज़रें उठाकर सुनने लगा। "ज़ोर से बोलो," कर्नल ने कहा।

चमकते हुए एपॉलेट्स उसे पुकारते हैं। “मैं – मैं एक ईसाई होने के नाते...” और अंत में यह प्रतीत होता है कि वह युवक ईसाई होने के कारण सेना में सेवा करने से इनकार करता है। “बकवास मत करो। खड़े हो जाओ, अपनी परीक्षा दो।”

डॉक्टर साहब, क्या आप कृपया उनका माप ले सकते हैं? क्या वे ठीक हैं? “जी हां।” “आदरणीय फादर, कृपया उनका माप लें।”

उसके प्रति शपथ।"

वह बेचारा डरा हुआ युवक जो कुछ बुदबुदा रहा है, उससे किसी को ज़रा भी फर्क नहीं पड़ता। वे उस पर ध्यान तक नहीं देते। "वे सब कुछ न कुछ बुदबुदाते हैं, लेकिन हमारे पास सुनने का समय नहीं है, हमें इतने सारे लोगों का नामांकन करना है।"

फिर भी, रंगरूट कुछ कहने की कोशिश करता है। “यह मसीह के नियम के विरुद्ध है।” “चलिए, चलिए; हम

आपकी सहायता के बिना भी वे जानते हैं कि क्या कानून के विरुद्ध है और क्या नहीं; और आप उनके मन को शांत कीजिए, आदरणीय पिता, उन्हें शांत कीजिए। अगला: वासिली निकितिन।” और वे कांपते हुए युवक को ले जाते हैं। और ऐसा नहीं होता

किसी पर भी हमला न करें - चाहे वह गार्ड हों, या वासिली निकितिन, जिन्हें वे अंदर ला रहे हैं, या इस घटना के किसी भी दर्शक पर।

दृश्य – कि युवक के ये अस्पष्ट शब्द, जिन्हें अधिकारियों द्वारा तुरंत दबा दिया गया, सत्य को समाहित करते हैं, और शांत, आत्मविश्वासी अधिकारी और पुजारी के ऊंचे, गंभीर स्वर में बोले गए वाक्य

झूठ और छल।

यह धारणा न केवल फैरर के लेख से, बल्कि उन सभी गंभीर उपदेशों से भी उत्पन्न होती है।

लेख और पुस्तकें हर तरफ से ठीक उसी क्षण प्रकट होती हैं जब किसी प्रचलित झूठ को उजागर करने वाली सच्चाई की एक झलक मिलती है।

यहीं से लंबे, चतुर, और विलक्षण लेखों की श्रृंखला शुरू होती है।

गंभीर भाषण और लेख जो विषय से लगभग संबंधित प्रश्नों से निपटते हैं, लेकिन कुशलतापूर्वक उनसे बचते हैं

सीधे विषय पर आते हुए।

यही उन विरोधाभासों से बाहर निकलने के पाँचवें और सबसे प्रभावी साधन का सार है जिनमें हम फँसे हुए हैं।

चर्च ईसाई धर्म ने स्वयं को इस प्रकार स्थापित किया है कि वह शब्दों में मसीह की शिक्षाओं में अपने विश्वास की घोषणा करता है, जबकि वह उनका खंडन करता है।

इसे अपने जीवन में अपनाता है, और दूसरों को भी ऐसा ही करना सिखाता है।

जो लोग पहले तरीके से खुद को सही ठहराते हैं, यानी यह दावा करते हैं कि ईसा मसीह ने हिंसा को मंजूरी दी थी,

युद्ध और हत्या, सीधे तौर पर मसीह के सिद्धांत का खंडन करते हैं; जो लोग दूसरे में अपना बचाव पाते हैं,

तीसरी या चौथी विधि भ्रामक हैं और आसानी से गलती का दोषी ठहराई जा सकती हैं; लेकिन यह अंतिम वर्ग, जो ऐसा करते हैं

जो लोग इस विषय पर बहस करने की जहमत नहीं उठाते, वे अपनी ही शान-शौकत की आड़ में छिप जाते हैं और यह जताने का दिखावा करते हैं कि यह सब कुछ उनके द्वारा या कम से कम किसी और द्वारा बहुत पहले तय किया गया था, और अब नहीं।

किसी के भी मन में संदेह की संभावना पैदा करते हुए - वे हमले से सुरक्षित प्रतीत होते हैं, और तब तक हमले से बचे रहेंगे जब तक...

पुरुषों को यह एहसास होने लगता है कि वे सरकारों और चर्चों द्वारा उन पर डाले गए मादक प्रभाव के अधीन हैं, और अब वे इससे प्रभावित नहीं होते हैं।

मेरी पुस्तक के प्रति आध्यात्मिक आलोचकों – अर्थात् मसीह में आस्था रखने वालों – का यही रवैया था।

उनका रवैया इससे अलग नहीं हो सकता था। अपने गुरु की दिव्यता में विश्वास और उनके प्रति अविश्वास के बीच की विरोधाभासी स्थिति के कारण उन्हें यह रवैया अपनाना ही पड़ा।

सबसे स्पष्ट कथन, और वे इस विरोधाभास से बचना चाहते हैं। परिणामस्वरूप, कोई उम्मीद नहीं कर सकता

उनसे प्रश्न के मूल तत्व पर स्वतंत्र चर्चा संभव हुई – अर्थात्, पुरुषों के जीवन में होने वाले परिवर्तन पर।

यह निष्कर्ष मसीह की शिक्षाओं को संसार की वर्तमान व्यवस्था पर लागू करने से ही निकलेगा। इस तरह की स्वतंत्र चर्चा की अपेक्षा मैं केवल सांसारिक, स्वतंत्र विचारक आलोचकों से ही कर सकता था जो किसी भी तरह से मसीह की शिक्षाओं से बंधे नहीं हैं, और

इसलिए इस पर एक स्वतंत्र दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है। मुझे उम्मीद थी कि स्वतंत्र विचारक लेखक इस पर गौर करेंगे।

ईसा मसीह को, चर्चवादियों की तरह, केवल व्यक्तिगत मुक्ति के धर्म के संस्थापक के रूप में ही नहीं, बल्कि उनकी भाषा में कहें तो, एक ऐसे सुधारक के रूप में देखा जा सकता है जिन्होंने जीवन के नए सिद्धांत स्थापित किए और पुराने सिद्धांतों को नष्ट किया, और जिनके सुधार अभी पूरी तरह से संपन्न नहीं हुए हैं, बल्कि अभी भी जारी हैं।

मेरी पुस्तक से ईसा मसीह और उनकी शिक्षाओं के बारे में ऐसा ही दृष्टिकोण निकलता है। लेकिन मुझे आश्चर्य हुआ कि मेरी पुस्तक के इतने सारे आलोचकों में से एक भी, चाहे वह रूसी हो या विदेशी, ने इस विषय पर चर्चा नहीं की।

पुस्तक में जिस दृष्टिकोण से इस विषय पर चर्चा की गई है, उस दृष्टिकोण से – यानी, जिन्होंने मसीह के सिद्धांतों की आलोचना की थी

दार्शनिक, नैतिक और सामाजिक सिद्धांत, वैज्ञानिक शब्दों में कहें तो। यह किसी एक आलोचना में नहीं किया गया था। स्वतंत्र विचारक रूसी आलोचकों ने मेरी पुस्तक को इस तरह लिया मानो उसकी पूरी विषयवस्तु को ही आधार बनाया जा सकता हो।

बुराई के प्रति प्रतिरोध न करने तक सीमित, और स्वयं बुराई के प्रति प्रतिरोध न करने के सिद्धांत को समझना (नहीं
(इसका खंडन करने में अधिक सुविधा के लिए संदेह) मानो यह बुराई के साथ हर प्रकार के संघर्ष को प्रतिबंधित कर देगा, इस सिद्धांत पर ज़ोरदार हमला किया, और पिछले कुछ वर्षों से इसे बहुत सफलतापूर्वक साबित कर रहे हैं कि
ईसा मसीह की शिक्षा इस मायने में गलत है कि यह बुराई का विरोध करने से मना करती है। इस बात का खंडन करने वाले उनके तर्क गलत हैं। ईसा मसीह के काल्पनिक सिद्धांत और भी अधिक सफल रहे क्योंकि उन्हें पहले से ही पता था कि उनके तर्कों को चुनौती नहीं दी जा सकती या उनमें सुधार नहीं किया जा सकता, क्योंकि सेंसरशिप ने पुस्तक को पारित नहीं किया था।
इसके बचाव में लेख पारित करें।
यह एक उल्लेखनीय बात है कि हमारे बीच, जहाँ कोई पवित्र ग्रंथों के बारे में एक शब्द भी नहीं कह सकता।
सेंसरशिप के प्रतिबंध के बिना, पिछले कुछ वर्षों से सभी पत्रिकाओं में मत्ती 5:39 में स्पष्ट और सीधे तौर पर बताए गए मसीह के आदेश पर लगातार हमले और आलोचनाएँ होती रही हैं। रूसी
उन्नत आलोचक, जाहिर तौर पर इस बात से अनभिज्ञ हैं कि अहिंसा के प्रश्न को स्पष्ट करने के लिए क्या-क्या किया गया है।
और कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होता था कि बुराई का प्रतिरोध न करने का नियम मैंने स्वयं ही बनाया है, और वे स्वयं इस विचार के ही शिकार हो जाते थे। उन्होंने इसका विरोध किया और इस पर आक्रमण किया, और बड़ी ताकत से आगे बढ़ते हुए।
उन गरमागरम तर्कों का विश्लेषण किया गया था और हर दृष्टिकोण से उनका खंडन किया गया था, वे
यह प्रदर्शित किया गया कि मनुष्य को हमेशा सभी पीड़ित और उत्पीड़ित लोगों की (हिंसा द्वारा) रक्षा करनी चाहिए, और इस प्रकार बुराई का प्रतिरोध न करने का सिद्धांत एक अनैतिक सिद्धांत है।
सभी रूसी आलोचकों के लिए, मसीह के आदेश का संपूर्ण महत्व इस तथ्य तक सीमित प्रतीत होता था कि यह
इससे उन्हें बुराई के खिलाफ सक्रिय विरोध करने से रोका जा सकेगा, जिसके वे आदी हैं। परिणामस्वरूप,
बुराई का बलपूर्वक प्रतिरोध न करने के सिद्धांत पर दो विरोधी गुटों ने हमला किया है: रूढ़िवादी गुट, क्योंकि यह सिद्धांत क्रांतिकारियों पर लागू होने पर बुराई के प्रतिरोध में उनकी गतिविधि में बाधा उत्पन्न करेगा,
उन पर अत्याचार और उन्हें दंडित करना; क्रांतिकारियों पर भी, क्योंकि यह सिद्धांत उनके लिए बाधक बनेगा।
रूढ़िवादियों और उनके तख्तापलट के संदर्भ में बुराई का प्रतिरोध। रूढ़िवादी इस सिद्धांत से नाराज़ थे कि बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने से रूढ़िवादियों के शक्तिशाली विनाश में बाधा उत्पन्न हो रही थी।
क्रांतिकारी तत्वों के प्रति क्रांतिकारी आक्रोश था, जो राष्ट्रीय समृद्धि को नष्ट कर सकते थे।
बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने का सिद्धांत उन रूढ़िवादियों के तख्तापलट में बाधा उत्पन्न करता है जो राष्ट्रीय समृद्धि को नष्ट कर रहे हैं। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि क्रांतिकारियों ने हमला किया है।
बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने का सिद्धांत, इस तथ्य के बावजूद कि यह सबसे बड़ा आतंक और खतरा है
हर निरंकुशता। दुनिया की शुरुआत से ही, हर तरह की हिंसा का इस्तेमाल होता रहा है, चाहे वह किसी भी प्रकार की हिंसा हो।
श्लुसेलबर्ग किले में हुई जांच, बुराई का बलपूर्वक मुकाबला करने की आवश्यकता के विपरीत सिद्धांत पर आधारित रही है और अभी भी आधारित है।
इसके अलावा, रूसी आलोचकों ने इस तथ्य की ओर भी इशारा किया है कि आदेश के अनुप्रयोग में

व्यावहारिक जीवन के प्रति प्रतिरोध न करने से मानव जाति उस सभ्यता के मार्ग से भटक जाएगी जिस पर वह चल रही है। यूरोप में मानव जाति जिस सभ्यता के मार्ग पर चल रही है, उनके अनुसार वही एकमात्र मार्ग है।
जिस मार्ग पर समस्त मानवजाति को सदा अग्रसर रहना चाहिए।
रूसी आलोचकों के सामान्य चरित्र के बारे में बस इतना ही।
विदेशी आलोचकों ने भी इन्हीं आधारों से शुरुआत की, लेकिन मेरी पुस्तक पर उनकी चर्चाएँ कुछ अलग थीं।
रूसी आलोचकों से भिन्न, न केवल कम कटु होने और अधिक संस्कृति दिखाने में, बल्कि
विषयवस्तु में भी यही बात लागू होती है।
मेरी पुस्तक और सुसमाचार की शिक्षाओं पर चर्चा करते हुए, जैसा कि पर्वतीय उपदेश में व्यक्त किया गया है, विदेशी आलोचकों ने यह तर्क दिया कि ऐसा सिद्धांत विशेष रूप से ईसाई नहीं है (ईसाई सिद्धांत
(उनके विचारों के अनुसार चाहे कैथोलिक धर्म हो या प्रोटेस्टेंट धर्म) – पर्वतीय उपदेश की शिक्षा
यह केवल बहुत ही सुंदर अव्यवहारिक सपनों की एक श्रृंखला है, जैसा कि रेनन कहते हैं, "डू चार्मंट डॉक्टर", जो अठारह सौ साल पहले रहने वाले गलीली के सरल और अर्ध-जंगली निवासियों और आधे-
रूसी किसान सुतायेव और बोंडारेव जैसे असभ्य किसान और रूसी रहस्यवादी टॉल्स्टॉय, लेकिन बिल्कुल भी नहीं।
यूरोपीय संस्कृति के उच्च स्तर के अनुरूप।
विदेशी स्वतंत्र विचारक आलोचकों ने बड़ी ही नज़ाकत से, मुझे ठेस पहुंचाए बिना, यह प्रयास किया है कि
यह धारणा पैदा करती है कि मेरा यह विश्वास कि मानव जाति को इस तरह के भोले-भाले सिद्धांत द्वारा निर्देशित किया जा सकता है,

पर्वतीय उपदेश दो कारणों से प्रेरित है: पहला, यह कि ऐसा विश्वास आंशिक रूप से मेरे ज्ञान की कमी, इतिहास के मेरे अज्ञान और सिद्धांतों को लागू करने के सभी व्यर्थ प्रयासों के मेरे अज्ञान के कारण है।
पर्वत पर दिए गए उपदेश से जीवन के बारे में, जो इतिहास में दिए गए हैं और जिनका कोई परिणाम नहीं निकला; और यह कि
आंशिक रूप से मेरी इस विफलता के कारण कि मैं उस उदात्त सभ्यता के पूर्ण मूल्य को नहीं समझ पाया हूँ जिसे मानव जाति ने वर्तमान में प्राप्त कर लिया है, जिसमें क्रुप तोपें, धुआं रहित बारूद, अफ्रीका का उपनिवेशीकरण, आयरिश दमन आदि शामिल हैं।
विधेयक, संसदीय सरकार, पत्रकारिता, हड़तालें और एफिल टावर।
डी वोग्यू, लेरॉय बोलियू और मैथ्यू अर्नोल्ड ने भी यही लिखा था। अमेरिकी लेखक सैवेज, लोकप्रिय स्वतंत्र विचारक अमेरिकी उपदेशक इंगरसोल और कई अन्य लोगों ने भी यही लिखा था।
इंगरसोल कहते हैं, "ईसा मसीह की शिक्षा किसी काम की नहीं है, क्योंकि यह हमारे औद्योगिक युग के साथ मेल नहीं खाती।"
भोलेपन से, इस कथन में पूर्ण स्पष्टता और सरलता के साथ, मसीह के सटीक विचार को व्यक्त करते हुए।
हमारे समय के सुसंस्कृत और सभ्य व्यक्तियों द्वारा दी जाने वाली शिक्षाएँ हमारे औद्योगिक युग के लिए किसी काम की नहीं हैं, ठीक वैसे ही जैसे इस औद्योगिक युग का अस्तित्व एक पवित्र तथ्य हो जिसे नकारा नहीं जाना चाहिए।
और इसे बदला नहीं जा सकता था। यह ठीक वैसा ही है जैसे शराबियों को यह सलाह दी जाए कि उन्हें कैसे होश में लाया जा सकता है।

संयम की आदतें रखने वालों को यह जवाब देना चाहिए कि यह सलाह शराब पीने की उनकी आदत के साथ असंगत है।
रूसी और विदेशी, दोनों ही तरह के सभी स्वतंत्र विचारकों के तर्क, चाहे वे कितने भी भिन्न क्यों न हों,
प्रस्तुति का लहजा और तरीका, ये सब मूलतः एक ही विचित्र गलतफहमी को जन्म देते हैं – अर्थात्,
कि ईसा मसीह की शिक्षा, जिसका एक परिणाम बुराई का प्रतिरोध न करना है, हमारे लिए किसी काम की नहीं है क्योंकि इसके लिए हमारे जीवन में परिवर्तन की आवश्यकता होती है।
ईसा मसीह की शिक्षा निरर्थक है क्योंकि यदि इसे व्यवहार में लाया जाए तो जीवन वर्तमान स्वरूप में नहीं चल पाएगा;
हमें यह भी जोड़ना होगा: यदि हमने पापपूर्ण जीवन जीना शुरू किया है, जैसा कि हम जीते हैं और जीने के आदी हैं।
बुराई का प्रतिरोध न करने के प्रश्न पर चर्चा नहीं की गई; इस तथ्य का उल्लेख मात्र कि प्रतिरोध न करने का कर्तव्य मसीह की शिक्षाओं में शामिल है, इस बात का संतोषजनक प्रमाण माना जाता है कि यह अव्यवहारिक है।
संपूर्ण शिक्षण।
इस बीच, यह सोचना आवश्यक था कि निम्नलिखित प्रश्न का कम से कम किसी प्रकार का समाधान बताया जाए, क्योंकि यह लगभग हर उस चीज़ की जड़ में है जिसमें हमारी रुचि है।
सवाल यह उठता है कि जब कुछ लोग आपस में झगड़ते हैं, तो हम उनके विवादों का निपटारा किस तरह करें?
क्या दूसरों द्वारा अच्छाई को बुराई मानना और इसके विपरीत भी संभव है? और यह कहना कि जिसे मैं बुराई मानता हूँ वह बुराई है, भले ही मेरा विरोधी उसे अच्छा मानता हो, इस समस्या का समाधान नहीं है। केवल एक ही समाधान हो सकता है...
दो समाधान हैं: या तो बुराई क्या है इसका एक वास्तविक और निर्विवाद मानदंड खोजना या बलपूर्वक बुराई का विरोध न करना।
इतिहास के आरंभ से ही पहला तरीका आजमाया जाता रहा है, और जैसा कि हम सब जानते हैं, यह
अब तक इससे कोई सफल परिणाम प्राप्त नहीं हुआ है।
दूसरा समाधान यह है कि जब तक हमें कोई सार्वभौमिक समाधान न मिल जाए, तब तक हम जिसे बुराई मानते हैं उसका बलपूर्वक विरोध न करें।
मानदंड – यानी वह समाधान जो मसीह ने दिया है।
हम मसीह द्वारा दिए गए उत्तर को असंतोषजनक मान सकते हैं; हम इसे किसी अन्य और बेहतर उत्तर से बदल सकते हैं, एक ऐसा मानदंड खोजकर जिसके द्वारा सभी मनुष्यों के लिए बुराई को सर्वसम्मति से और एक साथ परिभाषित किया जा सके;
हो सकता है कि वे बर्बर राष्ट्रों की तरह इस प्रश्न के अस्तित्व को ही न पहचानें। लेकिन हम इसे इस तरह से नहीं देख सकते।
वे ईसाई धर्म के विद्वान आलोचकों की तरह ही इस प्रश्न को उठाते हैं। वे या तो यह दावा करते हैं कि ऐसा कोई प्रश्न है ही नहीं, या फिर यह कि कुछ व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूहों को इसे परिभाषित करने का अधिकार देकर इस प्रश्न का समाधान हो जाता है।
बुराई का बलपूर्वक विरोध करना। लेकिन हम जानते हैं कि कुछ व्यक्तियों को ऐसा अधिकार देना उचित नहीं है।
हम इस प्रश्न का निर्णय नहीं कर सकते (खासकर तब जब हम स्वयं ही निश्चित व्यक्ति हों), क्योंकि हमेशा
वे लोग जो अधिकृत व्यक्तियों या सभाओं में इस अधिकार को मान्यता नहीं देते हैं।
लेकिन यह धारणा कि जो हमें बुरा लगता है वह वास्तव में बुरा है, पूरी तरह से गलतफहमी दर्शाती है।
यह प्रश्न ईसाई धर्म के बारे में स्वतंत्र विचारक आलोचकों के तर्क की जड़ में निहित है।

इस प्रकार, चर्च के सदस्यों और स्वतंत्र विचारकों द्वारा मेरी पुस्तक पर की गई चर्चाओं से मुझे यह पता चला कि अधिकांश लोग न तो मसीह की शिक्षा को समझते हैं और न ही उन प्रश्नों को।
जिसे मसीह की शिक्षा हल करती है।

अध्याय 3

ईसाई धर्म को मानने वालों द्वारा गलत समझा गया

ईसाई धर्म के सिद्धांतों का अर्थ, जो एक अल्पसंख्यक वर्ग द्वारा समझा जाता है, अधिकांश लोगों के लिए पूरी तरह से समझ से परे हो गया है - इसका कारण ईसाई धर्म की गलत व्याख्या और विश्वासियों और अविश्वासियों दोनों की यह गलत धारणा है कि वे इसे समझते हैं - चर्च द्वारा विश्वासियों के लिए ईसाई धर्म का अर्थ अस्पष्ट कर दिया गया है - मसीह की शिक्षा का प्रथम प्रकटीकरण - इसका सार और मूर्तिपूजक धर्मों से इसका अंतर - शुरुआत में ईसाई धर्म पूरी तरह से समझ में नहीं आया था, लेकिन सत्य के साथ इसके मेल के कारण इसे स्वीकार करने वालों के लिए यह धीरे-धीरे स्पष्ट होता गया - इसके साथ ही, इसके चमत्कारिक प्रसारण के आधार पर सिद्धांत के प्रामाणिक अर्थ पर अधिकार का दावा भी उभरा - प्रेरितों के कार्य में वर्णित शिष्यों की सभा - चमत्कारिक प्रमाणों द्वारा समर्थित मसीह की शिक्षा के सच्चे अर्थ पर एकमात्र अधिकार के आधिकारिक दावे ने तार्किक विकास के माध्यम से चर्चों के पंथों को जन्म दिया है - एक चर्च ऐसा नहीं कर सकता था ईसा मसीह द्वारा स्थापित - कैटेकिज़्म के अनुसार चर्च की परिभाषाएँ - चर्च हमेशा से ही संख्या में अनेक और एक-दूसरे के शत्रु रहे हैं - विधर्म क्या है - विधर्मों पर जी. अर्नोल्ड का कार्य - विधर्म चर्चों में प्रगति की अभिव्यक्तियाँ हैं - चर्च मनुष्यों में फूट डालते हैं और हमेशा ईसाई धर्म के शत्रु रहे हैं - रूसी चर्च द्वारा किए गए कार्य का विवरण - मत्ती 23:23 - पर्वतीय उपदेश या पंथ - ऑर्थोडॉक्स चर्च लोगों से ईसाई धर्म का सच्चा अर्थ छुपाता है - यही काम अन्य चर्च भी करते हैं - आधुनिक जीवन की सभी बाहरी परिस्थितियाँ चर्च के सिद्धांत को नष्ट करने वाली हैं, और इसलिए चर्च अपने सिद्धांतों का समर्थन करने के लिए हर संभव प्रयास करते हैं।

इस प्रकार, मेरी पुस्तक प्रकाशित होने के बाद मुझे जो जानकारी मिली, उससे यह पता चला कि ईसाई धर्म सिद्धांत में,
इसका सीधा और सरल अर्थ, अल्पमत के लोगों द्वारा समझा जाता था, और हमेशा से ही अल्पमत के लोगों द्वारा समझा जाता रहा है।
जबकि आलोचकों, चाहे वे चर्च के हों या स्वतंत्र विचारक, ने मसीह की शिक्षा को उसके प्रत्यक्ष अर्थ में लेने की संभावना से इनकार किया। इन सब बातों ने मुझे आश्वस्त किया कि एक ओर जहाँ इस सिद्धांत की सच्ची समझ
यह कभी भी अल्पमत के हाथों में नहीं खोया था, बल्कि दूसरी ओर यह और भी स्पष्ट रूप से स्थापित होता जा रहा था।
इसका अर्थ अधिकांश लोगों के लिए धीरे-धीरे अस्पष्ट होता जा रहा था। परिणामस्वरूप, अंततः अस्पष्टता की ऐसी गहराई तक पहुँच गई है कि लोग सरलतम उपदेशों को भी उनके प्रत्यक्ष अर्थ में नहीं समझ पाते हैं।
सुसमाचार में इसे सबसे सरल शब्दों में व्यक्त किया गया है।
आज भी, जब सुसमाचार का प्रकाश मानव चेतना के सबसे अंधकारमय कोनों तक पहुँच चुका है, तब भी मसीह की शिक्षा को उसके सच्चे, सरल और प्रत्यक्ष अर्थ में सामान्यतः नहीं समझा जाता है; जब,
ईसा मसीह के शब्दों में, जो कान में कहा गया है, वह छतों से घोषित किया जाता है; और जब
सुसमाचार मानव जीवन के हर पहलू को प्रभावित कर रहा है – घरेलू, आर्थिक, नागरिक, विधायी, और
अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर। ऐसे समय में मसीह के शब्दों की सही समझ का यह अभाव समझ से परे होता, यदि इसके पीछे कोई स्पष्ट कारण न होते।

इन कारणों में से एक यह तथ्य है कि विश्वासी और अविश्वासी दोनों ही इस बात से दृढ़तापूर्वक आश्वस्त हैं कि वे
वे लंबे समय से मसीह की शिक्षा को समझते आ रहे हैं, और वे इसे इतनी पूर्णता, निर्विवादता और निश्चितता से समझते हैं कि इसका वही अर्थ हो सकता है जो वे इसे देते हैं। और इसका कारण यह है कि
यह दृढ़ विश्वास है कि सुसमाचार की गलत व्याख्या और परिणामस्वरूप उसकी गलतफहमी एक त्रुटि है।
इतने लंबे समय से चले आ रहे इस मामले में, पानी की सबसे तेज़ धारा भी पहले से भरे हुए प्याले में एक बूँद नहीं डाल सकती।
सबसे कठिन विषय भी सबसे मंदबुद्धि व्यक्ति को समझाया जा सकता है, बशर्ते उसने कोई धारणा न बनाई हो।
उनके बारे में पहले से ही जानकारी है; लेकिन सबसे सरल बात भी सबसे बुद्धिमान व्यक्ति को तब तक स्पष्ट नहीं हो सकती जब तक कि वह
उसे पूरा विश्वास है कि वह बिना किसी संदेह के पहले से ही जानता है कि उसके सामने क्या रखा गया है।
आज के समय में ईसाई धर्म को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि यह एक ऐसा सिद्धांत है जिसे हर कोई इतने लंबे समय से जानता है और बिना किसी संकोच के इसके हर छोटे से छोटे विवरण को स्वीकार कर चुका है कि इसे समझना असंभव है।
इसे वर्तमान में जिस तरह से समझा जाता है, उससे अलग किसी अन्य तरीके से।
आज ईसाई धर्म को चर्च के सिद्धांतों का पालन करने वाले सभी लोग एक अलौकिक चमत्कारिक रहस्योद्घाटन के रूप में समझते हैं, जिसमें धर्मग्रंथ में दोहराई गई हर बात का खुलासा होता है। अविश्वासी इसे एक
यह अलौकिक शक्तियों में विश्वास करने की मनुष्य की लालसा का एक उदाहरण है, जिससे मानव जाति अब आगे निकल चुकी है।
यह एक ऐतिहासिक घटना है जिसे कैथोलिक धर्म, ग्रीक ऑर्थोडॉक्स धर्म और अन्य धर्मों में पूर्ण अभिव्यक्ति मिली है।

21

प्रोटेस्टेंटवाद का हमारे लिए अब कोई जीवित महत्व नहीं रह गया है। सुसमाचार का महत्व विश्वासियों से चर्च द्वारा और अविश्वासियों से विज्ञान द्वारा छिपा दिया गया है।
मैं पहले पूर्व की बात करूंगा। अठारह सौ वर्ष पूर्व, के बीचोंबीच प्रकट हुआ...
मूर्तिपूजक रोमन दुनिया में एक विचित्र नया सिद्धांत, जो पुराने धर्मों से बिलकुल अलग था, और जिसका श्रेय एक व्यक्ति, ईसा मसीह को दिया जाता था।
यह नया सिद्धांत अपने स्वरूप और विषयवस्तु दोनों में उस यहूदी जगत के लिए बिल्कुल नया था जिसमें इसे प्रस्तुत किया गया था।
इसकी उत्पत्ति हुई, और उससे भी अधिक रोमन जगत में, जहाँ इसका प्रचार और प्रसार हुआ।
यहूदी धर्म की विस्तृत धार्मिक परंपराओं के बीच, जिसमें, यशायाह के शब्दों में, कानून
इसे कानून पर आधारित किया गया था, और रोमन कानूनी व्यवस्था के मध्य में यह अपने चरम पर पहुंचा।
पूर्णता के बाद, एक नया सिद्धांत प्रकट हुआ, जिसने न केवल सभी देवताओं, बल्कि सभी भय और पूजा को भी नकार दिया।
न केवल उन पर, बल्कि सभी मानवीय संस्थाओं और उनकी सभी आवश्यकताओं पर भी। पुराने धर्मों के सभी नियमों के स्थान पर, यह सिद्धांत केवल मसीह के व्यक्तित्व में आंतरिक पूर्णता, सत्य और प्रेम का प्रतीक स्थापित करता है।
और—मनुष्यों द्वारा इस आंतरिक पूर्णता की प्राप्ति के परिणामस्वरूप—पूर्वानुमानित बाहरी पूर्णता भी प्राप्त हो जाती है।

भविष्यवक्ताओं द्वारा – परमेश्वर का राज्य, जब सभी मनुष्य युद्ध करना छोड़ देंगे, जब सभी को परमेश्वर की शिक्षा दी जाएगी और प्रेम में एकजुट किया जाएगा, और शेर मेमने के साथ लेटेगा। धमकियों के बजाय
वह दंड जो धर्मों और सरकारों के सभी पुराने कानूनों में समान रूप से पालन न करने पर निर्धारित किया गया था।
उनके नियमों के पालन पर पुरस्कार के वादों के बजाय, इस सिद्धांत ने लोगों को केवल इसलिए अपनी ओर आकर्षित किया क्योंकि यह सत्य था। “यदि कोई व्यक्ति उसकी इच्छा पूरी करना चाहता है, तो वह इस सिद्धांत को जान लेगा कि यह उसके लिए उपयुक्त है या नहीं।”
परमेश्वर।” (यूहन्ना 7:17) “यदि मैं सत्य कहूँ, तो तुम मुझ पर विश्वास क्यों नहीं करते? परन्तु तुम तो मुझे मार डालना चाहते हो, एक ऐसे मनुष्य को जो
उसने तुम्हें सत्य बताया है। तुम सत्य को जानोगे, और सत्य तुम्हें मुक्त करेगा। ईश्वर एक आत्मा है, और
जो उसकी उपासना करते हैं, उन्हें आत्मा और सच्चाई से उसकी उपासना करनी चाहिए। मेरी बातों का पालन करो, और तुम जान जाओगे कि वे सच हैं या नहीं।” (यूहन्ना 8:46) इस सिद्धांत के समर्थन में इसके अलावा कोई प्रमाण नहीं दिया गया।
सत्य, सिद्धांत का सत्य के साथ सामंजस्य। संपूर्ण शिक्षा इसी मान्यता पर आधारित थी।
सत्य का अनुसरण करना और सत्य की निरंतर प्राप्ति करना, तथा जीवन के कार्यों में सत्य का और अधिक निकटता से पालन करना। इस सिद्धांत में ऐसा कोई कार्य नहीं है जो किसी व्यक्ति को धर्मी ठहरा सके और उसे मुक्ति दिला सके।
उसके मार्गदर्शन के लिए केवल सत्य की छवि ही है, मसीह के व्यक्तित्व में आंतरिक पूर्णता के लिए, और
ईश्वर के राज्य की स्थापना में बाह्य पूर्णता। इस शिक्षा की पूर्ति केवल चुने हुए मार्ग पर चलने, मसीह के अनुकरण में आंतरिक पूर्णता के निकट आने में निहित है, और
ईश्वर के राज्य की स्थापना में बाह्य पूर्णता। किसी व्यक्ति की अधिक या कम आशीष।
इस सिद्धांत के अनुसार, मनुष्य अपनी प्राप्त की गई पूर्णता की डिग्री पर नहीं, बल्कि
वह जिस गति से इसका पीछा कर रहा है, वह कम या ज्यादा हो सकती है।
कर वसूलने वाले ज़ैकियस की पूर्णता की ओर प्रगति, उस पापी स्त्री की, और
इस सिद्धांत के अनुसार, क्रूस पर लटका हुआ डाकू स्थिर अवस्था की तुलना में कहीं अधिक आनंदमय अवस्था में है।
फरीसियों का धर्म। खोई हुई भेड़ निन्यानवे सही-सलामत भेड़ों से कहीं अधिक प्रिय है। खोया हुआ बेटा, खोया हुआ और फिर मिला हुआ सिक्का, परमेश्वर को उन लोगों से कहीं अधिक प्रिय और कीमती हैं जो...
खोया नहीं है।
इस सिद्धांत के अनुसार, प्रत्येक अवस्था आंतरिक और बाह्य पूर्णता की प्राप्ति में केवल एक विशेष चरण है, और इसलिए इसका अपने आप में कोई महत्व नहीं है। परम सुख की प्राप्ति की दिशा में प्रगति में ही निहित है।
पूर्णता; किसी भी स्थिति में स्थिर रहना इस आनंद की समाप्ति का कारण बनता है।
“अपने बाएं हाथ को यह न जानने दें कि आपका दाहिना हाथ क्या कर रहा है।” “किसी भी व्यक्ति ने अपना हाथ
हल चलाना और पीछे मुड़कर देखना परमेश्वर के राज्य के लिए उपयुक्त है। "इस बात पर आनन्दित मत हो कि आत्माएँ तुम्हारे अधीन हैं, बल्कि यह चाहो कि तुम्हारे नाम स्वर्ग में लिखे जाएँ।" "परिपूर्ण बनो, जैसे तुम्हारा स्वर्गीय पिता है।"
उत्तम। “सर्वप्रथम स्वर्ग के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज करो।”

इस सिद्धांत की पूर्ति केवल निरंतर उच्चतर सत्य की प्राप्ति की ओर प्रगति करने, अपने भीतर अधिकाधिक दृढ़ प्रेम स्थापित करने और उसे बनाए रखने में ही पाई जा सकती है।

अपने से बाहर परमेश्वर के राज्य को अधिकाधिक व्यापक रूप से स्थापित करना।

यह स्पष्ट है कि यहूदी और गैर-यहूदी जगत के बीच प्रकट होने के कारण, ऐसी शिक्षा को अधिकांश लोगों द्वारा स्वीकार नहीं किया जा सकता था, जो उस समय के जीवन से बिल्कुल भिन्न जीवन जी रहे थे।

इसके द्वारा अपेक्षित था। यह भी स्पष्ट है कि जिन लोगों ने इसे स्वीकार किया, उनके लिए भी यह उनके सभी पुराने विचारों के इतना विपरीत था कि वे इसे इसके पूर्ण अर्थ में समझ नहीं सके।

यह केवल गलतफहमियों, त्रुटियों, आंशिक स्पष्टीकरणों और लगातार होने वाली घटनाओं के कारण ही संभव हो पाया है।

पीढ़ियों के सुधारों और परिवर्धनों के कारण ईसाई धर्म सिद्धांत का अर्थ मनुष्यों के लिए लगातार अधिकाधिक स्पष्ट होता गया है। जीवन के प्रति ईसाई दृष्टिकोण ने इस पर गहरा प्रभाव डाला है।

यहूदी और गैर-यहूदी, और गैर-यहूदी और यहूदी जीवन के दृष्टिकोण ने भी प्रभाव डाला है।

ईसाई धर्म। और ईसाई धर्म, एक जीवित शक्ति के रूप में, विलुप्त यहूदी धर्म और मूर्तिपूजा पर लगातार हावी होता गया है, और जैसे-जैसे इसने अपने आप को मिश्रण से मुक्त किया है, यह लगातार अधिक स्पष्ट होता गया है।

उस पर झूठ का आवरण था। मनुष्य अर्थ की प्राप्ति में और आगे बढ़ते गए।

ईसाई धर्म को अपनाया और जीवन में इसे और अधिक गहराई से महसूस किया।

जैसे-जैसे मानव जाति का जीवनकाल बढ़ता गया, ईसाई धर्म का अर्थ और भी स्पष्ट होता गया, जैसा कि जीवन के हर सिद्धांत के साथ हमेशा होता है।

आने वाली पीढ़ियों ने अपने पूर्ववर्तियों की गलतियों को सुधारा और धीरे-धीरे लक्ष्य के और करीब आती गईं।

सही अर्थ की समझ। ईसाई धर्म के आरंभिक काल से ही ऐसा था। और इसी प्रकार, ईसाई धर्म के आरंभिक काल से ही ऐसे लोग थे जिन्होंने अपने अधिकार का दावा करना शुरू कर दिया था।

कि वे इस सिद्धांत को जो अर्थ देते हैं, वही एकमात्र सत्य अर्थ है, और प्रमाण के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

उनकी व्याख्या की सत्यता के समर्थन में अलौकिक घटनाएँ।

यही सिद्धांत की गलतफहमी का मुख्य कारण था, और बाद में इसी कारण से यह और भी जटिल हो गया।

इसका पूर्ण विरूपण।

ऐसा माना जाता था कि ईसा मसीह की शिक्षाएँ अन्य सत्यों की तरह मनुष्यों तक नहीं पहुँचीं, बल्कि एक अलग तरीके से पहुँचीं।

विशेष चमत्कारी तरीके से। इस प्रकार, शिक्षा की सत्यता मन की आवश्यकताओं और मनुष्य के संपूर्ण स्वभाव के साथ उसके सामंजस्य से सिद्ध नहीं हुई, बल्कि उसके प्रसारण के चमत्कारी तरीके से सिद्ध हुई, जो

इसे इस पर की गई व्याख्या की सत्यता के अकाट्य प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया गया था। यह परिकल्पना

यह शिक्षा की गलतफहमी से उत्पन्न हुआ, और इसका परिणाम यह हुआ कि इसे सही ढंग से समझना असंभव हो गया।

और यह सबसे पहले प्राचीन काल में हुआ, जब इस सिद्धांत को अभी पूरी तरह से समझा नहीं गया था और
अक्सर इसकी गलत व्याख्या की जाती है, जैसा कि हम सुसमाचारों और प्रेरितों के कार्य में देखते हैं। सिद्धांत जितना कम समझा जाता था, उतना ही अस्पष्ट प्रतीत होता था और इसकी सत्यता के बाहरी प्रमाण उतने ही आवश्यक हो जाते थे। प्रस्ताव
हमें दूसरों के साथ वैसा व्यवहार नहीं करना चाहिए जैसा हम नहीं चाहते कि वे हमारे साथ करें, इसे साबित करने की आवश्यकता नहीं थी।
चमत्कारों के लिए आस्था के किसी अभ्यास की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि यह प्रस्ताव अपने आप में ही ठोस और सुसंगत है।
मनुष्य के मन और स्वभाव के साथ; लेकिन यह प्रस्ताव कि मसीह ईश्वर थे, चमत्कारों द्वारा सिद्ध किया जाना था जो हमारी समझ से पूरी तरह परे थे।
ईसा मसीह की शिक्षाओं की समझ जितनी धुंधली होती गई, चमत्कार उतने ही कम होते गए।
इसमें चमत्कार का समावेश जितना अधिक होता गया, सिद्धांत अपने अर्थ से उतना ही विमुख होता गया और उतना ही अस्पष्ट होता गया; और यह अपने अर्थ से जितना विमुख होता गया, उतना ही अस्पष्ट होता गया।
यह जितना अधिक अस्पष्ट होता गया, इसकी अचूकता को उतना ही अधिक दृढ़ता से प्रतिपादित करना पड़ा, और उतना ही कम
इस प्रकार यह सिद्धांत बोधगम्य हो गया।
सुसमाचारों, प्रेरितों के कार्य और पत्रियों से यह देखा जा सकता है कि प्राचीन काल से ही गैर-
इस सिद्धांत की समझ ने चमत्कारिक घटनाओं के माध्यम से प्रमाणों की आवश्यकता को जन्म दिया।
समझ से परे।
प्रेरितों के कार्य की पुस्तक में पहला उदाहरण यरूशलेम में एकत्रित सभा का है, जो इस प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए इकट्ठा हुई थी कि क्या खतना न किए हुए लोगों और मांस खाने वालों को बपतिस्मा दिया जाए या नहीं।
मूर्तियों को अर्पित किया गया भोजन।
इस प्रश्न के उठने मात्र से ही यह स्पष्ट हो गया कि इस पर चर्चा करने वाले लोग मसीह की शिक्षा को नहीं समझते थे, जिन्होंने सभी बाहरी अनुष्ठानों - स्नान, शुद्धिकरण, उपवास और सब्त - को अस्वीकार कर दिया था।
स्पष्ट रूप से कहा गया था, “यह मायने नहीं रखता कि मनुष्य के मुंह में क्या जाता है, बल्कि यह मायने रखता है कि मनुष्य के मुंह से क्या निकलता है।”
"उसे अपवित्र करता है," और इसलिए खतना न किए गए लोगों को बपतिस्मा देने का प्रश्न केवल उन लोगों के बीच ही उठ सकता था, जो यद्यपि अपने गुरु से प्रेम करते थे और उनकी शिक्षा की महानता को अस्पष्ट रूप से महसूस करते थे, फिर भी उन्होंने बपतिस्मा नहीं दिया।
शिक्षण को बहुत स्पष्ट रूप से समझें। और यही तथ्य था।

सभा के सदस्यों द्वारा सिद्धांत को समझने में विफलता के अनुपात में ही, उनकी अपूर्ण व्याख्या की बाहरी पुष्टि की आवश्यकता थी। और फिर इस प्रश्न का निपटारा करने के लिए,
जिस प्रश्न को पूछने मात्र से ही सिद्धांत के प्रति उनकी गलतफहमी सिद्ध हो गई, उसी में यह बात कही गई थी।

सभा, जैसा कि प्रेरितों के कार्य में वर्णित है, वह विचित्र वाक्यांश, जिसे पहली बार कुछ कथनों को बाहरी पुष्टि देने के लिए आवश्यक पाया गया था, और जो इतनी बुराई का कारण बना है।
यानी, यह दावा किया गया कि उनके द्वारा लिए गए निर्णय की सत्यता की गारंटी दी गई थी।
उनके निर्णय में पवित्र आत्मा, अर्थात् ईश्वर की चमत्कारी भागीदारी थी। लेकिन यह दावा कि पवित्र आत्मा, अर्थात् ईश्वर ने प्रेरितों के माध्यम से बात की, इसके लिए प्रमाण की आवश्यकता थी। और इस प्रकार यह हुआ
इसकी पुष्टि के लिए यह आवश्यक था कि पेंटेकोस्ट के दिन पवित्र आत्मा अग्नि की लपटों के रूप में उन लोगों पर उतरे।
जिसने यह दावा किया। (इसके विवरण में, पवित्र आत्मा का अवतरण सभा से पहले होता है, लेकिन
प्रेरितों के कार्य की पुस्तक इन दोनों घटनाओं के बहुत बाद लिखी गई थी। लेकिन पवित्र आत्मा के अवतरण को उन लोगों के लिए भी सिद्ध करना आवश्यक था जिन्होंने आग की लपटें नहीं देखी थीं (हालाँकि यह समझना आसान नहीं है कि क्यों एक
किसी व्यक्ति के सिर के ऊपर जलती हुई आग की लपट यह साबित कर देनी चाहिए कि वह व्यक्ति जो कहने वाला है वह सत्य होगा।
(निःसंदेह सत्य)। और इस प्रकार और भी अधिक चमत्कारों और परिवर्तनों, मृतकों को जीवनदान देने, जीवितों को मृत्युदंड देने और उन सभी चमत्कारों की आवश्यकता उत्पन्न हुई जो एक बाधा रहे हैं।
पुरुषों का, जिनसे प्रेरितों के कार्य भरे पड़े हैं, और जो किसी को भी ईसाई धर्म की सच्चाई के बारे में आश्वस्त करने के बजाय, ऐसा करते हैं।
सिद्धांत, केवल लोगों को इससे दूर कर सकता है। सत्य की पुष्टि करने के ऐसे साधन का परिणाम यह हुआ कि चमत्कारों की कहानियों द्वारा सत्य की पुष्टि जितनी अधिक एक के बाद एक जमा होती गई, उतनी ही अधिक
इस सिद्धांत को उसके मूल अर्थ से विकृत कर दिया गया, और यह उतना ही अधिक समझ से परे होता चला गया।
इस प्रकार यह प्राचीन काल से ही था, और इसी प्रकार निरंतर बढ़ता रहा, जब तक कि यह हमारे समय तक नहीं पहुँच गया।
जिस दिन रूपांतरण के सिद्धांतों और पोप, बिशप या धर्मग्रंथ की अचूकता का तार्किक चरमोत्कर्ष सामने आया, और अंधविश्वास की आवश्यकता को समझ से परे और पूरी तरह से निरर्थक बना दिया गया।
अर्थहीन, ईश्वर में नहीं, बल्कि मसीह में, किसी सिद्धांत में नहीं, बल्कि एक व्यक्ति में, जैसा कि कैथोलिक धर्म में है, या
जैसे ग्रीक ऑर्थोडॉक्स में व्यक्ति, या प्रोटेस्टेंटवाद में पुस्तक। ईसाई धर्म जितना अधिक व्यापक रूप से फैला, और जितने अधिक लोग इसके प्रभाव में आ गए जो इसके लिए तैयार नहीं थे,
जितना कम इसे समझा गया, उतनी ही अधिक इसकी अचूकता पर जोर दिया गया, और उतना ही कम संभव हो पाया
सिद्धांत का सही अर्थ समझ में आने लगा। कॉन्स्टेंटाइन के समय में सिद्धांत की पूरी व्याख्या को पहले ही एक संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत कर दिया गया था - जो लौकिक संदर्भों द्वारा समर्थित थी।
परिषद में हुए विवादों के अधिकार को – एक ऐसे पंथ के लिए जो गणना करता था – मेरा मानना है
फलां-फलां, फलां-फलां, फलां-फलां, फलां-फलां में अंत तक – एक पवित्र, प्रेरितिक चर्च तक, जिसका अर्थ है
स्वयं को चर्च कहने वाले व्यक्तियों की अचूकता। परिणामस्वरूप, इसका अर्थ यह है कि व्यक्ति अब ईश्वर या मसीह में, जैसा कि उन्हें प्रकट किया गया है, विश्वास नहीं करता, बल्कि चर्च द्वारा दिए गए आदेशों में विश्वास करता है।
उस पर विश्वास करने के लिए।

लेकिन चर्च पवित्र है; चर्च की स्थापना मसीह ने की थी। ईश्वर मनुष्यों को अपनी शिक्षाओं की मनमानी व्याख्या करने के लिए नहीं छोड़ सकता था – इसलिए उसने चर्च की स्थापना की। वे सभी कथन सरासर असत्य हैं और
यह निराधार है कि कोई उनका खंडन करने में शर्म महसूस करे। कहीं भी या किसी भी चीज़ में नहीं, सिवाय इसके कि
क्या हम चर्च में यह पाते हैं कि ईश्वर या मसीह ने चर्च जैसी किसी चीज़ की स्थापना की थी, जैसा कि चर्चवासी समझते हैं? सुसमाचारों में चर्च के विरुद्ध चेतावनी दी गई है, क्योंकि यह एक बाहरी सत्ता है।
यह बात उस अंश में सबसे स्पष्ट और प्रत्यक्ष रूप से कही गई है जहाँ यह कहा गया है कि मसीह के अनुयायियों को "किसी भी मनुष्य को पुकारना नहीं चाहिए"।
स्वामी।" लेकिन कहीं भी उस आधार के बारे में कुछ नहीं कहा गया है जिसे चर्च के अनुयायी चर्च कहते हैं।
सुसमाचारों में चर्च शब्द का प्रयोग दो बार किया गया है - एक बार किसी विवाद का निपटारा करने के लिए पुरुषों की सभा के अर्थ में, और दूसरी बार एक पत्थर के बारे में अस्पष्ट कथन के संदर्भ में - पीटर, और द्वार।
नरक। इन दो अंशों से जिनमें चर्च शब्द का प्रयोग केवल एक अर्थ में किया गया है, यह स्पष्ट होता है कि यह एक
सभा से वह सब कुछ निकाला गया है जिसे हम अब चर्च द्वारा समझते हैं।
लेकिन ईसा मसीह ने चर्च की स्थापना नहीं की होगी, यानी, जिस चर्च को हम अब इस शब्द से समझते हैं।
आज हम जिस चर्च को उसके संस्कारों, चमत्कारों और सबसे बढ़कर उसकी विशेषताओं के साथ जानते हैं, उसकी अवधारणा से बिल्कुल अलग कुछ भी नहीं है।
अचूकता का दावा या तो मसीह के शब्दों में पाया जा सकता है या उस समय के लोगों के विचारों में।
यह तथ्य कि मनुष्यों ने बाद में बनी चीजों को उसी शब्द से पुकारा जिस शब्द का प्रयोग ईसा मसीह ने किसी चीज के लिए किया था, यह है कि पूरी तरह से अलग होने से उन्हें यह दावा करने का अधिकार नहीं मिल जाता कि मसीह ने एकमात्र, सच्चे चर्च की स्थापना की थी।

इसके अलावा, यदि वास्तव में मसीह ने अपने सभी उपदेशों और संपूर्ण विश्वास की नींव के रूप में चर्च जैसी संस्था की स्थापना की होती, तो उन्होंने निश्चित रूप से इस संस्था का स्पष्ट और निश्चित रूप से वर्णन किया होता।
और चमत्कारों की कहानियों के अलावा, जो हर किसी के समर्थन में इस्तेमाल की जाती हैं, एकमात्र सच्चा चर्च प्रदान किया होता।
एक प्रकार का अंधविश्वास, कुछ ऐसे स्पष्ट संकेत कि उनकी प्रामाणिकता पर कभी संदेह हो ही नहीं सकता था। लेकिन उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया। और विभिन्न संस्थाएँ रही हैं और अभी भी मौजूद हैं।
प्रत्येक स्वयं को सच्चा चर्च कहता है।
कैथोलिक धर्मोपदेश कहता है, "चर्च विश्वासियों का वह समाज है जिसकी स्थापना हमारे प्रभु यीशु मसीह ने की थी, जो पूरी पृथ्वी पर फैला हुआ है और वैध पादरियों, मुख्य रूप से हमारे, के अधिकार के अधीन है।"
पवित्र पिता पोप, "2 'वैध पादरी' शब्दों से पुरुषों के एक संघ को समझते हैं जिनके पास
इसके प्रमुख पोप हैं, और इसमें एक निश्चित संगठन द्वारा एक साथ बंधे हुए कुछ व्यक्ति शामिल हैं।

ग्रीक ऑर्थोडॉक्स कैटेकिज़्म कहता है, “चर्च यीशु मसीह द्वारा पृथ्वी पर स्थापित एक समाज है, जो एक ही दिव्य सिद्धांत और संस्कारों द्वारा, उनके शासन और मार्गदर्शन में एक इकाई के रूप में एकजुट है।”
ईश्वर द्वारा नियुक्त पुरोहित वर्ग का," जिसका अर्थ है "ईश्वर द्वारा नियुक्त पुरोहित वर्ग" से ग्रीक ऑर्थोडॉक्स का तात्पर्य है।
पुरोहित वर्ग, जिसमें कुछ ऐसे व्यक्ति शामिल होते हैं जो संयोगवश ऐसे या ऐसे पदों पर आसीन होते हैं।
लूथरन धर्मशिक्षा में कहा गया है, "चर्च पवित्र ईसाई धर्म है, या सभी विश्वासियों का समूह है।"
उनके मुखिया, मसीह के अधीन, जिनसे पवित्र आत्मा सुसमाचारों और संस्कारों के माध्यम से वादा करता है,
"यह चर्च स्वर्गीय मुक्ति का संचार और प्रशासन करता है," जिसका अर्थ है कि कैथोलिक चर्च भ्रम में डूबा हुआ है, और मुक्ति का सच्चा साधन लूथरवाद में है।
कैथोलिकों के लिए ईश्वर का चर्च रोमन पुरोहित वर्ग और पोप के साथ मेल खाता है। यूनानियों के लिए
ऑर्थोडॉक्स विश्वासियों के अनुसार, ईश्वर का चर्च रूस की स्थापना और पुरोहिती के साथ मेल खाता है।3
लूथरवादियों के लिए, ईश्वर का चर्च उन पुरुषों के समूह को संदर्भित करता है जो बाइबिल और लूथर की कैटेकिज़्म के अधिकार को मान्यता देते हैं।
आम तौर पर, जब ईसाई धर्म के उदय की बात की जाती है, तो मौजूदा चर्चों में से किसी एक से संबंधित पुरुषों का जिक्र होता है।
चर्च शब्द का प्रयोग एकवचन में किया जाता है, मानो केवल एक ही चर्च रहा हो। लेकिन यह बिल्कुल गलत है। चर्च, एक ऐसी संस्था के रूप में जिसने अचूक सत्य होने का दावा किया, ऐसा नहीं था।
इसका प्रकट होना एक अकेला मामला था; कम से कम दो चर्च ऐसे थे जिन्होंने सीधे तौर पर यह दावा किया था।
जब तक विश्वासी आपस में सहमत थे और समूह एक था, तब तक उसे स्वयं को चर्च घोषित करने की आवश्यकता नहीं थी। यह तभी हुआ जब विश्वासी विरोधी गुटों में विभाजित हो गए और एक-दूसरे के सिद्धांतों का त्याग करने लगे।
दूसरा कारण यह था कि प्रत्येक पक्ष को स्वयं को सत्य का श्रेय देकर अपनी सत्यता की पुष्टि करना आवश्यक प्रतीत हुआ।
अचूकता। एक चर्च की अवधारणा तभी उत्पन्न हुई जब दो पक्ष विभाजित होकर विवाद कर रहे थे।
वे दोनों एक-दूसरे को विधर्मी कहते थे और केवल अपने पक्ष को ही अचूक चर्च मानते थे।
यदि हमें पता होता कि एक ऐसा चर्च था जिसने वर्ष 51 में गैर-खतनाशुदा लोगों को स्वीकार करने का निर्णय लिया था, तो वह यह है कि...
ऐसा सिर्फ इसलिए था क्योंकि एक और चर्च था - यहूदियों का चर्च - जिसने गैर-खतना किए हुए लोगों को बाहर रखने का फैसला किया था।

2 “चर्च विश्वासियों का समाज है, जिसकी स्थापना हमारे प्रभु यीशु मसीह ने की थी, जो पूरी पृथ्वी पर फैला हुआ है, और अपने वैध पादरियों के अधिकार के अधीन है, और उनमें से प्रमुख हमारे पवित्र पिता पोप हैं।”
3. होम्याकोव की चर्च की परिभाषा, जिसे रूसियों के बीच कुछ हद तक स्वीकार किया गया था, स्थिति को बेहतर नहीं बनाती, यदि हम ग्रीक ऑर्थोडॉक्स चर्च को एकमात्र सच्चा चर्च मानने में होम्याकोव से सहमत हों। होम्याकोव का दावा है कि चर्च प्रेम से एकजुट पुरुषों का समूह है (जिनमें पादरी और आम लोगों का कोई भेद नहीं है), और केवल प्रेम से एकजुट पुरुषों को ही सत्य प्रकट होता है (आइए हम एक दूसरे से प्रेम करें, विचारों की एकता में, आदि)। और ऐसा चर्च वह है जो सर्वप्रथम नाइसीन पंथ को मान्यता देता है, और द्वितीयतः चर्चों के विभाजन के बाद पोप और नए सिद्धांतों को मान्यता नहीं देता। लेकिन चर्च की ऐसी परिभाषा के साथ, होम्याकोव द्वारा किए गए प्रयास के अनुसार, प्रेम से

एकजुट चर्च और नाइसीन पंथ एवं फोटियस के सिद्धांत को मान्यता देने वाले चर्च के बीच सामंजस्य स्थापित करना और भी कठिन हो जाता है। इसलिए, होम्याकोव का यह दावा कि प्रेम से एकजुट और इसलिए पवित्र यह चर्च वही चर्च है जिसमें ग्रीक ऑर्थोडॉक्स पुरोहित आस्था रखते हैं, कैथोलिक या ऑर्थोडॉक्स के दावों से भी अधिक मनमाना है। यदि हम चर्च की अवधारणा को उस अर्थ में स्वीकार करते हैं जो होम्याकोव ने दिया है - अर्थात् प्रेम और सत्य से बंधे मनुष्यों का समूह - तो इस समूह के बारे में, यदि ऐसा कोई समूह अस्तित्व में है, तो कोई भी व्यक्ति केवल इसके प्रेम और सत्य के बारे में ही कह सकता है, लेकिन कोई भी ऐसा बाहरी संकेत नहीं हो सकता जिससे कोई स्वयं को या किसी और को इस पवित्र समूह का सदस्य मान सके, न ही जिससे किसी को इससे बाहर रखा जा सके; अतः कोई भी संस्था जिसका कोई बाहरी अस्तित्व हो, इस अवधारणा के अनुरूप नहीं हो सकती।

25

यदि आज कोई कैथोलिक चर्च अपनी अचूकता का दावा करता है, तो इसका कारण केवल यह है कि ऐसे चर्च हैं - ग्रीको-रूसी, ओल्ड ऑर्थोडॉक्स और लूथरन - जिनमें से प्रत्येक अपनी-अपनी अचूकता का दावा करता है।

अन्य सभी चर्चों के इस दावे को नकारते हुए। परिणामस्वरूप, एकमात्र चर्च केवल एक काल्पनिक कल्पना मात्र है।

इसमें वास्तविकता का जरा सा भी अंश नहीं है।

एक वास्तविक ऐतिहासिक तथ्य के रूप में, कई ऐसे समूह अस्तित्व में रहे हैं और अभी भी मौजूद हैं, जिनमें से प्रत्येक यह दावा करता है कि केवल एक ही चर्च है, जिसकी स्थापना ईसा मसीह ने की थी, और बाकी सभी जो खुद को चर्च कहते हैं, वे केवल संप्रदाय हैं।

और विधर्म।

विश्व स्तर पर सबसे अधिक प्रभाव रखने वाले चर्चों की धार्मिक शिक्षाएँ – कैथोलिक, ओल्ड ऑर्थोडॉक्स,

और लूथरन खुले तौर पर इस बात का दावा करते हैं।

कैथोलिक धर्मोपदेश में कहा गया है, “चर्च से बाहर कौन हैं? अविश्वासी,

विधर्मी, फूट डालने वाले।" 4 तथाकथित ग्रीक ऑर्थोडॉक्स को फूट डालने वाले माना जाता है और

लूथरवादियों को विधर्मी माना जाता है, इसलिए कैथोलिक धर्मशिक्षा के अनुसार चर्च में केवल वही लोग हैं जो...

कैथोलिक।

तथाकथित ऑर्थोडॉक्स कैटेकिज़्म में कहा गया है, "एक ईसाई चर्च से तात्पर्य ऑर्थोडॉक्स चर्च से है, जो सार्वभौमिक चर्च के साथ पूर्णतः सामंजस्य में है।" जहाँ तक रोमन चर्च का सवाल है और

अन्य संप्रदायों (लूथरवादियों और बाकी जिन्हें वे चर्च का नाम तक नहीं देते) के साथ ऐसा नहीं हो सकता।

वे स्वयं ही सच्चे चर्च से अलग हो गए हैं, इसलिए वे उसमें शामिल नहीं हैं।

इस परिभाषा के अनुसार कैथोलिक और लूथरन चर्च से बाहर हैं, और केवल कुछ ही लोग हैं।

चर्च में रूढ़िवादी।

लूथरन धर्मशिक्षा में कहा गया है, “सच्चे चर्च की पहचान इस तथ्य से होती है कि उसमें परमेश्वर का वचन समाहित है।”

“शुद्धता से और मानवीय अतिशयोक्ति के बिना शिक्षा दी जाती है, और मसीह की स्थापना के अनुसार संस्कारों का निष्ठापूर्वक पालन किया जाता है।”5

इस परिभाषा के अनुसार, वे सभी जिन्होंने मसीह की शिक्षा में कुछ भी जोड़ा है और
कैथोलिक और ग्रीक चर्चों की तरह, प्रेरित भी चर्च से बाहर हैं। और चर्च में केवल प्रोटेस्टेंट ही हैं।
कैथोलिकों का दावा है कि पवित्र आत्मा उनके पुरोहित पद में बिना किसी रुकावट के संचारित होती रही है।
ऑर्थोडॉक्स का दावा है कि उनके पुरोहित पद में पवित्र आत्मा का संचार बिना किसी रुकावट के होता रहा है। एरियन का दावा था कि उनके पुरोहित पद में पवित्र आत्मा का संचार होता रहा है (उन्होंने यह दावा केवल कुछ शब्दों में किया था)।
(उतना ही सही जितना कि वर्तमान में सत्ता में मौजूद चर्चों को)। हर तरह के प्रोटेस्टेंट - लूथरन, रिफॉर्म्ड
चर्च, प्रेस्बिटेरियन, मेथोडिस्ट, स्वीडनबोर्जियन और मॉर्मन - सभी का दावा है कि पवित्र आत्मा केवल
उनके समुदायों में मौजूद। यदि कैथोलिक यह दावा करते हैं कि चर्च के एरियन और ग्रीक में विभाजन के समय, पवित्र आत्मा ने उस चर्च को छोड़ दिया जो अलग हो गया था और एकमात्र सच्चे चर्च में बना रहा,
ठीक उसी अधिकार के साथ प्रत्येक संप्रदाय के प्रोटेस्टेंट यह दावा कर सकते हैं कि उस समय
उनके चर्च का कैथोलिक चर्च से अलग होना, पवित्र आत्मा का कैथोलिक चर्च छोड़कर उस चर्च में प्रवेश करना जिसे वे मानते थे। और वे यही करते हैं।
प्रत्येक चर्च अपने सिद्धांतों को मसीह और प्रेरितों से प्राप्त एक निर्बाध परंपरा के माध्यम से प्राप्त करता है।
और यह सच है कि मसीह से उत्पन्न प्रत्येक ईसाई पंथ किसी न किसी माध्यम से वर्तमान पीढ़ी तक पहुँचा है। लेकिन इससे यह सिद्ध नहीं होता कि केवल वही एक पंथ है।
केवल प्रसारित सत्य ही एकमात्र सत्य हो सकता है, जिसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं है।
पेड़ की हर शाखा जड़ से अटूट रूप से जुड़ी होती है; लेकिन तथ्य यह है कि प्रत्येक शाखा
एक ही मूल से आता है, यह बिल्कुल भी साबित नहीं करता कि प्रत्येक शाखा अकेली थी। चर्च के साथ भी ठीक यही बात लागू होती है। प्रत्येक चर्च उत्तराधिकार के बिल्कुल समान प्रमाण प्रस्तुत करता है, और यहाँ तक कि
इसकी प्रामाणिकता के समर्थन में, अन्य सभी की तरह ही चमत्कार मौजूद हैं। परिणामस्वरूप, केवल एक ही सटीक और
चर्च की सटीक परिभाषा (किसी ऐसी काल्पनिक चीज़ की नहीं, जैसा हम उसे देखना चाहते हैं, बल्कि वास्तविकता में वह क्या है और क्या रहा है) - चर्च पुरुषों का एक समूह है जो स्वयं को चर्च का हिस्सा मानते हैं।

4 “चर्च से बाहर कौन हैं? अविश्वासी, विधर्मी और फूट डालने वाले।”
5 “सच्ची कलीसिया की पहचान परमेश्वर के वचन के अध्ययन से होगी, जो मनुष्य के अंशों से रहित और स्पष्ट हो, और संस्कारों को मसीह की शिक्षाओं के प्रति निष्ठापूर्वक बनाए रखा जाए।”

सत्य पर पूर्ण और एकमात्र अधिकार। और ये निकाय, समय के साथ-साथ, लौकिक अधिकारियों के समर्थन से, शक्तिशाली संस्थाओं में विकसित होकर प्रमुख बन गए हैं।
ईसा मसीह की शिक्षाओं की सही समझ के प्रसार में बाधाएँ।

ऐसा होना ही था। ईसा मसीह की शिक्षाओं को पूर्व के धर्मों से अलग करने वाली प्रमुख विशेषता यह थी कि इसे स्वीकार करने वाले लोग इसे समझने और आत्मसात करने के लिए लगातार प्रयास करते रहे।
इसकी शिक्षा को साकार करें। लेकिन चर्च के सिद्धांत ने अपनी पूर्ण और अंतिम समझ पर जोर दिया और
इसका अहसास।
हालांकि यह बात हमें अजीब लग सकती है, क्योंकि हम चर्च के बारे में गलत धारणाओं के साथ पले-बढ़े हैं।
एक ईसाई संस्था, और विधर्म के प्रति तिरस्कार में, फिर भी सच्चाई यह है कि केवल जिसे विधर्म कहा जाता था, उसी में
क्या कोई सच्चा आंदोलन था, अर्थात् सच्चा ईसाई धर्म, और यह तभी समाप्त हुआ जब उन विधर्मियों का उदय हुआ।
उनकी गति रुक गई और वे चर्च के स्थिर स्वरूप में जम गए।
और वास्तव में, विधर्म क्या है? सभी धार्मिक ग्रंथों को एक-एक करके पढ़ें। उन सभी में
विधर्म वह विषय है जो सबसे पहले परिभाषा के लिए प्रस्तुत होता है; क्योंकि प्रत्येक धर्मशास्त्रीय कृति इसी विषय से संबंधित है।
ईसा मसीह का सच्चा सिद्धांत, उससे जुड़े भ्रामक सिद्धांतों, अर्थात् विधर्मों से अलग है। फिर भी, आपको कहीं भी विधर्म की कोई परिभाषा नहीं मिलेगी।
ईसाई धर्म के विद्वान इतिहासकार ई. डी प्रेसेन्से ने अपनी पुस्तक 'हिस्टोइरे' में इस विषय का विवेचन किया है।
डू डॉग्मे (पेरिस, 1869), "उबी क्रिस्टस, इबी एक्लेसिया" शीर्षक के अंतर्गत, विधर्म शब्द से क्या समझा जाता है, इसकी परिभाषा के पूर्ण अभाव का एक उदाहरण हो सकता है।
उन्होंने अपनी प्रस्तावना में जो कहा है (पृष्ठ 3)। "मैं जानता हूँ कि इसे इस तरह से वर्णित करने का हमारा अधिकार विवादित है (अर्थात, (विधर्म कहना) वे प्रवृत्तियाँ जिनका प्रारंभिक धर्मगुरुओं ने पुरजोर विरोध किया था।
धर्म-विरोधी विचार भी अंतरात्मा और विचार की स्वतंत्रता पर आक्रमण प्रतीत होते हैं। हम इस संशय को साझा नहीं कर सकते, क्योंकि यह ईसाई धर्म को उसके सभी विशिष्ट चरित्रों से वंचित करने के समान होगा।
और हालाँकि वह हमें बताता है कि कॉन्स्टेंटाइन के समय के बाद चर्च ने वास्तव में अपनी शक्ति का दुरुपयोग किया था
इसका विरोध करने वालों को विधर्मी घोषित करके उन पर अत्याचार किया जाता था, फिर भी प्रारंभिक काल की बात करते हुए वे कहते हैं, "चर्च एक स्वतंत्र संगठन है; इससे अलग होने में हर तरह का लाभ है।"
त्रुटि के पास विचार और भावना के अलावा कोई संसाधन नहीं है। अभी तक कोई एकसमान सैद्धांतिक स्वरूप नहीं बन पाया है।
इसका विकास हुआ है; पूर्व और पश्चिम में पूर्ण स्वतंत्रता के साथ द्वितीयक मतभेद उत्पन्न होते हैं; धर्मशास्त्र अपरिवर्तनीय सूत्रों से बंधा नहीं है।
यदि इस विविधता के भीतर कोई आधार प्रकट होता है
साझा मान्यताओं को देखते हुए, क्या हमें इसे एक ऐसी प्रणाली के रूप में देखने का अधिकार नहीं है जिसे उन्हीं लोगों द्वारा तैयार और निर्मित किया गया हो?
स्कूल प्राधिकरण के प्रतिनिधियों के बजाय, स्वयं विश्वास अपनी सबसे निश्चित प्रवृत्ति और अपने
सबसे सहज अभिव्यक्ति? यदि यही सर्वसम्मति, जो मूलभूत मान्यताओं में प्रकट होती है, कुछ प्रवृत्तियों को अस्वीकार करने में भी पाई जाती है, तो क्या हम यह निष्कर्ष निकालने में उचित नहीं होंगे कि ये
क्या ये रुझान ईसाई धर्म के मूलभूत सिद्धांतों के घोर विपरीत थे?

यदि हम चर्च द्वारा सर्वत्र अस्वीकृत सिद्धांत में अतीत के किसी धर्म की विशिष्ट विशेषताओं को पहचान लें, तो क्या अनुमान निश्चितता में परिवर्तित नहीं हो जाएगा?
यह कहना कि ज्ञानवाद या इबियोनिटवाद ईसाई विचार के वैध रूप हैं, इसके लिए यह कहना आवश्यक है कि...
यह दावा करते हुए कि न तो कोई ईसाई विचार है, न ही कोई विशिष्ट विशेषता जो इसे मान्यता दिला सके, इसे इसके दायरे को व्यापक बनाने के बहाने भंग किया जा रहा है। प्लेटो के समय में कोई भी ऐसा करने का साहस नहीं करता।
एक ऐसा सिद्धांत जो विचारों के सिद्धांत के लिए कोई जगह नहीं छोड़ता; और यह ग्रीस के उचित उपहास का कारण बनता।
एपिकुरस या ज़ेनो को अकादमी का शिष्य बनाने की कोशिश करके। इसलिए हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि यदि अस्तित्व में है
"ईसाई धर्म या सिद्धांत में भी विधर्म हो सकते हैं।"7

6 "मैं जानता हूँ कि प्रारंभिक धर्मपिताओं द्वारा सक्रिय रूप से विरोध की गई प्रवृत्तियों को इस प्रकार परिभाषित करने का हमारा अधिकार विवादित है। विधर्म शब्द का प्रयोग ही विवेक और विचार की स्वतंत्रता पर आक्रमण प्रतीत होता है। हम इस संशय को साझा नहीं कर सकते; क्योंकि यह ईसाई धर्म को उसकी विशिष्टता से वंचित करने के समान होगा।" 7 "चर्च एक स्वतंत्र संगठन है; इससे अलग होने से बहुत लाभ है। त्रुटि से संघर्ष करने के लिए विचार और भावना के सिवा कोई हथियार नहीं है। अभी तक किसी एक प्रकार का सिद्धांत विकसित नहीं हुआ है; गौण विषयों में पूर्व और पश्चिम में मतभेद स्वतंत्र रूप से उत्पन्न होते हैं; धर्मशास्त्र अपरिवर्तनीय सूत्रों से बंधा नहीं है। यदि इस विविधता के बीच सभी के लिए समान विश्वासों का एक समूह स्पष्ट है, तो क्या इसे किसी विद्वतापूर्ण सत्ता के प्रतिनिधियों द्वारा तैयार की गई एक सूत्रबद्ध प्रणाली के बजाय, स्वयं आस्था को उसके सबसे निश्चित सहज और सबसे स्वाभाविक रूप में देखना उचित नहीं है?

लेखक का पूरा तर्क यही है कि किसी भी समय में हमारे द्वारा माने जाने वाले सिद्धांतों से भिन्न हर राय विधर्म है। लेकिन निश्चित रूप से किसी भी समय और स्थान पर मनुष्य हमेशा अलग-अलग राय रखते हैं।
किसी न किसी बात पर विश्वास करना; और किसी भी स्थान पर, किसी भी समय अनिश्चित यह विश्वास,
सत्य का मानदंड बनें।
इसका सार यही है: चूंकि ubi Christus ibi Ecclesia है, इसलिए हम जहां हैं वहीं मसीह है।
हर तथाकथित विधर्म, जो अपने ही मत को सत्य मानता है, आसानी से अपने भीतर ही गलत धारणाएं पा सकता है।
चर्च का इतिहास अपने स्वयं के पंथ के उदाहरणों की एक श्रृंखला प्रस्तुत करता है, प्रेसेन्से के सभी तर्कों का अपने पक्ष में उपयोग कर सकता है, और अपने ही पंथ को एकमात्र सच्चा ईसाई पंथ कह सकता है। और यही तो सभी विधर्म करते हैं।
हमेशा से करते आए हैं।
विधर्म की एकमात्र परिभाषा (शब्द α'ίρεσις का अर्थ है एक भाग) यह है: किसी समूह द्वारा दिया गया नाम
किसी भी ऐसे मत का समर्थन करना जो उस संस्था द्वारा प्रतिपादित पंथ के किसी भाग को अस्वीकार करता हो। विधर्म शब्द का अधिक प्रचलित अर्थ, जो अक्सर चर्च के स्थापित सिद्धांतों को अस्वीकार करने वाले मत से संबंधित होता है, विधर्म कहलाता है।
और लौकिक अधिकारियों द्वारा समर्थित।

गॉटफ्रीड अर्नोल्ड द्वारा लिखित एक उल्लेखनीय और विपुल कृति, अनपार्थेयिशे किर्चेन- अंड केत्ज़र-हिस्टोरी (1729), बहुत कम ज्ञात है, जो ठीक इसी विषय से संबंधित है और सभी पहलुओं को इंगित करती है।
विधर्मी शब्द का प्रयोग करना गैरकानूनी, मनमाना, निरर्थक और क्रूर है।
पापी होने का भाव। यह पुस्तक ईसाई धर्म के इतिहास को विधर्म के इतिहास के रूप में लिखने का एक प्रयास है।
प्रस्तावना में लेखक ने कई प्रश्न उठाए हैं: (1) विधर्मी बनाने वालों के बारे में, (2)
जिन्हें उन्होंने विधर्मी बनाया, (3) स्वयं विधर्मी प्रजाजनों के बारे में, (4) बनाने की विधि के बारे में
विधर्मी, और (5) विधर्मी बनाने के उद्देश्य और परिणाम।
इनमें से प्रत्येक बिंदु पर वह दस और प्रश्न उठाता है, जिनके उत्तर वह बाद में देता है।
प्रसिद्ध धर्मशास्त्रियों की रचनाओं से। लेकिन वह पाठक पर मुख्य निष्कर्ष निकालने का दायित्व छोड़ देता है।
पूरी पुस्तक में दिए गए स्पष्टीकरणों से निष्कर्ष। इन प्रश्नों के उदाहरण के रूप में, जिनमें कुछ हद तक उत्तर भी शामिल हैं, मैं निम्नलिखित उद्धृत करूँगा। चौथे शीर्षक के अंतर्गत,
वह एक प्रश्न में (सातवें प्रश्न में) कहता है कि विधर्मी किस प्रकार बनाए जाते हैं:
क्या संपूर्ण इतिहास यह नहीं दर्शाता कि विधर्मियों को पैदा करने वाले और इस कला में माहिर सबसे बड़े लोग वही बुद्धिमान पुरुष थे, जिनसे पिता ने अपने रहस्य छिपाए थे, अर्थात् पाखंडी, फरीसी और वकील?
क्या मनुष्य पूरी तरह से नास्तिक और विकृत थे (प्रश्न 20-21)? और क्या ईसाई धर्म के भ्रष्ट काल में ऐसा नहीं था?
ये वही लोग हैं जिन्हें पाखंडियों और ईर्ष्यालु लोगों ने बहिष्कृत कर दिया और निंदा की, जबकि ईश्वर ने इन्हें ये वरदान दिए थे।
महान उपहार और शुद्ध ईसाई धर्म के दिनों में किसे उच्च सम्मान दिया जाता? और दूसरी ओर, क्या वे लोग नहीं, जिन्होंने ईसाई धर्म के पतन में खुद को सबसे ऊपर उठा लिया, और
जो लोग स्वयं को शुद्धतम ईसाई धर्म के शिक्षक मानते थे, क्या वे स्वयं भी, उस समय में, ऐसा नहीं मानते?
क्या ईसा मसीह के प्रेरितों और शिष्यों को सबसे निर्लज्ज विधर्मी और ईसाई-विरोधी माना गया है?
इन प्रश्नों में अन्य बातों के साथ-साथ वह इस सिद्धांत की व्याख्या करते हैं कि आस्था की कोई भी मौखिक अभिव्यक्ति,
चर्च द्वारा जो मांग की जाती थी, और जिसका उल्लंघन विधर्म माना जाता था, वह किसी भी विश्वासी के सटीक धार्मिक विचारों को पूरी तरह से व्यक्त नहीं कर सकता था, और इसलिए अभिव्यक्ति की मांग
कुछ शब्दों में आस्था रखना हमेशा विधर्म को जन्म देता था, और वह प्रश्न 21 में कहते हैं:

क्या यह अभिव्यक्ति है? यदि विश्वास के मूलभूत बिंदुओं में प्रकट होने वाली एकमतता कुछ प्रवृत्तियों को अस्वीकार करने में भी पाई जाती है, तो क्या हम यह निष्कर्ष निकालने में उचित नहीं हैं कि ये प्रवृत्तियाँ ईसाई धर्म के मूलभूत सिद्धांतों के घोर विरोधी थीं? और क्या यह अनुमान निश्चितता में परिवर्तित नहीं हो जाएगा यदि हम चर्च द्वारा सर्वत्र अस्वीकृत सिद्धांत में अतीत के किसी धर्म की विशिष्ट विशेषताओं को पहचान लें? यह कहना कि ज्ञानवाद या इबियोनिटवाद ईसाई विचार के वैध रूप हैं, इसका अर्थ है कि ईसाई विचार का अस्तित्व ही नकार देना, या किसी विशिष्ट चरित्र को नकार देना जिससे इसे पहचाना जा सके। इसके दायरे को स्पष्ट रूप से विस्तृत करते हुए, हम इसे कमजोर कर रहे हैं। प्लेटो के समय में कोई भी ऐसे सिद्धांत को अपना नाम देने का साहस नहीं करता जिसमें विचारों के सिद्धांत का कोई स्थान न हो, और एपिकुरस या ज़ेनो

को अकादमी का शिष्य बताकर ग्रीस में उपहास का पात्र बनना उचित ही होता। इसलिए, आइए हम यह स्वीकार करें कि यदि कोई धर्म या सिद्धांत मौजूद है जिसे ईसाई धर्म कहा जाता है, तो उसमें विधर्म हो सकते हैं।

28

और यदि किसी व्यक्ति के मन में दिव्य विचार और बातें इतनी महान और गहन रूप में प्रकट हों कि वह उन्हें व्यक्त करने के लिए उपयुक्त शब्द न पा सके, तो क्या उसे विधर्मी कहना चाहिए?

क्योंकि वह अपने विचार को पूर्ण सटीकता के साथ व्यक्त नहीं कर सकता? और प्रश्न 33 में:

और क्या यह तथ्य कि आरंभिक दिनों में कोई विधर्म नहीं था, इसका कारण यह नहीं है कि ईसाई एक-दूसरे का न्याय शब्दों से नहीं, बल्कि कर्मों और हृदय से करते थे, क्योंकि उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी?

क्या यह सबसे आसान और सबसे सामान्य बात नहीं थी कि वे विधर्मी कहलाने के डर के बिना अपने विचार व्यक्त कर सकें?

यदि पादरी किसी को पद से हटाना या बर्बाद करना चाहते थे, तो वे उस व्यक्ति के विश्वास पर संदेह पैदा करते थे, उस पर विधर्म का आरोप लगाते थे और इस प्रकार उसका भेष बदल देते थे।

निंदा और निष्कासन?

यह सच है कि तथाकथित विधर्मियों में भी पाप और गलतियाँ थीं, लेकिन यह भी उतना ही सच है।

और आगे वे कहते हैं, “यहाँ उद्धृत असंख्य उदाहरणों (अर्थात चर्च और विधर्म के इतिहास में) से यह स्पष्ट है कि एक भी महत्वपूर्ण व्यक्ति ईमानदार और कर्तव्यनिष्ठ नहीं था।”

जिन्हें चर्च के लोग ईर्ष्या या अन्य कारणों से बर्बाद नहीं करना चाहते थे।"

इस प्रकार, लगभग दो सौ वर्ष पहले, विधर्म का वास्तविक अर्थ समझा गया था। और इसके बावजूद, इसकी वही अवधारणा अब तक कायम है। और यह निश्चित रूप से विफल नहीं होगी।

जब तक चर्च की अवधारणा मौजूद है, तब तक विधर्म अस्तित्व में रहेगा। विधर्म चर्च का दूसरा पहलू है।

जहां चर्च है, वहां विधर्म की अवधारणा अवश्य होगी। चर्च उन लोगों का समूह है जो यह दावा करते हैं कि उनके पास अचूक सत्य है। विधर्म उन लोगों का मत है जो इसे स्वीकार नहीं करते।

चर्च के सत्य की अचूकता।

विधर्म चर्च में प्रवेश करता है। यह सत्ता के जड़ जमाए जाने को तोड़ने का प्रयास है।

चर्च। इस सिद्धांत की जीवंत समझ प्राप्त करने के सभी प्रयास विधर्मियों द्वारा किए गए हैं। टर्टुलियन, ओरिजन, ऑगस्टीन, लूथर, हस, सवोनारोला, हेलचिट्स्की और अन्य विधर्मी थे। यह संभव है।

अन्यथा नहीं।

ईसा मसीह का अनुयायी, जिसकी सेवा का अर्थ है उनकी शिक्षाओं की निरंतर बढ़ती समझ और पूर्णता की ओर बढ़ते हुए उनका निरंतर निकट से पालन करना, केवल इसलिए कि वह उनका अनुयायी है, ऐसा नहीं कर सकता।

स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति के लिए यह दावा करना कि वह मसीह की शिक्षाओं को पूरी तरह समझता है और उनका पालन करता है, इससे भी कम

क्या वह पुरुषों के किसी भी समूह के लिए यह दावा कर सकता है?
ईसा मसीह के अनुयायी ने चाहे जिस स्तर की समझ और पूर्णता प्राप्त कर ली हो, वह
वह हमेशा अपनी समझ और उसकी पूर्ति में कमी महसूस करता है, और हमेशा एक बेहतर भविष्य की ओर प्रयासरत रहता है।
अधिक पूर्ण समझ और संतुष्टि। और इसलिए, स्वयं के बारे में या मनुष्यों के किसी भी समूह के बारे में यह दावा करना कि
जो व्यक्ति मसीह के वचन की पूर्ण समझ और पूर्ति का दावा करता है, वह मसीह की शिक्षा की मूल भावना का ही त्याग कर रहा होता है।
यह भले ही अजीब लगे, लेकिन चर्च, चर्च के रूप में, हमेशा से ही संस्थाएं रही हैं, और होनी भी चाहिए, न कि
यह चर्च न केवल मसीह की शिक्षाओं से वैचारिक रूप से भिन्न है, बल्कि प्रत्यक्ष रूप से उनका विरोधी भी है। वोल्टेयर ने इसे 'भ्रष्ट चर्च' कहना
उचित ही समझा है; और ईसाई धर्म के लगभग सभी तथाकथित संप्रदायों ने भी इसे इसी कारण से 'बदनाम' कहा है।
चर्च को प्रकाशितवाक्य में वर्णित लाल स्त्री के रूप में मान्यता दी गई; इतिहास में यह मान्यता उचित ही है।
चर्च का इतिहास सबसे बड़ी क्रूरताओं और भयावहताओं से भरा है।
चर्च, चर्च के रूप में, जैसा कि बहुत से लोग मानते हैं, ईसाई सिद्धांतों का पालन करने वाली संस्थाएँ नहीं हैं।
अपने आधार के लिए, भले ही वे सीधे रास्ते से थोड़ा भटक गए हों। चर्चों के रूप में
चर्च, जो स्वयं को अचूक घोषित करने वाले निकाय हैं, ईसाई धर्म के विरोधी संस्थान हैं।
चर्चों और ईसाई धर्म में नाम के अलावा और कुछ भी समान नहीं है, बल्कि वे दो ऐसे सिद्धांतों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो एक दूसरे के मौलिक
रूप से विरोधी और परस्पर विरोधी हैं। एक सिद्धांत अहंकार का प्रतिनिधित्व करता है,
हिंसा, आत्म-अभिव्यक्ति, ठहराव और मृत्यु; दूसरा, नम्रता, पश्चाताप, विनम्रता, प्रगति और
ज़िंदगी।
हम इन दोनों स्वामियों की सेवा नहीं कर सकते; हमें इनमें से किसी एक को चुनना होगा।
सभी संप्रदायों के चर्चों के सेवक, विशेषकर बाद के समय के चर्चों के सेवक, स्वयं को प्रदर्शित करने का प्रयास करते हैं।
वे ईसाई धर्म में प्रगति के समर्थक हैं। वे रियायतें देते हैं, चर्च में व्याप्त बुराइयों को सुधारना चाहते हैं, और यह मानते हैं कि इन बुराइयों के कारण
कोई भी ईसाई धर्म के सिद्धांत को नकार नहीं सकता।
स्वयं एक ईसाई चर्च का हिस्सा, जो अकेले ही सभी मनुष्यों को एकता में बांध सकता है और उनके बीच मध्यस्थ बन सकता है।

मनुष्य और ईश्वर। लेकिन यह सब एक भ्रम है। चर्चों ने न केवल मनुष्यों को एकता में बांधने का काम कभी नहीं किया, बल्कि वे हमेशा से
मनुष्यों के बीच विभाजन और एक-दूसरे के प्रति घृणा के प्रमुख कारणों में से एक रहे हैं।
एक और अध्याय है, युद्धों, लड़ाइयों, धर्म जांचों, सेंट बार्थोलोम्यू के नरसंहारों आदि का। और चर्चों में
उन्होंने कभी भी मनुष्य और ईश्वर के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य नहीं किया। ऐसी मध्यस्थता अवांछित है, और इसे मसीह ने सीधे तौर पर मना
किया था, जिन्होंने अपनी शिक्षा को प्रत्येक मनुष्य को प्रत्यक्ष और तत्काल प्रकट किया है। लेकिन
चर्च ईश्वर के स्थान पर मृत स्वरूप स्थापित करते हैं, और ईश्वर को प्रकट करने के बजाय, वे उसे छिपा देते हैं।

मनुष्यों की दृष्टि। वे चर्च, जो मसीह की शिक्षाओं की गलतफहमी से उत्पन्न हुए और अपनी हठधर्मिता से इस गलतफहमी को बनाए रखते हैं, उन्हें सभी सच्चे विचारों को सताना और अस्वीकार करना चाहिए।

वे मसीह के वचनों की समझ को छिपाने की कोशिश करते हैं, लेकिन व्यर्थ; क्योंकि हर कदम आगे बढ़ने से

ईसा मसीह द्वारा हमें दिखाया गया मार्ग उनके विनाश की ओर एक कदम है।

बाद के समय के सभी संप्रदायों के चर्च लेखकों द्वारा ईसाई सत्यों और सद्गुणों के बारे में दिए गए उपदेशों और लेखों को सुनना और पढ़ना; इन कुशल तर्कों को सुनना या पढ़ना जो

सदियों से इसका विस्तार किया गया है, और उपदेश और प्रतिज्ञाएँ, जो कभी-कभी ईमानदार प्रतीत होती हैं

इन पेशों को देखते हुए, यह संदेह होने लगता है कि क्या चर्च ईसाई धर्म के विरोधी हो सकते हैं। “ऐसा नहीं हो सकता,” कोई कहता है, “कि ये लोग, जो क्रिसॉस्टोम, फेनेलोन, बटलर और अन्य जैसे लोगों का उदाहरण दे सकते हैं, ईसाई धर्म के विरोधी हो सकते हैं।”

ईसाई धर्म का दावा करने वाले लोग ईसाई धर्म के विरोधी थे। यह कहना स्वाभाविक है कि "चर्चों

वे भले ही ईसाई धर्म से भटक गए हों, वे गलती पर हो सकते हैं, लेकिन वे इसके शत्रु नहीं हो सकते। लेकिन हमें पेड़ को परखने के लिए उसके फल को देखना चाहिए, जैसा कि मसीह ने हमें सिखाया था। और यदि हम देखते हैं कि उनके फल बुरे थे, तो

उनकी गतिविधियों के परिणाम ईसाई धर्म के प्रतिकूल थे, यह हमें स्वीकार करना होगा, चाहे वे लोग कितने भी अच्छे क्यों न हों।

चर्च का वह कार्य जिसमें इन लोगों ने भाग लिया, ईसाई धर्म के अनुरूप नहीं था। अच्छाई और योग्यता

इन चर्चों की सेवा करने वाले पुरुषों की विशेषता उनकी अच्छाई और योग्यता थी, न कि उस संस्था की जिसकी उन्होंने सेवा की। सभी अच्छे पुरुष, जैसे असीसी के फ्रांसिस, सेल्स के फ्रांसिस, हमारे तिहोन ज़ादोंस्की,

थॉमस ए केम्पिस और अन्य लोग अच्छे इंसान थे, इसके बावजूद कि वे एक ऐसी संस्था की सेवा कर रहे थे जो उनके प्रति शत्रुतापूर्ण थी।

वे ईसाई धर्म के अनुयायी होते, और यदि वे उस त्रुटि के प्रभाव में न होते जिसकी वे सेवा कर रहे थे, तो वे और भी बेहतर होते।

लेकिन हमें अतीत की बात क्यों करनी चाहिए और अतीत के आधार पर निर्णय क्यों लेना चाहिए, जबकि अतीत को गलत तरीके से प्रस्तुत किया गया हो सकता है?

और क्या हम उन्हें गलत समझ पाए हैं? चर्च, अपने सिद्धांतों और व्यवहार के साथ, अतीत की बात नहीं हैं। चर्च आज हमारे सामने हैं, और हम उनके व्यवहारिक पहलुओं से उनका कुछ हद तक आकलन कर सकते हैं।

उनकी गतिविधि, पुरुषों पर उनका प्रभाव।

आज के समय में चर्चों का व्यावहारिक कार्य क्या है? मनुष्यों पर उनका क्या प्रभाव है? वे क्या करते हैं?

हमारे बीच मौजूद चर्चों द्वारा, कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट के सभी संप्रदायों के बीच – उनका व्यावहारिक कार्य क्या है? और उनके व्यावहारिक कार्य के परिणाम क्या हैं?

हमारे रूसी तथाकथित ऑर्थोडॉक्स चर्च की कार्यप्रणाली सभी के लिए स्पष्ट है। यह एक बहुत बड़ा तथ्य है कि

इसमें छिपने की कोई संभावना नहीं है और इस बारे में कोई विवाद नहीं हो सकता।

इस विशाल, अत्यंत सक्रिय रूसी चर्च का व्यावहारिक कार्य क्या है?

यह संस्था, जिसमें पांच लाख सैनिकों की एक रेजिमेंट शामिल है और जिस पर जनता को करोड़ों डॉलर खर्च करने पड़ते हैं।

रूबल?

चर्च का व्यावहारिक कार्य हर संभव तरीके से जनमानस में आध्यात्मिक भावना का संचार करना है।
एक सौ मिलियन रूसी लोगों में से उन विलुप्त मान्यताओं के अवशेषों का आज कोई अस्तित्व नहीं है।
एक प्रकार का औचित्य, जिस पर अब शायद ही कोई विश्वास करता है, और अक्सर वे लोग भी नहीं जिनका यह कर्तव्य है कि वे...
इन झूठे विश्वासों को फैलाना। लोगों में बीजान्टिन धर्मशास्त्र, त्रिमूर्ति, ईश्वर की माता, संस्कारों, अनुग्रह आदि की अवधारणाओं को स्थापित करना, जो विलुप्त हो चुकी हैं, हमारे लिए पराई हैं, और
हमारे समय के लोगों के लिए इसका कोई अर्थ नहीं है, यह रूसी चर्च के कार्यों का केवल एक हिस्सा है।
इसके अभ्यास का एक अन्य भाग मूर्ति पूजा को शब्द के सबसे शाब्दिक अर्थ में बनाए रखना है: पवित्र अवशेषों और प्रतिमाओं का आदर करना, उन्हें बलिदान अर्पित करना, और
उनकी प्रार्थनाओं के उत्तर की अपेक्षा। मैं उपदेशों और लिखित बातों पर चर्चा नहीं करने जा रहा हूँ।
धर्मशास्त्रीय पत्रिकाओं में वैज्ञानिक या उदारवादी विचारधारा वाले पादरियों द्वारा। मैं रूस की विशाल भूमि में एक ही विचारधारा वाले लोगों के बीच पादरियों द्वारा वास्तव में किए जा रहे कार्यों के बारे में बात करने जा रहा हूँ।

30

एक करोड़ लोग। ये लोग लगन से, अथक परिश्रम से, हर जगह एक समान रूप से, बिना रुके, जनता को क्या सिखाते हैं? अपने (तथाकथित) ईसाई धर्म के नाम पर वे जनता से क्या अपेक्षा रखते हैं?
मैं शुरुआत से, बच्चे के जन्म से शुरू करूँगा। बच्चे के जन्म के समय उन्हें यह सिखाया जाता है कि
उन्हें बच्चे और माँ को शुद्ध करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, मानो इस प्रार्थना के बिना नवजात शिशु की माँ अशुद्ध हो। ऐसा करने के लिए पुजारी बच्चे को अपनी बाहों में लेकर प्रार्थना करता है।
संतों की तस्वीरें (जिन्हें लोग सीधे-सीधे देवता कहते हैं) और भूत भगाने की शक्ति वाले शब्द पढ़ता है, और यह
यह माता को पवित्र करता है। फिर माता-पिता को यह सुझाव दिया जाता है, और यहाँ तक कि उनसे यह अनिवार्य भी किया जाता है, कि बच्चे का बपतिस्मा कराया जाए; अर्थात्, पुजारी द्वारा उसे तीन बार पानी में डुबोया जाए। ऐसा न करने पर दंड का भय रहता है।
कई बार पानी में, जबकि कुछ ऐसे शब्द, जिन्हें कोई नहीं समझता, जोर से पढ़े जाते हैं, और कुछ ऐसी क्रियाएं, जो अभी भी
कम समझी जाने वाली क्रियाएं की जाती हैं; शरीर के विभिन्न हिस्सों पर तेल से मालिश की जाती है और बाल काटे जाते हैं, जबकि
प्रायोजक एक काल्पनिक शैतान पर फूंक मारते और थूकते हैं। यह सब बच्चे को शुद्ध करने और उसे ईसाई बनाने के लिए आवश्यक है। फिर माता-पिता को यह सिखाया जाता है कि उन्हें बच्चे को संस्कार संपन्न कराना चाहिए।
बच्चे को, अर्थात्, रोटी और शराब के वेश में, मसीह के शरीर का एक भाग खाने को दो, जिसके परिणामस्वरूप
जिससे बच्चे को अपने भीतर ईश्वर की कृपा प्राप्त होती है, इत्यादि। फिर यह सुझाव दिया जाता है कि बच्चे को बड़े होने पर प्रार्थना करना सिखाया जाना चाहिए। प्रार्थना करने का अर्थ है स्वयं को सीधे लकड़ी के तख्तों के सामने रखना।
जिन पर ईसा मसीह, ईश्वर की माता और संतों के चेहरे चित्रित हैं, ताकि वह अपना सिर और अपना पूरा शरीर झुका सके।
शरीर को छूना, और अपने दाहिने हाथ से माथे, कंधों और पेट को एक विशेष स्थिति में रखते हुए छूना, और स्लावोनिक भाषा के कुछ शब्द बोलना, जिनमें से सबसे आम शब्द सभी बच्चों को सिखाए जाते हैं।

वे हैं, "ईश्वर की माता, कुंवारी, आनंदित हों, इत्यादि।"
फिर बच्चे के पालन-पोषण के दौरान यह बात उसके मन में बिठा दी जाती है कि किसी भी चर्च या मूर्ति को देखते ही उसे...
वही क्रिया दोहराएं – यानी, अपने आप पर क्रॉस का निशान बनाएं। फिर उसे यह सिखाया जाता है कि छुट्टियों के दिनों में (छुट्टियां वे दिन हैं
जिन दिनों ईसा मसीह का जन्म हुआ था, हालांकि यह कोई नहीं जानता कि वह कब था, जिन दिनों उनका खतना हुआ था,
जिस पर ईश्वर की माता का प्राण त्यागे गए, जिस पर क्रूस को जुलूस में ले जाया गया, जिस पर प्रतिमाएं स्थापित हैं
(जिस पर एक पागल ने दर्शन देखा था, इत्यादि) - छुट्टियों में उसे अपने सबसे अच्छे कपड़े पहनकर चर्च जाना चाहिए, और मोमबत्तियाँ खरीदकर संतों की मूर्तियों के सामने रखनी चाहिए।
फिर उसे मृतकों के लिए भेंट और प्रार्थना करनी होगी, और तीन कोनों में काटी जाने वाली छोटी रोटियाँ देनी होंगी।
उसे टुकड़ों को उठाना चाहिए, और ज़ार और बिशपों के स्वास्थ्य और समृद्धि के लिए, और अपने और अपने निजी मामलों के लिए कई बार प्रार्थना करनी चाहिए, और फिर क्रॉस और पुजारी के हाथ को चूमना चाहिए।
इन अनुष्ठानों के अतिरिक्त, उसे यह भी सिखाया जाता है कि वर्ष में कम से कम एक बार उसे अपने पापों का प्रायश्चित करना चाहिए।
पाप स्वीकार करने का अर्थ है चर्च जाकर पादरी को अपने पापों के बारे में बताना, इस सिद्धांत पर कि इससे पादरी को अपने पापों की जानकारी मिलती है।
उसके पापों से पूरी तरह मुक्त होने पर वह उनसे पूरी तरह से शुद्ध हो जाता है। इसके बाद उसे एक छोटी चम्मच से रोटी का एक टुकड़ा शराब के साथ खाना चाहिए, जिससे वह और भी अधिक शुद्ध हो जाएगा। फिर उसे यह सिखाया जाता है कि यदि कोई व्यक्ति
और जो महिलाएं अपने शारीरिक मिलन को पवित्र बनाना चाहती हैं, उन्हें चर्च जाना चाहिए, धातु के मुकुट पहनने चाहिए,
कुछ विशेष औषधियाँ पीने, गायन की धुन पर एक मेज के चारों ओर तीन बार घूमने से ही पुरुष और स्त्री का शारीरिक मिलन पवित्र हो जाता है और अन्य सभी ऐसे मिलनों से बिल्कुल अलग हो जाता है।
इसके अलावा, उसके जीवन में यह बात बिठा दी जाती है कि उसे निम्नलिखित नियमों का पालन करना चाहिए: मक्खन नहीं खाना चाहिए या कुछ खास दिनों में दूध देना, और कुछ अन्य दिनों में मृतकों के लिए ते देउम और शोकगीत गाना, छुट्टियों में पुजारी का मनोरंजन करना और उसे पैसे देना, और साल में कई बार मूर्तियों को लाना।
चर्च जाना और उन्हें अपने कंधों पर लादकर खेतों और घरों से होते हुए ले जाना। यह उसके स्वभाव में समाया हुआ है।
कि मृत्युशय्या पर भी मनुष्य को चम्मच से रोटी और शराब खाना अवश्य खाना चाहिए, और यह बात अभी भी लागू होगी।
बेहतर होगा यदि उन्हें पवित्र तेल से मालिश करने का समय मिले। इससे उनके भावी जीवन में उनका कल्याण सुनिश्चित होगा। उनकी मृत्यु के बाद उनके परिजनों को यह समझाया जाता है कि मृत व्यक्ति के उद्धार के लिए ऐसा करना शुभ होता है।
उसके हाथों में प्रार्थनाओं का मुद्रित पृष्ठ रख दें; इसके अलावा, किसी विशेष पुस्तक को ज़ोर से पढ़ना भी अच्छा रहता है।
मृत शरीर को देखना और एक निश्चित समय पर चर्च में मृत व्यक्ति का नाम लेना। यह सब हर किसी के लिए अनिवार्य धार्मिक कर्तव्य माना जाता है।
लेकिन यदि कोई अपनी आत्मा की विशेष देखभाल करना चाहता है, तो उसे इसी विश्वास के अनुसार निर्देश दिया गया है।
संसार में आत्मा के उद्धार की सबसे बड़ी सुरक्षा गिरजाघरों और मठों को धन दान करने और इस माध्यम से पवित्र पुरुषों को अपने लिए प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करने से प्राप्त होती है।

मठ, अवशेषों और चमत्कारी मूर्तियों को चूमना भी आत्मा की मुक्ति के अन्य साधन हैं।

इस आस्था के अनुसार, प्रतिमाएं और अवशेष एक विशेष पवित्रता, शक्ति और कृपा का संचार करते हैं, और यहां तक कि इन वस्तुओं के निकट रहना, उन्हें छूना, चूमना, उनके सामने मोमबत्ती जलाना, उनके नीचे रेंगना भी पवित्रता, शक्ति और कृपा का संचार करते हैं।

जब वे आगे बढ़ रहे होते हैं, तो वे सभी मोक्ष के लिए प्रभावी होते हैं, साथ ही बार-बार दोहराए जाने वाले ते देउम भी।

इन पवित्र वस्तुओं के समक्ष।

तो यही, और कुछ नहीं, वह आस्था है जिसे ऑर्थोडॉक्स कहा जाता है, जो कि वास्तव में वह आस्था है जो छलावे के तहत

ईसाई धर्म के सभी सदस्यों ने चर्च की पूरी शक्ति के साथ इसमें अपना योगदान दिया है, और अब विशेष उत्साह के साथ इसे लोगों में समाहित किया जा रहा है।

लोग।

और कोई यह न कहे कि ऑर्थोडॉक्स शिक्षक अपनी शिक्षा का अनिवार्य हिस्सा किसी चीज़ में रखते हैं।

अन्यथा, ये सभी केवल प्राचीन रूप हैं, जिन्हें समाप्त करना आवश्यक नहीं समझा जाता है।

यह गलत है। यही, और कुछ नहीं, वह विश्वास है जो पूरे रूस में सभी द्वारा सिखाया जाता है।

रूसी धर्मगुरुओं में, और हाल के वर्षों में विशेष उत्साह के साथ, यही बात प्रचलित है। इसके अलावा कुछ और सिखाया ही नहीं जाता।

राजधानियों में कुछ अलग बातें कही और लिखी जा सकती हैं; लेकिन करोड़ों लोगों के बीच यही प्रचलित है।

बस, यही सिखाया जाता है, और कुछ नहीं। पादरी शायद कुछ और बात करें, लेकिन यही है।

वे अपनी शक्ति के अनुरूप हर संभव तरीके से शिक्षा प्रदान करते हैं।

इन सभी बातों के साथ-साथ अवशेषों और मूर्तियों की पूजा को धर्मशास्त्र और अन्य ग्रंथों में शामिल किया गया है।

धार्मिक शिक्षाओं के माध्यम से। इस प्रकार वे हर संसाधन का उपयोग करते हुए, सैद्धांतिक और व्यावहारिक रूप से लोगों को इसकी शिक्षा देते हैं।

अधिकार, गंभीरता, वैभव और हिंसा का इस्तेमाल करके वे लोगों को प्रभावित करते हैं। वे लोगों को डरा-धमकाकर इस विश्वास में बांध लेते हैं और इस आस्था की रक्षा करने के लिए उन्हें इन बर्बर अत्याचारों से मुक्त कराने के किसी भी प्रयास से बचाते हैं।

अंधविश्वास।

जैसा कि मैंने अपनी पुस्तक प्रकाशित करते समय कहा था, मसीह की शिक्षा और प्रतिरोध न करने के बारे में उनके स्वयं के शब्द

कई वर्षों तक मेरी नज़र में बुराई उपहास और हल्के-फुल्के मज़ाक का विषय रही, और चर्च के लोग इसका विरोध करने के बजाय पवित्र वस्तुओं का उपहास करने को प्रोत्साहित भी करते रहे। लेकिन एक बार यह कहकर देखिए...

एक भयंकर मूर्ति के बारे में अपमानजनक शब्द, जिसे शराबी लोग अपवित्रतापूर्वक मॉस्को में घुमाते हैं।

आइवरस्की कुंवारी की प्रतिमा के नाम पर, आप इन्हीं चर्चवासियों से आक्रोश की आह सुनेंगे। वे जो कुछ भी उपदेश देते हैं, वह मूर्तिपूजा की रस्मों का बाहरी पालन मात्र है। और ऐसा न होने दें।

यह कहा जा सकता है कि एक दूसरे में बाधा नहीं डालता। “तुम्हें ये सब करना चाहिए था, जबकि इसे छोड़ना नहीं चाहिए था।”

अन्य कार्य अधूरे रह गए।" (मत्ती 23:23) "तुम्हें उनकी आज्ञा माननी चाहिए और वे जो कुछ कहें, वह सब करना चाहिए। परन्तु उनके कामों को मत मानो, क्योंकि वे जो उपदेश देते हैं, उसका पालन नहीं करते।" (मत्ती 23:3)
यह बात फरीसियों के बारे में कही गई थी, जिन्होंने कानून द्वारा निर्धारित सभी बाहरी रीति-रिवाजों का पालन किया था।
और इसलिए "उनकी आज्ञा मानो और वे जो कुछ भी कहें, वह करो" शब्द दया के कार्यों को संदर्भित करते हैं और
अच्छाई, और "वे जो करते हैं, वैसा मत करो, क्योंकि वे जो उपदेश देते हैं, उसका पालन नहीं करते" ये शब्द उनके अनुष्ठानों के पालन और अच्छे कार्यों की उपेक्षा को संदर्भित करते हैं, और इनका अर्थ बिल्कुल विपरीत है।
चर्च के अनुयायी इस अंश को जिस प्रकार से व्याख्यायित करने का प्रयास करते हैं, उसे पालन करने के आदेश के रूप में मानते हैं।
अनुष्ठान। बाहरी रीति-रिवाजों और सत्य एवं अच्छाई की सेवा को एक साथ निभाना अधिकतर कठिन होता है; एक के बिना दूसरा संभव नहीं।
फरीसियों के साथ भी ऐसा ही था, और अब चर्च के ईसाइयों के साथ भी ऐसा ही है।
यदि मनुष्य उद्धार, संस्कारों और प्रार्थना द्वारा मुक्ति पा सकता है, तो उसे अच्छे संस्कारों की आवश्यकता नहीं है।
काम करता है।
पर्वतीय उपदेश या पंथ। कोई व्यक्ति दोनों में विश्वास नहीं कर सकता। और चर्च के लोगों ने इनमें से एक को चुना है।
बाद वाला। धर्म-सिद्धांत को चर्चों में पढ़ाया जाता है और प्रार्थना के रूप में पढ़ा जाता है, लेकिन पर्वतीय उपदेश
चर्चों में पढ़े जाने वाले सुसमाचार के अंशों से भी इसे हटा दिया गया है, ताकि मंडली इसे कभी न सुन सके।
चर्च में, उन दिनों को छोड़कर जब संपूर्ण सुसमाचार पढ़ा जाता है। वास्तव में, ऐसा होना ही था। जो लोग एक दुष्ट और निरर्थक ईश्वर में विश्वास करते हैं - जिसने मानव जाति को शाप दिया है और अपना जीवन समर्पित कर दिया है - वे चर्च में प्रवेश कर सकते हैं।
अपने ही पुत्र को बलिदान करने और मानव जाति के एक हिस्से को शाश्वत यातना सहने के लिए मजबूर करने वाला व्यक्ति प्रेम के ईश्वर में विश्वास नहीं कर सकता।
जो व्यक्ति ईश्वर में, महिमा के साथ पुनः आगमन करने वाले मसीह में, जीवित और मृत लोगों का न्याय करने और उन्हें दंडित करने में विश्वास करता है, वह उस मसीह में विश्वास नहीं कर सकता जिसने हमें बायां गाल आगे करने, न्याय न करने और उन लोगों को क्षमा करने के लिए कहा था जो...
हमें गलत ठहराओ, और हमारे दुश्मनों से प्यार करो। वह व्यक्ति जो पुराने नियम की प्रेरणा में विश्वास करता है और
दाऊद का पवित्र चरित्र, जिसने अपनी मृत्युशय्या पर उस बूढ़े व्यक्ति की हत्या का आदेश दिया जिसने उसे शाप दिया था, और जिसे वह स्वयं नहीं मार सका क्योंकि वह उससे शपथ से बंधा हुआ था, और इसी तरह
पुराने नियम में वर्णित अत्याचारों से भरे पड़े हुए, वह व्यक्ति मसीह के पवित्र प्रेम में विश्वास नहीं कर सकता। वह व्यक्ति जो...

जो व्यक्ति युद्ध और मृत्युदंड को ईसाई धर्म के अनुकूल मानने के चर्च के सिद्धांत में विश्वास करता है, वह सभी मनुष्यों की बंधुता में विश्वास नहीं कर सकता।
और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वह व्यक्ति जो ईश्वर में आस्था के माध्यम से मुक्ति में विश्वास रखता है।

जो व्यक्ति उद्धार या संस्कारों के माध्यम से अपनी सारी शक्ति का उपयोग अपने जीवन में मसीह की नैतिक शिक्षाओं को साकार करने के लिए नहीं कर सकता, वह ऐसा कर ही नहीं सकता।

वह व्यक्ति जिसे चर्च द्वारा इस अपवित्र सिद्धांत की शिक्षा दी गई है कि मनुष्य का उद्धार नहीं हो सकता।

वह अपनी क्षमताओं से मुक्ति नहीं पा सकेगा, लेकिन यह जानकर कि मुक्ति का एक और साधन है, वह निश्चित रूप से इसी साधन पर भरोसा करेगा न कि अपनी क्षमताओं पर, जिन पर भरोसा करना पाप है, जैसा कि उसे आश्वासन दिया गया है।

प्रत्येक चर्च की शिक्षा, जिसमें उद्धार और संस्कार शामिल हैं, मसीह की शिक्षा को नकारती है।

सबसे अधिक रूढ़िवादी चर्च की शिक्षा और उसकी मूर्तिपूजा संबंधी प्रथाएं।

“लेकिन जनता ने हमेशा अपनी मर्जी से वही विश्वास किया है जो वे अब करते हैं,” इसके उत्तर में कहा जाएगा। “रूसी जनता का पूरा इतिहास इसे सिद्ध करता है। जनता को उनके विश्वास से वंचित नहीं किया जा सकता।”

उनकी परंपराओं में।" यह कथन भी भ्रामक है। लोग निश्चित रूप से एक समय में विश्वास करते थे।

कुछ हद तक वैसा ही जैसा चर्च अब मानता है, हालांकि यह उससे बहुत अलग था। मूर्तियों, गृह-आत्माओं, अवशेषों और बर्च के पत्तों की मालाओं वाले त्योहारों के प्रति उनके अंधविश्वासी आदर के बावजूद,

लोगों में ईसाई धर्म की गहरी नैतिक और जीवंत समझ हमेशा से मौजूद रही है।

जो चर्च में समग्र रूप से कभी नहीं रहा है, और जो केवल इसके सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधियों में ही देखने को मिलता है। लेकिन जनता, सरकार द्वारा उनमें डाले गए सभी पूर्वाग्रहों के बावजूद,

और चर्च, अपने सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधियों के माध्यम से, समझ के उस अपरिष्कृत चरण से बहुत आगे निकल चुके हैं,

यह तथ्य रूस में हर जगह फैल रहे तर्कवादी संप्रदायों से सिद्ध होता है।

आज, और जिस पर चर्च के लोग अब एक अप्रभावी युद्ध लड़ रहे हैं। लोग ईसाई धर्म के नैतिक, जीवंत पक्ष के प्रति जागरूक हो रहे हैं। और तब चर्च आगे आता है, न कि

जनता से उधार लेना, लेकिन उनमें विलुप्त हो चुकी व्यवस्था की जड़ हो चुकी औपचारिकताओं को उत्साहपूर्वक स्थापित करना।

मूर्तिपूजा, और उन्हें वापस उसी अंधकार में धकेलने का प्रयास करना जिससे वे इतने प्रयासों से बाहर निकल रहे हैं।

“हम लोगों को कुछ भी नया नहीं सिखाते, बल्कि वही सिखाते हैं जो वे मानते हैं, बस उसे और अधिक परिपूर्ण रूप में प्रस्तुत करते हैं,”

चर्चमैन। ठीक यही उस आदमी ने किया जिसने पूरी तरह से विकसित मुर्गे को बांधकर उसी खोल में वापस डाल दिया जिससे वह निकला था।

मुझे अक्सर गुस्सा आता रहा है, हालांकि अगर इसके परिणाम इतने भयानक न होते तो यह हास्यास्पद होता,

यह देखकर कि कैसे पुरुष एक दूसरे को भ्रम में जकड़ लेते हैं और इस जादुई घेरे से बाहर नहीं निकल पाते।

एक रूसी व्यक्ति जो सोचना शुरू कर रहा है, उसके मन में पहला सवाल, पहला संदेह, मूर्तियों और उससे भी अधिक चमत्कारी अवशेषों के बारे में होता है: क्या यह सच है कि वे असली हैं, और क्या उनसे चमत्कार होते हैं?

क्या उनके माध्यम से? लाखों पुरुषों ने यह प्रश्न स्वयं से पूछा, और उनके प्रमुख

इसका उत्तर देने में कठिनाई इस तथ्य के कारण है कि बिशप, मेट्रोपॉलिटन और अधिकार प्राप्त सभी व्यक्ति अवशेषों और चमत्कारिक मूर्तियों को चूमते हैं। बिशपों और अधिकार प्राप्त व्यक्तियों से पूछें कि वे ऐसा क्यों करते हैं।

और वे कहेंगे कि वे यह जनता के भले के लिए करते हैं, जबकि जनता बिशपों की वजह से उनकी चापलूसी करती है।

और सत्ता में बैठे लोग ऐसा करते हैं।

आधुनिकता, ज्ञान और आध्यात्मिकता के तमाम दिखावटी आवरण के बावजूद, जो सदस्यों में मौजूद हैं

आजकल चर्च अपने कार्यों, लेखों, धर्मशास्त्रीय पत्रिकाओं और अपने लेखन में यह धारणा अपनाने लगे हैं।

उपदेशों के अलावा, रूसी चर्च का व्यावहारिक कार्य लोगों को धर्म में बनाए रखने के अलावा और कुछ नहीं है।

उनकी वर्तमान स्थिति, जिसमें वे अशिष्ट और बर्बर मूर्तिपूजा करते हैं, और इससे भी बदतर, अंधविश्वास और धार्मिक अज्ञानता को मजबूत और फैलाते हैं, तथा ईसाई धर्म की उस जीवंत समझ को दबाते हैं जो मौजूद है।

लोगों में मूर्तिपूजा के साथ-साथ।

मुझे याद है एक बार मैं ऑप्टची आश्रम के भिक्षुओं की किताबों की दुकान में मौजूद था, जब एक बूढ़ा किसान अपने पोते के लिए किताबें चुन रहा था, जो पढ़ सकता था। एक भिक्षु ने उससे कुछ ऐसी कहानियाँ पढ़ने को कहा जो...

अवशेष, त्यौहार, चमत्कारी मूर्तियाँ, भजन-पुस्तक आदि। मैंने उस बूढ़े व्यक्ति से पूछा, "क्या उसके पास सुसमाचार है?" "नहीं।"

मैंने भिक्षु से कहा, “उसे रूसी भाषा में सुसमाचार दीजिए।” भिक्षु ने उत्तर दिया, “यह उसके लिए पर्याप्त नहीं होगा।” यही हमारे चर्च के कार्य का सार है।

लेकिन यूरोपीय और अमेरिकी पाठक देखेंगे कि यह केवल बर्बर रूस में ही संभव है। और यह अवलोकन उचित है, लेकिन केवल उस हद तक जहाँ तक यह सरकार को संदर्भित करता है, जो चर्च को उसके कार्य में सहायता करती है।

रूस में जड़ता और भ्रष्टाचार।

यह सच है कि पूरे यूरोप में कहीं भी ऐसी निरंकुश और सत्ताधारी चर्च से इतनी घनिष्ठ रूप से जुड़ी सरकार नहीं है। और इसीलिए जनता को भ्रष्ट करने में सांसारिक सत्ता की भूमिका सबसे अधिक है।

रूस में। लेकिन यह सच नहीं है कि रूसी चर्च लोगों पर अपने प्रभाव में किसी भी तरह से

अन्य सभी चर्चों से अलग।

सभी चर्च एक जैसे ही हैं, चाहे वह कैथोलिक चर्च हो, एंग्लिकन चर्च हो या लूथरन चर्च।

हालांकि अभी तक रूस जैसी आज्ञाकारी सरकार उपलब्ध नहीं है, लेकिन इसका कारण लाभ उठाने की अनिच्छा नहीं है।

ऐसी सरकार।

चर्च, चाहे वह कैथोलिक हो, एंग्लिकन हो, लूथरन हो या प्रेस्बिटेरियन, एक चर्च के रूप में, हर चर्च को, चर्च होने के नाते, रूसी चर्च के समान लक्ष्य के लिए प्रयास करना चाहिए। वह लक्ष्य यह है:

मसीह की शिक्षा के वास्तविक अर्थ को छिपाना और उसे अपने स्वयं के अर्थ से प्रतिस्थापित करना, जो कोई दायित्व नहीं डालता

उन पर भरोसा करना, मसीह की सच्ची शिक्षा को समझने की संभावना को नकारता है, और जो कि सबसे महत्वपूर्ण बात है, वह लोगों के खर्च पर पाले जाने वाले पुजारियों के अस्तित्व को उचित ठहराता है।

कैथोलिक धर्म ने और क्या किया है, सुसमाचार पढ़ने पर प्रतिबंध लगाकर वह और क्या कर रहा है?

क्या यह चर्च के अधिकारियों और एक अचूक पोप के प्रति अविवेकी समर्पण की मांग है? क्या कैथोलिक धर्म रूसी चर्च से अलग है? बाहरी अनुष्ठान तो वही हैं, वही
नोट्रे डेम के अवशेष, चमत्कार और आश्चर्य उत्पन्न करने वाली छवियां, और वही जुलूस; वही भव्यता
किताबों और उपदेशों में ईसाई धर्म पर अस्पष्ट चर्चाएँ होती हैं, और जब व्यवहार की बात आती है, तो वही स्थिति बनी रहती है।
वर्तमान मूर्तिपूजा का समर्थन करना। क्या एंग्लिकनवाद, लूथरवाद और प्रोटेस्टेंटवाद के हर उस संप्रदाय में भी यही नहीं किया जाता है जिसे चर्च के रूप में गठित किया गया है? उन सभी पर एक ही कर्तव्य थोपा गया है।
उनकी मंडलियों को चौथी शताब्दी में व्यक्त किए गए सिद्धांतों में विश्वास करने के लिए प्रेरित किया जाता था, जो अब पूरी तरह से लुप्त हो चुके हैं।
हमारे समय के मनुष्यों के लिए इसका अर्थ है, और मूर्तिपूजा का वही कर्तव्य, यदि अवशेषों और मूर्तियों की नहीं, तो सब्त के दिन और बाइबल के शब्दों की। हमेशा वही गतिविधि छिपी रहती है।
ईसाई धर्म के वास्तविक कर्तव्यों को समझना और उनकी जगह बाहरी सम्मान और पाखंड को स्थापित करना, जैसा कि यह बहुत अच्छी तरह से करता है
इसका वर्णन अंग्रेजों द्वारा किया गया है, जो इससे विशेष रूप से पीड़ित हैं। प्रोटेस्टेंटवाद में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि इसके पास प्राचीनता का बहाना नहीं है। और यह बिल्कुल वैसा ही नहीं करता है।
यह समकालीन पुनरुत्थानवाद में भी स्वयं को प्रकट करता है - पुनर्जीवित केल्विनवाद और इंजीलवाद, जिसके लिए
साल्वेशन आर्मी की उत्पत्ति कहाँ से हुई?
सभी गिरजाघरों का रवैया मसीह की शिक्षाओं के प्रति एक समान है, जिनका नाम वे अपने लाभ के लिए इस्तेमाल करते हैं।
सभी प्रकार के धार्मिक संप्रदायों का ईसा मसीह की शिक्षाओं से असंगत होना ही इसका मूल कारण है।
इस विसंगति को लोगों से छिपाने के लिए विशेष प्रयास क्यों आवश्यक हैं? वास्तव में, हमें केवल स्वयं को किसी भी वयस्क व्यक्ति की स्थिति में रखकर देखना चाहिए, चाहे वह शिक्षित हो या नहीं, यहाँ तक कि सबसे साधारण व्यक्ति की स्थिति में भी।
आज के समय में, भूविज्ञान के क्षेत्र में आजकल हर जगह व्याप्त विचारों को किसने आत्मसात किया है?
भौतिकी, रसायन विज्ञान, ब्रह्मांड विज्ञान या इतिहास, जब वह पहली बार सचेत रूप से उनकी तुलना बचपन में उसमें डाली गई और चर्चों द्वारा कायम रखी गई मान्यताओं से करता है - कि ईश्वर
नूह ने छह दिनों में दुनिया बनाई और सूर्य से पहले प्रकाश उत्पन्न किया; नूह ने सभी जानवरों को अपने जहाज में बंद कर दिया, और
इत्यादि; कि यीशु भी परमेश्वर का पुत्र है, जिसने समय से पहले ही सब कुछ बनाया; कि यह परमेश्वर पृथ्वी पर उतरा।
पृथ्वी आदम के पाप का प्रायश्चित करने के लिए आई; कि वह पुनर्जीवित हुआ, स्वर्ग में आरोहण किया और पिता के दाहिने हाथ पर बैठा है, और बादलों में आकर दुनिया का न्याय करेगा, इत्यादि। इन सभी प्रस्तावों को विस्तृत रूप से समझाया गया है।
चौथी शताब्दी के पुरुषों का उस समय के पुरुषों के लिए एक विशेष अर्थ था, लेकिन आज के पुरुषों के लिए उनका कोई अर्थ नहीं है।
मतलब जो भी हो। आज के लोग इन शब्दों को अपने होठों से दोहरा तो सकते हैं, लेकिन उन पर विश्वास नहीं कर सकते। क्योंकि ऐसे वाक्य जैसे कि ईश्वर स्वर्ग में रहता है, कि स्वर्ग खुल गया और एक आवाज आई
कहीं कुछ कहा गया था कि ईसा मसीह पुनर्जीवित हुए और स्वर्ग में कहीं आरोहण किया, और फिर से आएंगे

बादलों में कहीं से आना, इत्यादि जैसी बातों का हमारे लिए कोई अर्थ नहीं है।
जो व्यक्ति आकाश को एक ठोस, सीमित गुंबद मानता है, वह यह मान सकता है या नहीं मान सकता है कि ईश्वर ने सृष्टि की रचना की है।
स्वर्ग, स्वर्ग के द्वार खुल गए, ईसा मसीह स्वर्ग में आरोहण कर गए, लेकिन हमारे लिए ये सभी वाक्यांश अर्थहीन हैं।

इसका कोई अर्थ नहीं है। वर्तमान के लोग केवल यही मान सकते हैं, और वास्तव में वे मानते भी हैं, कि उन्हें इसमें विश्वास करना चाहिए; लेकिन वे इस पर विश्वास नहीं कर सकते, क्योंकि इसका उनके लिए कोई अर्थ नहीं है।
भले ही इन सभी वाक्यांशों की व्याख्या लाक्षणिक अर्थ में की जानी चाहिए और ये रूपक हैं, फिर भी हम जानते हैं
पहली बात तो यह है कि सभी चर्चवासी इस पर सहमत नहीं हैं, बल्कि इसके विपरीत, अधिकांश लोग पवित्र शास्त्र को उसके शाब्दिक अर्थ में ही समझने पर अड़े हैं; और दूसरी बात यह है कि ये प्रतीकात्मक व्याख्याएँ
ये दावे बहुत भिन्न-भिन्न हैं और किसी भी प्रमाण द्वारा समर्थित नहीं हैं।
लेकिन भले ही कोई व्यक्ति चर्च के सिद्धांतों में उसी रूप में विश्वास करने के लिए खुद को मजबूर करना चाहे, जैसा कि उसे सिखाया गया है, शिक्षा, सुसमाचार और संवाद का सार्वभौमिक प्रसार
विभिन्न धर्मों के अनुयायी उनके ऐसा करने में और भी बड़ी बाधा उत्पन्न करते हैं।
आज के समय में किसी व्यक्ति को केवल तीन कोपेक में एक बाइबिल खरीदनी होती है और उसे पढ़ना होता है।
ये शब्द, जिनकी गलत व्याख्या की कोई गुंजाइश नहीं है, कि मसीह ने सामरी स्त्री से कहा, “पिता यरूशलेम में, न इस पर्वत पर, न उस पर्वत पर, बल्कि आत्मा और सच्चाई में उपासकों को खोजते हैं।”
या फिर यह कहावत कि “ईसाई को गैर-ईसाइयों की तरह प्रार्थना नहीं करनी चाहिए, न ही दिखावे के लिए, बल्कि गुप्त रूप से, यानी अपने भीतर प्रार्थना करनी चाहिए।”
"कोठरी" या यह कि मसीह के अनुयायी को किसी भी पुरुष को स्वामी या पिता नहीं कहना चाहिए - उसे केवल इन शब्दों को पढ़कर ही पूरी तरह से आश्वस्त हो जाना चाहिए कि चर्च के पादरी, जो स्वयं को मसीह के विरोध में शिक्षक कहते हैं,
उपदेश और आपस में विवाद किसी भी प्रकार का अधिकार नहीं बनाते, और चर्च के लोग यही मानते हैं।
हमें सिखाना ईसाई धर्म नहीं है। इससे भी कम की आवश्यकता है। भले ही कोई व्यक्ति आज भी चमत्कारों में विश्वास करता रहे और सुसमाचार न पढ़े, विभिन्न प्रकार के लोगों के साथ मात्र मेलजोल ही उसे ईसाई धर्म में परिवर्तित कर सकता है।
आजकल धर्म और आस्था इतनी आसानी से पनपने लगते हैं कि वे उसे अपने स्वयं के सत्य पर संदेह करने के लिए विवश कर देते हैं।
आस्था। यह तब तक तो ठीक था जब तक कोई व्यक्ति अपने धर्म के अलावा किसी अन्य धर्म के लोगों को नहीं देखता था; वह
उनका मानना था कि उनका धर्म ही एकमात्र सच्चा धर्म है। लेकिन एक विचारशील व्यक्ति को बस इतना करना होता है कि वह – जैसा कि आजकल अक्सर होता है – अच्छे और बुरे, दोनों ही तरह के लोगों के संपर्क में आ जाए, चाहे उनका स्वभाव अलग-अलग हो।
एक-दूसरे के विश्वासों की निंदा करने वाले संप्रदायों के बीच, अपने द्वारा व्यक्त किए गए विश्वास की सत्यता पर संदेह करना
स्वयं। इन दिनों केवल वही व्यक्ति चर्च के विश्वास में बना रह सकता है जो धर्म से संबंधित महत्वपूर्ण प्रश्नों के प्रति पूर्णतः अज्ञानी या पूर्णतः उदासीन हो।

इन सबके बावजूद चर्चों को अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए कितने छल और कितने कठिन प्रयास करने पड़ते होंगे।
ये प्रवृत्तियाँ धर्म के लिए विध्वंसक हैं, चर्च बनाना, सामूहिक प्रार्थना करना, उपदेश देना, सिखाना, धर्म परिवर्तन कराना, और सबसे बढ़कर, इन सबके लिए भारी भरकम वेतन प्राप्त करना, जैसा कि ये सभी पादरी और धर्मगुरु करते हैं।
पदधारी, अधीक्षक, मठाधीश, आर्कडीकन, बिशप और आर्कबिशप। उन्हें विशेष व्यवस्था की आवश्यकता होती है।
अलौकिक प्रयास। और चर्च भी, बढ़ती तीव्रता और उत्साह के साथ, ऐसे प्रयास करते हैं।
रूस में, अन्य साधनों के अलावा, वे सीधे-सीधे बल प्रयोग करते हैं, क्योंकि वहाँ की सांसारिक सत्ता चर्च की आज्ञा मानने को तैयार है। जो लोग धर्म के लिए बाहरी स्वीकृति स्वीकार करने से इनकार करते हैं और खुलेआम ऐसा कहते हैं, वे या तो
प्रत्यक्ष रूप से दंडित या उनके अधिकारों से वंचित किए गए लोग; वे पुरुष जो धर्म के बाहरी स्वरूपों का कड़ाई से पालन करते हैं
पुरस्कृत किया गया और विशेषाधिकार दिए गए।
ऑर्थोडॉक्स पादरी इसी प्रकार आगे बढ़ते हैं; लेकिन वास्तव में सभी चर्च बिना किसी अपवाद के इसका लाभ उठाते हैं।
इस उद्देश्य के लिए उन्होंने हर संभव साधन जुटाया – जिनमें से सबसे महत्वपूर्ण वह है जिसे अब कहा जाता है
सम्मोहन।
वास्तुकला से लेकर कविता तक, हर कला का उपयोग मनुष्यों की आत्माओं पर अपना प्रभाव डालने के लिए किया जाता है।
और उन्हें अचेत अवस्था में लाने के लिए, और यह प्रभाव लगातार उत्पन्न होता रहता है। इस प्रयोग से
पुरुषों को सम्मोहित करके उन्हें बेहोशी की अवस्था में लाने का सम्मोहनकारी प्रभाव विशेष रूप से इनमें स्पष्ट होता है।
सैलवेशन आर्मी की कार्यवाही, जिसमें वे नई प्रथाओं का उपयोग करते हैं जिनसे हम अपरिचित हैं: तुरही, ढोल, गीत, झंडे, वेशभूषा, मार्चिंग, नृत्य, आंसू और नाटकीय प्रदर्शन।
लेकिन हमें इससे केवल इसलिए आपत्ति है क्योंकि ये नई प्रथाएं हैं। क्या चर्चों में पुरानी प्रथाएं ऐसी ही नहीं थीं?
क्या वे मूलतः एक जैसे ही हैं, अपनी विशेष प्रकाश व्यवस्था, सोने, वैभव, मोमबत्तियों, गायक मंडलियों, ऑर्गन, घंटियों, वस्त्रों, गायन आदि के साथ?
लेकिन यह सम्मोहक प्रभाव कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो, यह प्रमुख या सबसे हानिकारक नहीं है।
चर्च की गतिविधियाँ। चर्च का सबसे प्रमुख और सबसे हानिकारक कार्य बच्चों को धोखा देना है - उन्हीं बच्चों के बारे में जिनके बारे में मसीह ने कहा था, "जो कोई इनमें से किसी एक को ठेस पहुँचाता है, उस पर धिक्कार है।"
छोटे बच्चे।" बच्चे की चेतना जागृत होते ही वे उसे धोखा देना शुरू कर देते हैं।

वे अत्यंत गंभीरता से बच्चे के मन में उन बातों को बिठाते हैं जिन पर वे स्वयं विश्वास नहीं करते, और वे तब तक ऐसा करते रहते हैं जब तक कि छल बच्चे के स्वभाव का अभिन्न अंग न बन जाए। वे जानबूझकर
जीवन के सबसे महत्वपूर्ण विषय पर बच्चे को धोखा देना, और जब वह धोखा उसके जीवन में इतना रच-बस जाए
जब उन्हें लगता है कि इसे जड़ से उखाड़ना मुश्किल होगा, तब वे उन्हें विज्ञान और वास्तविकता की पूरी दुनिया से परिचित कराते हैं, जिसका उनके मन में बिठाई गई मान्यताओं से किसी भी तरह से मेल नहीं हो सकता, और इसे उनके ऊपर छोड़ देते हैं।

उसे इन विरोधाभासों से यथासंभव सर्वोत्तम तरीके से बाहर निकलने का रास्ता खोजना होगा।
यदि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति को इस प्रकार भ्रमित करने का कार्य अपने हाथ में ले ले कि वह स्पष्ट रूप से सोच न सके और जीवन के दो विरोधी सिद्धांतों की उलझन से खुद को मुक्त न कर सके, जो उसे बचपन से ही सिखाए गए हैं, तो वह ऐसा कर सकता है।
बचपन के दौरान, हर युवा लड़के के साथ उचित व्यवहार करने से अधिक प्रभावी कोई और उपाय नहीं हो सकता।
हमारे तथाकथित ईसाई समाज में शिक्षित।
यह सोचना भयावह है कि चर्च मनुष्यों के साथ क्या करते हैं। लेकिन अगर हम खुद को उन लोगों की जगह पर रखकर देखें जो चर्च का हिस्सा हैं, तो हम पाते हैं कि वे अलग तरह से व्यवहार नहीं कर सकते थे। चर्च एक ऐसी स्थिति में स्थित हैं जहाँ...
दुविधा: पर्वतीय उपदेश या नाइसीन पंथ – एक दूसरे का खंडन करता है। यदि कोई व्यक्ति
यदि कोई व्यक्ति सच्चे मन से पर्वतीय उपदेश में विश्वास करता है, तो उसके लिए नाइसीन पंथ का अर्थ और महत्व अनिवार्य रूप से समाप्त हो जाएगा, और इसके साथ ही चर्च और उसके प्रतिनिधि भी।
नाइसीन पंथ, अर्थात् चर्च में, अर्थात् स्वयं को इसके प्रतिनिधि कहने वालों में, उपदेश
पर्वत पर दिए गए उपदेश का महत्व उसके लिए अनावश्यक हो जाता है। इसलिए चर्चों को पर्वत पर दिए गए उपदेश के अर्थ को अस्पष्ट करने और लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए। यह केवल इसी कारण से संभव है कि
इस दिशा में चर्चों के तीव्र उत्साह के कारण ही चर्चों का प्रभाव अब तक कायम है।
चर्च को जनता को सम्मोहित करने और बच्चों को थोड़े समय के लिए भी धोखा देने का अपना काम बंद कर देना चाहिए।
कुछ समय बीतने पर लोग मसीह की शिक्षाओं को समझने लगेंगे। लेकिन यह समझ ही चर्चों और उनके सारे प्रभाव का अंत होगी। इसलिए चर्च एक पल के लिए भी शिथिल नहीं होंगे।
वयस्कों को सम्मोहित करने और बच्चों को धोखा देने के धंधे में उनका उत्साह। यही वह बात है जो
चर्चों का कार्य: मनुष्यों में मसीह की शिक्षाओं की एक झूठी व्याख्या को स्थापित करना और तथाकथित विश्वासियों के बहुमत के लिए इसकी एक सच्ची व्याख्या को रोकना।

अध्याय 4

विज्ञानियों द्वारा ईसाई धर्म को गलत समझा गया

सामान्यतः धर्मों के प्रति वैज्ञानिकों का दृष्टिकोण – धर्म क्या है और मानव जीवन के लिए इसका क्या महत्व है – जीवन की तीन अवधारणाएँ – ईसाई धर्म, जीवन की दिव्य अवधारणा की अभिव्यक्ति – सामाजिक जीवन अवधारणा के दृष्टिकोण से आलोचना करने के कारण, ईसाई धर्म का उसके बाहरी स्वरूपों में अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों द्वारा गलत अर्थ निकाला जाना – इस गलत अर्थ निकालने के परिणामस्वरूप यह राय उत्पन्न होना कि मसीह की नैतिक शिक्षा अतिशयोक्तिपूर्ण है और व्यवहार में नहीं लाई जा सकती – सुसमाचार में जीवन की दिव्य अवधारणा की अभिव्यक्ति – ईसाई धर्म के बारे में वैज्ञानिकों के झूठे विचार इस विश्वास से उत्पन्न होते हैं कि उनके पास आलोचना की एक अचूक विधि है – जिससे ईसाई धर्म के सिद्धांतों के संबंध में दो गलत धारणाएँ उत्पन्न होती हैं – पहली गलत धारणा यह है कि शिक्षा को व्यवहार में नहीं लाया जा सकता, क्योंकि ईसाई धर्म जीवन को सामाजिक जीवन सिद्धांत से भिन्न तरीके से निर्देशित करता है – ईसाई धर्म आदर्शों को प्रस्तुत करता है, नियम निर्धारित नहीं करता – मनुष्य की पशुवत शक्ति में मसीह एक दिव्य शक्ति की चेतना जोड़ते हैं – ईसाई धर्म ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन की संभावना तभी नष्ट हो जाती है जब आदर्श को नियम मान लिया जाता है – आदर्श को नीचा नहीं करना चाहिए – ईसा मसीह की शिक्षाओं के अनुसार, जीवन गति है – आदर्श और उपदेश – दूसरी गलत धारणा ईश्वर के प्रेम और सेवा को मानवता के प्रेम और सेवा से प्रतिस्थापित करने में दिखाई देती है – वैज्ञानिक मानवता की सेवा के अपने सिद्धांत और ईसाई धर्म को एक समान मानते हैं – मानवता की सेवा का सिद्धांत जीवन की सामाजिक अवधारणा पर आधारित है – स्वयं के प्रेम से तार्किक रूप से व्युत्पन्न मानवता के प्रति प्रेम का कोई अर्थ नहीं है क्योंकि मानवता एक कल्पना है – ईश्वर के प्रेम से व्युत्पन्न ईसाई प्रेम का लक्ष्य संपूर्ण विश्व में है, केवल मानवता में नहीं – ईसाई धर्म मनुष्य को उसके दिव्य स्वभाव के अनुसार जीना सिखाता है – यह दर्शाता है कि मनुष्य की आत्मा का सार प्रेम है, और उसकी खुशी ईश्वर के प्रेम से उत्पन्न होती है, जिसे वह अपने भीतर प्रेम के रूप में पहचानता है।

अब मैं ईसाई धर्म के उस दूसरे दृष्टिकोण के बारे में बात करूंगा जो इसकी सही समझ में बाधा डालता है - वैज्ञानिक दृष्टिकोण।
चर्च के लोग ईसाई धर्म के उस संस्करण को प्रतिस्थापित कर देते हैं जिसे उन्होंने स्वयं के लिए गढ़ा है, और यह
वे ईसाई धर्म के जिस दृष्टिकोण को एकमात्र अचूक सत्य मानते हैं, वही मान्य है।
वैज्ञानिक लोग ईसाई धर्म को केवल अतीत और वर्तमान में विभिन्न चर्चों द्वारा अपनाए गए सिद्धांतों के रूप में ही मानते हैं; और यह पाते हुए कि इन सिद्धांतों ने ईसाई धर्म का सारा महत्व खो दिया है, वे इसे एक अन्य धर्म के रूप में स्वीकार करते हैं।
ऐसा धर्म जो अपने युग से आगे निकल चुका है।
इस दृष्टिकोण से ईसाई शिक्षा को समझना कितना असंभव है, यह स्पष्ट रूप से देखने के लिए, व्यक्ति को सामान्य रूप से धर्मों और ईसाई धर्म के वास्तविक स्थान का एक विचार स्वयं बनाना होगा।
विशेष रूप से धर्म का मानव जीवन में और विज्ञान द्वारा उन्हें दिए गए महत्व का अध्ययन।

जिस प्रकार एक व्यक्ति अपने जीवन के अर्थ के बारे में किसी न किसी सिद्धांत के बिना नहीं जी सकता, और वह हमेशा, हालांकि अक्सर अनजाने में, अपने आचरण को उस अर्थ के अनुसार ढालता है जो वह अपने जीवन को देता है।
उनके जीवन के साथ-साथ समान परिस्थितियों में रहने वाले लोगों के संघों – राष्ट्रों – के भी सिद्धांत होने चाहिए।
उन सिद्धांतों से उत्पन्न होने वाले उनके संबंधित जीवन और आचरण का अर्थ। और एक व्यक्ति के रूप में,
जब कोई व्यक्ति विकास के एक नए चरण में पहुँचता है, तो अनिवार्य रूप से उसके जीवन दर्शन में परिवर्तन आता है, और वयस्क व्यक्ति को जीवन में एक अलग अर्थ दिखाई देता है, जो बच्चे को नहीं दिखाई देता। इसी प्रकार, मनुष्यों के संगठन – राष्ट्र – भी बदलने के लिए बाध्य हैं।
उनके जीवन दर्शन और उस दर्शन से उत्पन्न आचरण को उनके अनुरूप होना चाहिए।
विकास।
इस संदर्भ में, व्यक्ति और संपूर्ण मानवता के बीच का अंतर इस तथ्य में निहित है कि
कि व्यक्ति, जीवन के उस नए दौर के लिए उपयुक्त जीवन दृष्टिकोण का निर्माण करते समय, जिसमें वह प्रवेश कर रहा है।
और इसके परिणामस्वरूप होने वाला आचरण, उससे पहले जी चुके मनुष्यों के अनुभव से लाभान्वित होता है, जो पहले ही विकास के उस चरण से गुजर चुके हैं जिसमें वह प्रवेश कर रहा है। लेकिन मानवता ऐसा नहीं कर सकती
यह सहायता, क्योंकि यह हमेशा एक ऐसे रास्ते पर आगे बढ़ रही है जिस पर पहले कभी कोई नहीं चला है, और इसके पास पूछने के लिए कोई नहीं है कि कैसे आगे बढ़ना है।
जीवन को समझना, और उन परिस्थितियों में कार्य करना जिनमें यह प्रवेश कर रहा है और जिनसे कोई पहले कभी नहीं गुजरा है
पहले गुजर चुका है।
फिर भी, जिस प्रकार पत्नी और बच्चों वाला व्यक्ति जीवन को उसी तरह से नहीं देख सकता जैसा वह पहले देखता था, उसी प्रकार से वह अब भी जीवन को नहीं देख सकता।
जब वह बच्चा था, तब भी हो रहे विभिन्न परिवर्तनों के मद्देनजर, घनत्व में वृद्धि हुई है।

जनसंख्या वृद्धि, विभिन्न जातियों के बीच संचार की स्थापना, प्रकृति से संघर्ष करने के तरीकों में सुधार और ज्ञान के संचय के बिना मानवता निरंतर नहीं चल सकती।
जीवन को पुराने दृष्टिकोण से देखें, और इससे जीवन का एक नया सिद्धांत तैयार होगा, जिसके आधार पर आचरण को अनुकूलित किया जा सकता है।
वे नई शर्तें जिनके तहत इसने प्रवेश किया है और प्रवेश कर रहा है।
इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए मानवता के पास ऐसे पुरुषों को उत्पन्न करने की विशेष क्षमता है जो जीवन को एक नया अर्थ देते हैं।
संपूर्ण मानव जीवन – जीवन का एक सिद्धांत जिससे गतिविधि के नए रूप सामने आते हैं जो सभी से बिल्कुल भिन्न हैं।
उनसे पहले। मानवता के लिए उपयुक्त जीवन दर्शन का निर्माण, उन नई परिस्थितियों में जिनमें वह प्रवेश कर रही है, और उससे उत्पन्न होने वाला अभ्यास, ही धर्म कहलाता है।
और इसलिए, सबसे पहले, धर्म, जैसा कि विज्ञान कल्पना करता है, एक ऐसी अभिव्यक्ति नहीं है जो एक समय में

यह मानवता के विकास के साथ मेल खाता था, लेकिन बाद में उससे आगे निकल गया। यह एक अभिव्यक्ति है।
यह मानवता के जीवन में हमेशा अंतर्निहित रहा है, और वर्तमान समय में भी उतना ही अपरिहार्य और अंतर्निहित है जितना कि किसी अन्य समय में। दूसरे, धर्म हमेशा भविष्य के व्यवहार का सिद्धांत होता है, वर्तमान का नहीं।
अतीत, और इसलिए यह स्पष्ट है कि अतीत की अभिव्यक्तियों की जांच किसी भी मामले में इसे समझ नहीं सकती है।
धर्म का सार।
प्रत्येक धार्मिक शिक्षा का सार शक्तियों की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति की इच्छा में निहित नहीं है।
न तो प्रकृति के भय में, न ही इन शक्तियों के डर में, न ही अद्भुत चीजों की लालसा में, और न ही बाहरी रूपों में।
जिसमें यह प्रकट होता है, जैसा कि वैज्ञानिक कल्पना करते हैं; धर्म का सार मनुष्य की उस क्षमता में निहित है जिसके द्वारा वह भविष्य देख सकता है और जीवन के उस मार्ग को इंगित कर सकता है जिस पर मानवता को एक नए की खोज में आगे बढ़ना होगा।
जीवन का वह सिद्धांत, जिसके परिणामस्वरूप मानवता का संपूर्ण भावी आचरण बदल जाता है और उससे भिन्न हो जाता है।
जो कुछ भी पहले हो चुका है।
मानवता को किस मार्ग पर चलना होगा, इसका पूर्वानुमान लगाने की यह क्षमता कम या ज्यादा मात्रा में सभी मनुष्यों में पाई जाती है। लेकिन हर युग में ऐसे मनुष्य रहे हैं जिनमें यह क्षमता विशेष रूप से प्रबल थी।
मजबूत, और इन लोगों ने उन भावनाओं को स्पष्ट और निश्चित रूप से व्यक्त किया है जिन्हें सभी लोग अस्पष्ट रूप से महसूस करते थे, और आकार दिया है।
जीवन का एक नया दर्शन, जिससे सैकड़ों-हजारों वर्षों तक कार्रवाई की नई दिशाएँ विकसित हुई।
जीवन के ऐसे दर्शनों में से हम तीन को जानते हैं; दो को मानवता पहले ही अपना चुकी है, और
तीसरा वह है जिससे हम वर्तमान में ईसाई धर्म में गुजर रहे हैं। जीवन के ये तीन दर्शन हैं।
संख्या, और केवल तीन, इसलिए नहीं कि हमने जीवन के विभिन्न सिद्धांतों को मनमाने ढंग से इन तीन शीर्षों के अंतर्गत एक साथ रखा है, बल्कि इसलिए कि सभी मनुष्यों के कार्य हमेशा जीवन के इन तीन दृष्टिकोणों में से किसी एक पर आधारित होते हैं।
जीवन – क्योंकि हम जीवन को इन तीन तरीकों के अलावा किसी और तरीके से नहीं देख सकते।
जीवन के ये तीन दृष्टिकोण इस प्रकार हैं: पहला, व्यक्तिवादी, या पशुवत जीवन दृष्टिकोण को अपनाना;
दूसरा, समाज को अपनाना, या जीवन के प्रति मूर्तिपूजक दृष्टिकोण को अपनाना; तीसरा, संपूर्ण विश्व को अपनाना, या जीवन के प्रति दिव्य दृष्टिकोण को अपनाना।
जीवन के पहले सिद्धांत में मनुष्य का जीवन उसकी एक ही व्यक्तिगत पहचान तक सीमित है; जीवन का उद्देश्य है...
इस वैयक्तिक इच्छा की संतुष्टि। जीवन के दूसरे सिद्धांत में मनुष्य का जीवन उसकी अपनी वैयक्तिकता तक सीमित नहीं है, बल्कि कुछ समाजों और व्यक्तियों के वर्गों तक सीमित है: जैसे कि जनजाति, परिवार, गोत्र आदि।
राष्ट्र में, जीवन का उद्देश्य व्यक्तियों के उन समूहों की इच्छा की संतुष्टि तक ही सीमित है।
जीवन का तीसरा सिद्धांत यह कहता है कि मनुष्य का जीवन समाजों और व्यक्तियों के वर्गों तक सीमित नहीं है, बल्कि जीवन के सिद्धांत और स्रोत - ईश्वर तक फैला हुआ है।
जीवन की ये तीन अवधारणाएँ उन सभी धर्मों की नींव हैं जो वर्तमान में मौजूद हैं या पहले मौजूद थे।

वह असभ्य व्यक्ति जीवन को केवल अपने आप में और अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं में ही पहचानता है। जीवन में उसकी रुचि केवल स्वयं तक ही सीमित है।

वह केवल स्वयं पर ही केंद्रित रहता है। उसके लिए सर्वोच्च सुख उसकी इच्छाओं की पूर्ण संतुष्टि है। उसके जीवन का प्रेरक बल व्यक्तिगत आनंद है। उसका धर्म अपने देवता को प्रसन्न करने और

वह अपने देवताओं की पूजा करता है, जिनकी वह कल्पना ऐसे व्यक्तियों के रूप में करता है जो केवल अपने व्यक्तिगत उद्देश्यों के लिए जीते हैं।

सभ्य मूर्तिपूजक जीवन को केवल अपने आप में ही नहीं, बल्कि मानव समाजों में – कबीले, गोत्र, परिवार और राज्य में – पहचानता है और इन समाजों के लिए अपने व्यक्तिगत हित का त्याग करता है।

उनके जीवन की शक्ति उनकी महिमा है। उनका धर्म उन लोगों की महिमा को ऊंचा उठाने में निहित है जो उनके सहयोगी हैं।

वह – अपने परिवार के संस्थापकों, अपने पूर्वजों, अपने शासकों – की पूजा करता है और उन देवताओं की पूजा करता है जो विशेष रूप से उसके कबीले, उसके परिवार, उसके राष्ट्र, उसकी सरकार के रक्षक हैं।8

जो व्यक्ति जीवन के दैवीय सिद्धांत को मानता है, वह जीवन को अपनी स्वयं की वैयक्तिकता में नहीं, बल्कि किसी अन्य रूप में पहचानता है।

वह व्यक्तियों के समाजों (परिवार, कुल, राष्ट्र, जनजाति या सरकार) में नहीं, बल्कि जीवन के शाश्वत, अविनाशी स्रोत - ईश्वर में विश्वास रखता है; और ईश्वर की इच्छा पूरी करने के लिए वह अपना बलिदान देने को तैयार है।

व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक कल्याण। उनके जीवन की प्रेरक शक्ति प्रेम है। और उनका धर्म है...

संपूर्णता के सिद्धांत – ईश्वर – की कर्म और सत्य में उपासना करना।

मानव जाति का संपूर्ण ऐतिहासिक अस्तित्व, क्रमिक संक्रमण के अलावा और कुछ नहीं है।

जीवन की व्यक्तिगत, पशुवत अवधारणा से जीवन की सामाजिक अवधारणा की ओर, और सामाजिक अवधारणा से जीवन की सामाजिक अवधारणा की ओर

जीवन की दैवीय अवधारणा तक। प्राचीन लोगों का संपूर्ण इतिहास, जो हजारों वर्षों तक चलता रहा।

रोमन साम्राज्य के समय से लेकर रोम के इतिहास तक का पूरा इतिहास, जीवन के पशुवत, व्यक्तिगत दृष्टिकोण से सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन का इतिहास है।

ईसाई धर्म का उदय उस संक्रमण का इतिहास है, जिससे हम अभी भी गुजर रहे हैं।

जीवन के सामाजिक दृष्टिकोण से लेकर जीवन के दैवीय दृष्टिकोण तक।

जीवन के प्रति यही अंतिम दृष्टिकोण है, और इसी पर ईसाई शिक्षा आधारित है, जो हमारे लिए मार्गदर्शक है।

हमारे संपूर्ण जीवन में यही समाहित है और हमारी सभी गतिविधियों, व्यावहारिक और सैद्धांतिक, की जड़ में यही है। फिर भी, मनुष्य जो कुछ भी है

जिसे झूठे तौर पर विज्ञान कहा जाता है, छद्म-वैज्ञानिक लोग, केवल इसके बाहरी पहलुओं को देखकर, इसे कुछ ऐसा मानते हैं जो पुराना हो चुका है और हमारे लिए इसका कोई मूल्य नहीं है।

इसे केवल इसके सैद्धांतिक पक्ष तक सीमित कर देना – त्रिमूर्ति, मोचन, चमत्कारों के सिद्धांतों तक सीमित कर देना,

चर्च, संस्कार आदि – विज्ञान के जानकार इसे असंख्य चीजों में से केवल एक मानते हैं।
मानव जाति के बीच जो धर्म उत्पन्न हुए हैं, और अब, वे कहते हैं, इतिहास में अपनी भूमिका निभा चुके हैं, अपने युग से आगे निकल रहे हैं और विज्ञान और सच्चे ज्ञान के प्रकाश के सामने लुप्त हो रहे हैं।
हम यहाँ उस विषय पर आते हैं जो अधिकतर मामलों में सबसे बड़ी गलतियों का स्रोत बनता है।
मानव जाति। निम्न स्तर की समझ वाले मनुष्य, जब उच्च कोटि की घटनाओं के संपर्क में आते हैं, तो उन्हें समझने का प्रयास करने के बजाय, स्वयं को उस स्तर तक ऊपर उठाने का प्रयास करते हैं।
जिससे उन्हें विषय को देखना होगा, अपने निम्न दृष्टिकोण से उसका मूल्यांकन करना होगा, और जितना कम वे
वे जिस बारे में बात कर रहे हैं, उसे जितना अधिक आप समझते हैं, उतना ही अधिक आत्मविश्वास और बिना किसी झिझक के वे उस पर निर्णय सुनाते हैं।
अधिकांश विद्वानों के लिए, मसीह की जीवंत, नैतिक शिक्षा को निम्न स्तर से देखना
राज्य की जीवन अवधारणा के दृष्टिकोण से, यह सिद्धांत एक बहुत ही अनिश्चित और अस्पष्ट सिद्धांत के रूप में ही सामने आता है।
भारतीय तपस्या, स्टोइक और नवप्लेटोनिक दर्शन तथा सारहीन असामाजिक विचारों का असंगत संयोजन, जिनका हमारे समय के लिए कोई गंभीर महत्व नहीं है। इसका संपूर्ण अर्थ केंद्रित है
उन्हें इसके बाहरी अभिव्यक्तियों में - कैथोलिक धर्म में, प्रोटेस्टेंट धर्म में, कुछ सिद्धांतों में, या संघर्ष में
सांसारिक शक्ति के साथ। इन घटनाओं के आधार पर ईसाई धर्म के मूल्य का आकलन करना वैसा ही है जैसे कोई बहरा व्यक्ति संगीतकारों की गतिविधियों को देखकर संगीत के चरित्र और गुणवत्ता का आकलन करे।
इसका परिणाम यह है कि कांट, स्ट्रॉस, स्पेंसर और रेनन से लेकर सभी वैज्ञानिक ऐसा करते हैं।
वे मसीह के वचनों का अर्थ नहीं समझते, उनके उच्चारण का महत्व, उद्देश्य या कारण नहीं समझते, यहाँ तक कि उस प्रश्न को भी नहीं समझते जिसका वे उत्तर देते हैं। फिर भी,
उनके अर्थ को समझने की जहमत उठाए बिना ही, यदि उनका झुकाव उनकी ओर न हो तो वे इनकार कर देते हैं।
या यदि वे उनके सिद्धांतों में कोई तर्कसंगतता स्वीकार करते हैं; या यदि वे उनके प्रति उदार रवैया अपनाना चाहते हैं, तो वे
वे अपनी श्रेष्ठता के चरम पर पहुँचकर, उन्हें सुधारने का प्रयास करते हैं, इस धारणा पर कि मसीह का उद्देश्य ठीक उन्हीं के विचारों को व्यक्त करना था, परन्तु वे ऐसा करने में सफल नहीं हुए। वे उनकी शिक्षाओं के प्रति लगभग वैसा ही व्यवहार करते हैं जैसा कि
आत्मविश्वासी लोग उन लोगों से बात करते हैं जिन्हें वे अपने से नीचा समझते हैं, अक्सर अपने साथियों को जानकारी प्रदान करते हैं।

8. यह तथ्य कि परिवार, कबीले, गोत्र, राज्य और यहाँ तक कि प्रत्यक्षवादियों द्वारा सैद्धांतिक रूप से परिकल्पित मानवता के जीवन जैसे अस्तित्व के इतने विविध रूप इस सामाजिक या मूर्तिपूजक जीवन सिद्धांत पर आधारित हैं, इस जीवन सिद्धांत की एकता को नष्ट नहीं करता। जीवन के ये सभी विविध रूप एक ही अवधारणा पर आधारित हैं कि व्यक्ति का जीवन जीवन का पर्याप्त लक्ष्य नहीं है – जीवन का अर्थ केवल व्यक्तियों के समाजों में ही पाया जा सकता है।

"हाँ, आपका मतलब यह और वह कहना है।" यह सुधार हमेशा जीवन की उच्च, दिव्य अवधारणा की शिक्षा को निम्न, सांसारिक अवधारणा के स्तर तक कम करने के उद्देश्य से किया जाता है।

वे आम तौर पर कहते हैं कि ईसाई धर्म की नैतिक शिक्षा बहुत अच्छी है, लेकिन अतिरंजित है; कि

इसे पूरी तरह से सही बनाने के लिए हमें इसमें मौजूद हर उस चीज़ को अस्वीकार करना होगा जो हमारे जीवन शैली के लिए अनावश्यक और फालतू है। "और वह सिद्धांत जो बहुत अधिक अपेक्षा करता है, और जो पूरा नहीं किया जा सकता, उसकी मांग करता है, वह उस सिद्धांत से भी बदतर है जो

इन विद्वान व्याख्याकारों का कहना है कि मनुष्यों से वही अपेक्षित है जो संभव हो और उनकी क्षमताओं के अनुरूप हो।

ईसाई धर्म इस बात को दोहराते हुए कायम है कि बहुत पहले उन लोगों ने, जिन्होंने गुरु को इसलिए सूली पर चढ़ाया क्योंकि वे उन्हें समझ नहीं पाए थे - यानी यहूदियों ने - यही बात कही थी, और कही ही जानी चाहिए थी।

ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे समय के विद्वानों के मत में हिब्रू कानून – जैसे को तैसा – सही है।

आँख के बदले आँख – यह न्यायसंगत प्रतिशोध का एक नियम है, जो इस कानून के अस्तित्व में आने से पाँच हज़ार साल पहले से ही मानव जाति को ज्ञात है।

उस पवित्रता के बारे में जो मसीह ने इसके स्थान पर सिखाई थी।

ऐसा प्रतीत होता है कि यह सब उन लोगों द्वारा किया गया है जिन्होंने मसीह की शिक्षाओं को अक्षरशः समझा और

इस समझ के अनुसार जीवन व्यतीत किया, जो कुछ भी सभी सच्चे लोगों द्वारा कहा और किया गया है

सभी ईसाई संतों की कसम, जो कुछ भी अब समाजवाद और साम्यवाद के रूप में दुनिया को सुधार रहा है - वह महज़ अतिशयोक्ति है, जिसके बारे में बात करना भी व्यर्थ है।

ईसाई धर्म में अठारह सौ वर्षों की शिक्षा के बाद, सभ्य दुनिया, जैसा कि इसके द्वारा दर्शाया गया है

अधिकांश उन्नत विचारकों का मानना है कि ईसाई धर्म हठधर्मिता का धर्म है; कि जीवन के संबंध में इसकी शिक्षा तर्कहीन है, अतिशयोक्तिपूर्ण है, और वास्तविक वैधानिक जीवन को नष्ट करने वाली है।

मनुष्य के स्वभाव के अनुरूप नैतिकता के दायित्व; और प्रतिशोध का वही सिद्धांत जिसे मसीह ने प्रतिपादित किया था।

जिसे अस्वीकार कर दिया गया था, और जिसके स्थान पर उन्होंने अपनी शिक्षा को रखा, वह हमारे लिए अधिक व्यावहारिक रूप से उपयोगी है।

विद्वानों के लिए बुराई का बलपूर्वक विरोध न करने का सिद्धांत अतिशयोक्तिपूर्ण और यहाँ तक कि तर्कहीन भी है। उनका मानना है कि ईसाई धर्म इसके बिना कहीं बेहतर है, जबकि वे ईसाई धर्म के वास्तविक स्वरूप पर बारीकी से ध्यान नहीं देते।

उनके द्वारा, इसका मतलब है।

वे यह नहीं समझते कि बुराई का प्रतिरोध न करने के सिद्धांत को मसीह की शिक्षा में अतिशयोक्ति कहना ठीक वैसा ही है जैसे किसी वृत्त की त्रिज्याओं की समानता के कथन को अतिशयोक्ति कहना।

वृत्त की परिभाषा। और जो लोग इस प्रकार बोलते हैं, वे ठीक उसी व्यक्ति की तरह व्यवहार कर रहे हैं जिसे इस बारे में कोई जानकारी नहीं है।

वृत्त क्या है, इस बारे में यह घोषणा करनी चाहिए कि यह आवश्यकता, कि परिधि का प्रत्येक बिंदु केंद्र से समान दूरी पर हो, अतिशयोक्तिपूर्ण है। मसीह के आदेश को अस्वीकार करने की वकालत करना...

बुराई का प्रतिरोध न करना, या जीवन की आवश्यकताओं के अनुसार उसका अनुकूलन करना, ईश्वर की शिक्षाओं की गलतफहमी को दर्शाता है।

ईसा मसीह।
और जो ऐसा करते हैं, वे निश्चित रूप से इसे नहीं समझते। वे यह नहीं समझते कि यह शिक्षा जीवन के एक नए सिद्धांत की संस्था है, जो उन नई परिस्थितियों के अनुरूप है जिनमें मनुष्य अब प्रवेश कर चुके हैं।
अठारह सौ वर्षों से चली आ रही परंपरा और उससे उत्पन्न होने वाले जीवन के नए आचरण की परिभाषा भी।
उनका मानना है कि ईसा मसीह का वही कहने का इरादा नहीं था जो उन्होंने कहा था; या उन्हें लगता है कि उन्होंने पर्वतीय उपदेश और अन्य स्थानों पर जो कहा वह अनजाने में, या अपनी अज्ञानता के कारण कहा था।
खेती.9

9 उदाहरण के लिए, अमेरिकी पत्रिका द एरेना (अक्टूबर, 1890) से इस प्रकार का एक विशिष्ट दृष्टिकोण यहाँ दिया गया है: "चर्च जीवन का नया आधार।" विशेष रूप से पर्वतीय उपदेश और बुराई के प्रति अहिंसा के महत्व पर विचार करते हुए, लेखक, चर्च के लोगों की तरह इसके महत्व को छिपाने के लिए बाध्य न होते हुए, कहते हैं:
“वास्तव में ईसा मसीह ने पूर्ण साम्यवाद और अराजकता का उपदेश दिया था; लेकिन हमें ईसा मसीह को हमेशा उनके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखना सीखना चाहिए।”
और मनोवैज्ञानिक महत्व। मानवता के प्रेम के हर समर्थक की तरह, ईसा मसीह ने अपने उपदेशों में चरम सीमा तक प्रयास किया। मानवता की नैतिक पूर्णता की ओर प्रत्येक कदम हमेशा उन लोगों द्वारा निर्देशित होता है जो अपने कर्तव्य के अलावा कुछ नहीं देखते। यह कहना गलत नहीं होगा कि ईसा मसीह में एक आदर्श सुधारक का स्वभाव था। इसलिए हमें याद रखना चाहिए कि उनके उपदेशों को जीवन के संपूर्ण दर्शन के रूप में शाब्दिक रूप से नहीं समझा जा सकता। हमें उनके शब्दों का सम्मान करते हुए, लेकिन आलोचनात्मक दृष्टिकोण से विश्लेषण करना चाहिए, सत्य को स्वीकार करते हुए, इत्यादि।
दूसरे शब्दों में कहें तो, ईसा मसीह को वह सब कहने में खुशी होती जो उन्हें कहना चाहिए था, लेकिन वे अपने आप को ठीक उसी तरह व्यक्त करने में सक्षम नहीं थे।
और स्पष्ट रूप से, जैसा कि हम आलोचना की भावना से कर सकते हैं, इसलिए आइए हम उसे सुधारें। नम्रता, त्याग, दीनता, कल की चिंता न करने के बारे में उसने जो कुछ भी कहा, वह संयोगवश कहा गया था, वैज्ञानिक रूप से स्वयं को व्यक्त करने के ज्ञान की कमी के कारण।

इसलिए मैं तुमसे कहता हूँ, अपने जीवन के लिए चिंता मत करो कि तुम क्या खाओगे या क्या पियोगे; न ही अपने शरीर के लिए कि तुम क्या पहनोगे। क्या जीवन भोजन से बढ़कर नहीं है, और शरीर वस्त्र से बढ़कर नहीं है?
आकाश में उड़ने वाले पक्षियों को देखो; वे न तो बोते हैं, न काटते हैं, और न ही खलिहानों में इकट्ठा करते हैं; फिर भी
तुम्हारा स्वर्गीय पिता उन्हें भोजन देता है। क्या तुम उनसे कहीं बेहतर नहीं हो? तुममें से कौन इसके बारे में सोचकर अपनी लंबाई एक फुट बढ़ा सकता है? और तुम वस्त्रों के बारे में क्यों सोचते हो? स्वर्ग के लिली के फूलों पर विचार करो।
खेत और वे कैसे बढ़ते हैं; वे न तो मेहनत करते हैं, न ही सूत कातते हैं; फिर भी मैं तुमसे कहता हूँ कि सुलेमान भी ऐसा ही करता है।

अपनी सारी महिमा में भी वह इनमें से किसी एक के समान वस्त्र नहीं पहनता था। इसलिए, यदि परमेश्वर मैदान की घास को, जो आज यहाँ है और कल भट्ठी में डाल दी जाती है, इस प्रकार वस्त्र पहनाता है, तो क्या वह तुम्हें, हे प्रभु, और भी अधिक वस्त्र नहीं पहनाएगा? क्या आपका विश्वास कम है? इसलिए चिंता न करें, यह कहते हुए कि, 'हम क्या खाएँगे?' या, 'हम क्या पिएँगे?' या, 'क्या पिएँगे?' हम क्या पहनेंगे?' (अन्यजाति इन सब चीजों की खोज करते हैं), क्योंकि तुम्हारा स्वर्गीय पिता यह जानता है कि तुम्हें इन सब चीजों की आवश्यकता है। परन्तु सर्वप्रथम परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता को खोजो, और ये सब चीजें तुम्हें दी जाएंगी। कल की चिंता मत करो, क्योंकि कल स्वयं अपनी चिंता करेगा। चीज़ें। आज के लिए उनकी बुराई ही काफी है।" (मत्ती 6:25-34) "जो कुछ तुम्हारे पास है, उसे बेच दो और दान दे दो; अपने लिए ऐसे थैले बनाओ जो कभी पुराने न हों, और स्वर्ग में ऐसा खजाना जमा करो जो कभी नष्ट न हो, जहाँ कोई चोर न पहुँच सके और कोई कीड़ा उसे खराब न कर सके। क्योंकि जहाँ तुम्हारा खजाना है, वहीं तुम्हारा हृदय भी होगा। (लूका) 12:33-34) अपनी सारी संपत्ति बेचकर मेरे पीछे आओ; और जो अपने पिता, माता, बच्चों या भाई, खेत, या घर, कोई भी मेरा शिष्य नहीं हो सकता। अपने आप को त्याग दो, प्रतिदिन अपना क्रूस उठाओ और मेरा अनुसरण करो। मेरा भोजन तो भेजने वाले की इच्छा पूरी करना और उसके काम करना है। मेरी इच्छा नहीं, बल्कि आपकी इच्छा पूरी हो; मेरी नहीं, बल्कि आपकी इच्छा पूरी हो। जीवन का अर्थ है अपनी इच्छा पूरी करना नहीं, बल्कि ईश्वर की इच्छा पूरी करना। ये सभी सिद्धांत उन लोगों को प्रतीत होते हैं जो जीवन की निम्न अवधारणा के दृष्टिकोण से इनका अध्ययन करते हैं।

ये सिद्धांत आवेगपूर्ण उत्साह की अभिव्यक्ति हैं, जिनका जीवन से कोई सीधा संबंध नहीं है। हालांकि, ये सिद्धांत ईसाई जीवन सिद्धांत से उसी प्रकार तार्किक रूप से निकलते हैं, जैसे कि जीवन के एक हिस्से का भुगतान करने के सिद्धांत। राष्ट्रमंडल के लिए किए गए निजी लाभ और अपने देश की रक्षा में अपने जीवन का बलिदान देना निम्नलिखित बातों का अनुसरण करते हैं। जीवन के राज्य सिद्धांत से।

राज्य की जीवन अवधारणा वाले व्यक्ति ने आदिम व्यक्ति से कहा, "विचार करो, अपने बारे में सोचो! जीवन आपकी वैयक्तिकता सच्चा जीवन नहीं हो सकती, क्योंकि वह जीवन दयनीय और क्षणभंगुर है। लेकिन समाज का जीवन ही सच्चा जीवन है। और व्यक्तियों, परिवार, गोत्र, जनजाति या राज्य का उत्तराधिकार चलता रहता है, और इसलिए मनुष्य को परिवार या राज्य के जीवन के लिए अपनी व्यक्तिगत पहचान का त्याग करना पड़ता है। ठीक उसी तरह ईसाई धर्म सामाजिक, राज्य-प्रधान जीवन शैली वाले व्यक्ति से कहता है, 'पश्चाताप करो' - पश्चाताप करो - अर्थात्, अपने बारे में सोचो, वरना बर्बाद हो जाओगे। समझ लो कि यह अनौपचारिक, निजी जीवन जो अब सामने आ रहा है, अस्तित्व और कल का न होना, दोनों में कोई स्थायित्व नहीं हो सकता, कोई बाहरी साधन, कोई निर्माण इसे निरंतरता और स्थायित्व नहीं दे सकता। सोचो और समझो कि तुम जो जीवन जी रहे हो, वह... वास्तविक जीवन नहीं – परिवार का जीवन, समाज का जीवन, राज्य का जीवन आपको विनाश से नहीं बचाएगा। सच्चा जीवन, मनुष्य के लिए तर्कसंगत जीवन तभी संभव है जब वह परिवार या राज्य में नहीं, बल्कि जीवन के स्रोत - पिता - में भाग ले सके, उस हद तक जिस हद तक वह भाग ले सकता है।

अपने जीवन को पिता के जीवन में विलीन कर देना। यही निस्संदेह जीवन की ईसाई अवधारणा है, जो इसमें स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। सुसमाचार का प्रत्येक कथन।

हो सकता है कि कोई इस जीवन-दृष्टिकोण से सहमत न हो, कोई इसे अस्वीकार कर दे, कोई इसकी अशुद्धि और इसकी खामियों को उजागर कर दे।

त्रुटि है, लेकिन जीवन के इस दृष्टिकोण को समझे बिना हम ईसाई शिक्षा का मूल्यांकन नहीं कर सकते। फिर भी

किसी उच्च स्तर के विषय की आलोचना निम्न दृष्टिकोण से करना कठिन है। तहखाने के दृष्टिकोण से तो और भी कठिन हो जाता है।

शिखर के प्रभाव का आकलन नहीं किया जा सकता। लेकिन आज के विद्वान आलोचक यही करने की कोशिश करते हैं। क्योंकि वे रूढ़िवादी विश्वासियों की इस गलत धारणा को साझा करते हैं कि उनके पास कुछ अचूक ज्ञान है।

किसी विषय की जांच करने के साधन। उन्हें लगता है कि अगर वे अपने तथाकथित वैज्ञानिक तरीकों को लागू करते हैं तो...

आलोचना के बावजूद, उनके निष्कर्ष के सही होने में कोई संदेह नहीं हो सकता।

विज्ञान की अचूक मानी जाने वाली पद्धति से विषय का परीक्षण करना ही मुख्य बाधा है।

ईसाई धर्म को नास्तिकों, तथाकथित शिक्षित लोगों के लिए समझना। इसी से आगे की सभी बातें स्पष्ट होती हैं।

ईसाई धर्म के बारे में वैज्ञानिकों द्वारा की गई गलतियाँ, और विशेष रूप से दो विचित्र गलत धारणाएँ जो अन्य सभी चीजों से कहीं अधिक, उन्हें इसे सही ढंग से समझने से रोकती हैं।

इन गलत धारणाओं में से एक यह है कि ईसाई नैतिक शिक्षा का पालन नहीं किया जा सकता है, और इसलिए यह आवश्यक है।

या तो इसका कोई प्रभाव न हो – यानी इसे आचरण के नियम के रूप में स्वीकार न किया जाए – या इसे रूपांतरित किया जाए, हमारे समाज में इसके क्रियान्वयन की सीमाओं के अनुरूप ढाला जाए।

यह गलत धारणा है कि ईश्वर के प्रति प्रेम और इसलिए उसकी सेवा का ईसाई सिद्धांत अस्पष्ट है,

रहस्यवादी सिद्धांत, जो प्रेम के लिए कोई निश्चित उद्देश्य नहीं देता है, और इसलिए इसे मनुष्य के प्रति प्रेम और मानवता की सेवा के अधिक सटीक और बोधगम्य सिद्धांतों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए।

इस सिद्धांत का पालन करना असंभव है, इस संबंध में पहली गलत धारणा पुरुषों की सोच का परिणाम है।

जीवन के बारे में राज्य की अवधारणा को अनजाने में उस अवधारणा को उस मानक के रूप में स्वीकार करना जिसके द्वारा ईसाई धर्म मनुष्यों का मार्गदर्शन करता है, और पूर्णता के ईसाई सिद्धांत को उस नियम के रूप में स्वीकार करना जिसके द्वारा वह

जीवन को व्यवस्थित करना होता है; वे सोचते और कहते हैं कि मसीह की शिक्षाओं का पालन करना असंभव है, क्योंकि

इस शिक्षा द्वारा अपेक्षित सभी बातों का पूर्ण पालन करने से जीवन का अंत हो जाएगा। “यदि कोई व्यक्ति ऐसा करे तो...”

वे कहते हैं, "यदि सभी मनुष्य मसीह की शिक्षाओं का पालन करें, तो वे अपना जीवन नष्ट कर लेंगे; और यदि सभी मनुष्य ऐसा करें, तो मानव जाति का अंत हो जाएगा।"

अगर हम कल के बारे में नहीं सोचते, कि हम क्या खाएंगे, क्या पिएंगे और किसके साथ खाएंगे, तो

वे कहते हैं, "यदि हम वस्त्र धारण करें, अपने जीवन की रक्षा न करें, बलपूर्वक बुराई का विरोध न करें, दूसरों के लिए अपना प्राण न्योछावर करें और पूर्ण पवित्रता का पालन करें, तो मानव जाति का अस्तित्व नहीं रह सकता।"

और वे बिलकुल सही हैं यदि वे मसीह की शिक्षाओं द्वारा दिए गए पूर्णता के सिद्धांत को अपनाते हैं।

यह एक ऐसा नियम है जिसका पालन करना सभी के लिए अनिवार्य है, ठीक उसी प्रकार जैसे राज्य के जीवन सिद्धांतों में सभी लोग करों का भुगतान करने, कानून का समर्थन करने आदि के नियम का पालन करने के लिए बाध्य हैं।
यह गलत धारणा ठीक इसी तथ्य पर आधारित है कि ईसा मसीह की शिक्षाएं मनुष्यों को अलग-अलग तरह से मार्गदर्शन करती हैं।
निम्नतर जीवन अवधारणा पर आधारित उपदेशों के मार्ग से मनुष्य का मार्गदर्शन होता है।
राज्य की जीवन संबंधी अवधारणा केवल नियमों या कानूनों के सटीक पालन की अपेक्षा करके ही मनुष्यों का मार्गदर्शन करती है। मसीह की शिक्षा मनुष्यों को उनके स्वर्गीय पिता की अनंत पूर्णता की ओर इंगित करके उनका मार्गदर्शन करती है।
जिसके लिए प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र रूप से और स्वेच्छा से संघर्ष करता है, चाहे उसमें कितनी भी अपूर्णता क्यों न हो।
उपस्थित।
जो लोग ईसाई सिद्धांतों का मूल्यांकन अपने दृष्टिकोण से करते हैं, उनकी यह गलतफहमी है।
राज्य सिद्धांत इस तथ्य में निहित है कि इस धारणा पर कि जिस पूर्णता की ओर मसीह इशारा करते हैं,
जब ये सभी लक्ष्य पूरी तरह से प्राप्त हो जाते हैं, तो वे स्वयं से पूछते हैं (ठीक वैसे ही जैसे वे राज्य कानूनों के लागू होने की धारणा पर यही प्रश्न पूछते हैं) कि इन सभी के लागू होने का परिणाम क्या होगा? यह धारणा सही नहीं हो सकती।
बनाया गया, क्योंकि ईसाइयों के लिए अपेक्षित पूर्णता अनंत है और कभी प्राप्त नहीं की जा सकती; और मसीह ने
अपने सिद्धांत के आधार पर, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पूर्णता कभी प्राप्त नहीं की जा सकती, लेकिन
पूर्ण, अनंत पूर्णता की ओर प्रयास करने से मनुष्यों का आनंद निरंतर बढ़ता रहेगा, और इस प्रकार यह आनंद अनंत तक बढ़ सकता है।
ईसा मसीह स्वर्गदूतों को नहीं, बल्कि मनुष्यों को, पशुवत जीवन में जीने और घूमने वाले मनुष्यों को शिक्षा दे रहे हैं। और इसलिए इस पशुवत जीवन के लिए।
गति की शक्ति के रूप में, मानो मसीह नई शक्ति - दिव्य पूर्णता की पहचान - को लागू करते हैं और इस प्रकार इन दो शक्तियों के परिणाम से गति को निर्देशित करते हैं।
यह मान लेना कि मानव जीवन उसी दिशा में आगे बढ़ रहा है जिस दिशा में ईसा मसीह ने इसे इंगित किया था, ठीक ऐसा ही है जैसे यह मान लेना कि
एक छोटी नाव जो एक तेज बहती नदी पर तैर रही हो और लगभग धारा के ठीक विपरीत दिशा में जा रही हो, वह उसी दिशा में आगे बढ़ेगी।
ईसा मसीह समांतर चतुर्भुज के दोनों पक्षों के अस्तित्व को, दोनों शाश्वत अविनाशी पक्षों के अस्तित्व को पहचानते हैं।
वे शक्तियाँ जिनसे मनुष्य का जीवन निर्मित होता है: उसकी पशुवत प्रकृति की शक्ति और ईश्वरीय शक्ति।
ईश्वर के साथ संबंध की चेतना। स्वयं को प्रकट करने वाली, सदा एक समान रहने वाली और इसलिए मानवीय इच्छा से स्वतंत्र पशुवत शक्ति का उल्लेख किए बिना, मसीह केवल दिव्य शक्ति की बात करते हैं, उसे पुकारते हैं।
मनुष्य का यह कर्तव्य है कि वह इसे और अधिक गहराई से जाने, इसे अवरुद्ध करने वाली हर चीज से मुक्त करे और इसे उच्चतर स्तर तक ले जाए।
तीव्रता की डिग्री।
इस शक्ति को मुक्त करने, इसे मजबूत करने की प्रक्रिया में, मनुष्य का सच्चा जीवन, मसीह के अनुसार...
शिक्षा में निहित है। पूर्ववर्ती धर्मों के अनुसार, सच्चा जीवन नियमों, कानूनों का पालन करने में निहित है;

ईसा मसीह की शिक्षाओं के अनुसार, इसमें प्रत्येक मनुष्य के समक्ष प्रस्तुत की गई और प्रत्येक मनुष्य द्वारा अपने भीतर पहचानी गई दिव्य पूर्णता के प्रति निरंतर निकटवर्ती दृष्टिकोण अपनाना, और उसके प्रति निरंतर निकटवर्ती निकटता प्राप्त करना शामिल है।

42

उसकी इच्छा का ईश्वर की इच्छा में पूर्णतः समामेलन, वह समामेलन जिसकी ओर मनुष्य प्रयास करता है, और जिसकी प्राप्ति हमारे ज्ञात जीवन का विनाश होगी।

ईश्वरीय पूर्णता मानव जीवन का वह चरम बिंदु है जिसकी ओर वह निरंतर प्रयासरत रहता है, और हमेशा

निकट आ रहा है, हालांकि अनंत में ही उस तक पहुंचा जा सकता है।

ईसाई धर्म जीवन की संभावना को केवल तभी नकारता प्रतीत होता है जब मनुष्य संकेत को गलत समझ लेते हैं।

एक आदर्श को नियम के रूप में स्थापित करना। तभी मसीह की शिक्षाओं में प्रस्तुत सिद्धांत साकार हो पाते हैं।

ये सिद्धांत जीवन के लिए विनाशकारी प्रतीत होते हैं। इसके विपरीत, यही वे सिद्धांत हैं जो सच्चे जीवन को संभव बनाते हैं। इन सिद्धांतों के बिना सच्चा जीवन संभव नहीं है।

"इतनी उम्मीद नहीं रखनी चाहिए," लोग आमतौर पर आवश्यकताओं पर चर्चा करते समय यही कहते हैं।

ईसाई धर्म। “जैसा कि कहा जाता है, कोई भी कल के बारे में बिल्कुल भी चिंता न करने की उम्मीद नहीं कर सकता।”

सुसमाचार, लेकिन उस पर बहुत अधिक विचार नहीं करना चाहिए; कोई भी अपना सब कुछ गरीबों को दान नहीं कर सकता, लेकिन एक निश्चित हिस्सा अवश्य दान करना चाहिए; किसी को भी कौमार्य का लक्ष्य नहीं रखना चाहिए, लेकिन व्यभिचार से बचना चाहिए;

पत्नी और बच्चों को त्यागने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन उन्हें अपने हृदय में अत्यधिक स्थान नहीं देना चाहिए।

जल्द ही।

लेकिन इस तरह बोलना ठीक वैसा ही है जैसे किसी ऐसे व्यक्ति से कहना जो तेज़ बहती नदी में संघर्ष कर रहा हो और अपना रास्ता बदल रहा हो।

धारा के विपरीत दिशा में जाना, धारा के विपरीत दिशा में नाव चलाना असंभव है, और यह कि

इसे पार करने के लिए उसे उस बिंदु की दिशा में तैरना होगा जहाँ वह पहुँचना चाहता है।

वास्तव में, जिस स्थान पर वह जाना चाहता है, वहाँ पहुँचने के लिए उसे अपनी पूरी ताकत से नाव चलानी होगी।

बहुत ऊँचाई पर स्थित एक बिंदु की ओर।

आदर्श की आवश्यकताओं को छोड़ देने का अर्थ न केवल पूर्णता की संभावना को कम करना है, बल्कि

साथ ही, आदर्श का भी अंत करना। मनुष्यों पर अधिकार रखने वाला आदर्श किसी के द्वारा गढ़ा गया आदर्श नहीं है, बल्कि वह आदर्श है जो प्रत्येक मनुष्य अपनी आत्मा में धारण करता है। केवल यही पूर्ण अनंतता का आदर्श है।

पूर्णता में मनुष्य को प्रभावित करने की शक्ति होती है और यह उन्हें कर्म करने के लिए प्रेरित करती है। एक मध्यम स्तर की पूर्णता अपनी शक्ति खो देती है।

पुरुषों के दिलों को प्रभावित करना।

ईसा मसीह की शिक्षा में शक्ति तभी होती है जब वह पूर्णता की मांग करती है - अर्थात्, का एकीकरण

ईश्वर की इच्छा के साथ प्रत्येक मनुष्य की आत्मा में विद्यमान दिव्य स्वभाव - पुत्र और पिता का मिलन।
ईसा मसीह की शिक्षाओं के अनुसार जीवन का अर्थ केवल प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान परमेश्वर के पुत्र को पशुवत प्रवृत्ति से मुक्त करना और उसे पिता के निकट लाना है।
मनुष्य का पशुवत अस्तित्व ही मानव जीवन नहीं है। जीवन, ईश्वर की इच्छा के अनुसार
केवल ईश्वर ही मानव जीवन नहीं है। मानव जीवन पशु जीवन और दिव्य जीवन का संयोजन है।
और यह संयोजन जितना अधिक दिव्य जीवन के निकट आता है, उतना ही अधिक जीवन इसमें समाहित हो जाता है।
ईसाई धर्म के अनुसार, जीवन ईश्वरीय पूर्णता की ओर एक प्रगति है। कोई भी
इस सिद्धांत के अनुसार, एक स्थिति दूसरी स्थिति से बेहतर या बदतर हो सकती है। प्रत्येक स्थिति, इस सिद्धांत के अनुसार,
यह सिद्धांत, अपने आप में महत्वहीन एक विशेष चरण मात्र है, जो अप्राप्य पूर्णता की ओर ले जाने वाले मार्ग का हिस्सा है, और इसलिए यह अपने आप में जीवन की अधिक या कम मात्रा को इंगित नहीं करता है। जीवन में वृद्धि।
इसके अनुसार, इसमें पूर्णता की ओर प्रगति को तेज करने के अलावा और कुछ नहीं है। और
इसलिए कर वसूलने वाले ज़ैकियस, पापी स्त्री और क्रूस पर लटकाए गए डाकू की पूर्णता की ओर प्रगति, फरीसी की स्थिर धार्मिकता की तुलना में जीवन के उच्च स्तर को दर्शाती है।
इसलिए इस धर्म के लिए ऐसे कोई नियम नहीं हो सकते जिनका पालन करना अनिवार्य हो। जो व्यक्ति...
निम्न स्तर पर है लेकिन पूर्णता की ओर आगे बढ़ रहा है, अधिक नैतिक, बेहतर जीवन जी रहा है, अधिक परिपूर्ण है।
जो व्यक्ति नैतिकता के कहीं उच्च स्तर पर होते हुए भी पूर्णता की ओर आगे नहीं बढ़ रहा है, वह मसीह की शिक्षाओं का पालन कर रहा है।
इसी अर्थ में खोई हुई भेड़ पिता को उन भेड़ों से अधिक प्रिय होती है जो खोई नहीं थीं।
बेटे, खोया हुआ और फिर मिल गया सिक्का उन सिक्कों से कहीं अधिक कीमती होता है जो खोए ही नहीं थे।
ईसा मसीह की शिक्षा की पूर्ति स्वयं से दूर होकर ईश्वर की ओर बढ़ने में निहित है। यह स्पष्ट है।
इस शिक्षा की पूर्ति के लिए कोई निश्चित कानून और नियम नहीं हो सकते। प्रत्येक स्तर पर
इसमें पूर्णता और अपूर्णता की हर डिग्री समान है; कानूनों का पालन करना इस सिद्धांत की पूर्ति नहीं है, और इसलिए इसके लिए कोई बाध्यकारी नियम और कानून नहीं हो सकते।

ईसा मसीह के धर्म और राज्य आधारित जीवन अवधारणा पर आधारित सभी पूर्ववर्ती धर्मों के बीच इस मूलभूत अंतर से ही राज्य सिद्धांत के विशिष्ट सिद्धांतों में एक समान अंतर उत्पन्न होता है।
और ईसाई उपदेश। राज्य के जीवन सिद्धांत के उपदेश अधिकतर कुछ निश्चित बातों पर जोर देते हैं।
व्यावहारिक निर्धारित कार्य, जिनके द्वारा मनुष्य न्यायसंगत और सही होने के प्रति आश्वस्त होते हैं। ईसाई उपदेश (प्रेम की आज्ञा शब्द के कड़े अर्थों में एक उपदेश नहीं है, बल्कि स्वयं की अभिव्यक्ति है)।
धर्म का सार) पर्वतीय उपदेश की पाँच आज्ञाएँ हैं - ये सभी नकारात्मक हैं।
चरित्र। वे केवल यह दर्शाते हैं कि मानवता के विकास के एक निश्चित चरण में मनुष्य क्या नहीं कर सकता।

ये आज्ञाएँ, एक प्रकार से, पूर्णता की ओर जाने वाले अंतहीन मार्ग पर दिशासूचक चिह्न हैं, जिसकी ओर हम अग्रसर होते हैं।
मानवता आगे बढ़ रही है, और यह उस पूर्णता के बिंदु को दर्शा रही है जो एक निश्चित अवधि में संभव है।
मानवता का विकास।
ईसा मसीह ने पर्वतीय उपदेश में उस शाश्वत आदर्श को व्यक्त किया है जिसकी ओर मनुष्य सहज रूप से संघर्ष कर रहे हैं, और साथ ही उस उपलब्धि की सीमा को भी बताया है जिस तक मनुष्य हमारे समय में पहुंच सकते हैं।
आदर्श यह है कि किसी का बुरा करने की इच्छा न रखें, किसी के प्रति दुर्भावना न भड़काएं, सभी मनुष्यों से प्रेम करें। यही उपदेश है,
इस आदर्श की प्राप्ति में हम जिस स्तर से नीचे नहीं गिर सकते, उसे दर्शाने वाला पहला नियम है बुराई करने पर रोक। और यही पहला आदेश है।
आदर्श पूर्ण पवित्रता है, यहाँ तक कि विचारों में भी। यह उपदेश उस स्तर को दर्शाता है जिससे हम नीचे गिर सकते हैं।
वैवाहिक जीवन की पवित्रता और व्यभिचार से परहेज, इस आदर्श की प्राप्ति में असफल नहीं हो सकते। यही दूसरा आदेश है।
आदर्श यह है कि भविष्य की चिंता न करें, वर्तमान क्षण में जिएं। यह सिद्धांत दर्शाता है कि
जिस स्तर से नीचे हम नहीं गिर सकते, वह है कसम खाने पर रोक, भविष्य में किसी भी चीज का वादा करने पर रोक।
और यही तीसरा आदेश है।
आदर्श यह है कि किसी भी उद्देश्य के लिए बल का प्रयोग कभी न किया जाए। यह सिद्धांत उस स्तर को दर्शाता है जिससे नीचे हम जा सकते हैं।
बुराई के बदले भलाई करना, अन्याय सहते हुए धैर्य रखना और दूसरों को भी सहारा देना, ये सब बातें कभी गलत नहीं हो सकतीं।
चौथा आदेश।
आदर्श यह है कि हम उन शत्रुओं से प्रेम करें जो हमसे घृणा करते हैं। यह सिद्धांत उस स्तर को दर्शाता है जिससे नीचे हम नहीं जा सकते।
पतन का अर्थ यह नहीं है कि हम अपने शत्रुओं के साथ बुरा व्यवहार करें, बल्कि उनकी प्रशंसा करें और उनके बीच कोई भेद न करें।
हमारे पड़ोसी।
ये सभी सिद्धांत इस बात के संकेत हैं कि पूर्णता की ओर हमारी यात्रा में हम पहले से ही पूरी तरह से सक्षम हैं।
हमें किन चीजों से बचना चाहिए, और हमें अभी किन चीजों को हासिल करने के लिए मेहनत करनी चाहिए, और किन चीजों को हमें धीरे-धीरे सहज प्रवृत्ति में बदलना चाहिए।
और अचेतन आदतें। लेकिन ये उपदेश, मसीह की संपूर्ण शिक्षा का गठन करने से बहुत दूर हैं और
इन सिद्धांतों का पूर्णतः पालन करना, पूर्णता की ओर जाने वाले मार्ग के चरण मात्र हैं। इन सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए, धर्म द्वारा निर्धारित पूर्णता की ओर अग्रसर होने वाले उच्चतर सिद्धांतों का पालन अवश्य किया जाएगा।
और इसलिए, इन अपेक्षाओं से भी अधिक अपेक्षाएँ रखना ईसाई धर्म का एक अनिवार्य हिस्सा है।
इसके उपदेशों में व्यक्त किया गया है; और इसका किसी भी तरह से आदर्श या उपदेशों की मांगों को कम नहीं करना चाहिए, जैसा कि वे लोग समझते हैं जो इसे जीवन की सामाजिक अवधारणा के दृष्टिकोण से आंकते हैं।
वैज्ञानिकों की एक गलतफहमी के बारे में बस इतना ही, महत्व और उद्देश्य के संबंध में।
ईसा मसीह की शिक्षा। इसी स्रोत से उत्पन्न एक अन्य गलतफहमी यह है कि ईश्वर के प्रति प्रेम और उसकी सेवा के ईसाई सिद्धांतों के स्थान पर मनुष्यों के प्रति प्रेम और मानवता की सेवा को प्रतिस्थापित कर दिया जाता है।

ईसाई धर्म का सिद्धांत ईश्वर से प्रेम करना और उसकी सेवा करना है, और केवल उस प्रेम के फलस्वरूप ही दूसरों से प्रेम करना और उनकी सेवा करना है।

वैज्ञानिक लोगों को अपना पड़ोसी अस्पष्ट, रहस्यमय और मनमाना लगता है। और वे निश्चित रूप से

ईश्वर के प्रति प्रेम और सेवा के दायित्व को नकारते हुए, यह मानना कि केवल मनुष्यों के प्रति, मानवता के प्रति प्रेम का सिद्धांत कहीं अधिक स्पष्ट, मूर्त और तर्कसंगत है।

वैज्ञानिक सिद्धांत में यह सिखाते हैं कि एकमात्र अच्छा और तर्कसंगत जीवन वही है जो समर्पित हो।

संपूर्ण मानवता की सेवा। यही उनके लिए ईसाई धर्म का महत्व है, और वे मसीह की शिक्षाओं को इसी तक सीमित कर देते हैं। वे सुसमाचार में अपने स्वयं के सिद्धांतों की पुष्टि खोजते हैं।

यह धारणा कि दोनों सिद्धांत वास्तव में एक ही हैं।

यह विचार सरासर गलत है। ईसाई धर्म का प्रत्यक्षवादियों, साम्यवादियों और मानवता के सार्वभौमिक भाईचारे के सभी धर्म प्रचारकों के सिद्धांतों से कोई संबंध नहीं है।

इस प्रकार के भाईचारे के सामान्य लाभ के आधार पर। वे एक दूसरे से विशेष रूप से भिन्न होते हैं।

ईसाई धर्म का आधार मानव आत्मा में दृढ़ और स्पष्ट रूप से निहित है, जबकि मानवता के प्रति प्रेम केवल सादृश्य से निकाला गया एक सैद्धांतिक निष्कर्ष है।

केवल मानवता के प्रति प्रेम का सिद्धांत जीवन की सामाजिक अवधारणा पर आधारित है।

जीवन की सामाजिक अवधारणा का सार व्यक्तिगत जीवन के उद्देश्य को व्यक्तियों के समाजों: परिवार, गोत्र, जनजाति या राज्य के जीवन में स्थानांतरित करना है। यह स्थानांतरण पूर्ण होता है।

अपने प्रारंभिक रूपों में, जीवन के उद्देश्य को व्यक्ति से ईश्वर की ओर स्थानांतरित करने में यह प्रक्रिया आसानी से और स्वाभाविक रूप से हुई। परिवार और कबीले तक सीमित। जनजाति या राष्ट्र तक भावनाओं का स्थानांतरण अधिक कठिन है और इसके लिए विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। और राज्य तक भावनाओं का स्थानांतरण इस प्रक्रिया की चरम सीमा है।

पहुँचना।

स्वयं से प्रेम करना हर किसी के लिए स्वाभाविक है, और ऐसा करने के लिए किसी को प्रोत्साहन की आवश्यकता नहीं होती।

अपने परिवार के प्रति प्रेम, जो सहारा और सुरक्षा प्रदान करते हैं; अपनी पत्नी के प्रति प्रेम, जो जीवन का आनंद और सहारा है; अपने बच्चों के प्रति प्रेम, जो जीवन की आशा और सांत्वना हैं; और अपने माता-पिता के प्रति प्रेम, जिन्होंने जीवन दिया है।

शिक्षा स्वाभाविक है। और ऐसा प्रेम, यद्यपि आत्मप्रेम जितना प्रबल नहीं होता, फिर भी उसका अच्छा प्रतिसाद मिलता है।

अक्सर।

अपने लिए, अपने गौरव के कारण, अपने कबीले, अपने राष्ट्र से प्रेम करना, भले ही ऐसा न हो

स्वाभाविक होते हुए भी, यह आम बात है। अपने ही लोगों से, जो एक ही रक्त के हैं, एक ही

अपनी ही भाषा और अपने ही धर्म के प्रति प्रेम संभव है, हालांकि यह आत्मप्रेम, या परिवार या गोत्र के प्रति प्रेम जितना प्रबल नहीं होता। लेकिन तुर्की, जर्मनी, इंग्लैंड, ऑस्ट्रिया या रूस जैसे किसी राज्य के प्रति प्रेम कहीं अधिक प्रबल होता है।

यह लगभग असंभव सी बात है। और यद्यपि इसे पूरी लगन से बढ़ावा दिया जाता है, यह केवल एक काल्पनिक भावना है;

वास्तविकता में उसका कोई अस्तित्व नहीं है। और उस सीमा पर मनुष्य की अपने हितों को स्थानांतरित करने की शक्ति समाप्त हो जाती है, और वह

उस काल्पनिक सत्ता के प्रति प्रत्यक्ष रूप से कोई भावना महसूस नहीं कर सकता। हालाँकि, प्रत्यक्षवादी और वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित भाईचारे के सभी समर्थक, भावनाओं के कमजोर होने पर विचार किए बिना,

अपने उद्देश्य के विस्तार के अनुपात में, सिद्धांत में उसी दिशा में आगे के निष्कर्ष निकालें।

वे कहते हैं, "चूंकि व्यक्ति के हित में यही था कि वह अपने निजी हितों को परिवार, कबीले और बाद में राष्ट्र और राज्य तक विस्तारित करे, इसलिए यह और भी अधिक लाभकारी होगा कि..."

मानव समाजों में अपनी रुचि को संपूर्ण मानव जाति तक विस्तारित करना, और इस प्रकार सभी को मानवता के लिए जीना, ठीक उसी प्रकार जैसे

पुरुष या तो परिवार के लिए जीते हैं या राज्य के लिए।

सैद्धांतिक रूप से, वास्तव में, व्यक्तित्व के प्रति प्रेम और रुचि को विस्तारित करने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि...

परिवार, जनजाति, और फिर राष्ट्र और राज्य तक, पुरुषों के लिए इन्हें बचाना पूरी तरह से तर्कसंगत होगा।

मानव जाति के राष्ट्रों और राज्यों में विभाजन के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाले संघर्ष और आपदाओं को स्वयं ही

अपने प्रेम को पूरी मानवता तक फैलाना। यह सबसे तार्किक होगा, और सैद्धांतिक रूप से इसके समर्थकों को इससे अधिक स्वाभाविक कुछ भी नहीं लगेगा, जो यह नहीं मानते कि प्रेम एक ऐसी भावना है जो हो भी सकती है और नहीं भी।

यह महसूस नहीं किया जा सकता कि इसकी वकालत करना व्यर्थ है; और इसके अलावा, प्रेम का एक उद्देश्य होना चाहिए, और

मानवता कोई वस्तु नहीं है। यह तो बस एक कल्पना मात्र है।

परिवार, जनजाति, यहाँ तक कि राज्य भी मनुष्य द्वारा निर्मित नहीं हैं, बल्कि उन्होंने स्वयं को विकसित किया है।

चींटियों के टीलों या मधुमक्खियों के झुंड की तरह अनायास ही अस्तित्व में आ जाते हैं। वह व्यक्ति जो, के लिए

अपने पशुवत स्वभाव के बावजूद, वह अपने परिवार से प्यार करता है, जानता है कि वह किससे प्यार करता है: अन्ना, डॉली, जॉन, पीटर, इत्यादि। वह व्यक्ति जो अपने कबीले से प्यार करता है और उस पर गर्व करता है, जानता है कि वह सभी गुएल्फ़ों से या सभी से प्यार करता है। गिबेलिन; जो व्यक्ति राज्य से प्रेम करता है, वह जानता है कि वह राइन नदी से घिरे फ्रांस से प्रेम करता है, और

पाइरेनीज़ पर्वतमाला, और उसका प्रमुख शहर पेरिस, और उसका इतिहास इत्यादि। लेकिन वह व्यक्ति जो मानवता से प्रेम करता है - वह क्या है?

क्या वह प्रेम करता है? राज्य जैसी चीज़ें होती हैं, राष्ट्र जैसी चीज़ें होती हैं; मनुष्य की अमूर्त अवधारणा होती है; लेकिन मानवता एक ठोस विचार के रूप में मौजूद नहीं है, और न ही हो सकती है।

मानवता! मानवता की परिभाषा कहाँ है? यह कहाँ समाप्त होती है और कहाँ से शुरू होती है?

क्या मानवता का अंत बर्बर, मूर्ख, शराबी या पागल व्यक्ति के साथ होता है? यदि हम मानवता से उसके सबसे निचले स्तर के प्रतिनिधियों को बाहर करने वाली रेखा खींचते हैं, तो वह रेखा कहाँ खींची जानी चाहिए? क्या हम नीग्रो लोगों को बाहर कर देंगे?
क्या हम अमेरिकियों की तरह हैं, या हिंदुओं की तरह, कुछ अंग्रेजों की तरह, या यहूदियों की तरह, कुछ अन्य लोगों की तरह? अगर हम सभी को शामिल कर लें
यदि हम बिना किसी अपवाद के मनुष्यों को शामिल करते हैं, तो हमें उच्च जानवरों को भी क्यों नहीं शामिल करना चाहिए, जिनमें से कई मानव जाति के निम्नतम नमूनों से भी श्रेष्ठ हैं।

45

हम मानवता को एक शाश्वत वस्तु के रूप में नहीं जानते, न ही हम उसकी सीमाओं को जानते हैं। मानवता एक कल्पना है, और उससे प्रेम करना असंभव है। निःसंदेह, यदि मनुष्य प्रेम कर पाते तो यह बहुत लाभकारी होता।
जिस प्रकार मनुष्य अपने परिवार से प्रेम करते हैं, उसी प्रकार मनुष्य भी अपने परिवार से प्रेम करें। जैसा कि कम्युनिस्ट विचारधारा का समर्थन है, यह बहुत लाभकारी होगा।
मनुष्य की गतिविधियों के प्रतिस्पर्धी, व्यक्तिवादी संगठन को एक सामाजिक सार्वभौमिक संगठन से प्रतिस्थापित करना, ताकि प्रत्येक व्यक्ति सभी के लिए हो और सभी व्यक्ति प्रत्येक के लिए हों। लेकिन ऐसा करने के लिए मनुष्य को प्रेरित करने वाले कोई कारण नहीं हैं।
प्रत्यक्षवादी, कम्युनिस्ट और वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित बंधुत्व के सभी पैरोकार इसकी वकालत करते हैं।
वे इस प्रेम को संपूर्ण मानवता तक विस्तारित करने की कोशिश करते हैं जो मनुष्य स्वयं के लिए, अपने परिवार के लिए और राज्य के लिए महसूस करता है। वे भूल जाते हैं कि जिस प्रेम की वे चर्चा कर रहे हैं वह एक व्यक्तिगत प्रेम है, जो एक विरल स्तर पर विस्तारित हो सकता है। एक ऐसा रूप जो किसी व्यक्ति के मूल देश को समाहित करने का प्रयास करता है, लेकिन कृत्रिम राज्य को समाहित करने से पहले ही लुप्त हो जाता है।
जैसे ऑस्ट्रिया, इंग्लैंड या तुर्की, और जिनकी हम पूरी मानवता के संदर्भ में कल्पना भी नहीं कर सकते।
एक पूर्णतः रहस्यवादी अवधारणा।
“एक व्यक्ति स्वयं से (अपने पशुवत स्वभाव से) प्रेम करता है, वह अपने परिवार से प्रेम करता है, और वह अपने जन्मस्थान से भी प्रेम करता है।”
देश। उसे मानवता से प्रेम क्यों नहीं करना चाहिए? यह तो बहुत ही उत्कृष्ट बात होगी। और वैसे, यह
ईसाई धर्म में ठीक यही सिखाया जाता है।" प्रत्यक्षवादी, साम्यवादी या समाजवादी बंधुत्व के समर्थक ऐसा ही सोचते हैं।
यह वाकई एक बेहतरीन बात होगी। लेकिन ऐसा कभी नहीं हो सकता, क्योंकि जो प्यार व्यक्तिगत या
जीवन की सामाजिक अवधारणा कभी भी राज्य के प्रति प्रेम से ऊपर नहीं उठ सकती।
इस तर्क की खामी इस तथ्य में निहित है कि जीवन की सामाजिक अवधारणा, जिस पर प्रेम आधारित है
परिवार और राष्ट्र की नींव और आधार स्वयं से प्रेम पर टिका है, और यह प्रेम समय के साथ कमजोर होता जाता है।
यह स्वयं से लेकर परिवार, जनजाति, राष्ट्रीयता और राज्य तक फैला हुआ है; और राज्य में ही हम अपनी चरम सीमा तक पहुँचते हैं।
जिसके आगे यह नहीं जा सकता।

प्रेम के दायरे को विस्तारित करने की आवश्यकता निर्विवाद है। लेकिन वास्तविकता में इसकी संभावना कितनी है?
प्रेम का विनाश उसके लक्ष्य को अनिश्चित काल तक विस्तारित करने की आवश्यकता से होता है। और इस प्रकार अपर्याप्तता
व्यक्तिगत मानवीय प्रेम प्रकट होता है।
और यहाँ प्रत्यक्षवादी, साम्यवादी और समाजवादी बंधुत्व के समर्थक निम्नलिखित बातों का सहारा लेने का प्रस्ताव रखते हैं।
इस दिवालिया मानवीय प्रेम की कमी को पूरा करने के लिए ईसाई प्रेम; लेकिन ईसाई प्रेम केवल अपने परिणामों में ही।
इसके मूल सिद्धांतों में ऐसा नहीं है। वे ईश्वर के प्रति प्रेम से अलग, केवल मानवता के प्रति प्रेम का प्रस्ताव रखते हैं।
लेकिन ऐसा प्रेम संभव नहीं है। इसे उत्पन्न करने का कोई कारण नहीं है। ईसाई प्रेम केवल इसका परिणाम है।
जीवन के प्रति ईसाई दृष्टिकोण, जिसमें जीवन का उद्देश्य ईश्वर से प्रेम करना और उसकी सेवा करना है।
जीवन की सामाजिक अवधारणा ने मनुष्य को आत्मप्रेम से और फिर आत्मप्रेम की स्वाभाविक प्रक्रिया से आगे बढ़ाया है।
परिवार, जनजाति, राष्ट्र और राज्य से लेकर मानवता के प्रति प्रेम की आवश्यकता की चेतना तक, एक ऐसी अवधारणा जिसकी कोई निश्चित सीमा नहीं है और जो सभी जीवित प्राणियों तक फैली हुई है। और जो जागृत करता है उसके प्रति प्रेम की यह आवश्यकता
मनुष्य में किसी भी प्रकार की भावना एक ऐसा विरोधाभास नहीं है जिसे जीवन के सामाजिक सिद्धांत द्वारा हल नहीं किया जा सकता है।
ईसाई धर्म का पूर्ण अर्थ ही इस समस्या का समाधान कर सकता है, जीवन को नया अर्थ देकर। ईसाई धर्म स्वयं से प्रेम, परिवार से प्रेम, राष्ट्र से प्रेम और मानवता से प्रेम को मान्यता देता है, और केवल मानवता से ही नहीं, बल्कि
साथ ही, यह हर जीवित चीज, हर विद्यमान चीज के बारे में भी है; यह अनंत विस्तार की आवश्यकता को स्वीकार करता है।
प्रेम का क्षेत्र। लेकिन इस प्रेम का लक्ष्य स्वयं से बाहर, व्यक्तियों के समाजों में, या बाहरी दुनिया में नहीं पाया जाता, बल्कि स्वयं के भीतर, उस दिव्य आत्मा में पाया जाता है जिसका सार वही प्रेम है, जिसे पशुवत आत्मा भी महसूस करती है।
अपनी नश्वर प्रकृति के प्रति जागरूकता के कारण उसे इसकी आवश्यकता का एहसास होने लगता है।
ईसाई धर्म और उससे पहले के धर्म सिद्धांतों में अंतर यह है कि सामाजिक सिद्धांत
कहा गया है, "अपनी प्रकृति के विपरीत जियो (यहाँ केवल पशु प्रकृति को ही समझा जा रहा है), इसे परिवार, समाज और राज्य के बाह्य नियमों के अधीन करो।" ईसाई धर्म कहता है, "अपनी प्रकृति के अनुसार जियो।"
(इससे दिव्य प्रकृति को समझते हुए); इसे किसी भी चीज़ के अधीन न करो – न ही तुम (किसी जानवर को)
न तो स्वयं के) और न ही दूसरों के – और जब आप अपने बाहरी स्वार्थ को वश में कर लेंगे, तो आप उसी लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे जिसके लिए आप प्रयास कर रहे हैं।
ईसाई धर्म की शिक्षा मनुष्य को आत्म-चेतना के मूलभूत स्तर तक तो ले जाती है, लेकिन पशुवत चेतना तक नहीं।
स्वयं का नहीं, बल्कि दिव्य आत्मा का, दिव्य चिंगारी का, ईश्वर के पुत्र के रूप में स्वयं का, उतना ही ईश्वर जितना स्वयं पिता, यद्यपि पशु शरीर में समाहित। ईश्वर के पुत्र होने की चेतना, जिसका प्रभुत्व
प्रेम एक विशेषता है, जो प्रेम के दायरे के विस्तार की आवश्यकता को पूरा करती है, जिस तक मनुष्य का प्रेम पहुंचता है।

जीवन की सामाजिक अवधारणा सामने आई। इसके अनुसार, व्यक्तित्व के कल्याण के लिए प्रेम के दायरे का निरंतर विस्तार आवश्यक था; प्रेम एक आवश्यकता थी और कुछ निश्चित उद्देश्यों तक ही सीमित था।

स्वयं, परिवार और समाज। ईसाई जीवन अवधारणा के अनुसार, प्रेम एक आवश्यकता नहीं है और सीमित है।

किसी वस्तु के प्रति नहीं; यह मानव आत्मा का मूल गुण है। मनुष्य इसलिए प्रेम नहीं करता कि उसे किसी एक या दूसरे से प्रेम करना लाभप्रद है, बल्कि इसलिए कि प्रेम उसकी आत्मा का सार है, क्योंकि उसे प्रेम करना ही है।

ईसाई धर्म का सिद्धांत मनुष्य को यह दिखाता है कि उसकी आत्मा का सार प्रेम है – कि उसकी खुशी प्रेम पर निर्भर करती है।

किसी एक या दूसरी वस्तु से प्रेम करने पर नहीं, बल्कि संपूर्ण के सिद्धांत - ईश्वर से प्रेम करने पर, जिसे वह अपने भीतर प्रेम के रूप में पहचानता है, और इसलिए वह सभी चीजों और सभी मनुष्यों से प्रेम करता है।

ईसाई धर्म और अन्य धर्मों के सिद्धांतों में यही मूलभूत अंतर है।

प्रत्यक्षवादी और गैर-ईसाई सिद्धांतों पर आधारित सार्वभौमिक भाईचारे के सभी सिद्धांतकार।

ईसाई धर्म से संबंधित दो प्रमुख गलतफहमियां हैं, जिनसे इसके बारे में अधिकांश गलत तर्क उत्पन्न होते हैं। पहली गलतफहमी यह है कि मसीह की शिक्षाएं

यह धर्म, सभी पूर्व धर्मों की तरह, मनुष्यों को नियमों द्वारा निर्देश देता है, जिनका पालन करना उनके लिए अनिवार्य है, और ये नियम

यह पूरा नहीं हो सकता। दूसरा विचार यह है कि ईसाई धर्म का संपूर्ण उद्देश्य मनुष्यों को एक परिवार के रूप में लाभप्रद रूप से एक साथ रहना सिखाना है, और इसे प्राप्त करने के लिए हमें केवल प्रेम के नियम का पालन करना होगा।

मानवता ने ईश्वर के प्रति प्रेम के सभी विचारों को पूरी तरह से नकार दिया।

वैज्ञानिक समुदाय की यह गलत धारणा कि ईसाई धर्म का सार अलौकिक में निहित है और इसकी नैतिक शिक्षा अव्यावहारिक है, ईसाई धर्म के अनुयायियों की विफलता का एक और कारण है।

आज के समय में ईसाई धर्म को समझना आवश्यक है।

अध्याय 5

हमारे जीवन और हमारी ईसाई अंतरात्मा के बीच विरोधाभास

मनुष्य सोचते हैं कि वे अपने जीवन में बदलाव किए बिना ईसाई धर्म को अपना सकते हैं – जीवन की मूर्तिपूजक अवधारणा मानवता के विकास के वर्तमान चरण के अनुरूप नहीं है, और केवल ईसाई अवधारणा ही इसके अनुरूप हो सकती है – जीवन की ईसाई अवधारणा अभी तक मनुष्य द्वारा पूरी तरह से समझी नहीं गई है, लेकिन जीवन की प्रगति उन्हें अनिवार्य रूप से इसे अपनाने के लिए प्रेरित करेगी – जीवन के एक नए सिद्धांत की आवश्यकताएँ हमेशा समझ से परे, रहस्यमय और अलौकिक प्रतीत होती हैं – अधिकांश मनुष्यों को जीवन का ईसाई सिद्धांत भी ऐसा ही प्रतीत होता है – जीवन की ईसाई अवधारणा का आत्मसात्करण अनिवार्य रूप से भौतिक और आध्यात्मिक कारणों के परिणामस्वरूप होगा – मनुष्य द्वारा जीवन के उच्चतर दृष्टिकोण की आवश्यकताओं को जानने के बावजूद, जीवन की निम्नतर संरचनाओं को बनाए रखना विरोधाभासों और पीड़ाओं को जन्म देता है जो जीवन को कड़वा बना देते हैं और इसके परिवर्तन का कारण बनते हैं – हमारे जीवन के विरोधाभास – आर्थिक विरोधाभास और इससे अमीर और गरीब दोनों को समान रूप से होने वाली पीड़ा – राजनीतिक विरोधाभास और राज्य के कानूनों के पालन से उत्पन्न पीड़ाएँ – अंतर्राष्ट्रीय विरोधाभास और समकालीनों द्वारा इसकी पहचान: कोमारोव्स्की, फेर्री, बूथ, पासी, लॉसन, विल्सन, बार्टलेट, डेफॉर्नी, मोनेटा – सैन्य विरोधाभास का उल्लेखनीय चरित्र।

ईसा मसीह की शिक्षाओं को न समझने के कई कारण हैं। एक कारण यह है कि लोग यह मान लेते हैं कि...
उन्होंने इसे तब समझा है जब उन्होंने चर्च के अनुयायियों की तरह यह निर्णय लिया है कि यह उनके द्वारा प्रकट किया गया था।
अलौकिक साधनों से, या जब उन्होंने वैज्ञानिक पुरुषों की तरह, उन बाहरी रूपों का अध्ययन किया हो जिनमें यह
प्रकट हो चुका है। एक और कारण यह गलत धारणा है कि यह अव्यावहारिक है, और इसे मानवता के प्रति प्रेम के सिद्धांत से प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। लेकिन मुख्य कारण, जो इन सभी का स्रोत है...
इसके बारे में एक और गलत धारणा यह है कि ईसाई धर्म एक ऐसा सिद्धांत है जिसे स्वीकार या अस्वीकार किया जा सकता है।
जीवनशैली में बिना किसी बदलाव के।
जो लोग मौजूदा व्यवस्था के आदी हैं, जो इसे पसंद करते हैं और इसके बदलने से डरते हैं, वे इसे बदलने की कोशिश करते हैं।
यह सिद्धांत उन रहस्यों और नियमों का संग्रह है जिन्हें कोई व्यक्ति अपने जीवन में बदलाव किए बिना स्वीकार कर सकता है।
जीवन। जबकि मसीह की शिक्षा केवल एक सिद्धांत नहीं है जो मनुष्य को पालन करने के लिए नियम प्रदान करती है, यह जीवन में एक नया अर्थ प्रकट करती है, और मानवीय गतिविधियों की एक पूरी दुनिया को परिभाषित करती है जो अब तक की सभी चीजों से बिल्कुल अलग है। इससे पहले और उस काल के लिए उपयुक्त जिसमें मनुष्य प्रवेश कर रहा है।
मानव जीवन, व्यक्ति के जीवन की तरह, चरणों में बदलता और आगे बढ़ता है, और प्रत्येक चरण

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का एक उपयुक्त सिद्धांत होता है, जिसे मनुष्य अनिवार्य रूप से आत्मसात कर लेता है। जो लोग इसे सचेत रूप से आत्मसात नहीं करते, वे इसे अचेतन रूप से आत्मसात कर लेते हैं। यही बात लोगों और सभी के विश्वासों में होने वाले परिवर्तनों पर भी लागू होती है।

मानवता, व्यक्तियों की मान्यताओं में बदलाव के साथ-साथ बदलती रहती है। यदि परिवार का मुखिया बना रहता है तो...

जीवन के प्रति अपने बचकाने विचारों से निर्देशित होने के कारण, उसका जीवन इतना कठिन हो जाता है कि वह अनजाने में ही किसी अन्य दर्शन की तलाश करता है और अपनी उम्र के अनुकूल दर्शन को सहजता से अपना लेता है।

मानवता के साथ इस संक्रमण काल में ठीक यही हो रहा है, जिससे हम गुजर रहे हैं।

जीवन की मूर्तिपूजक अवधारणा से ईसाई अवधारणा की ओर संक्रमण। आज के समाजीकृत मनुष्य को जीवन के अनुभवों से ही जीवन की मूर्तिपूजक अवधारणा को त्यागने की आवश्यकता महसूस होती है, जो कि...

मानवता की वर्तमान अवस्था के लिए अनुपयुक्त, और ईसाई धर्म के दायित्व के प्रति समर्पण के लिए भी अनुपयुक्त।

वे सिद्धांत, जिनकी सच्चाई, चाहे कितनी भी विकृत और गलत व्याख्या की गई हो, अभी भी केवल उन्हें ही ज्ञात है।

उसे अपने आसपास की विरोधाभासों का समाधान प्रस्तुत करें।

यदि ईसाई धर्म की शिक्षाओं की आवश्यकताएँ सामाजिक परिवेश के व्यक्ति को विचित्र और यहाँ तक कि चिंताजनक भी प्रतीत होती हैं

जीवन का वह सिद्धांत, जो प्राचीन काल के आदिवासियों के लिए कम विचित्र, समझ से परे और भयावह नहीं था, प्रतीत होता था...

सामाजिक सिद्धांत की आवश्यकताएं तब पूरी तरह से समझ में नहीं आई थीं और इसके परिणामों का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता था।

“अपनी मानसिक शांति या अपने जीवन का बलिदान देना अनुचित है,” उस बर्बर ने कहा।

कुछ ऐसा जो समझ से परे, अगोचर और पारंपरिक है - परिवार, कबीला या राष्ट्र; और सबसे बढ़कर, खुद को दूसरों की शक्ति के अधीन करना असुरक्षित है।"

48

लेकिन एक समय ऐसा आया जब आदिम व्यक्ति ने, एक ओर तो अस्पष्ट रूप से ही सही, जीवन की सामाजिक अवधारणा और उसकी प्रमुख प्रेरक शक्ति, सामाजिक निंदा या सामाजिक अनुमोदन - यानी गौरव - के मूल्य को महसूस किया, और जब,

दूसरी ओर, उनके निजी जीवन की कठिनाइयाँ इतनी बढ़ गईं कि वे आगे जारी नहीं रख सके।

पहले तो उन्होंने अपने पुराने जीवन सिद्धांत के महत्व पर विश्वास किया। फिर उन्होंने सामाजिक, राज्य आधारित जीवन सिद्धांत को स्वीकार कर लिया और उसके प्रति समर्पण कर दिया।

जीवन के सामाजिक सिद्धांत का ज्ञाता इस समय ठीक इसी दौर से गुजर रहा है।

समाजीकृत व्यक्ति कहता है, "यह अनुचित है कि मैं किसी उच्चतर नियम का पालन करने के लिए अपने, अपने परिवार और अपने देश के कल्याण का त्याग कर दूं, जिसके लिए मुझे अपने सबसे स्वाभाविक और सद्गुणी गुणों का त्याग करना पड़े।"

स्वयं के प्रति, परिवार के प्रति, सगे-संबंधियों के प्रति और देश के प्रति प्रेम की भावनाएँ; और सबसे बढ़कर, इनसे अलग होना असुरक्षित है। सरकार के संगठन द्वारा जीवन की सुरक्षा प्रदान की जाती है।"

लेकिन वह समय आ रहा है जब एक ओर तो उसकी आत्मा में ईश्वर और पड़ोसी के प्रति प्रेम जैसे उच्चतर नियम की अस्पष्ट चेतना होगी, और दूसरी ओर, इन विरोधाभासों से उत्पन्न पीड़ा होगी।

जीवन ही मनुष्य को सामाजिक सिद्धांत को अस्वीकार करने और उसके लिए तैयार किए गए नए सिद्धांत को आत्मसात करने के लिए विवश करेगा।

जो सभी विरोधाभासों का समाधान करता है और सभी कष्टों को दूर करता है - यही ईसाई जीवन सिद्धांत है। और अब वह समय आ गया है।

हम, जो हजारों साल पहले जीवन के व्यक्तिगत, पशुवत दृष्टिकोण से संक्रमण काल से गुजरे थे।

सामाजिक दृष्टिकोण से, यह कल्पना कीजिए कि वह परिवर्तन अपरिहार्य और स्वाभाविक था; लेकिन यह परिवर्तन जिससे हम पिछले अठारह सौ वर्षों से गुजर रहे हैं, मनमाना, अस्वाभाविक और

चिंताजनक। लेकिन हम ऐसा सिर्फ इसलिए सोचते हैं क्योंकि पहला परिवर्तन इतनी पूरी तरह से पूरा हो चुका है कि

इसके द्वारा प्राप्त अभ्यास हमारे भीतर अचेतन और सहज हो गया है, जबकि वर्तमान परिवर्तन ऐसा नहीं है।

अभी यह खत्म होना बाकी है और हमें इसे सचेत रूप से पूरा करना होगा।

जीवन की सामाजिक अवधारणा को मनुष्य की चेतना में व्याप्त होने में युगों, हजारों वर्षों का समय लगा।

यह कई रूपों से गुजरा और अब वंशानुगत रूप से सहज प्रवृत्ति के क्षेत्र में प्रवेश कर चुका है।

शिक्षा और आदतें। इसलिए यह हमें स्वाभाविक लगता है। लेकिन पाँच हज़ार साल पहले यह उतना ही अस्वाभाविक और चिंताजनक लगता था जितना कि आज ईसाई धर्म का सच्चा सिद्धांत लगता है।

आज हम सोचते हैं कि ईसाई धर्म के सिद्धांतों की आवश्यकताएँ – सार्वभौमिक भाईचारे की आवश्यकताएँ,

राष्ट्रीय भेदों का दमन, निजी संपत्ति का उन्मूलन, और बुराई का बलपूर्वक विरोध न करने का विचित्र आदेश – ये सब असंभव की मांग करते हैं।

लेकिन हजारों वर्षों से स्थिति ऐसी ही बनी हुई है।

कुछ समय पहले, प्रत्येक सामाजिक या यहां तक कि पारिवारिक कर्तव्य के साथ, जैसे कि माता-पिता का अपने बच्चों का पालन-पोषण करने का कर्तव्य,

युवाओं द्वारा बूढ़ों की देखभाल करना, विवाह में वफादारी का सिद्धांत। इससे भी अधिक अजीब और यहाँ तक कि तर्कहीन प्रतीत होता था।

राज्य के कर्तव्य, जैसे नियुक्त प्राधिकारी के प्रति समर्पण, करों का भुगतान, देश की रक्षा में लड़ना आदि। आज ये सभी आवश्यकताएँ हमें सरल, समझने योग्य और स्वाभाविक लगती हैं, और हम

मुझे उनमें कुछ भी रहस्यमय या चिंताजनक नहीं दिखता। लेकिन तीन-पांच हजार साल पहले वे आवश्यक प्रतीत होते थे।

जो असंभव था।

जीवन की सामाजिक अवधारणा ने धर्म का आधार बनाया क्योंकि जिस समय यह पहली बार अस्तित्व में आया था, उस समय यह अवधारणा प्रचलित थी।

जब इसे मनुष्यों के सामने प्रस्तुत किया गया तो यह उन्हें बिल्कुल समझ से परे, रहस्यमय और अलौकिक प्रतीत हुआ। अब जब

हम मानवता के उस दौर से गुज़र चुके हैं, हम परिवारों, समुदायों और राज्यों में मनुष्यों को एकजुट करने के तर्कसंगत आधारों को समझते हैं।

लेकिन प्राचीन काल में ऐसे संगठनों से जुड़े कर्तव्य कहीं अधिक जटिल थे।

अलौकिक शक्तियों की आड़ में प्रस्तुत किए गए और उन्हीं के द्वारा इनकी पुष्टि की गई।

पितृसत्तात्मक धर्मों ने परिवार, कबीले और राष्ट्र को उच्च दर्जा दिया। राजकीय धर्मों ने ईश्वर का दर्जा दिया।
सम्राटों और राज्यों के बीच। आज भी अधिकांश अज्ञानी लोग – जैसे हमारे किसान, जो ज़ार को धरती का देवता मानते हैं – राज्य के कानूनों का पालन करते हैं, न तो उनकी आवश्यकता के किसी तर्कसंगत ज्ञान के कारण, और न ही इसलिए कि उनके पास कोई अधिकार है।
राज्य के अर्थ की अवधारणा, लेकिन धार्मिक भावना के माध्यम से।
ठीक उसी प्रकार, आज ईसाई धर्म को सामाजिक या मूर्तिपूजक जीवन शैली वाले लोगों के सामने एक अलौकिक धर्म के वेश में प्रस्तुत किया जाता है, जबकि वास्तव में उसमें कुछ भी रहस्यमय या आध्यात्मिक नहीं है।
या इसमें अलौकिक तत्व हैं। यह बस जीवन का वह सिद्धांत है जो वर्तमान स्थिति के लिए उपयुक्त है।
भौतिक विकास, मानवता के विकास का वर्तमान चरण है, और इसलिए इसे अनिवार्य रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए।

49

वह समय आएगा – और वह आ भी रहा है – जब समानता और बंधुत्व, संपत्ति की साझेदारी, बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने जैसे ईसाई सिद्धांत उतने ही स्वाभाविक और सरल प्रतीत होंगे जितने कि...
पारिवारिक या सामाजिक जीवन के सिद्धांत अब हमें स्पष्ट प्रतीत होते हैं।
मानवता अपने विकास में अब पीछे नहीं जा सकती, ठीक वैसे ही जैसे कोई व्यक्ति पीछे नहीं जा सकता। मनुष्य सामाजिक, पारिवारिक और राज्य संबंधी जीवन अवधारणाओं से आगे निकल चुका है। अब उसे आगे बढ़ना होगा और अगली पीढ़ी को आत्मसात करना होगा।
जीवन की उच्चतर अवधारणा, जो कि अब घटित हो रही है। यह परिवर्तन दो तरीकों से लाया जा रहा है:
आध्यात्मिक कारणों से सचेत रूप से और भौतिक कारणों से अचेतन रूप से।
जिस प्रकार कोई व्यक्ति केवल अपनी बुद्धि के बल पर अपने जीवन जीने के तरीके में बहुत कम ही परिवर्तन करता है, लेकिन
अपने द्वारा प्रकट किए गए नए हितों और लक्ष्यों के बावजूद, वह आम तौर पर पहले की तरह ही जीवन व्यतीत करता रहता है।
वह तर्क के आधार पर ही अपने जीवन जीने के तरीके में बदलाव करता है, और यह बदलाव तभी होता है जब यह उसकी अंतरात्मा के बिल्कुल विपरीत हो जाता है।
परिणामस्वरूप यह उसके लिए असहनीय है; इसी प्रकार, मानवता, अपने धर्मों के माध्यम से जीवन के नए हितों और लक्ष्यों को जानने के बहुत समय बाद भी, जिनके लिए उसे प्रयास करना चाहिए, अपने अधिकांश प्रतिनिधियों में बनी रहती है।
पहले की तरह जीवन व्यतीत करता है, और नई अवधारणा को तभी स्वीकार करने के लिए विवश होता है जब उसे यह एहसास होता है कि पहले की तरह जीना असंभव है।
उसका पुराना जीवन पहले जैसा ही था।
यद्यपि धार्मिक नेताओं द्वारा जीवन में परिवर्तन की आवश्यकता का उपदेश दिया जाता है और इसे मान्यता दी जाती है और महसूस किया जाता है।
सबसे बुद्धिमान पुरुषों के अनुसार, बहुमत, अपने नेताओं के प्रति अपने आदरपूर्ण रवैये के बावजूद,
अपनी शिक्षाओं में आस्था रखते हुए भी, वे अपने वर्तमान जटिल जीवन में भी जीवन के पुराने सिद्धांत से निर्देशित होते रहते हैं। मानो परिवार का मुखिया, यह जानते हुए भी कि उसे अपनी उम्र में कैसा व्यवहार करना चाहिए, फिर भी

वह अपनी आदत और लापरवाही के कारण उसी बचकाने तरीके से जीवन जीना जारी रखता है जैसा वह बचपन में जीता था।
मानवता के एक चरण से दूसरे चरण में संक्रमण के दौरान यही हो रहा है, जिसके माध्यम से
हम अब आगे बढ़ रहे हैं। मानवता अपने सामाजिक चरण से आगे निकल चुकी है और एक नए युग में प्रवेश कर चुकी है। यह उस सिद्धांत को पहचानती है जिसे इस नए युग में जीवन का आधार बनाया जाना चाहिए। लेकिन जड़ता के कारण यह
जीवन की पुरानी परंपराओं को कायम रखा जाता है। जीवन की नई अवधारणा के बीच इस असंगति से
और व्यावहारिक जीवन विरोधाभासों और कष्टों की एक पूरी श्रृंखला से होकर गुजरता है जो हमारे जीवन को कड़वा बना देता है और उसमें बदलाव की आवश्यकता पैदा करता है।
जीवन के व्यवहार की तुलना उसके सिद्धांत से करने पर ही स्पष्ट अंतर देखकर निराशा होती है।
हमारे जीवन की परिस्थितियों और हमारी अंतरात्मा के बीच का संघर्ष।
हमारा पूरा जीवन हमारे ज्ञान और हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप हर चीज के घोर विरोधाभास में है।
ठीक है। यह विरोधाभास आर्थिक जीवन, राजनीतिक जीवन और अंतरराष्ट्रीय जीवन, हर चीज में व्याप्त है।
जीवन। मानो हम जो जानते थे उसे भूल गए हों और कुछ समय के लिए उन सिद्धांतों को त्याग दिया हो जिन पर हम विश्वास करते हैं (हम हम उन पर विश्वास करने से खुद को रोक नहीं सकते क्योंकि वे ही एकमात्र आधार हैं जिन पर हम अपना जीवन जीते हैं) हम वह सब कुछ करते हैं जो हमारी अंतरात्मा और हमारी सामान्य बुद्धि हमसे अपेक्षा करती है, उसके बिल्कुल विपरीत।
आर्थिक, राजनीतिक और अंतर्राष्ट्रीय मामलों में हम उन सिद्धांतों द्वारा निर्देशित होते हैं जो
ये बातें तीन या पांच हजार साल पहले के लोगों के लिए तो उपयुक्त थीं, हालांकि ये हमारी अंतरात्मा और आज की जीवन परिस्थितियों के बिल्कुल विपरीत हैं।
प्राचीन काल के मनुष्य के लिए मानव जाति के विभाजन पर आधारित समाज में रहना बहुत अच्छा था।
उन्होंने लोगों को स्वामी और दास में विभाजित किया, क्योंकि उनका मानना था कि ऐसा भेद ईश्वर द्वारा निर्धारित है और यह हमेशा बना रहेगा।
लेकिन क्या आज के समय में ऐसा विश्वास संभव है?
प्राचीन काल का मनुष्य यह मानता था कि उसे इस संसार की सुख-सुविधाओं का आनंद लेने का अधिकार है।
दूसरों के खर्चे पर, और उन्हें पीढ़ियों तक दुख में रखने के लिए, क्योंकि उसका मानना था कि मनुष्य आए थे
विभिन्न मूल के, नीच या कुलीन वंश के, हाम या याफेथ की संतानें। विश्व के महानतम ऋषियों, मानवता के शिक्षकों, प्लेटो और अरस्तू ने दासों के अस्तित्व को उचित ठहराया और इसका प्रमाण प्रस्तुत किया।
दास प्रथा की वैधता; और यहाँ तक कि तीन शताब्दियों पहले भी, जिन लोगों ने एक काल्पनिक समाज का वर्णन किया था
भविष्य, आदर्शलोक, की कल्पना दासों के बिना नहीं की जा सकती थी।
प्राचीन और मध्ययुगीन काल के लोग दृढ़ता से मानते थे कि मनुष्य समान नहीं हैं, केवल यही एक ही बात है
सच्चे पुरुष फारसी, यूनानी, रोमन या फ्रैंक होते हैं। लेकिन अब हम इस बात पर विश्वास नहीं कर सकते। और लोग
जो लोग आज अभिजात वर्ग और देशभक्ति के सिद्धांतों के लिए खुद को बलिदान कर देते हैं, वे खुद उन बातों पर विश्वास नहीं करते और न ही कर सकते हैं जिनका वे दावा करते हैं।

हम सब जानते हैं और जानने से खुद को रोक नहीं सकते – भले ही हमने इस विचार को कभी स्पष्ट रूप से व्यक्त होते न सुना हो, कभी पढ़ा न हो, और कभी शब्दों में न कहा हो, फिर भी अवचेतन रूप से

वातावरण में व्याप्त ईसाई भावनाओं को हम पूरे दिल से आत्मसात कर रहे हैं – हम जानते हैं और इससे बच नहीं सकते।

ईसाई धर्म के मूलभूत सत्य को जानते हुए, कि हम सब एक ही पिता की संतान हैं, चाहे हम कहीं भी रहते हों और कोई भी भाषा बोलते हों; हम सब भाई हैं और एक ही नियम के अधीन हैं।

हमारे साझा पिता द्वारा हमारे हृदयों में रोपित प्रेम।

आज के व्यक्ति के विचार और शिक्षा का स्तर चाहे जो भी हो, उसकी उदारवाद की विचारधारा चाहे जो भी हो, उसका दर्शन, विज्ञान या अर्थशास्त्र का मत चाहे जो भी हो, वह कितना भी अज्ञानी या अंधविश्वासी क्यों न हो।

शायद, आज के समय का हर व्यक्ति जानता है कि सभी मनुष्यों को जीवन और सुख-सुविधाओं का समान अधिकार है।

जीवन का सार यह है कि कोई भी समूह दूसरे समूह से न तो बेहतर है और न ही बदतर, सभी समान हैं।

यह बात निःसंदेह ज्ञात है; हर कोई इसे अपने पूरे अस्तित्व में महसूस करता है। फिर भी, साथ ही साथ हर कोई अपने चारों ओर मनुष्यों का दो वर्गों में विभाजन देखता है – एक, मेहनती, शोषित, गरीब और पीड़ित, दूसरा,

अन्य लोग आलसी, दमनकारी, विलासी और फिजूलखर्ची करने वाले हैं। और हर कोई न केवल इसे देखता है, बल्कि स्वेच्छा से या अनजाने में ही, किसी न किसी रूप में, वह उस भेद को बनाए रखने में भागीदार बन जाता है जिसकी उसकी अंतरात्मा निंदा करती है। और वह इस विरोधाभास और इसमें अपनी भूमिका के बोध से पीड़ित हुए बिना नहीं रह सकता।

चाहे वह स्वामी हो या दास, आज का मनुष्य निरंतर पीड़ादायक विरोध के भाव से मुक्त नहीं रह सकता।

उसके अंतरात्मा और वास्तविक जीवन के बीच, और उससे उत्पन्न होने वाली पीड़ाओं के बीच।

मेहनतकश जनता, मानव जाति का विशाल बहुमत जो निरंतर पीड़ा झेल रहा है,

निरर्थक और निराशाजनक परिश्रम और अभाव में भी, जिसमें उनका पूरा जीवन व्यतीत हो जाता है, वे अपना जीवन व्यर्थ पाते हैं।

सभी के अनुसार, जो है और जो होना चाहिए, उसके बीच के स्पष्ट विरोधाभास में सबसे तीव्र पीड़ा निहित है।

स्वयं के द्वारा रखे गए विश्वास, और वे लोग जिन्होंने उन्हें उस स्थिति में पहुंचाया है और उन्हें उस स्थिति में बनाए रखा है।

वे जानते हैं कि वे गुलामी में हैं और वासनाओं की पूर्ति के लिए अभाव और अंधकार में जीने के लिए अभिशप्त हैं।

उन अल्पसंख्यकों के बारे में जो उन्हें दबाकर रखते हैं। वे यह जानते हैं, और वे इसे स्पष्ट रूप से कहते भी हैं। और यह ज्ञान

इससे उनकी पीड़ा बढ़ जाती है और यही इसका सबसे कड़वा दर्द है।

प्राचीन काल का दास जानता था कि वह स्वभाव से दास है, लेकिन हमारा मजदूर, यद्यपि वह स्वयं को एक

दास, जानता है कि उसे ऐसा नहीं होना चाहिए, और इसलिए वह टैंटलस की पीड़ा का स्वाद चखता है, हमेशा इच्छा करता रहता है और कभी नहीं

उसे वह हासिल हो रहा है जो उसका हो सकता है और होना चाहिए।

श्रमिक वर्गों की पीड़ाएँ, जो वर्तमान और भविष्य के बीच के विरोधाभास से उत्पन्न होती हैं।

जो होना चाहिए, वह उनकी चेतना से उत्पन्न ईर्ष्या और घृणा के कारण दस गुना बढ़ जाता है।

आज के मजदूर को तब भी कष्ट सहना पड़ेगा, भले ही उसका परिश्रम पहले के मुकाबले बहुत कम हो।
प्राचीन काल के दास के लिए, भले ही उसे आठ घंटे का कार्यदिवस और तीन डॉलर प्रतिदिन की मजदूरी मिलती, वह उन चीजों के निर्माण में काम कर रहा था जिनका वह आनंद नहीं ले सकता था, वह अपनी इच्छा से काम नहीं कर रहा था।
अपने स्वयं के लाभ के लिए नहीं, बल्कि अनिवार्यतावश, सामान्य रूप से विलासी और आलसी लोगों की इच्छाओं को पूरा करने के लिए।
और यह सब एक अकेले धनी व्यक्ति, विशेष रूप से किसी कारखाने या कार्यशाला के मालिक के लाभ के लिए हो रहा है। और वह जानता है कि यह सब एक ऐसी दुनिया में हो रहा है जहाँ यह एक मान्यता प्राप्त वैज्ञानिक सिद्धांत है कि केवल श्रम ही सृजन करता है।
धन, और यह कि दूसरों के श्रम से लाभ कमाना अनैतिक, बेईमानी और कानून द्वारा दंडनीय है; एक ऐसी दुनिया में,
इसके अलावा, जो मसीह के इस सिद्धांत में विश्वास करने का दावा करता है कि हम सब भाई हैं, और सच्चा गुण और सम्मान पड़ोसी की सेवा करने में पाया जाता है, न कि उसका शोषण करने में। वह यह सब जानता है, और उसे अवश्य ही जानना चाहिए।
वर्तमान स्थिति और अपेक्षित स्थिति के बीच के तीव्र विरोधाभास से वे बहुत पीड़ा झेलते हैं।
“सभी सिद्धांतों के अनुसार, मेरे ज्ञान के अनुसार और सभी के दावों के अनुसार,” मजदूर ने कहा।
वह मन ही मन कहता है, “मुझे स्वतंत्र होना चाहिए, सबके बराबर होना चाहिए और प्यार पाना चाहिए; लेकिन मैं एक गुलाम हूँ, अपमानित और नफरत का पात्र।” वह भी नफरत से भरा हुआ है और अपनी इस स्थिति से निकलने और इससे छुटकारा पाने के रास्ते तलाशने की कोशिश करता है।
उस शत्रु को हटाना जो उस पर हावी हो रहा है, और बदले में उसे दबाना। लोग कहते हैं, “मजदूरों के पास कोई काम नहीं है।”
"व्यापारियों को पूंजीपति बनने की कोशिश करना, गरीबों को अमीरों की जगह लेने की कोशिश करना।" यह एक गलती है। अगर मजदूर और गरीब ऐसा करने की कोशिश करते हैं, तो वे गलत होंगे, खासकर ऐसी दुनिया में जहां गुलामों का राज चलता है।
और स्वामी ईश्वर द्वारा सृजित एक अलग प्रजाति माने जाते थे; लेकिन वे एक ऐसी दुनिया में रह रहे हैं जो
ईसाई धर्म में सुसमाचार के विश्वास का पालन किया जाता है, जिसके अनुसार सभी ईश्वर के पुत्र हैं, और इसलिए भाई-भाई और समान हैं। और चाहे मनुष्य इसे छिपाने का कितना भी प्रयास करें, ईसाई जीवन की मूलभूत शर्तों में से एक प्रेम है, जो शब्दों में नहीं बल्कि कर्मों में प्रकट होता है।

51

तथाकथित शिक्षित वर्ग का व्यक्ति और भी अधिक स्पष्ट असंगति और पीड़ा में जीता है। प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति, यदि किसी बात में विश्वास करता है, तो वह समस्त मानव बंधुत्व में विश्वास करता है, या कम से कम वह ऐसा मानता है।
या तो मानवता की भावना, या फिर न्याय की भावना, या फिर विज्ञान में विश्वास। और इन सबके बीच वह जानता है
उनका पूरा जीवन उन सिद्धांतों पर आधारित है जो इन सबके बिल्कुल विपरीत हैं, ईसाई धर्म, मानवता, न्याय और विज्ञान के सभी सिद्धांतों के विपरीत हैं।
वह जानता है कि जिन आदतों में उसका पालन-पोषण हुआ है, उन्हें वह बिना छोड़े नहीं रह सकता।
पीड़ा को केवल शोषित श्रमिकों के थका देने वाले, अक्सर घातक, परिश्रम के माध्यम से ही संतुष्ट किया जा सकता है, अर्थात् ईसाई धर्म, मानवता और न्याय के सिद्धांतों का सबसे स्पष्ट और क्रूर उल्लंघन करके।

और यहाँ तक कि विज्ञान (अर्थात आर्थिक विज्ञान) के भी। वह बंधुत्व, मानवता के सिद्धांतों की वकालत करते हैं।
न्याय और विज्ञान, फिर भी वह इस प्रकार जीवन यापन करता है कि वह श्रमिक वर्गों के उत्पीड़न पर निर्भर है, जो
वह इन अत्याचारों की निंदा करता है, और उसका पूरा जीवन इन अत्याचारों से प्राप्त लाभों पर आधारित है। इसके अलावा, वह इस स्थिति को बनाए रखने के लिए हर संभव प्रयास कर रहा है, जो उसकी सभी मान्यताओं के घोर विपरीत है।
हम सब भाई हैं – फिर भी हर सुबह किसी न किसी भाई या बहन को बेडरूम की गंदगी साफ करनी पड़ती है।
हम सब भाई हैं, लेकिन हर सुबह मुझे एक सिगार, मिठाई, आइसक्रीम और ऐसी ही चीज़ें चाहिए होती हैं, जिन्हें बनाने में मेरे भाई-बहन अपनी सेहत बर्बाद कर रहे हैं, और मुझे ये चीज़ें बहुत पसंद हैं।
और उनकी मांग करता हूँ। हम सब भाई हैं, फिर भी मैं बैंक, व्यापारिक प्रतिष्ठान या दुकान में काम करके अपना जीवन यापन करता हूँ।
मैं अपने भाइयों के लिए सभी वस्तुओं को और भी महंगा बना देता हूँ। हम सब भाई हैं, लेकिन मैं उस वेतन पर जीता हूँ जो मुझे चोर या वेश्या पर मुकदमा चलाने, न्याय करने और उसे दोषी ठहराने के लिए दिया जाता है, जिनके अस्तित्व से ही मेरा पूरा जीवन चलता है।
जीवन में जो होता है, वही होता है, और जिन्हें मैं जानता हूँ, उन्हें दंडित नहीं बल्कि सुधारा जाना चाहिए। हम सब भाई हैं।
लेकिन मैं जरूरतमंद मजदूरों से कर वसूल कर जो वेतन कमाता हूँ, उसी से अपना गुजारा करता हूँ, जिसे मैं विलासितापूर्ण चीजों पर खर्च करता हूँ।
धनी और आलसी। हम सब भाई हैं, लेकिन मैं झूठे ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए वेतन लेता हूँ, जिसमें मैं स्वयं विश्वास नहीं करता, और जो केवल लोगों को सच्चे ईसाई धर्म को समझने से रोकता है। मैं लेता हूँ
लोगों को उनके लिए सबसे महत्वपूर्ण मामले में धोखा देने के लिए पुजारी या बिशप के रूप में वेतन। हम हैं
हम सब भाई हैं, लेकिन मैं गरीबों को अपने शैक्षिक, चिकित्सा या साहित्यिक कार्यों का लाभ धन के अलावा किसी और चीज़ के लिए नहीं दूंगा।
हम सब भाई हैं, फिर भी मैं हत्या करने के लिए तैयार रहने और लोगों को पढ़ाने के लिए वेतन लेता हूँ।
हत्या करना, या आग्नेयास्त्र, बारूद या किलेबंदी बनाना।
उच्च वर्गों का संपूर्ण जीवन निरंतर असंगतता से भरा होता है। मनुष्य का विवेक जितना अधिक संवेदनशील होता है, यह विरोधाभास उसके लिए उतना ही अधिक कष्टदायी होता है।
संवेदनशील अंतरात्मा वाले व्यक्ति को ऐसे जीवन जीने पर कष्ट भोगना ही पड़ेगा। एकमात्र उपाय जिससे वह
इस पीड़ा से मुक्ति पाने का एकमात्र तरीका अपने अंतरात्मा को कुंद करना है, लेकिन भले ही कुछ लोग अपने अंतरात्मा को कुंद करने में सफल हो जाएं
वे अपने भय को अंतरात्मा की आवाज से शांत नहीं कर सकते।
उच्च प्रभुत्वशाली वर्गों के पुरुष, जिनकी अंतरात्मा स्वाभाविक रूप से संवेदनशील नहीं होती या जिनके पास
यदि वे अंतरात्मा की पीड़ा से नहीं जूझते, भय और घृणा से पीड़ित नहीं होते, तो वे कुंद हो जाते हैं। वे बाध्य हैं।
वे पीड़ा सहते हैं। वे जानते हैं कि उनके प्रति नफरत मौजूद है, और श्रमिक वर्गों में यह नफरत अनिवार्य रूप से मौजूद है। वे जानते हैं कि श्रमिक वर्ग जानता है कि उन्हें धोखा दिया जा रहा है और उनका शोषण किया जा रहा है।
वे उत्पीड़न से मुक्ति पाने और अपने उत्पीड़कों से बदला लेने के लिए खुद को संगठित करना शुरू कर रहे हैं।

उच्च वर्ग के लोग संघों, हड़तालों, मई दिवस समारोहों को देखते हैं और अपने ऊपर मंडरा रहे संकट को महसूस करते हैं, और उनका भय आत्मरक्षा और घृणा की प्रवृत्ति में बदल जाता है। वे जानते हैं कि यदि
एक पल के लिए भी यदि वे अपने शोषित दासों के साथ संघर्ष में पराजित हो जाते हैं, तो वे नष्ट हो जाएंगे, क्योंकि
गुलाम हताश हैं और उत्पीड़न के हर दिन के साथ उनकी हताशा और भी तीव्र होती जा रही है।
उत्पीड़क, चाहे वे ऐसा करना चाहें भी, उत्पीड़न का अंत नहीं कर सकते। वे जानते हैं कि जिस क्षण वे अपने उत्पीड़न की कठोरता को कम करेंगे, उसी क्षण उनका स्वयं विनाश हो जाएगा। और वे
श्रमिक वर्गों के कल्याण के प्रति उनके दिखावटी समर्थन के बावजूद, इसे शिथिल न करें, क्योंकि आठ-
दिन में एक घंटा काम, नाबालिगों और महिलाओं के श्रम का नियमन, बचत बैंक और पेंशन। यह सब पाखंड है, या फिर गुलाम को काम करने के लिए तत्पर रखने की मात्र चिंता है। लेकिन गुलाम तो गुलाम ही रहता है, और
जो मालिक गुलाम के बिना नहीं रह सकता, वह उसे आज़ाद करने के लिए पहले से भी कम इच्छुक होगा।
शासक वर्ग का मजदूरों के प्रति रवैया उस व्यक्ति जैसा है जिसने अपने शत्रु को धरती पर गिरा दिया है और उसे दबाकर रखा है, ऐसा इसलिए नहीं कि वह उसे दबाकर रखना चाहता है, बल्कि इसलिए कि वह जानता है कि अगर
अगर उसने उसे एक पल के लिए भी जाने दिया, तो वह खुद ही चाकू से घायल हो जाएगा, क्योंकि उसका विरोधी क्रोधित है और उसके पास एक

उसके हाथ में चाकू था। और इसलिए, चाहे उनकी अंतरात्मा कोमल हो या इसके विपरीत, हमारे धनी लोग गरीबों से लूटी गई संपत्ति का आनंद उस तरह नहीं ले सकते जैसे प्राचीन लोग लेते थे जो इस पर अपना अधिकार मानते थे।
उनका पूरा जीवन और उनके सभी सुख या तो अंतरात्मा की पीड़ा या आतंक से कड़वे हो जाते हैं।
आर्थिक विरोधाभास की बात तो यहीं समाप्त होती है। राजनीतिक विरोधाभास तो और भी अधिक स्पष्ट है।
सभी मनुष्यों को राज्य के कानूनों का पालन करने की आदत डाली जाती है।
आधुनिक युग का अस्तित्व कानूनों द्वारा परिभाषित है। एक पुरुष विवाह करता है और तलाक लेता है, अपने बच्चों को शिक्षित करता है, और कई देशों में तो लोग कानून के अनुसार अपने धार्मिक विश्वास का पालन करते हैं। तो फिर उस कानून का क्या जो हमारे संपूर्ण अस्तित्व को परिभाषित करता है? क्या मनुष्य उसमें विश्वास करते हैं? क्या वे उसे अच्छा मानते हैं? बिलकुल नहीं।
अधिकांश मामलों में वर्तमान समय के लोग कानून की न्यायसंगतता में विश्वास नहीं करते, वे इसका तिरस्कार करते हैं।
लेकिन फिर भी वे इसका पालन करते हैं। प्राचीन काल के लोगों के लिए अपने कानूनों का पालन करना बहुत अच्छा था।
उनका दृढ़ विश्वास था कि उनका कानून (जो आम तौर पर धार्मिक प्रकृति का होता था) एकमात्र न्यायसंगत कानून था, जिसका पालन सभी को करना चाहिए। लेकिन क्या हमारे साथ भी ऐसा ही है? हम जानते हैं और यह जाने बिना नहीं रह सकते कि हमारे समाज का कानून
देश ही एकमात्र शाश्वत कानून नहीं है; यह तो विभिन्न देशों के अनेक कानूनों में से एक है, जो
वे समान रूप से अपूर्ण हैं, अक्सर स्पष्ट रूप से गलत और अन्यायपूर्ण होते हैं, और समाचार पत्रों में हर दृष्टिकोण से उनकी आलोचना की जाती है। यहूदी अपने कानूनों का पालन कर सकता था, क्योंकि उसे इस बात में जरा भी संदेह नहीं था कि ईश्वर ने

उन्होंने उन्हें अपनी उंगली से लिखा था; रोमन भी उन कानूनों का पालन कर सकता था जिन्हें वह अपने द्वारा लिखवाया गया समझता था।
अप्सरा एगेरिया द्वारा। मनुष्य इन कानूनों का पालन तभी कर सकते थे यदि वे मानते कि इन्हें बनाने वाले ज़ार ईश्वर के चुने हुए थे, या यदि वे यह भी मानते कि ये कानून निर्माताओं की सभाओं का काम थे जिनके पास
सत्ता और उन्हें यथासंभव बेहतर बनाने की इच्छा। लेकिन हम सभी जानते हैं कि हमारे कानून कैसे बनते हैं।
ये सब पर्दे के पीछे से किए गए हैं, हम जानते हैं कि ये सब लालच, छल और पक्षपात का नतीजा हैं।
संघर्ष; उनमें कोई वास्तविक न्याय नहीं है और न ही हो सकता है। इसलिए, आधुनिक मनुष्य यह विश्वास नहीं कर सकते कि नागरिक या राजनीतिक कानूनों का पालन करना तर्क या मानवीय स्वभाव की मांगों को पूरा कर सकता है।
बहुत पहले ही यह बात स्वीकार कर ली गई थी कि ऐसे कानून का पालन करना तर्कहीन है जिसकी न्यायसंगतता बहुत संदिग्ध हो, और इसलिए उन्हें ऐसे कानून का पालन करने में कष्ट सहना पड़ता है जिसे वे न्यायसंगत और बाध्यकारी नहीं मानते।
जब किसी व्यक्ति का पूरा जीवन पहले से ही कानूनों द्वारा निर्धारित हो और उसे उन कानूनों का पालन करना ही पड़े, तो उसे कष्ट सहना ही पड़ता है।
दंड के खतरे के तहत, हालांकि वह उनकी बुद्धिमत्ता या न्याय पर विश्वास नहीं करता है, और अक्सर स्पष्ट रूप से
उन्हें उनमें अन्याय, क्रूरता और कृत्रिमता दिखाई देती है।
हम सीमा शुल्क और आयात शुल्क की निरर्थकता को स्वीकार करते हैं, फिर भी हम इन्हें चुकाने के लिए बाध्य हैं।
न्यायालय और अन्य सदस्यों के रखरखाव पर होने वाले व्यय की निरर्थकता को पहचानें।
सरकार और हम चर्च की शिक्षाओं को हानिकारक मानते हैं, लेकिन हमें अपना हिस्सा वहन करना ही होगा।
इन संस्थानों के खर्चों में से। हम कानून द्वारा दी जाने वाली सजाओं को क्रूर और निर्लज्ज मानते हैं, लेकिन हमें उनका समर्थन करने में सहायता करनी होगी। हम वितरण को अन्यायपूर्ण और हानिकारक मानते हैं।
हमारे पास भूमि संपत्ति है, लेकिन हम इसके आगे झुकने के लिए बाध्य हैं। हमें युद्धों और सेनाओं की कोई आवश्यकता नहीं दिखती, लेकिन हम सैनिकों और युद्ध खर्चों के समर्थन में उन्हें बेहद भारी बोझ उठाना पड़ता है।
लेकिन यह विरोधाभास उस विरोधाभास के मुकाबले कुछ भी नहीं है जिसका सामना हमें तब करना पड़ता है जब हम मुड़ते हैं
अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों से संबंधित है, और इसके लिए एक समाधान की आवश्यकता है, अन्यथा विवेक और यहां तक कि आत्म-सम्मान के नुकसान का खतरा होगा।
मानव जाति का अस्तित्व। यही ईसाई अंतरात्मा और युद्ध के बीच का विरोधाभास है।
हम सभी ईसाई राष्ट्र हैं जो एक ही आध्यात्मिक जीवन जी रहे हैं, ताकि प्रत्येक नेक और अर्थपूर्ण विचार,
दुनिया के एक छोर पर उत्पन्न होने वाली कोई भी बात, तुरंत ही संपूर्ण ईसाई मानवता तक पहुँच जाती है और
यह हर जगह राष्ट्रीयता के भेदभाव के बिना गर्व और उल्लास की एक समान भावना को जगाता है। हम जो
हम विदेशी मूल के विचारकों, परोपकारियों, कवियों और वैज्ञानिकों से प्रेम करते हैं, और फादर डेमियन के कारनामों पर उतना ही गर्व करते हैं मानो वे हममें से ही कोई हों, हम, जिन्हें विदेशी मूल के लोगों से सरल प्रेम है।
फ्रांसीसी, जर्मन, अमेरिकी और अंग्रेज जैसी राष्ट्रीयताओं के लोग, जो उनके गुणों का सम्मान करते हैं, प्रसन्न होते हैं।

उनसे मिलना और उनका इतना गर्मजोशी से स्वागत करना, उनके साथ युद्ध को वीरतापूर्ण कार्य नहीं मान सकता। इन लोगों और उनके बीच किसी भी तरह के मतभेद की कल्पना भी हम भय से नहीं कर सकते।

हम स्वयं ही ऐसे कृत्य करते हैं जो पारस्परिक हत्या को जन्म देते हैं। फिर भी हम सभी इस नरसंहार में भाग लेने के लिए बाध्य हैं।

ऐसा कल जरूर होगा – अगर आज नहीं तो।

यहूदी, यूनानी और रोमन के लिए अपने राष्ट्र की स्वतंत्रता की रक्षा करना बहुत अच्छा था।

हत्या। क्योंकि वह पूरी श्रद्धा से मानता था कि उसके लोग ही सच्चे, उत्तम और अच्छे लोग हैं जो ईश्वर को प्रिय हैं।

53

और बाकी सब फिलिस्तीनी, बर्बर थे। मध्ययुग के लोग - पिछली सदी के अंत और इस सदी की शुरुआत तक भी - शायद यही विश्वास रखते रहे हों। लेकिन हम चाहे जितना भी प्रयास करें,

हम खुद इस पर विश्वास नहीं कर सकते। और आज के लोगों के लिए यह विरोधाभास इतना जटिल हो गया है।

यह एक ऐसा भयावह अनुभव है जिसके समाधान के बिना जीवन संभव नहीं है।

“हम एक ऐसे युग में जी रहे हैं जो असंगतियों से भरा हुआ है,” प्रोफेसर काउंट कोमारोव्स्की लिखते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय कानून पर अपने विद्वतापूर्ण ग्रंथ में उन्होंने लिखा है, “सभी देशों का प्रेस लगातार इस बात को व्यक्त कर रहा है कि

शांति की सार्वभौमिक इच्छा, और सभी राष्ट्रों के लिए इसकी आवश्यकता का सामान्य बोध।

“सरकारों, निजी व्यक्तियों और आधिकारिक निकायों के प्रतिनिधि एक ही बात कहते हैं; यह है

संसदीय बहसों, राजनयिक पत्राचार और यहां तक कि राजकीय संधियों में भी इसे दोहराया गया है।

सरकारें हर साल अपनी सेनाओं की ताकत बढ़ा रही हैं, नए कर लगा रही हैं, और

ऋण चुकाना, और भावी पीढ़ियों को वर्तमान की निरर्थक नीति की गलतियों को सुधारने का दायित्व सौंपना। शब्दों और कार्यों में कितना बड़ा विरोधाभास है! बेशक सरकारें ऐसा करेंगी।

इन उपायों के औचित्य में यह दलील दी जाती है कि उनका सारा व्यय और हथियार विशेष रूप से इसके लिए हैं।

रक्षा के उद्देश्य। लेकिन यह हर निष्पक्ष व्यक्ति के लिए एक रहस्य बना हुआ है कि यदि सभी महाशक्तियाँ अपनी नीति में एकनिष्ठ हों, केवल आत्मरक्षा का अनुसरण कर रही हों, तो वे कहाँ से हमलों की उम्मीद कर सकती हैं।

वास्तविकता यह है कि ऐसा प्रतीत होता है मानो प्रत्येक महाशक्ति हर क्षण किसी न किसी हमले की आशंका में लगी हुई थी।

अन्य। और इसके परिणामस्वरूप असुरक्षा की एक सामान्य भावना उत्पन्न होती है और प्रत्येक सरकार अन्य शक्तियों की तुलना में अपनी सेनाओं को बढ़ाने के लिए असाधारण प्रयास करती है। इस प्रकार की प्रतिस्पर्धा स्वयं ही

इससे युद्ध का खतरा बढ़ जाता है। राष्ट्र लंबे समय तक सेनाओं की निरंतर वृद्धि को सहन नहीं कर सकते, और जल्द ही

या बाद में वे अपनी वर्तमान स्थिति की सभी कमियों और निरंतर खतरे के बावजूद युद्ध को प्राथमिकता देंगे।

युद्ध। तब मामूली से मामूली बहाने से भी पूरा यूरोप सार्वभौमिक युद्ध की आग में झोंका जा सकता है। और यह एक गलत धारणा है कि ऐसा संकट हमें राजनीतिक और

आर्थिक संकट हमें कुचल रहे हैं। हाल के वर्षों के युद्धों का अनुभव हमें सिखाता है कि

हर युद्ध ने राष्ट्रीय घृणाओं को और तीव्र किया है, सैन्य बोझ को और अधिक भारी और असहनीय बना दिया है, और यूरोप की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति को और अधिक गंभीर और अनसुलझी बना दिया है।"

“आधुनिक यूरोप में नौ मिलियन पुरुषों की एक सक्रिय सेना मौजूद है,” एनरिको फेरि लिखते हैं।

“पंद्रह मिलियन के भंडार के अलावा, प्रति वर्ष चार सौ मिलियन फ्रैंक का व्यय होता है। सशस्त्र बलों में निरंतर वृद्धि से सामाजिक और व्यक्तिगत समृद्धि के स्रोत पंगु हो जाते हैं, और राज्य

आधुनिक दुनिया की तुलना उस व्यक्ति से की जा सकती है जो स्वयं को अभाव के कारण बर्बाद होने के लिए अभिशप्त कर लेता है।

अपने शरीर को भुजाएँ प्रदान करने के लिए पोषण की कमी के कारण, वह उन भुजाओं का उपयोग करने की शक्ति खो देता है।

जिसके बोझ तले वह अंततः दम तोड़ देगा।

चार्ल्स बूथ ने एसोसिएशन फॉर द रिफॉर्म एंड कोडिफिकेशन के समक्ष लंदन में पढ़े गए अपने शोधपत्र में यह बात कही।

26 जून, 1887 के राष्ट्रों के कानून में भी यही बात कही गई है। उसी संख्या, नौ का उल्लेख करने के बाद

सक्रिय सेना में दस लाख और आरक्षित सैनिकों की संख्या पंद्रह मिलियन है, और इन बलों के समर्थन और शस्त्रीकरण पर सरकारों द्वारा किए गए भारी व्यय को देखते हुए, वे कहते हैं, "ये आंकड़े वास्तविक स्थिति का केवल एक छोटा सा हिस्सा दर्शाते हैं।"

लागत, क्योंकि विभिन्न देशों के युद्ध बजट के मान्यता प्राप्त व्यय के अलावा, हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि

औद्योगिक गतिविधियों और हर प्रकार के श्रम से इतनी बड़ी संख्या में सबसे ऊर्जावान पुरुषों को हटाने से समाज को होने वाली भारी क्षति को ध्यान में रखना होगा।

सैन्य तैयारियों पर खर्च की गई धनराशि पर भारी ब्याज मिलता है, लेकिन उसका कोई प्रतिफल नहीं मिलता।

युद्ध और युद्ध की तैयारियों पर किए गए इस व्यय का अपरिहार्य परिणाम लगातार बढ़ती राष्ट्रीय गरीबी है।

कर्ज। यूरोप की सरकारों द्वारा लिए गए अधिकांश ऋण युद्ध के उद्देश्य से थे। इनकी कुल राशि चार सौ मिलियन पाउंड है, और ये ऋण हर साल बढ़ रहे हैं।

वही प्रोफेसर कोमारोव्स्की एक अन्य स्थान पर कहते हैं, “हम कठिन समय में जी रहे हैं। हर जगह हम

व्यापार और विनिर्माण में मंदी, सामान्य आर्थिक स्थिति की दयनीयता, श्रमिक वर्गों के जीवन की दुखद परिस्थितियों और सार्वभौमिक समस्याओं की शिकायतें सुनना।

जनता का निर्धन होना। लेकिन इसके बावजूद, सरकारें अपने अस्तित्व को बनाए रखने के प्रयासों में लगी हुई हैं।

स्वतंत्रता की होड़ निरर्थकता की चरम सीमा तक पहुँच गई है। हर जगह नए कर और शुल्क लगाए जा रहे हैं, और राष्ट्रों पर वित्तीय उत्पीड़न की कोई सीमा नहीं है। अगर हम बजटों पर एक नज़र डालें तो...

पिछले सौ वर्षों में यूरोप के राज्यों में जो बात हमें सबसे अधिक चौंकाती है, वह है उनकी तीव्र और निरंतर बढ़ती हुई वृद्धि।

हम इस असाधारण घटना की व्याख्या कैसे कर सकते हैं, जो देर-सवेर हम सभी के लिए खतरा बन सकती है?

अपरिहार्य दिवालियापन?

“इसका मुख्य कारण निसंदेह हथियारों के रखरखाव पर होने वाला वह व्यय है जो धन को निगल जाता है।”

यूरोपीय राज्यों के कुल व्यय का एक तिहाई और यहाँ तक कि आधा हिस्सा। और सबसे दुखद बात यह है कि
बजट में इस वृद्धि और जनता के गरीबीकरण की कोई सीमा नहीं दिखती। समाजवाद इस असामान्य स्थिति के विरुद्ध एक विरोध ही तो है
जिसमें जनसंख्या का बड़ा हिस्सा
हमारी दुनिया में क्या स्थित है?
"हम खुद को बर्बाद कर रहे हैं," फ्रेडरिक पासी ने पिछली कांग्रेस के समक्ष पढ़े गए एक पत्र में कहा।
लंदन में सार्वभौमिक शांति सम्मेलन (1890 में) में कहा गया, "हम भविष्य के निरर्थक युद्धों में भाग लेने या उन निरर्थक और विनाशकारी
ऋणों पर ब्याज चुकाने के लिए खुद को बर्बाद कर रहे हैं जो हमने लिए हैं।"
अतीत के आपराधिक युद्ध। हम भूख से मर रहे हैं ताकि एक-दूसरे को मारने के साधन जुटा सकें।"
बाद में फ्रांस में इस विषय को देखने के तरीके के बारे में बात करते हुए, वे कहते हैं, "हमारा मानना है कि मानव और नागरिक अधिकारों की
घोषणा के सौ साल बाद, अब समय आ गया है कि हम इस बात को मान्यता दें कि..."
राष्ट्रों के अधिकारों का सम्मान करना और धोखाधड़ी और बल पर आधारित सभी उपक्रमों को तत्काल और हमेशा के लिए त्याग देना।
जो विजय के नाम पर मानवता के विरुद्ध वास्तविक अपराध हैं, और जिन्हें सम्राटों का अहंकार और राष्ट्रों का अभिमान चाहे जो भी समझे, वे
केवल उन लोगों को भी कमजोर करते हैं जो
उन पर विजय प्राप्त की।
“इस देश में धर्म का जिस तरह से पालन किया जाता है, उसे देखकर मैं आश्चर्यचकित हूं,” सर विल्फ्रेड लॉसन ने उसी समय कहा।
कांग्रेस। “आप एक लड़के को संडे स्कूल भेजते हैं, और आप उससे कहते हैं, ‘प्यारे बच्चे, तुम्हें अपने दुश्मनों से प्यार करना चाहिए। अगर कोई
दूसरा लड़का तुम्हें मारे, तो तुम्हें उसे वापस नहीं मारना चाहिए, बल्कि उससे प्यार करके उसे सुधारने की कोशिश करनी चाहिए।’ ठीक है।
लड़का चौदह या पंद्रह साल की उम्र तक संडे स्कूल में रहता है, और फिर उसके दोस्त उसे भेज देते हैं।
सेना में उसका क्या काम है? वह निश्चित रूप से अपने दुश्मन से प्यार नहीं करेगा; बल्कि इसके विपरीत, अगर उसे मौका मिला तो वह उसे
संगीन से मार डालेगा। यही सभी धार्मिक शिक्षाओं का सार है।
इस देश में। मुझे नहीं लगता कि धर्म के सिद्धांतों का पालन करने का यह कोई बहुत अच्छा तरीका है। मुझे लगता है
यदि किसी लड़के के लिए अपने शत्रु से प्रेम करना अच्छी बात है, तो एक वयस्क व्यक्ति के लिए भी यह अच्छी बात है।"
विल्सन कहते हैं, "यूरोप में अट्ठाईस मिलियन सशस्त्र पुरुष हैं, विवादों का निपटारा करने के लिए, न कि
विवादों को सुलझाने का यही स्वीकृत तरीका है, न कि एक-दूसरे की हत्या करके।
ईसाई राष्ट्र। यह विधि साथ ही साथ बहुत महंगी भी है, क्योंकि मेरे द्वारा प्राप्त आंकड़ों के अनुसार।
मैंने पढ़ा है कि यूरोप के देशों ने 1872 में हत्या के माध्यम से विवादों का निपटारा करने की तैयारियों पर डेढ़ सौ मिलियन पाउंड खर्च किए।
इसलिए मुझे लगता है कि ऐसी स्थिति में...
दो विकल्पों में से एक को स्वीकार करना होगा: या तो ईसाई धर्म असफल है, या फिर वे लोग जो
इसे समझाने का प्रयास करने वाले असफल रहे हैं। जब तक हमारे योद्धाओं को निशस्त्र नहीं किया जाता और हमारी सेनाओं को भंग नहीं किया
जाता, तब तक हमें स्वयं को ईसाई राष्ट्र कहने का अधिकार नहीं है।
युद्ध के विरुद्ध प्रचार करने के ईसाई मंत्रियों के कर्तव्य विषय पर एक सम्मेलन में, जी. डी. बार्टलेट ने कहा...

अन्य बातों के अलावा उन्होंने कहा, “यदि मैं धर्मग्रंथों को समझता हूँ, तो मैं कहता हूँ कि मनुष्य केवल ईसाई धर्म के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं जब तक वे युद्ध के प्रश्न को अनदेखा करते हैं। मैंने एक लंबा जीवन जिया है और हमारे लोगों को यह सब कहते सुना है।

मंत्री लोग सार्वभौमिक शांति पर मुश्किल से छह बार ही उपदेश देते हैं। बीस साल पहले, एक ड्राइंग रूम में, मैं

चालीस लोगों की उपस्थिति में यह प्रस्ताव उठाने का साहस किया कि युद्ध असंगत है

ईसाई धर्म; मुझे एक कट्टरपंथी माना जाता था। यह विचार कि हम युद्ध के बिना काम चला सकते हैं, सरासर कमजोरी और मूर्खता समझा जाता था।

कैथोलिक पादरी डेफॉर्नी ने भी इसी भावना को व्यक्त किया है। “प्रथम सिद्धांतों में से एक यह है कि

“सभी मनुष्यों के अंतरात्मा में अंकित शाश्वत नियम यह है कि पर्याप्त कारण के बिना, बिना किसी दबाव के, किसी साथी प्राणी का जीवन लेना या उसका रक्त बहाना निषिद्ध है,” एब्बे डेफॉर्नी कहते हैं।

इसकी आवश्यकता में। यह उन आज्ञाओं में से एक है जो हृदय में सबसे गहराई से अंकित है।

लेकिन जैसे ही युद्ध की बात आती है, यानी खून की नदियां बहाने की, आज के लोग पर्याप्त कारण के बारे में सोचना भी बंद कर देते हैं। युद्धों में भाग लेने वाले लोग इसके बारे में सोचते तक नहीं हैं।

वे खुद से पूछ रहे हैं कि क्या इन अनगिनत हत्याओं का कोई औचित्य है, क्या वे

चाहे वह न्यायसंगत हो या अन्यायपूर्ण, वैध हो या अवैध, निर्दोष हो या अपराधी, या फिर वे उस मूलभूत आज्ञा का उल्लंघन कर रहे हों जो वैध कारण के बिना हत्या करने से मना करती है। लेकिन उनकी अंतरात्मा मौन है।

युद्ध अब नैतिक विचारों पर निर्भर नहीं रह गया है। युद्ध में मनुष्य को हर तरह की मेहनत करनी पड़ती है।

और जिन खतरों का वे सामना करते हैं, उनमें विजय प्राप्त करने के अलावा कोई और सुख नहीं, पराजित होने के अलावा कोई और दुःख नहीं।

मुझसे यह मत कहो कि वे अपने देश की सेवा कर रहे हैं। एक महान प्रतिभा ने इसका उत्तर दिया।

कुछ समय पहले उन शब्दों में जो एक कहावत बन गए हैं, 'न्याय के बिना, साम्राज्य क्या है सिवाय एक महान गिरोह के?'

क्या डाकुओं का हर गिरोह एक छोटा सा साम्राज्य नहीं होता? उनके भी अपने कानून होते हैं; और वे भी लूटपाट करने के लिए, और यहाँ तक कि सम्मान के लिए भी युद्ध करते हैं।

प्रस्तावित संस्था (अंतर्राष्ट्रीय मध्यस्थता बोर्ड की संस्था) का उद्देश्य यह है कि

यूरोप के राष्ट्र लुटेरों के राष्ट्र न रहें, और उनकी सेनाएँ डाकुओं के गिरोह न रहें। और एक

यह भी जोड़ना होगा कि न केवल डाकू, बल्कि गुलाम भी। क्योंकि हमारी सेनाएँ तो बस गुलामों के गिरोह हैं जो एक या दो सेनापतियों या सरकारी मंत्रियों के अधीन हैं, जो उन पर निरंकुश नियंत्रण रखते हैं।

जैसा कि हम अच्छी तरह जानते हैं, कोई वास्तविक जिम्मेदारी नहीं।

“दास की विशेषता यह है कि वह अपने स्वामी के हाथों में केवल एक औजार होता है, एक वस्तु, मनुष्य नहीं। सैनिक, अधिकारी और सेनापति भी ठीक यही होते हैं, जो स्वामी की इच्छा के अनुसार हत्या करते हैं और मारे जाते हैं।

शासक या शासकों। सैन्य गुलामी एक वास्तविक तथ्य है, और यह गुलामी का सबसे बुरा रूप है, खासकर अब।

जब अनिवार्य सेवा के माध्यम से यह किसी राष्ट्र के सभी बलवान और सक्षम पुरुषों की गर्दन में बेड़ियाँ डाल देता है, उन्हें हत्या का हथियार, मानव मांस का कसाई बना देता है, क्योंकि उन्हें इसी रूप में लिया जाता है।
ऐसा करने के लिए प्रशिक्षित किया गया।
“दो या तीन शासक मंत्रिमंडल में एकत्रित होकर गुप्त रूप से बिना किसी रजिस्टर के विचार-विमर्श करते हैं।”
बिना प्रचार-प्रसार के, और परिणामस्वरूप बिना किसी जिम्मेदारी के, वे लोगों को हत्या के लिए भेज देते हैं।"
“लोगों पर बोझ डालने वाले हथियारों के खिलाफ विरोध प्रदर्शन हमारे समय में शुरू नहीं हुए हैं,” कहते हैं
हस्ताक्षरकर्ता ई. जी. मोनेटा। “सुनिए मोंटेस्क्यू ने अपने समय में क्या लिखा था: ‘फ्रांस (और कोई कह सकता है, यूरोप)
सैनिकों द्वारा बर्बाद कर दिया जाएगा। यूरोप भर में एक नई महामारी फैल रही है। यह शासकों पर हमला करती है और उन्हें भारी संख्या में सशस्त्र सैनिकों को रखने के लिए मजबूर करती है। यह महामारी संक्रामक है और फैलती है।
क्योंकि जिस क्षण एक सरकार अपने हथियारों का भंडार बढ़ाती है, उसी क्षण अन्य सभी सरकारें भी ऐसा ही करने लगती हैं।
परिणामस्वरूप, इससे केवल व्यापक विनाश ही प्राप्त होता है।
“प्रत्येक सरकार उतनी ही बड़ी सेना रखती है जितनी वह अपने लोगों की इच्छा के अनुसार रख सकती थी।”
विनाश का खतरा मंडरा रहा है, और लोग शांति को सभी के खिलाफ सभी के बीच तनावपूर्ण स्थिति कहते हैं।
इसलिए यूरोप इतना बर्बाद हो चुका है कि अगर निजी व्यक्ति हमारी सरकारों की स्थिति में होते तो...
अगर हम इस महाद्वीप में बसें, तो सबसे धनी लोगों के पास भी जीवनयापन के लिए पर्याप्त धन नहीं होगा। हम गरीब हैं, जबकि हमारे पास पूरी दुनिया का धन और व्यापार है।
“यह लगभग 150 साल पहले लिखा गया था। तस्वीर आज की दुनिया से ली गई लगती है।
केवल एक चीज बदली है - शासन का स्वरूप। मोंटेस्क्यू के समय में कहा जाता था कि भारी सैन्य साजो-सामान के रखरखाव का कारण राजाओं की निरंकुश शक्ति थी, जो युद्ध करके विजय प्राप्त करने की आशा रखते थे।
विजयों के माध्यम से अपनी निजी आय में वृद्धि करना और यश प्राप्त करना। लोग तब कहते थे, 'काश, ऐसा होता!'
लोग ऐसे लोगों को चुन सकते थे जिन्हें सरकारों को सैनिक और धन देने से इनकार करने का अधिकार होता – तब सैन्य राजनीति का अंत हो जाता। अब लगभग सभी देशों में प्रतिनिधि सरकारें हैं।
पूरे यूरोप में, और इसके बावजूद, युद्ध व्यय और युद्ध की तैयारियों में वृद्धि हुई है।
भयावह स्तर पर।
“यह स्पष्ट है कि शासकों का पागलपन शासक वर्ग पर हावी हो गया है। अब युद्ध इसलिए नहीं होता कि एक राजा ने दूसरे राजा की प्रेमिका के प्रति शिष्टाचार का उल्लंघन किया हो, जैसा कि पहले होता था।”
लुई XIV के समय में। लेकिन राष्ट्रीय सम्मान और देशभक्ति की स्वाभाविक और सम्मानजनक भावनाएँ ऐसी ही थीं।
अतिशयोक्ति की गई है, और एक राष्ट्र की जनमत दूसरे राष्ट्र के विरुद्ध इतनी उत्तेजित है कि यह कहना ही काफी है (भले ही यह झूठी रिपोर्ट हो)
कि एक राज्य का राजदूत उपस्थित नहीं था।
किसी अन्य राज्य के प्रमुख व्यक्ति द्वारा सबसे भयानक और

अब तक के सबसे विनाशकारी युद्धों में से एक। यूरोप में आज नेपोलियन के महान युद्धों के समय की तुलना में कहीं अधिक सैनिक सशस्त्र हैं।
कुछ अपवादों को छोड़कर, सभी नागरिकों को कुछ वर्ष सेना में बिताने के लिए मजबूर किया जाता है।
बैरकें। किले, शस्त्रागार और जहाज बनाए जाते हैं, नए हथियार लगातार आविष्कार किए जाते हैं, ताकि

कुछ ही समय में इन्हें नए तरीकों से बदल दिया जाता है, क्योंकि दुख की बात है कि विज्ञान, जिसका उद्देश्य हमेशा मानवता की भलाई होना चाहिए, विनाश के काम में सहायता करता है और लगातार हत्या के नए-नए तरीके ईजाद करता रहता है।
कम से कम समय में अधिकतम संख्या में सैनिकों को जुटाना। और सैनिकों की इतनी बड़ी संख्या को बनाए रखना और
हत्या की इतनी व्यापक तैयारियों में सालाना करोड़ों रुपये खर्च होते हैं, जो जनता की शिक्षा और सार्वजनिक उपयोगिता के विशाल कार्यों के लिए पर्याप्त होते, और जो
सामाजिक समस्या का शांतिपूर्ण समाधान खोजना संभव है।
“इस संदर्भ में, विज्ञान की तमाम उपलब्धियों के बावजूद, यूरोप मध्य युग के सबसे अंधकारमय और बर्बर दिनों जैसी ही स्थिति में है। सभी इस स्थिति पर खेद व्यक्त करते हैं – न तो शांति
न ही युद्ध – और सभी इससे बचना चाहेंगे। सभी राष्ट्राध्यक्ष घोषणा करते हैं कि वे सभी
शांति की कामना करते हैं, और शांतिपूर्ण इरादों की सबसे गंभीर घोषणाओं में एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करते हैं। लेकिन
उसी दिन या अगले दिन वे अपनी विधायी सभा के समक्ष शस्त्रों में वृद्धि की एक योजना प्रस्तुत करेंगे, यह कहते हुए कि ये शांति सुनिश्चित करने के उद्देश्य से उठाए गए निवारक उपाय हैं।
लेकिन यह वह शांति नहीं है जो हम चाहते हैं। और राष्ट्र इससे भ्रमित नहीं हैं। सच्ची शांति तो...
आपसी विश्वास पर आधारित, जबकि ये विशाल शस्त्र भंडार राज्यों के बीच खुले और पूर्ण अविश्वास को दर्शाते हैं, यदि छिपी हुई शत्रुता को नहीं तो। हम उस व्यक्ति के बारे में क्या कहेंगे जो अपनी मित्रता दिखाना चाहता है?
अपने पड़ोसी के प्रति भावनाओं को देखते हुए, उसे भरी हुई रिवाल्वर हाथ में लेकर अपने मतभेदों पर चर्चा करने के लिए आमंत्रित करना चाहिए।
हाथ?
"शांतिपूर्ण दावों और युद्ध जैसी नीति के बीच यह घोर विरोधाभास ही है।"
ऐसी सरकारें जिनका हर कीमत पर अंत करना सभी अच्छे नागरिक चाहते हैं।"
लोग इस बात से हैरान हैं कि यूरोप में हर साल आत्महत्या के साठ हजार मामले होते हैं, और उनमें से
केवल मान्यता प्राप्त और दर्ज किए गए मामले – रूस और तुर्की को छोड़कर; लेकिन यह आश्चर्य की बात है कि ऐसे मामले इतने कम हैं। आज के प्रत्येक व्यक्ति को, यदि हम गहराई से देखें तो
अपने अंतरात्मा और जीवन के बीच विरोधाभास के कारण वह निराशा की स्थिति में है।
आधुनिक जीवन और अंतरात्मा के बीच मौजूद अन्य सभी विरोधाभासों की तो बात ही छोड़िए, यूरोप की स्थायी रूप से सशस्त्र स्थिति और ईसाई धर्म के प्रति उसका कट्टर विश्वास ही किसी भी व्यक्ति को विचलित करने के लिए काफी है।

निराशा में डूब जाना, मानवता की समझदारी पर संदेह करना, और इस निरर्थक और क्रूर जीवन में अपना अंत कर लेना।
दुनिया। यह विरोधाभास, जो अन्य सभी विरोधाभासों का सार है, इतना भयानक है कि इसमें जीना और भाग लेना तभी संभव है जब कोई इसके बारे में न सोचे - जब कोई इसे भूलने में सक्षम हो।
क्या! हम सभी ईसाई न केवल एक दूसरे से प्रेम करने का दावा करते हैं, बल्कि वास्तव में एक साझा जीवन जीते हैं।
जीवन; हम जिनका सामाजिक अस्तित्व एक समान स्पंदन से धड़कता है – हम एक दूसरे की सहायता करते हैं, एक दूसरे से सीखते हैं
एक दूसरे के और करीब आओ, अपनी आपसी खुशी के लिए, और इस निकटता में जीवन का पूरा अर्थ पाओ! और कल कोई पागल शासक कुछ मूर्खतापूर्ण कहेगा, और दूसरा उसका जवाब देगा...
वही भावना, और फिर मुझे खुद को हत्या के खतरे में डालना होगा, और उन लोगों की हत्या करनी होगी - जिन्होंने ऐसा किया है
मुझे कोई नुकसान न हो – और उससे भी बढ़कर, जिसे मैं प्यार करता हूँ। और यह कोई दूर की बात नहीं है, बल्कि वही है जिसके लिए हम सब तैयारी कर रहे हैं, जो न केवल संभावित है, बल्कि एक अपरिहार्य निश्चितता भी है।
इस बात को स्पष्ट रूप से पहचान पाना ही किसी व्यक्ति को अपना मानसिक संतुलन खोने या खुद को गोली मारने के लिए मजबूर करने के लिए काफी है।
और यही होता है, खासकर सैनिकों के बीच। किसी व्यक्ति को क्षण भर के लिए भी होश में आने पर वह अनिवार्य रूप से ऐसे कदम उठाने के लिए विवश हो जाता है।
और यही आधुनिक युग के पुरुषों द्वारा किए जाने वाले उस भयानक प्रयास का एकमात्र स्पष्टीकरण है।
वे शराब, तंबाकू, अफीम, ताश, अखबार पढ़ना, यात्रा करना और हर तरह की चीजों से खुद को मदहोश कर लेते हैं।
तमाशे और मनोरंजन। इन गतिविधियों को एक महत्वपूर्ण, गंभीर व्यवसाय के रूप में देखा जाता है। और वास्तव में ये एक गंभीर व्यवसाय हैं।
यदि उनकी भावनाओं को कुंद करने के कोई बाहरी साधन न होते, तो आधे लोग
मनुष्य बिना किसी देरी के खुद को गोली मार लेंगे, क्योंकि अपनी बुद्धि के विरुद्ध जीना सबसे बड़ा पाप है।
असहनीय स्थिति। और यही आज के सभी मनुष्यों की स्थिति है। आधुनिक दुनिया के सभी मनुष्य अपनी अंतरात्मा और अपने जीवन शैली के बीच निरंतर और स्पष्ट संघर्ष की स्थिति में जी रहे हैं।
जीवन। यह विरोध आर्थिक और राजनीतिक जीवन दोनों में स्पष्ट है। लेकिन सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि
अंतरात्मा में विद्यमान मानव बंधुत्व के ईसाई कानून और अनिवार्य सैन्य सेवा द्वारा सभी मनुष्यों को घृणा के लिए तैयार किए जाने की आवश्यकता के बीच विरोधाभास है।
और हत्या – एक ही समय में ईसाई और ग्लेडिएटर होने की हत्या।

अध्याय 6

आज के समय में पुरुषों का युद्ध के प्रति दृष्टिकोण

लोग जीवन और अंतरात्मा के बीच के विरोधाभास को जीवन में परिवर्तन करके दूर करने का प्रयास नहीं करते, बल्कि उनके सुसंस्कृत नेता अंतरात्मा की मांगों को धुंधला करने और अपने जीवन को उचित ठहराने के लिए हर संभव प्रयास करते हैं; इस प्रकार वे समाज को मूर्तिपूजा से भी नीचे, आदिम बर्बरता की स्थिति में गिरा देते हैं। - युद्ध, सार्वभौमिक सैन्यवाद और सेना में अनिवार्य सेवा के प्रति आधुनिक विचारकों का अस्पष्ट दृष्टिकोण - एक वर्ग युद्ध को एक आकस्मिक राजनीतिक घटना मानता है, जिसे केवल बाहरी उपायों से ही टाला जा सकता है - शांति कांग्रेस - रेव्यू डेस रेव्यूज़ में लेख - मैक्सिम डू कैम्प का प्रस्ताव - मध्यस्थता और सेना दमन बोर्डों का महत्व - इस मत के लोगों के प्रति सरकारों का दृष्टिकोण और उनके कार्य - एक अन्य वर्ग युद्ध को क्रूर, लेकिन अपरिहार्य मानता है - मौपासांत - रॉड - तीसरा वर्ग युद्ध को आवश्यक मानता है, और इसके लाभ भी हैं - डौसेट - क्लैरेटी - ज़ोला - वोग्यू।

जीवन और अंतरात्मा के बीच के संघर्ष को दो तरीकों से दूर किया जा सकता है: जीवन शैली में परिवर्तन करके या अंतरात्मा में परिवर्तन करके। और इन विकल्पों के बारे में कोई संदेह नहीं लगता।
एक व्यक्ति वह काम करना बंद कर सकता है जिसे वह गलत मानता है, लेकिन वह उस चीज़ को गलत मानना बंद नहीं कर सकता जो वास्तव में गलत है।
गलत। ठीक उसी तरह, भले ही पूरी मानवता उन कामों को करना बंद कर दे जिन्हें वह गलत मानती है, लेकिन बदलने की क्षमता तो दूर, वह सही-गलत की स्पष्ट पहचान के निरंतर विकास को कुछ समय के लिए भी रोक नहीं सकती।
गलत है और इसलिए ऐसा नहीं होना चाहिए। और इसलिए ईसाई पुरुषों के लिए यह अपरिहार्य प्रतीत होता है कि
वे जिन मूर्तिपूजक सामाजिक स्वरूपों की निंदा करते हैं, उन्हें त्यागकर, अपने सामाजिक अस्तित्व का पुनर्निर्माण उन ईसाई सिद्धांतों के आधार पर करेंगे जिनका वे दावा करते हैं।
ऐसा ही होता यदि जड़त्व का नियम न होता, जो मनुष्यों और राष्ट्रों में उतना ही अटल बल है जितना कि पृथ्वी में।
निर्जीव शरीरों में। मनुष्यों में यह मनोवैज्ञानिक सिद्धांत का रूप ले लेता है, जिसे सुसमाचार के शब्दों में इतनी सच्चाई से व्यक्त किया गया है, "उन्होंने प्रकाश की अपेक्षा अंधकार को अधिक प्रिय माना क्योंकि उनके कर्म बुरे थे।"
यह सिद्धांत इस बात में प्रकट होता है कि लोग सत्य को पहचानने की कोशिश नहीं करते, बल्कि खुद को यह समझाने की कोशिश करते हैं कि जीवन
वे जिस तरह का जीवन जी रहे हैं, जो उन्हें पसंद है और जिसके वे आदी हैं, वह सत्य के साथ पूरी तरह से मेल खाता है।
दास प्रथा प्लेटो और अरस्तू द्वारा प्रतिपादित सभी नैतिक सिद्धांतों के विपरीत थी, फिर भी उनमें से किसी ने भी
हमने देखा कि गुलामी का त्याग करने का मतलब उनके वर्तमान जीवन का टूटना होता।
हमें आधुनिक दुनिया में भी यही देखने को मिलता है।

मनुष्य को दो जातियों में बाँटना और शासन तथा युद्ध में बल का प्रयोग करना हमारे आधुनिक समाज द्वारा प्रतिपादित प्रत्येक नैतिक सिद्धांत के विरुद्ध है। फिर भी, आज के सुसंस्कृत और उन्नत पुरुष ऐसा प्रतीत करते हैं कि
इसे न देखना।
हमारे समय के अधिकांश, बल्कि लगभग सभी सुसंस्कृत पुरुष, अनजाने में ही जीवन की उस पुरानी सामाजिक अवधारणा को बनाए रखने का प्रयास करते हैं, जो उनकी स्थिति को उचित ठहराती है, और स्वयं से तथा दूसरों से इसके दुष्परिणामों को छिपाने की कोशिश करते हैं।
अपर्याप्तता, और सबसे बढ़कर जीवन की ईसाई अवधारणा को अपनाने की आवश्यकता, जिसका अर्थ होगा
मौजूदा सामाजिक व्यवस्था का पूर्णतः विघटन हो गया है। वे जीवन की सामाजिक अवधारणा पर आधारित संगठन को बनाए रखने के लिए संघर्ष करते हैं, लेकिन स्वयं उसमें विश्वास नहीं करते, क्योंकि वह विलुप्त हो चुका है और उसे बनाए रखना असंभव है।
इस पर विश्वास करो।
आधुनिक साहित्य का समस्त स्वरूप – दार्शनिक, राजनीतिक और कलात्मक – इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।
विचार, रूप, रंग - क्या ज्ञान है, क्या कला है, लेकिन गंभीर विषयवस्तु का कितना अभाव है, विचार या अभिव्यक्ति की किसी भी सटीकता से कितना भय है! सूक्ष्मताएँ, रूपक, हास्यपूर्ण कल्पनाएँ, व्यापकतम सामान्यीकरण,
लेकिन कुछ भी सरल और स्पष्ट नहीं है, कुछ भी सीधे मुद्दे पर नहीं आता, यानी जीवन की समस्या पर नहीं।
लेकिन बात यहीं खत्म नहीं होती; इन आकर्षक तुच्छताओं के अलावा, हमारा साहित्य सरल क्रूरता और बर्बरता से भरा पड़ा है, ऐसे तर्कों से भरा है जो मनुष्य को सबसे परिष्कृत तरीके से आदिम बर्बरता की ओर वापस ले जाते हैं।
न केवल मूर्तिपूजा के सिद्धांत, बल्कि पशु जीवन के भी सिद्धांत, जिन्हें हम पाँच हज़ार वर्षों से पीछे छोड़ आए हैं।
साल पहले।
और ऐसा होना ही था। जीवन की ईसाई अवधारणा के प्रति उनके भय में, जो नष्ट कर देगी...
सामाजिक व्यवस्था, जिससे कुछ लोग केवल आदत के कारण चिपके रहते हैं, जबकि अन्य लोग स्वार्थ के कारण भी, उसे मनुष्यों को त्यागना होगा।

जीवन की मूर्तिपूजक अवधारणा और उस पर आधारित सिद्धांतों पर। आजकल हम न केवल देशभक्ति और अभिजात्य सिद्धांतों की वकालत देखते हैं, जैसा कि दो हजार साल पहले किया जाता था, बल्कि
सबसे घटिया एपिक्यूरियनवाद और पशुवाद, केवल इस अंतर के साथ कि उस समय जो लोग इन विचारों का समर्थन करते थे, वे
कुछ लोग इन विचारों में विश्वास करते थे, जबकि आजकल तो इन विचारों के समर्थक भी इनमें विश्वास नहीं करते, क्योंकि इनका वर्तमान समय में कोई अर्थ नहीं रह गया है। जब धरती अपने पैरों तले कांप रही हो तो कोई भी स्थिर नहीं रह सकता।
पैर। अगर हम आगे नहीं बढ़ेंगे तो हमें पीछे हटना पड़ेगा। और यह कहना अजीब और भयानक है कि सुसंस्कृत पुरुष...
हमारे समय के विचारकों का एक प्रकार यह है कि वे अपनी सूक्ष्म तर्कशक्ति से समाज को न केवल मूर्तिपूजा की ओर, बल्कि आदिम बर्बरता की स्थिति की ओर वापस ले जा रहे हैं।
आज के प्रमुख विचारकों की यह प्रवृत्ति उनके विचारों में सबसे अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

उस घटना के प्रति दृष्टिकोण जिसमें जीवन की सामाजिक अवधारणा की सभी अपर्याप्तता प्रस्तुत की गई है
उनका सबसे सघन रूप – यानी युद्ध के प्रति, राष्ट्रों के सामान्य शस्त्रीकरण के प्रति और सार्वभौमिक अनिवार्य सेवा के प्रति उनके दृष्टिकोण में।
इस घटना के प्रति आधुनिक विचारकों का अस्पष्ट, बल्कि कपटपूर्ण रवैया आश्चर्यजनक है।
सुसंस्कृत समाज में इसके तीन रूप देखने को मिलते हैं। एक वर्ग इसे यूरोप की विशेष राजनीतिक स्थिति से उत्पन्न एक आकस्मिक घटना के रूप में देखता है और मानता है कि इस स्थिति को सुधारा जा सकता है।
अंतर्राष्ट्रीय बाह्य उपायों द्वारा राष्ट्रों की संपूर्ण आंतरिक सामाजिक व्यवस्था में क्रांति लाना।
एक वर्ग कूटनीति को देखता है। दूसरा वर्ग इसे क्रूर और घिनौना मानता है, लेकिन साथ ही साथ इसे नियति और अपरिहार्य भी मानता है, जैसे बीमारी और मृत्यु। तीसरा वर्ग, जो पूरी तरह उदासीन है, युद्ध को अपरिहार्य मानता है।
यह एक ऐसी घटना है, जिसके प्रभाव लाभकारी हैं और इसलिए यह वांछनीय है।
पुरुष इस विषय को अलग-अलग दृष्टिकोण से देखते हैं, लेकिन सभी एक समान रूप से युद्ध के बारे में इस तरह बात करते हैं मानो वह
यह उन लोगों की इच्छा से पूरी तरह स्वतंत्र है जो इसमें भाग लेते हैं। और परिणामस्वरूप वे उस स्वाभाविक प्रश्न को भी स्वीकार नहीं करते जो हर साधारण व्यक्ति के मन में उठता है, "मेरे बारे में क्या? क्या मुझे ऐसा करना चाहिए?"
क्या कोई इसमें हिस्सा ले सकता है?" उनके विचार में इस तरह का कोई सवाल ही नहीं उठता, और हर व्यक्ति, चाहे वह कैसा भी हो
जो लोग युद्ध को व्यक्तिगत दृष्टिकोण से देखते हैं, उन्हें इस विषय पर अधिकारियों की आवश्यकताओं के प्रति अंधभक्तिपूर्वक समर्पण करना चाहिए।
विचारकों के पहले वर्ग का दृष्टिकोण, जो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर युद्ध से बाहर निकलने का रास्ता देखते हैं,
लंदन में आयोजित अंतिम शांति कांग्रेस की रिपोर्ट और 1891 में रेव्यू डेस रेव्यूज़ के अंक 8 में प्रकाशित युद्ध संबंधी लेखों और पत्रों में कूटनीतिक उपायों का अच्छी तरह से वर्णन किया गया है। कांग्रेस के बाद
विभिन्न क्षेत्रों से विद्वानों के मौखिक और लिखित विचारों को एकत्रित करने से एक मार्ग प्रशस्त हुआ।
एक धार्मिक समारोह के माध्यम से कार्यवाही संपन्न हुई, और पाँच दिनों तक लगातार भाषण सुनने के बाद, उन्होंने कार्यवाही समाप्त की।
सार्वजनिक रात्रिभोज और भाषणों के माध्यम से। उन्होंने निम्नलिखित प्रस्तावों को अपनाया:
“1. कांग्रेस इस बात पर अपने विश्वास की पुष्टि करती है कि मानव बंधुत्व में एक आवश्यक तत्व शामिल है।
परिणामस्वरूप राष्ट्रों का भाईचारा स्थापित हुआ।
“2. कांग्रेस मानव जाति की नैतिक और राजनीतिक प्रगति पर ईसाई धर्म के महत्वपूर्ण प्रभाव को स्वीकार करती है, और सुसमाचार प्रचारकों और अन्य धार्मिक व्यक्तियों से आग्रह करती है कि वे इसका पालन करें।”
शिक्षकों को मनुष्यों के प्रति शांति और सद्भावना के सिद्धांतों को स्थापित करने का कर्तव्य सौंपा गया है। और यह अनुशंसा करता है कि...
कि दिसंबर महीने का तीसरा रविवार इस उद्देश्य के लिए आरक्षित किया जाए।
“3. कांग्रेस का मत है कि इतिहास के सभी शिक्षकों को इस ओर ध्यान दिलाना चाहिए...
युद्ध द्वारा हर युग में मानवता पर थोपी गई गंभीर बुराइयों के प्रति युवावस्था से लेकर इस तथ्य तक कि ऐसा युद्ध
अत्यंत अपर्याप्त कारणों के लिए लड़े गए।

“4. कांग्रेस स्कूलों में शारीरिक व्यायाम के रूप में सैन्य अभ्यास के उपयोग का विरोध करती है, और अर्ध-सैन्य प्रकृति के बजाय जीवन बचाने के लिए ब्रिगेड के गठन का सुझाव देती है; और आग्रह करती है कि...
परीक्षा के लिए प्रश्न तैयार करने वाले परीक्षकों के बोर्ड को इस बात से अवगत कराना कितना आवश्यक है
बच्चों के मन को शांति के सिद्धांतों की शिक्षा देने की उपयुक्तता।
“5. कांग्रेस का मानना है कि मानवाधिकारों का सिद्धांत यह मांग करता है कि आदिवासी और
कमजोर जातियों, उनके क्षेत्रों और स्वतंत्रता को अन्याय और धोखाधड़ी से बचाया जाएगा, और यह सुनिश्चित किया जाएगा कि ये
अन्य जातियों को उन बुराइयों से बचाया जाना चाहिए जो तथाकथित उन्नत मानव जातियों में व्यापक रूप से प्रचलित हैं। यह इस बात पर भी दृढ़ विश्वास व्यक्त करता है कि राष्ट्रों के बीच समन्वयपूर्ण कार्रवाई होनी चाहिए।
इन उद्देश्यों की पूर्ति। कांग्रेस प्रस्तावों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती है।

अफ्रीका के लोगों की स्थिति में सुधार लाने के उद्देश्य से हाल ही में ब्रुसेल्स में दास प्रथा विरोधी सम्मेलन आयोजित किया गया।
“6. कांग्रेस का मानना है कि युद्ध जैसी पूर्वाग्रह और परंपराएं जो अभी भी पोषित हैं...
विभिन्न राष्ट्रीयताओं और विधायी सभाओं में या प्रेस के माध्यम से जनमत के नेताओं द्वारा किए गए गलत बयानों को अक्सर युद्ध का अप्रत्यक्ष कारण माना जाता है, और इन बुराइयों का मुकाबला किया जाना चाहिए।
राष्ट्रों के बीच गलतफहमियों को दूर करने की दिशा में सटीक जानकारी का प्रकाशन, और
इस प्रकार के उद्देश्य से एक अंतरराष्ट्रीय समाचार पत्र शुरू करने के प्रश्न पर विचार करने के महत्व की सिफारिश करता है।
“7. कांग्रेस अंतर-संसदीय सम्मेलन को प्रस्ताव करती है कि अधिकतम समर्थन दिया जाना चाहिए
वजन और माप, मुद्रा, शुल्क, डाक और तार संबंधी एकीकरण के लिए प्रत्येक परियोजना को दिया गया
ऐसी व्यवस्थाएँ आदि, जो लोगों के वाणिज्यिक, औद्योगिक और वैज्ञानिक संघ के गठन में सहायक होंगी।
“8. महिलाओं के व्यापक सामाजिक और नैतिक प्रभाव को देखते हुए, कांग्रेस प्रत्येक महिला से आग्रह करती है कि वे
महिलाओं को शांति के लिए आवश्यक चीजों को बनाए रखने में सक्षम होना चाहिए, अन्यथा वे सैन्यवाद की व्यवस्थाओं की निरंतरता के लिए गंभीर रूप से उत्तरदायी होंगी।
“9 कांग्रेस आशा व्यक्त करती है कि वित्तीय सुधार संघ और अन्य समान संगठन
यूरोप और अमेरिका के समाजों को आयात शुल्क में कमी करके राज्यों के बीच न्यायसंगत वाणिज्यिक संबंध स्थापित करने के उपायों पर विचार करने के लिए एकजुट होना चाहिए। कांग्रेस का मानना है कि वह ऐसा कर सकती है।
इस बात की पुष्टि की जाती है कि संपूर्ण यूरोप शांति चाहता है और दमन की प्रतीक्षा में अधीर है।
शस्त्र, जो रक्षा के बहाने आपसी संघर्ष को जीवित रखकर स्वयं ही खतरा बन जाते हैं
अविश्वास, और साथ ही, उस सामान्य आर्थिक अशांति का कारण है जो श्रम और गरीबी की समस्याओं के संतोषजनक समाधान में बाधा डालती है, जिन्हें प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
बाकी सभी।

“10. कांग्रेस, यह मानते हुए कि व्यापक निरस्त्रीकरण शांति की सर्वोत्तम गारंटी होगी और इससे उन मुद्दों का समाधान होगा जो वर्तमान में राज्यों को सबसे अधिक विभाजित करते हैं, यह इच्छा व्यक्त करती है कि एक
यूरोप के सभी राज्यों के प्रतिनिधियों की एक कांग्रेस को यथाशीघ्र बुलाया जाए ताकि विचार-विमर्श किया जा सके।
क्रमिक व्यापक निरस्त्रीकरण को प्रभावी बनाने के साधन।
“11. कांग्रेस ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि किसी एक शक्ति की कायरता विलंब कर सकती है
उपर्युक्त कांग्रेस के अधिवेशन का मत है कि सरकार को सबसे पहले बर्खास्त कर देना चाहिए।
सैनिकों की कोई भी पर्याप्त संख्या यूरोप और मानवता के लिए एक उल्लेखनीय लाभ प्रदान करेगी, क्योंकि यह
जनमत के दबाव में, यह अन्य सरकारों को इसके उदाहरण का अनुसरण करने के लिए बाध्य करेगा, और इस सिद्ध तथ्य की नैतिक शक्ति के कारण इसकी राष्ट्रीय रक्षा की स्थिति कम होने के बजाय बढ़ जाएगी।
“12. निरस्त्रीकरण के प्रश्न पर विचार करते हुए, और सामान्य रूप से शांति के प्रश्न पर विचार करते हुए, कांग्रेस निम्नलिखित पर निर्भर करती है:
जनमत शांति संगठनों के साथ-साथ शांति के सभी मित्रों को इसके प्रचार में सक्रिय रहने की सलाह देता है, विशेषकर संसदीय चुनावों के समय, ताकि मतदाता अपना मत दे सकें।
उन उम्मीदवारों को वोट दें जिन्होंने शांति, निरस्त्रीकरण और मध्यस्थता का समर्थन करने का वादा किया है।
“13. कांग्रेस, पिछले अप्रैल में वाशिंगटन में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय अमेरिकी सम्मेलन द्वारा अपनाए गए प्रस्ताव पर शांति के मित्रों को बधाई देती है, जिसके द्वारा यह सिफारिश की गई थी कि मध्यस्थता
सभी विवादों में, चाहे उनका मूल कुछ भी हो, यह अनिवार्य होना चाहिए, सिवाय उन विवादों के जो खतरे में डाल सकते हैं।
इसमें शामिल देशों में से किसी एक की स्वतंत्रता।
“14. कांग्रेस इस प्रस्ताव को यूरोपीय राजनेताओं के ध्यान में लाने की अनुशंसा करती है, और यह प्रबल इच्छा व्यक्त करती है कि अन्य देशों के बीच भी इसी प्रकार की संधियाँ शीघ्र ही संपन्न हों।”
दुनिया।
“15. कांग्रेस स्पेनिश सीनेट द्वारा 16 जून को पारित एक विधि प्रस्ताव को अपनाने पर संतोष व्यक्त करती है, जो सरकार को सामान्य या विशेष मध्यस्थता संधियों पर बातचीत करने के लिए अधिकृत करता है।
राज्यों की स्वतंत्रता या आंतरिक शासन से संबंधित विवादों को छोड़कर सभी विवादों का निपटारा।
इससे प्रभावित हुए; साथ ही नॉर्वे के स्टॉर्थिंग और इटली के चैंबर द्वारा इसी तरह के प्रस्तावों को अपनाने से भी।

“16. कांग्रेस यह संकल्प लेती है कि प्रमुख राजनीतिक, धार्मिक, वाणिज्यिक, श्रम एवं शांति संगठनों को पत्र लिखने के लिए एक समिति नियुक्त की जाए, जिसमें उनसे अनुरोध किया जाए कि वे भेजें
सरकारी अधिकारियों को याचिकाएँ भेजी गईं जिनमें उपयुक्त निकायों के गठन के लिए उपाय करने की प्रार्थना की गई।
अंतर्राष्ट्रीय मामलों के निपटारे के लिए न्यायाधिकरणों की स्थापना ताकि युद्ध का सहारा लेने से बचा जा सके।

“17. यह देखते हुए (1) कि सभी शांति समितियों का उद्देश्य न्यायिक व्यवस्था की स्थापना है
राष्ट्रों के बीच, और (2) कि अंतर्राष्ट्रीय संधियों द्वारा तटस्थीकरण इस दिशा में एक कदम है
न्यायिक राज्य और उन जिलों की संख्या कम करता है जिनमें युद्ध किया जा सकता है, कांग्रेस तटस्थता के नियम के व्यापक विस्तार की सिफारिश करती है, और यह इच्छा व्यक्त करती है, (1) कि सभी संधियाँ
जो वर्तमान में कुछ राज्यों को तटस्थता का लाभ सुनिश्चित करते हैं, उसे लागू रखते हैं, या यदि आवश्यक हो तो उसे लागू किया जा सकता है। तटस्थता को अधिक प्रभावी बनाने के लिए इसमें संशोधन किया गया है, या तो तटस्थता को विस्तारित करके।
(2) राज्य के संपूर्ण भाग को या उन किलों को ध्वस्त करने का आदेश देकर, जो तटस्थता की गारंटी से कहीं अधिक खतरा पैदा करते हैं; (2) संबंधित आबादी की इच्छाओं के अनुरूप नई संधियाँ करना।
अन्य राज्यों के प्रति तटस्थता स्थापित करने के लिए निष्कर्ष निकाला जा सकता है।
“18. उप-समिति प्रस्ताव करती है, (1) कि वार्षिक शांति कांग्रेस या तो वार्षिक उप-संसदीय सम्मेलन की बैठक से ठीक पहले, या उसके ठीक बाद आयोजित की जानी चाहिए।
वही शहर; (2) कि अंतर्राष्ट्रीय शांति प्रतीक का प्रश्न अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया जाए; (3) कि
निम्नलिखित प्रस्तावों को अपनाया जाए:
“क. संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रेस्बिटेरियन चर्च के आधिकारिक प्रस्तावों पर संतोष व्यक्त करना”
ईसाई जगत के प्रत्येक चर्च संगठन के सर्वोच्च प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए, एक सामान्य बैठक में एकजुट होने का आह्वान किया गया।
युद्ध के स्थान पर अंतरराष्ट्रीय मध्यस्थता को बढ़ावा देने के लिए सम्मेलन।
“ख. अंतर्राष्ट्रीय शांति और स्वतंत्रता संघ की समिति के सदस्य, महान इतालवी न्यायविद ऑरेलियो सैफी की स्मृति के प्रति कांग्रेस की ओर से अपनी गहरी श्रद्धा व्यक्त करना।”
“(4) इस कांग्रेस द्वारा अपनाए गए और राष्ट्रपति द्वारा हस्ताक्षरित ज्ञापन के अनुसार,
जहां तक संभव हो, सभ्य राज्यों को प्रत्येक शक्ति के समक्ष प्रभावशाली प्रतिनिधिमंडलों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाना चाहिए।
“(5) निम्नलिखित प्रस्तावों को अपनाया जाना है:
“क. कांग्रेस के विभिन्न सत्रों के अध्यक्षों को धन्यवाद प्रस्ताव।”
“ख. अध्यक्ष, सचिवों और कांग्रेस के ब्यूरो के सदस्यों को धन्यवाद प्रस्ताव।”
ग. अनुभागीय समितियों के संयोजकों और सदस्यों को धन्यवाद प्रस्ताव।
“डी. रेव. कैनन स्कॉट हॉलैंड, रेव. डॉ. रेउएन थॉमस और रेव. जे. को धन्यवाद का प्रस्ताव।”
कांग्रेस के समक्ष उनके उपदेशों के लिए मॉर्गन गिब्बन को, और साथ ही सेंट पॉल कैथेड्रल, सिटी टेम्पल और स्टैमफोर्ड हिल कांग्रेगेशनल चर्च के अधिकारियों को उन भवनों के उपयोग की अनुमति देने के लिए धन्यवाद।
सार्वजनिक सेवाएं।
ई. विंडसर कैसल घूमने की अनुमति देने के लिए महारानी को धन्यवाद पत्र।
“एफ. तथा लॉर्ड मेयर और लेडी मेयरस तथा श्री पासमोर को धन्यवाद का प्रस्ताव भी प्रस्तुत किया जाता है।”
एडवर्ड्स और अन्य मित्रों को, जिन्होंने कांग्रेस के सदस्यों को अपना आतिथ्य प्रदान किया है।

“19. कांग्रेस सर्वशक्तिमान ईश्वर के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती है, जिन्होंने सभा की बैठकों में उल्लेखनीय सामंजस्य और सद्भाव बनाए रखा है, जिनमें इतने
विभिन्न देशों, धर्मों, भाषाओं और नस्लों के कई पुरुष और महिलाएं घनिष्ठ सहभागिता में एकत्रित हुए हैं।
संचालन, और कांग्रेस के कार्यों के समापन के लिए; और यह अपने दृढ़ और अडिग रुख को व्यक्त करता है।
शांति के उद्देश्य और इन बैठकों में प्रतिपादित सिद्धांतों की अंतिम विजय में विश्वास।
सम्मेलन का मूल विचार (1) सभी लोगों के बीच सभी साधनों द्वारा प्रसार की आवश्यकता है।
युद्ध के नुकसान और शांति के महान आशीर्वाद के प्रति दृढ़ विश्वास, और (2) जागृति
सरकारों को युद्ध पर अंतरराष्ट्रीय मध्यस्थता की श्रेष्ठता और परिणामस्वरूप निरस्त्रीकरण की उपयुक्तता और आवश्यकता के प्रति जागरूक करना। पहले उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कांग्रेस शिक्षकों का सहारा लेती है।
इतिहास के बारे में, महिलाओं को और पादरियों को, और पादरियों को युद्ध की बुराई और उसके परिणामों पर उपदेश देने की सलाह दी गई।
दिसंबर के प्रत्येक तीसरे रविवार को शांति का आशीर्वाद दिया जाता है। दूसरे उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, कांग्रेस सरकारों से यह सुझाव देती है कि वे अपनी सेनाओं को भंग कर दें और युद्ध के स्थान पर मध्यस्थता को अपनाएं।

वे लोगों को युद्ध की बुराई और शांति के आशीर्वाद के बारे में उपदेश देने का प्रस्ताव रखते हैं! लेकिन शांति का आशीर्वाद तो मनुष्य को इतना अच्छी तरह से ज्ञात है कि जब से मनुष्य अस्तित्व में आए हैं, उनकी सबसे बड़ी इच्छा यही रही है।
अभिवादन में यही व्यक्त किया गया है, "आप पर शांति हो।" तो फिर इसके बारे में उपदेश क्यों देना?
हजारों साल पहले न केवल ईसाई, बल्कि गैर-ईसाई भी युद्ध की बुराई और शांति के आशीर्वाद को पहचानते थे। परिणामस्वरूप, सुसमाचार प्रचारकों को युद्ध की बुराई पर उपदेश देने की सलाह दी गई।
दिसंबर के हर तीसरे रविवार को युद्ध और शांति का आशीर्वाद कहना बिलकुल अनावश्यक है।
एक ईसाई को अपने जीवन के हर दिन उस विषय पर उपदेश देना चाहिए। यदि ईसाई और ईसाई धर्म के प्रचारक ऐसा नहीं करते हैं, तो इसके कुछ कारण अवश्य होंगे। और जब तक इन कारणों को दूर नहीं किया जाता, तब तक कोई भी ईसाई ऐसा नहीं कर सकता।
सिफारिशें प्रभावी होंगी। फिर भी, सरकारों को दी जाने वाली सिफारिशें कम प्रभावी होंगी।
अपनी सेनाओं को भंग कर दें और उनकी जगह अंतरराष्ट्रीय मध्यस्थता बोर्डों की स्थापना करें। सरकारें भी यह बात जानती हैं।
सेना जुटाने और उसे बनाए रखने की कठिनाई और बोझिलता से वे भलीभांति परिचित हैं, और यदि इस ज्ञान के बावजूद भी वे भीषण तनाव और प्रयास के बावजूद सेना जुटाते और उसे बनाए रखते हैं, तो यह स्पष्ट है कि
वे इसके अलावा कुछ नहीं कर सकते, और कांग्रेस की सिफारिश इसे कभी नहीं बदल सकती। लेकिन विद्वानों का मानना है कि
सज्जन लोग इस बात को मानने को तैयार नहीं हैं और एक ऐसे राजनीतिक गठबंधन की उम्मीद में बैठे हैं, जिसके माध्यम से सरकारों को अपनी शक्तियों को स्वयं सीमित करने के लिए प्रेरित किया जा सके।
“क्या हम युद्ध से छुटकारा पा सकते हैं?” रेव्यू डेस रेव्यूज़ में एक विद्वान लेखक पूछते हैं। “सभी इस बात पर सहमत हैं कि यदि ऐसा संभव हो तो

यदि यूरोप में कोई युद्ध छिड़ जाता है, तो इसके परिणाम बर्बरों के भीषण आक्रमणों के समान होंगे। संपूर्ण राष्ट्रों का अस्तित्व दांव पर लग जाएगा, और इसलिए युद्ध भयावह होगा।

खूनी और जघन्य।

“इस विचार के साथ-साथ आधुनिक विज्ञान द्वारा आविष्कृत विनाश के भयानक यंत्रों को देखते हुए,

इससे युद्ध की घोषणा में देरी होती है और वर्तमान अस्थायी स्थिति बनी रहती है, जो अनिश्चित काल तक जारी रह सकती है, सिवाय उन हथियारों के रखरखाव की भयावह लागत के जो

यूरोपीय राज्यों को थका देना और राष्ट्रों को दयनीय स्थिति में धकेलने की धमकी देना, जो लगभग इससे कम नहीं है

यानी युद्ध का ही स्वरूप।

इस विचार से प्रेरित होकर, विभिन्न देशों के लोगों ने इसे रोकने या कम से कम करने के उपाय खोजने का प्रयास किया है।

कम से कम, उस भयानक नरसंहार के परिणामों को कम करने के लिए, जिसका खतरा हम पर मंडरा रहा है।

"रोम में जल्द ही आयोजित होने वाले शांति सम्मेलन और 'सुर ले डिसार्ममेंट' नामक पुस्तिका के प्रकाशन से ये प्रश्न सामने आए हैं।"

“यह दुर्भाग्यपूर्ण रूप से निर्विवाद है कि यूरोपीय राज्यों के बहुमत के वर्तमान संगठन के साथ,

एक-दूसरे से अलग-थलग और विशिष्ट हितों द्वारा निर्देशित होने के कारण, युद्ध का पूर्ण दमन एक भ्रम है।

जिसके साथ धोखा करना खतरनाक होगा। हालांकि, राष्ट्रों के बीच होने वाले इन द्वंद्वों पर लागू किए गए बेहतर नियम और कानून कम से कम इसकी भयावहता को सीमित कर सकते हैं।

"निरस्त्रीकरण की उन परियोजनाओं पर भरोसा करना भी उतना ही काल्पनिक है, जिनका क्रियान्वयन असंभव हो जाता है।"

हमारे सभी पाठकों के मन में मौजूद लोकप्रिय विचारों के कारण यह लगभग असंभव है। (इसका संभवतः अर्थ यह है कि फ्रांस बदला लेने से पहले अपनी सेना भंग नहीं कर सकता।) जनमत

उन्हें स्वीकार करने के लिए तैयार हैं, और इसके अलावा, विभिन्न लोगों के बीच अंतरराष्ट्रीय संबंध ऐसे नहीं हैं।

ताकि उनकी स्वीकृति संभव हो सके। किसी राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र पर उसकी सुरक्षा को खतरे में डालने वाली परिस्थितियों में निरस्त्रीकरण थोपना युद्ध की घोषणा के समान होगा।

हालाँकि, यह स्वीकार किया जा सकता है कि संबंधित देशों के बीच विचारों का आदान-प्रदान सहायक हो सकता है।

किसी भी वार्ता के लिए आवश्यक अच्छी समझ स्थापित करने में, यह कुछ हद तक सहायक होगा, और

इससे सैन्य व्यय में काफी कमी संभव हो सकेगी, जो यूरोप के देशों को कुचल रहा है और सामाजिक समस्या के समाधान में बहुत बड़ी बाधा उत्पन्न कर रहा है, जिसे प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं हल करना होगा।

आंतरिक संघर्ष का दर्द, जो बाहरी रूप से उससे बचने की कीमत के रूप में चुकाना पड़ता है।

"हम कम से कम युद्ध के भारी खर्चों में कमी की मांग तो कर ही सकते हैं, क्योंकि वर्तमान में इसे इस तरह संगठित किया गया है कि चौबीस घंटे के भीतर आक्रमण करने और एक निर्णायक युद्ध लड़ने की शक्ति प्राप्त हो सके।"

युद्ध की घोषणा का सप्ताह।

हमें इस तरह से व्यवस्था करनी चाहिए कि राज्य अचानक हमला न कर सकें और चौबीस घंटे के भीतर एक-दूसरे के क्षेत्रों पर कब्जा न कर सकें।

इस व्यावहारिक विचार को मैक्सिम डु कैम्प ने प्रस्तुत किया है, और उनका लेख इसी विचार के साथ समाप्त होता है।

एम. डू कैम्प के प्रस्ताव निम्नलिखित हैं:

1. एक राजनयिक सम्मेलन जो हर साल आयोजित किया जाएगा।

2. जिस घटना ने युद्ध को उकसाया है, उसके दो महीने बाद तक युद्ध की घोषणा नहीं की जाएगी। (यहाँ कठिनाई यह है कि...)
यह तय करना सबसे महत्वपूर्ण होगा कि वास्तव में किस घटना ने युद्ध को भड़काया, क्योंकि जब भी युद्ध की घोषणा होती है तो ऐसी कई घटनाएं होती हैं, और यह तय करना होगा कि दो महीने की अवधि की गणना किस आधार पर की जाए।
अंतराल।)

3. किसी भी युद्ध की घोषणा तब तक नहीं की जाएगी जब तक कि उसमें भाग लेने की तैयारी कर रहे राष्ट्रों के बीच जनमत संग्रह न हो जाए।

4. युद्ध की आधिकारिक घोषणा के एक महीने बाद तक कोई शत्रुतापूर्ण कार्रवाई शुरू नहीं की जाएगी।

“युद्ध की घोषणा नहीं की जाएगी। कोई शत्रुता शुरू नहीं की जाएगी,” इत्यादि। लेकिन यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी किसकी है कि युद्ध न हो।

क्या घोषित किया जाए? लोगों को यह और वह करने के लिए कौन बाध्य करेगा? राज्यों को एक निश्चित समय के लिए अपने कार्यों में देरी करने के लिए कौन मजबूर करेगा? बाकी सभी राज्य। लेकिन ये सभी अन्य राज्य भी हैं जो चाहते हैं
नियंत्रण में रखना, सीमाओं के भीतर रखना और बाध्य करना भी। उन्हें बाध्य कौन करेगा और कैसे? जनता
लेकिन अगर कोई जनमत सरकारों को एक निश्चित अवधि के लिए अपने अभियानों में देरी करने के लिए मजबूर कर सकता है, तो वही जनमत सरकारों को युद्ध की घोषणा न करने के लिए भी मजबूर कर सकता है।

लेकिन, इसका उत्तर यह होगा कि शक्ति का ऐसा संतुलन, ऐसी शक्ति संतुलन हो सकता है, जो कि
राज्यों को अपनी मर्जी से पीछे हटने के लिए मजबूर करना। खैर, यह कोशिश की जा चुकी है और अभी भी की जा रही है। पवित्र गठबंधन बस यही था; शांति संघ भी इसी का एक और प्रयास था, और इसलिए
पर।

लेकिन, इसका उत्तर दिया जाएगा, मान लीजिए कि सभी सहमत हो गए। यदि सभी सहमत हो जाते तो कोई युद्ध नहीं होता।
बिल्कुल, और मध्यस्थता की भी कोई आवश्यकता नहीं है।

“मध्यस्थता न्यायालय! युद्ध का स्थान मध्यस्थता लेगी। प्रश्नों का निर्णय न्यायालय द्वारा किया जाएगा।”
मध्यस्थता। अलबामा का मामला एक मध्यस्थता न्यायालय द्वारा तय किया गया था, और इस मामले का प्रश्न...
कैरोलाइन द्वीप समूह का मामला पोप के निर्णय के अधीन कर दिया गया है। स्विट्जरलैंड, बेल्जियम, डेनमार्क और हॉलैंड सभी ने घोषणा की है कि वे युद्ध के बजाय मध्यस्थता को प्राथमिकता देते हैं।
मुझे लगता है कि मोनाको ने भी यही प्राथमिकता व्यक्त की है। दुर्भाग्यवश, जर्मनी...
रूस, ऑस्ट्रिया और फ्रांस ने अभी तक ऐसी प्रवृत्ति नहीं दिखाई है। यह आश्चर्यजनक है कि जब आवश्यक हो तो मनुष्य स्वयं को कैसे धोखा दे सकते हैं! सरकारें अपने मतभेदों को सुलझाने के लिए सहमति देती हैं।

मध्यस्थता और अपनी सेनाओं को भंग करने के लिए! रूस और पोलैंड के बीच, इंग्लैंड के बीच मतभेद
और आयरलैंड, ऑस्ट्रिया और बोहेमिया के बीच, तुर्की और स्लाव राज्यों के बीच, फ्रांस और
जर्मनी को सौहार्दपूर्ण सुलह से शांत किया जा सकता है!
व्यापारियों और बैंकरों को यह सुझाव देना भी उतना ही तर्कसंगत है कि वे कुछ भी न बेचें और उसे अधिक कीमत पर बेचें।
जितना उन्होंने इसके लिए दिया, उससे अधिक उन्हें बिना लाभ के धन का वितरण करना चाहिए और इसे समाप्त कर देना चाहिए।
पैसा, क्योंकि इससे वह अनावश्यक हो जाएगा।
लेकिन चूंकि वाणिज्यिक और बैंकिंग संचालन में लागत से अधिक कीमत पर बेचने के अलावा और कुछ नहीं होता है।
कीमत के मामले में, यह उन्हें खुद को दबाने के लिए आमंत्रित करने के बराबर होगा। यही बात इसके संदर्भ में भी लागू होती है।
सरकारों को यह सुझाव देना कि उन्हें हिंसा का सहारा नहीं लेना चाहिए, बल्कि अपनी गलतफहमियों को निष्पक्षता के अनुसार सुलझाना चाहिए, उन्हें स्वयं को समाप्त करने के लिए आमंत्रित करने के समान है।
शासक ऐसा करने के लिए कभी सहमत नहीं हो सकते, और कोई भी सरकार ऐसा करने के लिए कभी भी सहमति नहीं दे सकती।
विद्वान लोग समाज बनाते हैं (ऐसे सौ से अधिक समाज हैं), और एकत्रित होते हैं।
सम्मेलनों (जैसे कि हाल ही में लंदन और पेरिस में आयोजित हुए और जल्द ही रोम में आयोजित होने वाले सम्मेलन) में भाग लेना, भाषण देना, सार्वजनिक भोज में शामिल होना और प्रवचन देना, पत्रिकाएँ प्रकाशित करना और हर संभव तरीके से अपनी बात साबित करना।
जिन देशों को लाखों सैनिकों का समर्थन करने के लिए मजबूर होना पड़ता है, वे अपनी सहनशक्ति की चरम सीमा तक तनावग्रस्त हो जाते हैं।
इन विशाल सशस्त्र बलों का रखरखाव जनता के सभी उद्देश्यों, हितों और इच्छाओं के विपरीत है, और यह भी कि कई लेख लिखकर और बहुत कुछ कहकर इसे संभव बनाया जा सकता है।
अनेक शब्दों का प्रयोग करके सभी लोगों को एकमत करना और इस प्रकार व्यवस्था करना कि उनमें कोई शत्रुता न रहे।
हितों की रक्षा हो, और फिर युद्ध नहीं होगा।

63

जब मैं छोटा लड़का था, तो मुझे बताया गया कि अगर मुझे किसी पक्षी को पकड़ना है, तो मुझे उसकी पूंछ पर नमक लगाना होगा। मैं हाथ में नमक लेकर पक्षियों के पीछे भागा, लेकिन जल्द ही मुझे यकीन हो गया कि अगर मैं पक्षी की पूंछ पर नमक लगा सकता हूँ, तो मैं उसे पकड़ भी सकता हूँ।
मुझे यह बात समझ में आ गई और मुझे एहसास हुआ कि मेरे साथ धोखा हुआ है।
मध्यस्थता और निरस्त्रीकरण पर लिखी किताबें और लेख पढ़ते समय लोगों को भी इसी तथ्य का एहसास होना चाहिए।
यदि किसी पक्षी की पूंछ पर नमक लगाया जा सकता, तो इसका कारण यह होता कि वह उड़ नहीं सकता था और कोई
इसे पकड़ना मुश्किल है। अगर पक्षी के पंख होते और वह पकड़ा जाना नहीं चाहता, तो वह किसी को अपनी पूंछ पर नमक नहीं लगाने देता, क्योंकि पक्षी की विशेषता उड़ना है। ठीक उसी तरह,
सरकार का काम आज्ञापालन कराना नहीं, बल्कि आज्ञापालन लागू कराना है। और सरकार तभी तक सरकार कहलाती है जब तक...

यह अपने ऊपर नियंत्रण पा सकता है, और इसलिए यह हमेशा इसके लिए प्रयासरत रहता है और कभी भी स्वेच्छा से अपने दायित्वों का त्याग नहीं करेगा।

सत्ता। लेकिन चूंकि सरकार की शक्ति सेना पर निर्भर करती है, इसलिए वह कभी भी सेना को नहीं छोड़ेगी, और न ही युद्ध में सेना के उपयोग को।

यह त्रुटि विद्वान न्यायविदों द्वारा स्वयं को और दूसरों को धोखा देने से उत्पन्न होती है, यह दावा करके कि

सरकार असल में वह नहीं है जो वह दर्शाती है, यानी एक समूह द्वारा दूसरे समूह पर अत्याचार करना, बल्कि, जैसा कि विज्ञान ने दिखाया है, यह नागरिकों की सामूहिक क्षमता का प्रतिनिधित्व है।

वे दूसरों को इस बात के लिए मनाते रहे हैं कि अंततः वे स्वयं भी इस बात से सहमत हो गए हैं; और इस प्रकार वे

अक्सर लोग गंभीरता से यह मान लेते हैं कि सरकार न्याय के सिद्धांतों से बंधी हो सकती है। लेकिन इतिहास दिखाता है कि सीज़र से नेपोलियन तक, और नेपोलियन से बिस्मार्क तक, सरकार अपने मूल स्वरूप में हमेशा एक

न्याय का उल्लंघन करते हुए बल का कार्य करना, और यह अन्यथा नहीं हो सकता। न्याय किसी पर बाध्यकारी बल नहीं रख सकता।

एक शासक या शासक जो लोगों को भ्रमित रखते हैं और उन्हें हिंसा के कृत्यों के लिए तैयार रखते हैं - सैनिक, और

वे दूसरों को नियंत्रित करने के लिए इन साधनों का उपयोग करते हैं। इसलिए सरकारें कभी भी इन प्रशिक्षित गुलामों की संख्या कम करने के लिए सहमत नहीं हो सकतीं, जो उनकी संपूर्ण शक्ति और महत्व का आधार हैं।

हमारे समाज में व्याप्त विरोधाभास के प्रति कुछ विद्वानों का यही दृष्टिकोण है।

कुचल दिया गया है, और यही उनके इसे सुलझाने के तरीके हैं। इन लोगों से कहो कि सारा मामला आज सबके सामने रखे गए नैतिक और धार्मिक प्रश्न के प्रति प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत दृष्टिकोण पर निर्भर करता है।

प्रश्न यह है कि क्या उसके लिए सैन्य सेवा में अपना हिस्सा लेना वैध है या अवैध, और ये

विद्वान सज्जन कंधे उचका देंगे और आपकी बात सुनने या जवाब देने की जहमत नहीं उठाएंगे। उनके विचार में इस प्रश्न का समाधान भाषण पढ़ने, किताबें लिखने, चुनाव करने आदि में निहित है।

अध्यक्षों, उपाध्यक्षों और सचिवों से मिलना और पहले एक शहर में और फिर दूसरे शहर में बैठक और भाषण देना।

एक और। इन सभी भाषणों और लेखन से, उनके विचारों के अनुसार, यह निष्कर्ष निकलेगा कि

सरकारें उन सैनिकों की भर्ती बंद कर देंगी जिन पर उनकी पूरी ताकत निर्भर करती है, उनकी बातों को सुनेंगी और अपनी सेनाओं को भंग कर देंगी, जिससे वे न केवल अपने खिलाफ बल्कि दूसरों के खिलाफ भी किसी भी रक्षा के बिना रह जाएंगी।

न केवल पड़ोसियों के खिलाफ, बल्कि अपने ही नागरिकों के खिलाफ भी। मानो डाकुओं का एक गिरोह हो, जिनके पास कुछ निहत्थे लोग हों। यात्रियों को, जो बंधे हुए हैं और लूटे जाने के लिए तैयार हैं, उनकी रस्सियों से होने वाले दर्द की शिकायतों से इतना प्रभावित होना चाहिए कि उन्हें फिर से जाने दिया जाए।

फिर भी ऐसे लोग हैं जो इस बात पर विश्वास करते हैं, शांति सम्मेलनों में व्यस्त रहते हैं, भाषण पढ़ते हैं,

और किताबें लिखते हैं। और सरकारें, हम निश्चित रूप से कह सकते हैं, उनके प्रति सहानुभूति व्यक्त करती हैं और उन्हें प्रोत्साहित करने का दिखावा करती हैं। ठीक उसी तरह जैसे वे संयम समितियों का समर्थन करने का ढोंग करती हैं, जबकि वे स्वयं जीवित हैं।

मुख्यतः लोगों के नशे पर; और शिक्षा को प्रोत्साहित करने का दिखावा करते हैं, जबकि उनका पूरा

शक्ति अज्ञान पर आधारित है; और संवैधानिक स्वतंत्रता का समर्थन करने के लिए, जब उनकी शक्ति इस पर टिकी होती है
स्वतंत्रता का अभाव; और श्रमिक वर्गों की स्थिति में सुधार के लिए चिंतित होना, जबकि उनका अस्तित्व ही उनके उत्पीड़न पर निर्भर करता है; और ईसाई धर्म का समर्थन करना, जबकि ईसाई धर्म
सभी सरकारों को नष्ट कर देता है।
ऐसा करने के लिए उन्होंने बहुत पहले ही संयम को प्रोत्साहित करने के तरीके विकसित कर लिए थे, जो नशे को दबा नहीं सकते; शिक्षा को समर्थन देने के तरीके, जो न केवल अज्ञानता को रोकने में विफल रहते हैं, बल्कि
इसे और भी बढ़ा सकते हैं; स्वतंत्रता और संवैधानिकवाद को प्राप्त करने के तरीके, जो इसमें कोई बाधा नहीं हैं।
निरंकुशता; श्रमिक वर्गों की रक्षा के ऐसे तरीके, जो उन्हें गुलामी से मुक्त नहीं करेंगे; और एक ऐसा ईसाई धर्म भी, जिसे उन्होंने विकसित किया है, जो सरकारों को नष्ट नहीं करता, बल्कि उनका समर्थन करता है।

64

अब सरकार के पास प्रोत्साहित करने के लिए एक और चीज़ है - शांति। आजकल जो शासक अपने सरकारी मंत्रियों से सलाह लेते हैं, वे अपनी इच्छा से ही तय करते हैं कि नरसंहार जारी रहेगा या नहीं।
लाखों लोगों की शांति वार्ता इसी वर्ष या अगले वर्ष शुरू होने वाली है। वे अच्छी तरह जानते हैं कि शांति पर ये सभी चर्चाएँ
जब उन्हें उचित लगे तो लाखों पुरुषों को मौत के घाट उतारने से ये बातें उन्हें नहीं रोकेंगी। वे इन बातों को संतुष्टिपूर्वक सुनते हैं, इन्हें प्रोत्साहित करते हैं और इनमें भाग भी लेते हैं।
यह सब, नुकसानदेह होने के बजाय, सरकारों के लिए फायदेमंद भी है, क्योंकि इससे लोगों का ध्यान इस ओर जाता है।
सबसे महत्वपूर्ण और अत्यावश्यक प्रश्न से: क्या सैन्य सेवा के लिए बुलाए गए प्रत्येक व्यक्ति को सेना में सेवा करने के लिए तैयार होना चाहिए या नहीं?
“गठबंधनों और सम्मेलनों, पुस्तकों और पर्चों की बदौलत जल्द ही शांति स्थापित हो जाएगी; इस बीच
जाओ और अपनी वर्दी पहनो, और हमारे फायदे के लिए कष्ट पहुँचाने और उसे सहने के लिए तैयार हो जाओ," यह है
सरकार का तर्क यही है। और जो विद्वान सम्मेलन आयोजित करते हैं और लेख लिखते हैं, वे भी इससे पूरी तरह सहमत हैं।
यह एक विशेष समूह के विचारकों का दृष्टिकोण है। और चूंकि यही सबसे अधिक लाभदायक है
यह सरकारों द्वारा सबसे अधिक प्रोत्साहित किया जाने वाला प्रस्ताव भी है, और सभी बुद्धिमान सरकारों द्वारा भी इसे प्रोत्साहित किया जाता है।
युद्ध के प्रति एक अन्य दृष्टिकोण में कुछ दुखद पहलू भी हैं। कुछ लोग मानते हैं कि प्रेम
शांति और युद्ध की अनिवार्यता एक भयावह विरोधाभास पैदा करती है, और यही मनुष्य का भाग्य है।
अधिकांशतः ये प्रतिभाशाली और संवेदनशील पुरुष होते हैं, जो युद्ध की सारी भयावहता, मूर्खता और क्रूरता को देखते और समझते हैं, लेकिन मन की किसी विचित्र विकृति के कारण न तो इस स्थिति से निकलने का कोई रास्ता देखते हैं और न ही खोजने का प्रयास करते हैं।
और वे मानवता की दयनीय स्थिति पर जोर देकर घाव को कुरेदने में आनंद लेते प्रतीत होते हैं।
युद्ध के प्रति ऐसे दृष्टिकोण का उल्लेखनीय उदाहरण प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखक गाइ डे के लेखन में मिलता है।
मौपासांत। अपनी नौका से फ्रांसीसी सैनिकों के अभ्यास और फायरिंग अभ्यास को देखते हुए उनके मन में निम्नलिखित विचार आते हैं:

जब मैं केवल इस शब्द युद्ध के बारे में सोचता हूँ, तो मुझ पर एक प्रकार का भय छा जाता है, मानो मैं सुन रहा हूँ...
जादू-टोने की कोई कहानी, धर्म जांच की कोई कहानी, कोई बहुत पुरानी, दूरस्थ, घृणित घटना, राक्षसी, अप्राकृतिक घटना।
जब नरभक्षण की बात होती है, तो हम गर्व से मुस्कुराते हैं, और इन बर्बरों पर अपनी श्रेष्ठता का दावा करते हैं।
असली बर्बर कौन हैं: वे जो पराजितों को खाने के लिए लड़ते हैं, या वे जो मारने के लिए लड़ते हैं?
सिर्फ मारने के लिए?
"दूर कतारों में घूम रहे वे युवा रंगरूट भेड़ों के झुंड की तरह मौत के मुंह में जाने के लिए अभिशप्त हैं।"
कसाई उन्हें सड़क पर घसीटते हुए ले जाएगा। वे किसी मैदान में सिर में तलवार का घाव या किसी अन्य घाव के साथ गिर पड़ेंगे।
सीने में गोली लगी। और ये ऐसे नौजवान हैं जो काम कर सकते थे, उत्पादक और उपयोगी हो सकते थे।
पिता बूढ़े और गरीब हैं। उनकी माताएँ, जिन्होंने बीस वर्षों तक उनसे प्रेम किया है, उन्हें माँ की तरह ही प्यार से पूजा है, छह महीने में, या शायद एक साल में, यह जान जाएँगी कि उनका बेटा, उनका लाडला, उनका बड़ा बेटा
इतनी मेहनत, इतने खर्च और इतने प्यार से पाला-पोसा गया, उसे किसी मुर्दे की तरह गड्ढे में फेंक दिया गया है।
एक कुत्ते को गोली लगने से आंतें चीर दी गईं, और घुड़सवार सेना के हमलों में कुचलकर गूदे के ढेर में बदल दिया गया। उन्होंने उसके बेटे को, उसके प्यारे बेटे को, उसकी इकलौती उम्मीद को, उसके गौरव को और उसकी जान को क्यों मार डाला?
पता नहीं। आह, क्यों?
"युद्ध! लड़ाई! नरसंहार! मानव संहार! और अब, हमारी इस सदी में, हमारी सभ्यता के साथ, विज्ञान के प्रसार के साथ, और दर्शनशास्त्र के उस स्तर के साथ, जिसे मनुष्य की प्रतिभा माना जाता है।"
प्रशिक्षण प्राप्त कर लेना, हत्या करने का प्रशिक्षण देने वाले स्कूल, बहुत दूर से हत्या करना, पूर्णता तक पहुँच जाना, एक साथ बड़ी संख्या में लोगों को मारना,
बिना किसी मुकदमे के, परिवार वाले निर्दोष बेचारे आदमियों को मार डाला जाता है।
और सबसे हैरान करने वाली बात यह है कि लोग अपनी सरकारों के खिलाफ विद्रोह नहीं करते। आखिर राजतंत्र और गणतंत्र में क्या अंतर है?
सबसे हैरान करने वाली बात यह है कि पूरा देश
समाज युद्ध शब्द के विरोध में विद्रोह नहीं कर रहा है।
आह! हम हमेशा अपने बर्बर पूर्वजों की प्राचीन और घृणित रीति-रिवाजों, आपराधिक पूर्वाग्रहों और क्रूर विचारों के बोझ तले दबे रहेंगे, क्योंकि हम जानवर हैं, और जानवर ही बने रहेंगे।
सहज प्रवृत्ति से प्रेरित और किसी भी चीज़ से न बदलने वाला। विक्टर ह्यूगो के अलावा और कौन ऐसा हो सकता था?
क्या मुक्ति और सत्य की उस शक्तिशाली पुकार के लिए उन्हें निर्वासित किया गया? आज बल को हिंसा कहा जाता है, और उसे न्याय के कटघरे में खड़ा किया जा रहा है; युद्ध को उसके कटघरे में खड़ा किया गया है। मानव जाति की अपील पर, सभ्यता युद्ध को दोषी ठहराती है। और विजेताओं और सेनापतियों पर लगाए गए अपराधों की एक लंबी सूची तैयार करता है। राष्ट्र हैं

यह समझना कि अपराध की भयावहता उसे कम नहीं कर सकती; कि यदि हत्या एक अपराध है, तो अनेकों की हत्या कोई राहत देने वाली परिस्थिति नहीं हो सकती; कि यदि डकैती शर्मनाक है, तो आक्रमण शर्मनाक नहीं हो सकता।

शानदार! आह! आइए हम इन परम सत्यों की घोषणा करें; आइए हम युद्ध को अपमानित करें!

“व्यर्थ क्रोध,” मौपासांत आगे कहते हैं, “एक कवि का आक्रोश। युद्ध को पहले से कहीं अधिक सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है।”

"उस क्षेत्र में निपुण, प्रतिभावान वधकार, वॉन मोल्टके, शांति के जवाब में"

प्रतिनिधियों ने एक बार ये अजीबोगरीब शब्द कहे:

“युद्ध पवित्र है, युद्ध ईश्वर द्वारा निर्धारित है। यह दुनिया के सबसे पवित्र कानूनों में से एक है। यह कायम रखता है...”

पुरुषों में सभी महान और नेक भावनाएँ - सम्मान, भक्ति, सद्गुण और साहस - व्याप्त करती हैं और उन्हें सुरक्षित रखती है।

सबसे भयावह भौतिकवाद में डूबने से बाल-बाल बचा।

तो फिर, लाखों पुरुषों को झुंड में इकट्ठा करके, दिन-रात बिना आराम किए, बिना कुछ सोचे, बिना कुछ पढ़े, बिना कुछ सीखे, बिना कुछ पढ़े, किसी के काम के बिना, वे चलते रहते हैं।

गंदगी में लोटना, कीचड़ में सोना, निरंतर सुस्ती की अवस्था में जानवरों की तरह रहना, शहरों को लूटना,

जलते हुए गाँव, पूरी आबादी को तबाह करते हुए, फिर मानव शरीर के एक और विशाल समूह से टकराते हुए, उन पर टूट पड़ते हुए, रक्त के तालाब बनाते हुए, और कुचले हुए कीचड़ से सने मांस के मैदान बनाते हुए, जो लाशों के ढेर से लाल हो जाते हैं।

आपके हाथ या पैर काट दिए जाना, बिना किसी के फायदे के आपके दिमाग को उड़ा दिया जाना, और मर जाना

जब आपके बूढ़े माता-पिता, आपकी पत्नी और बच्चे भूख से मर रहे हों, तब किसी खेत के कोने में छिपकर रहना - यही सबसे घिनौने भौतिकवाद में न पड़ने का अर्थ है!

“योद्धा संसार के अभिशाप हैं। हम प्रकृति, अज्ञानता और सभी बाधाओं के विरुद्ध संघर्ष करते हैं।

हमारे दुखमय जीवन को कुछ हद तक आसान बनाने के लिए। विद्वान पुरुष - सभी के हितैषी - अपना जीवन व्यतीत करते हैं।

वे अपने साथियों की सहायता करने, उनके लिए उपयोगी होने और उनकी स्थिति में सुधार लाने के लिए प्रयासरत रहते हैं। वे अपने उपयोगी कार्य के प्रति निःसंकोच समर्पित रहते हैं, एक के बाद एक नई खोज करते हैं और अपने ज्ञान का विस्तार करते हैं।

मानव बुद्धि के क्षेत्र में विज्ञान की सीमाओं का विस्तार करते हुए, हर दिन कुछ नया ज्ञान जुड़ता जाता है।

ज्ञान का संचय, प्रतिदिन समृद्धि, आराम और अपने देश के लिए शक्ति प्राप्त करना।

“युद्ध छिड़ गया। छह महीनों में जनरलों ने बीस वर्षों के प्रयासों के फल को नष्ट कर दिया,

धैर्य और प्रतिभा।

"इसी को कहते हैं कि सबसे घिनौने भौतिकवाद में नहीं पड़ना चाहिए।"

हमने युद्ध देखा है। हमने देखा है कि लोग दरिंदों में बदल जाते हैं, उन्मादी हो जाते हैं, मजे के लिए, आतंक फैलाने के लिए, हत्याएं करते हैं।

दिखावे के लिए बहादुरी। फिर जब न्याय का अस्तित्व ही नहीं रहता, कानून मर जाता है, न्याय की हर धारणा का अंत हो जाता है।

गायब हो गए। हमने देखा है कि लोग सड़क पर मिले निर्दोष जीवों को गोली मार देते हैं, और उन पर शक करते हैं क्योंकि वे

डरे हुए थे। हमने उन्हें अपने मालिकों के दरवाजों पर जंजीरों से बंधे कुत्तों को मारते देखा है, सिर्फ अपनी नई रिवाल्वर आज़माने के लिए। हमने उन्हें खेत में लेटी गायों पर बिना किसी कारण के, सिर्फ गोली चलाने के लिए, गोलियां चलाते देखा है।

एक मजाक।

"इसी को कहते हैं कि सबसे घिनौने भौतिकवाद में नहीं पड़ना चाहिए।"

“हमने देखा है कि लोग किसी देश में घुसकर उस व्यक्ति का गला काट देते हैं जो अपने घर की रक्षा कर रहा होता है क्योंकि वह

वह एक ब्लाउज पहनता है और उसके सिर पर सैन्य टोपी नहीं है, वह उन दुखी प्राणियों के घरों को जला रहा है जो

खाने को कुछ नहीं, फर्नीचर तोड़ना और सामान चुराना, तहखानों में मिली शराब पीना, सड़कों पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न करना, हजारों फ्रैंक मूल्य का बारूद जलाना और दुख फैलाना।

और अपने साथ हैजा का खतरा लेकर।

"इसी को कहते हैं कि सबसे घिनौने भौतिकवाद में नहीं पड़ना चाहिए।"

“उन योद्धाओं ने ऐसा क्या किया है जिससे उनकी बुद्धिमत्ता का जरा भी प्रमाण मिलता हो? कुछ नहीं। उन्होंने क्या आविष्कार किया है? तोपें और बंदूकें। बस इतना ही।”

ग्रीस से हमारे पास क्या बचा है? किताबें और मूर्तियाँ। क्या ग्रीस अपनी विजयों के कारण महान है या अपनी

रचनाएँ?

क्या फारसियों के आक्रमणों ने ही ग्रीस को सबसे भयावह स्थिति में गिरने से बचाया था?

भौतिकवाद?

क्या बर्बरों के आक्रमणों ने ही रोम को बचाया और पुनर्जीवित किया?

क्या नेपोलियन प्रथम ने ही दार्शनिकों द्वारा शुरू किए गए महान बौद्धिक आंदोलन को आगे बढ़ाया था?

पिछली सदी के अंत का?

66

"जी हां, वास्तव में, चूंकि सरकार इस प्रकार लोगों को नष्ट करने का अधिकार मान लेती है, इसलिए इस तथ्य में कुछ भी आश्चर्यजनक नहीं है कि लोग सरकारों को नष्ट करने का अधिकार मान लेते हैं।"

“वे अपना बचाव करते हैं। वे सही हैं। किसी को भी दूसरों पर शासन करने का पूर्ण अधिकार नहीं है। ऐसा होना चाहिए...”

यह कार्य केवल शासितों के हित में ही किया जाना चाहिए। और युद्ध से बचना उतना ही आवश्यक है जितना कि किसी जहाज के कप्तान का जहाज डूबने से बचना।

जब कोई कप्तान अपने जहाज को बर्बाद होने देता है, तो उसे दोषी ठहराया जाता है और दंडित किया जाता है, यदि वह दोषी पाया जाता है। लापरवाही या अक्षमता भी।

“युद्ध की हर घोषणा के बाद सरकार पर मुकदमा क्यों नहीं चलाया जाना चाहिए? अगर जनता

समझ गए कि, अगर वे खुद हत्यारी सरकारों पर फैसला सुनाते हैं, अगर वे इनकार करते हैं तो

यदि वे अपने हथियार उन लोगों के विरुद्ध उठा लें जिन्होंने उन्हें ये हथियार दिए हैं, तो वे स्वयं व्यर्थ ही मारे जाएँगे।

अगर उन्हें नरसंहार के लिए दंडित किया जाता, तो उस दिन युद्ध समाप्त हो जाता। लेकिन वह दिन कभी नहीं आएगा।

लेखक युद्ध की सारी भयावहता को देखता है। वह देखता है कि यह सरकारों द्वारा पुरुषों को जबरन युद्ध में धकेलने के कारण होता है।

धोखा देकर उन्हें वध के लिए भेजा जाता है और बिना किसी लाभ के वे मारे जाते हैं। और वह यह भी देखता है,
कि सेना में शामिल लोग सरकारों के खिलाफ हथियार उठा सकते हैं और उन्हें न्याय के कटघरे में खड़ा कर सकते हैं। लेकिन उनका मानना है कि ऐसा कभी नहीं होगा, और इसलिए इससे बचने का कोई रास्ता नहीं है।
वर्तमान स्थिति। "मुझे लगता है कि युद्ध भयानक है, लेकिन यह अपरिहार्य है; कि अनिवार्य सैन्य सेवा
यह मृत्यु के समान ही अपरिहार्य है, और चूंकि सरकार हमेशा युद्ध चाहेगी, इसलिए युद्ध हमेशा अस्तित्व में रहेगा।"
इस प्रतिभाशाली और ईमानदार लेखक ने, जो गहराई तक पहुंचने की उस शक्ति से संपन्न हैं, यही लिखा है।
विषयों का वह अंतर्मन जो काव्य प्रतिभा का सार है। वह हमारे सामने उन सभी को प्रस्तुत करता है।
पुरुषों की नैतिक भावना और उनके कार्यों के बीच असंगति की क्रूरता, लेकिन इसे दूर करने का प्रयास किए बिना।
ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्वीकार करता है कि यह असंगति अवश्य मौजूद होनी चाहिए और यही जीवन की काव्यात्मक त्रासदी है।
एक अन्य उतने ही प्रतिभाशाली लेखक, एडुआर्ड रॉड, क्रूरता और पागलपन का और भी अधिक सजीव चित्रण करते हैं।
वर्तमान स्थिति के बारे में। वह भी केवल इसके दुखद पहलुओं को प्रस्तुत करने का ही लक्ष्य रखता है, बिना किसी संकेत या अभिकल्पना के।
इस पद से उत्पन्न होने वाली किसी भी समस्या का पूर्वानुमान लगाना।
किसी भी कार्य को करने का क्या लाभ है? किसी भी उद्यम को शुरू करने का क्या लाभ है? और कैसे...
क्या हमें इन कठिन समयों में पुरुषों से प्यार करना चाहिए जब हर नया दिन खतरे की घंटी लेकर आता है?... हमारे पास बस इतना ही है
जो शुरुआत हुई है, जो योजनाएँ हम बना रहे हैं, हमारी कार्य योजनाएँ, जो थोड़ा-बहुत अच्छा काम हम कर पाए हैं, क्या वह सब आने वाले तूफान में बह नहीं जाएगा?... धरती हर जगह काँप रही है।
हमारे पैरों के नीचे और क्षितिज पर तूफानी बादल मंडरा रहे हैं जो हम पर जरा भी दया नहीं दिखाएंगे।
आह! काश हमें सिर्फ उस क्रांति से ही डरना होता जिसे एक प्रेत की तरह हमारे सामने पेश किया जाता है! चूंकि मैं
मैं अपने समाज से अधिक घृणित समाज की कल्पना नहीं कर सकता, मुझे इसके स्थान पर आने वाले समाज के बारे में चिंता से अधिक संशय है। यदि मुझे इस परिवर्तन से पीड़ित होना पड़े, तो मुझे यह सोचकर सांत्वना मिलेगी कि
उस दिन के जल्लाद पिछली बार के शिकार थे, और बेहतर भविष्य की उम्मीद में जी रहे थे।
इससे हमें सबसे बुरे हालातों का सामना करने में मदद मिलेगी। लेकिन मुझे उस दूर के खतरे से डर नहीं लगता। मुझे एक और खतरा दिखाई देता है, जो करीब और कहीं अधिक क्रूर है - अधिक क्रूर इसलिए क्योंकि इसका कोई बहाना नहीं है, क्योंकि यह बेतुका है, क्योंकि यह
इससे कुछ बुरा हो सकता है। हर दिन व्यक्ति कल के युद्ध की संभावनाओं का आकलन करता है, हर दिन वे बनते जाते हैं।
और भी निर्दयी।
"हमारी सदी के अंत में आने वाली तबाही के सामने कल्पना विद्रोह कर देती है, क्योंकि यही हमारा लक्ष्य है।"
हमारे युग की प्रगति के बावजूद, हमें इसका सामना करने की आदत डालनी होगी। पिछले बीस वर्षों से हर संसाधन का उपयोग किया जा रहा है। विनाशकारी यंत्रों के आविष्कार में विज्ञान का सारा प्रयास समाप्त हो चुका है, और जल्द ही तोपों के कुछ ही गोले विनाशकारी हथियारों का खात्मा कर सकते हैं।
यह पूरी सेना को नष्ट करने के लिए पर्याप्त होगा। अब कुछ हज़ार बेचारे सैनिकों को उनके खून की कीमत चुकाकर हथियारबंद नहीं रखा जाता, बल्कि पूरे राष्ट्र एक-दूसरे का गला काटने के लिए हथियारबंद हैं।

अब उनका समय (अनिवार्य सेवा द्वारा) छीन लिया गया है ताकि बाद में उनका जीवन भी छीन लिया जाए।
उन्हें नरसंहार के लिए तैयार किया जाता है, उन्हें यह विश्वास दिलाकर कि उनसे नफरत की जाती है, उनकी नफरत को भड़काया जाता है। और शांतिप्रिय लोग इस तरह बहकावे में आ जाते हैं और एक-दूसरे पर क्रूरता से टूट पड़ते हैं।
जंगली जानवर; शांतिपूर्ण नागरिकों की उग्र टुकड़ियाँ एक खोखले आदेश पर हथियार उठा लेती हैं, कुछ लोगों के लिए
सीमाओं या औपनिवेशिक व्यापारिक हितों का बेतुका सवाल – भगवान ही जाने क्या होगा... वे ऐसे चले जाएंगे

10 ऑन द वॉटर, पृ. 71-80.

67

भेड़ों को वध के लिए ले जाया जा रहा है, उन्हें पता है कि वे कहाँ जा रही हैं, उन्हें पता है कि वे अपनी पत्नियों को छोड़ रही हैं, उन्हें पता है कि उनके बच्चे भोजन के लिए तरसेंगे, वे आशंकाओं से भरी हैं, फिर भी अच्छे कर्मों के नशे में चूर हैं।
उनके कानों में बार-बार झूठ भरा जा रहा है। वे बिना विद्रोह किए, निष्क्रिय और निराश होकर आगे बढ़ेंगे - हालाँकि संख्या और शक्ति उनकी है, और अगर वे एक साथ सहयोग करना जानते तो शायद वे ऐसा कर भी सकते थे।
कूटनीति की बर्बर छल-कपट के बजाय विवेक और भाईचारे का शासन स्थापित करें।
वे इतने भ्रमित, इतने धोखे में आकर युद्ध में उतरेंगे कि वे नरसंहार को अपना कर्तव्य मानेंगे और पूछेंगे...
उनकी रक्तपिपासा पर ईश्वर का आशीर्वाद। वे युद्ध के लिए आगे बढ़ेंगे, अपनी बोई हुई फसलों को रौंदते हुए, अपने बनाए हुए शहरों को जलाते हुए - विजय के गीतों, उत्सवपूर्ण संगीत और जयजयकार के साथ।
उल्लास। और उनके पुत्र उन लोगों की मूर्तियाँ बनवाएँगे जिन्होंने उनके नरसंहार में सबसे अधिक योगदान दिया है।
"पूरी पीढ़ी का भविष्य उस घड़ी पर निर्भर करता है जब कोई दुर्भाग्यशाली राजनेता अपना पक्ष रख सकता है।"
वह संकेत जिसका अनुसरण किया जाएगा। हम जानते हैं कि हममें से सर्वश्रेष्ठ लोगों को मार गिराया जाएगा और हमारा काम गर्भ में ही नष्ट हो जाएगा। हम यह जानते हैं और क्रोध से कांपते हैं, लेकिन हम कुछ नहीं कर सकते। हम जकड़े हुए हैं।
सरकारी तंत्र और लालफीताशाही की पेचीदगियों से तंग आकर, हमें मुक्त करने के लिए एक बहुत बड़ा झटका ही काफी होगा। हम गुलाम हैं। हमने अपनी सुरक्षा के लिए जो कानून बनाए, वही हमारे लिए उत्पीड़न बन गए हैं। हम उस निरंकुश अमूर्त अवधारणा, राज्य के मात्र उपकरण हैं, जो सभी की इच्छा के नाम पर प्रत्येक व्यक्ति को गुलाम बनाता है।
यदि व्यक्तिगत रूप से देखा जाए तो वे सभी ठीक इसके विपरीत इच्छा रखेंगे जो उन्हें करने के लिए मजबूर किया जाएगा।
“और अगर केवल एक पीढ़ी का ही बलिदान देना होता तो! लेकिन इससे भी कहीं अधिक गंभीर हित दांव पर लगे हैं।”
“वे वेतनभोगी राजनेता, वे महत्वाकांक्षी राजनीतिज्ञ, जो जनता की बुरी भावनाओं का शोषण करते हैं, और
सुंदर-सुंदर वाक्यांशों से भ्रमित मूर्खों ने राष्ट्रीय झगड़ों को इतना कड़वा बना दिया है कि
कल के युद्ध में एक पूरी जाति का अस्तित्व दांव पर होगा। उन तत्वों में से एक जो इसे गठित करते हैं
आधुनिक दुनिया खतरे में है, पराजित लोग अस्तित्व से मिट जाएंगे, और चाहे जो भी हो, हम एक नैतिक शक्ति का विनाश होते देखेंगे, मानो अच्छाई के लिए काम करने वाली शक्तियां बहुत अधिक हों - हम

एक नया यूरोप ऐसी अन्यायपूर्ण, क्रूर, रक्तपातपूर्ण और इतनी कलंकित नींव पर बनेगा।
यह एक जघन्य अपराध है, जो आज के यूरोप से भी बदतर होना चाहिए - अधिक अन्यायपूर्ण, अधिक बर्बर, अधिक हिंसक।
"इस प्रकार व्यक्ति अत्यधिक निराशा के बोझ तले कुचला हुआ महसूस करता है। हम एक सांस्कृतिक संघर्ष में फंसे हुए हैं।
छतों से बंदूकें हम पर ताने खड़ी हैं। हमारा श्रम उन नाविकों के समान है जो डूबते जहाज के बीच अपना अंतिम कार्य कर रहे हों। हमारे सुख उस दोषी पीड़ित के समान हैं, जिसे अपना
फांसी से पंद्रह मिनट पहले स्वादिष्ट व्यंजनों का चुनाव। पीड़ा से विचार क्षत-विक्षत हो गए हैं, और
इसकी अधिकतम क्षमता गणना करने की है – सरकारी मंत्रियों के अस्पष्ट वाक्यांशों की व्याख्या करना, वर्तनी करना आदि।
सम्राटों के भाषणों का सार निकालना और समाचार पत्रों की अनिश्चित प्रामाणिकता पर प्रकाशित राजनयिकों के शब्दों पर मनन करना - चाहे वह कल हो या परसों, यह
अगले साल या उससे भी अगले साल, हमारी हत्या कर दी जाएगी। परिणामस्वरूप, इतिहास में व्यर्थ ही इसका कोई प्रमाण खोजना संभव है।
यह युग और भी असुरक्षित और पीड़ा के बोझ तले और भी कुचला हुआ है।"11
यहां यह बताया गया है कि सत्ता उन लोगों के हाथों में है जो स्वयं अपना विनाश करते हैं।
जनसमूह का निर्माण करने वाले व्यक्तियों के हाथों में बुराई का स्रोत है; यह बताया गया है कि बुराई का स्रोत है
सरकार। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि जीवन और विवेक के बीच का विरोधाभास उस सीमा तक पहुँच गया है जिसके आगे यह नहीं जा सकता, और इस सीमा तक पहुँचने के बाद इसका कोई न कोई समाधान अवश्य खोजना होगा।
लेकिन लेखक ऐसा नहीं सोचते। वे इसमें मानव जीवन की त्रासदी देखते हैं, और सभी पहलुओं को चित्रित करने के बाद...
इस भयावह स्थिति को देखकर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि मानव जीवन को इसी भयावहता के बीच व्यतीत करना होगा।
युद्ध को त्रासदीपूर्ण और नियति द्वारा निर्धारित घटना मानने वालों के दृष्टिकोण के बारे में बस इतना ही।
तीसरी श्रेणी में वे पुरुष शामिल हैं जिन्होंने अपनी सारी अंतरात्मा खो दी है और परिणामस्वरूप, सभी सामान्य व्यवहार भी खो दिए हैं।
मानवता की भावना और संवेदना।
इस श्रेणी में मोल्टके आते हैं, जिनके मत का उल्लेख मौपासांत ने ऊपर किया है, और अधिकांश सैन्य अधिकारी, जिन्हें इस क्रूर अंधविश्वास में शिक्षित किया गया है, इसी के अनुसार जीवन यापन करते हैं, और परिणामस्वरूप
अक्सर लोग सरलता से यह मान लेते हैं कि युद्ध न केवल अपरिहार्य है, बल्कि एक आवश्यक भी है।
लाभकारी बात है। यह तथाकथित शिक्षित और सुसंस्कृत लोगों सहित कुछ आम नागरिकों का भी मत है।

11 जीवन का अर्थ, पृ. 208-13.

यहां वह बात है जो प्रख्यात शिक्षाविद कैमिल्ले डौसेट ने रेव्यू डेस रेव्यूज़ के संपादक को जवाब में लिखी थी, जहां युद्ध पर कई पत्र एक साथ प्रकाशित हुए थे:

"प्रिय महोदय:

जब आप सबसे कम युद्धप्रिय शिक्षाविदों से पूछते हैं कि क्या वे युद्ध के समर्थक हैं, तो उनका जवाब होता है...

पहले से ज्ञात।

"अफ़सोस! महोदय, आप स्वयं ही अपने उदार देशवासियों को प्रेरित करने वाले शांतिपूर्ण आदर्श को एक सपने के रूप में वर्णित करते हैं।"

अपने जीवनकाल में मैंने बहुत से नेक लोगों को इस भयावह प्रथा के विरुद्ध विरोध करते हुए सुना है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हो रही क्रूरता, जिसे सभी स्वीकार करते हैं और जिसकी निंदा करते हैं; लेकिन इसका निवारण कैसे किया जा सकता है?

"अक्सर, द्वंद्वयुद्ध को दबाने के प्रयास भी किए गए हैं; कोई सोच सकता है कि यह एक आसान काम होगा।"

लेकिन बिलकुल नहीं! उस महान उद्देश्य के लिए अब तक जो कुछ भी किया गया है, वह कभी उपयोगी नहीं रहा है और न ही कभी उपयोगी होगा।

दोनों गोलार्धों की सभी कांग्रेसें युद्ध के खिलाफ और द्वंद्वयुद्ध के खिलाफ भी मतदान कर सकती हैं, लेकिन सबसे बढ़कर

मध्यस्थता, सम्मेलनों और कानूनों में हमेशा व्यक्तिगत सम्मान रहेगा, जिसने हमेशा द्वंद्वयुद्ध की मांग की है, और राष्ट्रों के हित रहेंगे, जो हमेशा युद्ध की मांग करेंगे।

मैं अपने हृदय की गहराइयों से यही कामना करता हूँ कि सार्वभौमिक शांति कांग्रेस सफल हो।

अंततः अपने अत्यंत सम्मानजनक और कठिन कार्य में सफल हुआ।

“मैं हूँ, महोदय, इत्यादि।”

“कैमिल डौसेट”

इसका नतीजा यह है कि व्यक्तिगत सम्मान के लिए पुरुषों को लड़ना आवश्यक है, और राष्ट्रों के हित के लिए उन्हें एक-दूसरे को नष्ट और समाप्त करना आवश्यक है। जहाँ तक युद्ध को समाप्त करने के प्रयासों की बात है, वे केवल एक

मुस्कान।

एक अन्य प्रसिद्ध शिक्षाविद, जूल्स क्लेरेटी की राय भी इसी प्रकार की है।

“प्रिय महोदय (वे लिखते हैं):

"समझदार व्यक्ति के लिए शांति और युद्ध के विषय पर केवल एक ही राय हो सकती है।"

“मानवता को जीने के लिए, स्वतंत्र रूप से जीने के लिए, और शांतिपूर्ण श्रम द्वारा अपने भाग्य को परिपूर्ण और बेहतर बनाने के लिए बनाया गया है।

सार्वभौमिक शांति कांग्रेस द्वारा प्रचारित सामान्य सद्भाव शायद एक सपना ही है, लेकिन कम से कम यह एक सपना तो है।

सभी सपनों में सबसे सुंदर। मनुष्य हमेशा प्रतिज्ञा की भूमि की ओर देखता रहता है, और वहीं फसलें होती हैं।

बिना किसी डर के पकते हैं कि गोले से फट जाएंगे या तोप के पहियों से कुचल दिए जाएंगे... लेकिन! आह! लेकिन चूंकि दार्शनिक और परोपकारी लोग नियंत्रणकारी शक्तियां नहीं हैं, इसलिए हमारे सैनिकों का हमारी रक्षा करना बेहतर है।

सीमा और घर, और उनके हथियार, जिनका कुशलतापूर्वक उपयोग किया जाता है, शायद उस शांति की सबसे पुख्ता गारंटी हैं जो हम सभी को चाहिए।

प्यार।

"शांति केवल बलवान और दृढ़ निश्चयी लोगों को ही प्राप्त होने वाला उपहार है।"

“मैं हूँ, महोदय, इत्यादि।”

“जूल्स क्लेरेटी”

इस पत्र का सार यह है कि उन विषयों पर बात करने में कोई बुराई नहीं है जिन पर किसी का कोई इरादा नहीं है या जिन्हें कोई अनिवार्य नहीं मानता।

करने के लिए। लेकिन जब अभ्यास की बात आती है, तो हमें संघर्ष करना होगा।

और अब यहाँ यूरोप के सबसे लोकप्रिय उपन्यासकार, एमिल ज़ोला द्वारा हाल ही में व्यक्त किया गया विचार है:

मैं युद्ध को एक घातक आवश्यकता मानता हूँ, जो हमारे लिए अपरिहार्य प्रतीत होता है क्योंकि इसका हमारे साथ घनिष्ठ संबंध है।

मानव स्वभाव और दुनिया की संपूर्ण संरचना। काश युद्ध को कुछ समय के लिए टाला जा सकता।

यथासंभव अधिकतम समय तक। फिर भी, वह क्षण अवश्य आएगा जब हमें युद्ध में जाने के लिए विवश होना पड़ेगा। मैं इस समय इसे सार्वभौमिक मानवता के दृष्टिकोण से देख रहा हूँ, और इसमें हमारे किसी भी पक्ष का उल्लेख नहीं कर रहा हूँ।

जर्मनी के साथ गलतफहमी – मानव इतिहास में एक अत्यंत तुच्छ घटना है। मैं कहता हूँ कि युद्ध

यह आवश्यक और लाभकारी है, क्योंकि यह मानवता के अस्तित्व की मूलभूत शर्तों में से एक प्रतीत होता है। युद्ध हमारे सामने हर जगह मौजूद है, न केवल विभिन्न जातियों और लोगों के बीच युद्ध, बल्कि निजी और पारिवारिक जीवन में भी युद्ध।

यह प्रगति के प्रमुख तत्वों में से एक प्रतीत होता है, और मानवता ने अब तक जो भी कदम आगे बढ़ाया है, वह रक्तपात के साथ ही आगे बढ़ा है।

“पुरुषों ने निरस्त्रीकरण की बात की है, और अभी भी करते हैं, जबकि निरस्त्रीकरण एक असंभव चीज है।”

जिसे, यदि संभव भी हो, तो हमें स्वीकार नहीं करना चाहिए। मुझे विश्वास है कि विश्वव्यापी निरस्त्रीकरण एक प्रकार के नैतिक पतन को जन्म देगा, जो स्वयं को प्रकट करेगा।

सामान्य दुर्बलता, और मानवता की प्रगतिशील उन्नति में बाधा उत्पन्न करेगी। एक युद्धप्रिय राष्ट्र के पास

एथेंस और रोम में हमेशा से ही मजबूत और समृद्ध रहा है। युद्ध कला ने अन्य सभी कलाओं के विकास में योगदान दिया है। इतिहास इसका साक्षी है। इसलिए एथेंस और रोम में वाणिज्य, विनिर्माण और साहित्य कभी भी पिछड़ते नहीं रहे।

वे शहर विकास के इतने उच्च स्तर पर पहुँच गए थे कि बलपूर्वक उन्होंने पूरे विश्व पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था।

हथियारों का। अपने समय के निकट के एक उदाहरण के रूप में, हम लुई XIV के युग को याद कर सकते हैं। युद्ध

महान राजशाही के सदस्य न केवल कला और विज्ञान की प्रगति में बाधक नहीं थे, बल्कि इसके विपरीत, ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने उनके विकास को बढ़ावा दिया और उनका समर्थन किया।

इसलिए युद्ध एक लाभकारी चीज है!

लेकिन इस दृष्टिकोण की सबसे अच्छी अभिव्यक्ति इस स्कूल के सबसे प्रतिभाशाली लेखक, शिक्षाविद डी वोग्यू के विचार में मिलती है। प्रदर्शनी के सैन्य अनुभाग पर लिखे एक लेख में वे यही लिखते हैं।

1889:

“एस्प्लेनेड डेस इनवैलिड्स पर, विदेशी और औपनिवेशिक शिविरों के बीच, एक अधिक गंभीर शैली की इमारत सुरम्य बाज़ार को भयभीत कर देती है; दुनिया के ये सभी टुकड़े एक जगह इकट्ठा हो गए हैं।”

युद्ध महल, और बदले में हमारे मेहमान मुख्य भवन के सामने विनम्रतापूर्वक पहरा देते हैं, लेकिन

जो लोग यहां नहीं होते। यह बयानबाजी के विपरीत, उन मानवतावादियों के लिए एक बढ़िया विषय है जो ऐसा कर सकते थे।

इस विरोधाभास पर विलाप करने से न चूकें, और यह कहने से भी न चूकें कि '12 ceci tuera cela', यानी विज्ञान और श्रम के माध्यम से राष्ट्रों का मिलन युद्ध की प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त करेगा। आइए उन्हें इसे संजोने दें।

स्वर्ण युग का भ्रम, जो अगर साकार हो सका तो जल्द ही कीचड़ का युग बन जाएगा। सारा इतिहास

यह हमें सिखाता है कि एक दूसरे के लिए बनाया गया है, कि राष्ट्रों के मिलन को मजबूत करने और उसे सुदृढ़ बनाने के लिए रक्त की आवश्यकता होती है। प्राकृतिक विज्ञान ने आज के समय में उस रहस्यमय नियम की पुष्टि की है जो जोसेफ डी मैस्ट्रे को बताया गया था।

अपनी प्रतिभा की अंतर्ज्ञान और मूलभूत सत्यों पर ध्यान लगाकर, उन्होंने दुनिया को स्वयं को उद्धार करते हुए देखा।

बलिदान द्वारा वंशानुगत पतन; विज्ञान दर्शाता है कि यह संघर्ष और हिंसक चयन के माध्यम से पूर्णता की ओर अग्रसर होता है; दोनों में एक ही नियम का कथन है, जिसे अलग-अलग सूत्रों में व्यक्त किया गया है।

यह कथन निस्संदेह अप्रिय है; लेकिन दुनिया के नियम हमारी खुशी के लिए नहीं बने हैं, वे तो बस हमारी ज़रूरतों के लिए हैं।

हमारी प्रगति के लिए बनाया गया। आइए, युद्ध के इस अपरिहार्य, आवश्यक महल में प्रवेश करें; हम अवलोकन कर सकेंगे।

इस प्रकार हमारी सबसे दृढ़ प्रवृत्ति भी, अपनी शक्ति खोए बिना, ऐतिहासिक युगों की बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप रूपांतरित और अनुकूलित हो जाती है।

एम. डी वोग्यू के विचारों के अनुसार, युद्ध की आवश्यकता को दो महान हस्तियों द्वारा अच्छी तरह से व्यक्त किया गया है।

जोसेफ डी मैस्ट्रे और डार्विन जैसे लेखक, जिनके कथन उन्हें इतने पसंद हैं कि वे उन्हें बार-बार उद्धृत करते हैं:

“प्रिय महोदय (वे रेव्यू डेस रेव्यूज़ के संपादक को लिखते हैं):

“आप मुझसे शांति की सार्वभौमिक कांग्रेस की संभावित सफलता के बारे में मेरा विचार पूछते हैं। मैं इस बात से सहमत हूँ कि...”

डार्विन का यह मत था कि हिंसक संघर्ष प्रकृति का एक नियम है जो अन्य सभी नियमों को रद्द कर देता है; मैं जोसेफ डी के साथ सहमत हूँ।

मैस्ट्रे, यह एक दैवीय नियम है; एक ही चीज़ का वर्णन करने के दो अलग-अलग तरीके। यदि किसी असंभव तरीके से

मान लीजिए कि मानव समाज का एक अंश – मानो संपूर्ण सभ्य पश्चिमी देश – इस नियम के प्रभाव को निलंबित करने में सफल हो जाता है, तो प्रबल प्रवृत्ति वाली कुछ नस्लें इसे लागू करने का कार्य अपने हाथ में ले लेंगी।

वे जातियाँ हमारे विरुद्ध कार्रवाई करेंगी। वे मानव तर्क के विरुद्ध प्रकृति के तर्क को सिद्ध करेंगी;

यह सफल होगा, क्योंकि शांति की निश्चितता – मैं शांति नहीं, शांति की निश्चितता कह रहा हूँ – आधी सदी में एक ऐसा भ्रष्टाचार और पतन उत्पन्न करेगी जो मानवता के लिए उससे कहीं अधिक विनाशकारी होगा जितना कि...
युद्धों का सबसे बुरा रूप। मेरा मानना है कि हमें युद्ध के साथ भी वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा कि मानवता के आपराधिक कानून के साथ करना चाहिए, जैसा कि हम अपने सभी अन्य अधिकारों के साथ करते हैं।
आपराधिक कानूनों को नरम करें, उन्हें यथासंभव कम लागू करें; उनके प्रभाव को कम करने के लिए हर संभव प्रयास करें।

12. विक्टर ह्यूगो की रचना 'नोट्रे-डेम डे पेरिस' से उद्धृत वाक्यांश।

आवेदन अनावश्यक है। लेकिन इतिहास के सभी अनुभव हमें सिखाते हैं कि जब तक दो पुरुष धरती पर जीवित हैं, जिनके पास रोटी, पैसा और एक महिला है, तब तक उन्हें पूरी तरह से दबाया नहीं जा सकता।
“अगर कांग्रेस मुझे गलत साबित कर दे तो मुझे बहुत खुशी होगी। लेकिन मुझे संदेह है कि वह इतिहास को साबित कर पाएगी।”
प्रकृति भी गलती कर सकती है, और ईश्वर भी।

“मैं हूँ, महोदय, इत्यादि।”
वोग की ईएम

इसका अर्थ यह है कि इतिहास, मानव स्वभाव और ईश्वर हमें यह दिखाते हैं कि जब तक दो अस्तित्व हैं
पुरुष, रोटी, पैसा और एक स्त्री – युद्ध अवश्य होगा। कहने का तात्पर्य यह है कि कोई भी प्रगति पुरुषों को युद्ध की ओर नहीं ले जाएगी।
जीवन की उस बर्बर अवधारणा से ऊपर उठना, जो रोटी, धन (धन) की भागीदारी को महत्व नहीं देती है
इस संदर्भ में अच्छा) और महिला बिना लड़ाई के संभव है।
ये लोग बड़े अजीब हैं, जो सम्मेलनों में इकट्ठा होते हैं और हमें यह दिखाने के लिए भाषण देते हैं कि कैसे
पक्षियों की पूंछ पर नमक डालकर उन्हें पकड़ना, हालांकि उन्हें पता होना चाहिए कि ऐसा करना असंभव है। और
वे भी कितने अद्भुत हैं, जो मौपासांत, रॉड और कई अन्य लोगों की तरह, युद्ध की सारी भयावहता को, मनुष्यों द्वारा आवश्यक, सही और लाभकारी कार्य न करने की सारी असंगतता को स्पष्ट रूप से देखते हैं; जो विलाप करते हैं।
जीवन की त्रासदी पर ध्यान केंद्रित करते हुए, वे यह नहीं देखते कि पूरी त्रासदी का अंत हो गया है; ठीक उसी क्षण जब
पुरुष, अनावश्यक बातों पर ध्यान दिए बिना, वह करने से इनकार करते हैं जो उनके लिए घृणित और विनाशकारी है। वे सचमुच अद्भुत लोग हैं, लेकिन डी वोग्यू और अन्य जैसे लोग, जो यह दावा करते हैं कि...
विकासवाद का सिद्धांत युद्ध को न केवल अपरिहार्य बल्कि लाभकारी और इसलिए वांछनीय भी मानता है।
वे नैतिक विकृति में भयानक, घिनौने हैं। बाकी लोग कम से कम यह तो कहते हैं कि वे बुराई से नफरत करते हैं और प्यार करते हैं।
अच्छी बात है, लेकिन ये लोग खुलेआम घोषणा करते हैं कि अच्छाई और बुराई का कोई अस्तित्व नहीं है।
शाश्वत युद्ध के स्थान पर शांति की पुनः स्थापना की संभावना पर सभी चर्चाएँ –

मुहावरे गढ़ने वालों की हानिकारक भावुकता। विकास का एक नियम है जिसके अनुसार मुझे अवश्य ही
बुरे तरीके से जीना और काम करना; क्या किया जाए? मैं एक शिक्षित व्यक्ति हूँ, मैं विकास के नियम को जानता हूँ, और इसलिए मैं बुरे तरीके से काम करूँगा। “Entrons au palais de la guerre.” विकास का नियम है, और
इसलिए न तो अच्छा है और न ही बुरा, और व्यक्ति को अपने व्यक्तिगत अस्तित्व के लिए ही जीना चाहिए।
शेष को विकास के नियम की क्रिया पर छोड़ देना। यही परिष्कृत संस्कृति का अंतिम शब्द है, और इसके साथ ही, हमारे समय के शिक्षित वर्गों पर छाए विवेक के उस अंधकार का भी। इच्छा
शिक्षित वर्गों द्वारा अपने पसंदीदा विचारों और उन पर आधारित जीवन व्यवस्था का समर्थन करने के प्रयास में
अपनी चरम सीमाओं तक पहुँच गया है। वे झूठ बोलते हैं, और खुद को और एक दूसरे को सबसे सूक्ष्म रूपों से धोखा देते हैं।
छल, मात्र भ्रम पैदा करने के लिए, अंतरात्मा को सुन्न करने के लिए।
अपने जीवन को अपनी अंतरात्मा के अनुरूप ढालने के बजाय, वे हर संभव प्रयास करते हैं कि...
इसकी आवाज़ को दबा दो। लेकिन अंधेरे में ही प्रकाश चमकना शुरू होता है, और इसलिए प्रकाश हमारे ऊपर उदय हो रहा है।
युग।

अध्याय 7

अनिवार्य सेवा का महत्व

सार्वभौमिक अनिवार्य सेवा कोई राजनीतिक दुर्घटना नहीं है, बल्कि जीवन की सामाजिक अवधारणा में निहित विरोधाभास की चरम सीमा है – समाज में सत्ता का उद्गम – सत्ता का आधार शारीरिक हिंसा है – हिंसा के कृत्यों को अंजाम देने के लिए सत्ता को एक विशेष संगठन – सेना – की आवश्यकता होती है – सत्ता, अर्थात् हिंसा, वह सिद्धांत है जो जीवन की सामाजिक अवधारणा को नष्ट कर रहा है – जनता के प्रति सत्ता का रवैया, अर्थात् उत्पीड़ित श्रमिक वर्गों के प्रति सरकार का रवैया – सरकारें श्रमिक वर्गों में यह विचार पैदा करने का प्रयास करती हैं कि बाहरी शत्रुओं से उनकी रक्षा के लिए राज्य बल आवश्यक है – लेकिन सेना की मुख्य आवश्यकता सरकार को अपने ही नागरिकों – श्रमिक वर्गों – से बचाने के लिए होती है – एम. डी कैप्रिवी का भाषण – शासक वर्गों के सभी विशेषाधिकार हिंसा पर आधारित हैं – सार्वभौमिक सेवा के स्तर तक सेनाओं की वृद्धि – सार्वभौमिक अनिवार्य सेवा सामाजिक जीवन के उन सभी लाभों को नष्ट कर देती है जिन्हें सरकार संरक्षित करना चाहती है – अनिवार्य सेवा समर्पण की सीमा क्या है? क्योंकि राज्य के नाम पर सरकार मनुष्य के लिए अनमोल हर चीज का बलिदान मांगती है। क्या सरकार आवश्यक है? अनिवार्य सेवा में सरकार द्वारा मांगे गए बलिदानों का अब कोई तर्कसंगत आधार नहीं रह गया है। राज्य की मांगों के आगे न झुकने से कहीं अधिक लाभ प्राप्त होता है।

उच्च वर्गों के शिक्षित लोग बढ़ती हुई आवश्यकता की भावना को दबाने का प्रयास कर रहे हैं।
मौजूदा सामाजिक व्यवस्था को बदल रहा है। लेकिन जीवन, जो लगातार अधिक जटिल होता जा रहा है और विकसित हो रहा है।
उसी दिशा में, और मनुष्यों की असंगतियों और पीड़ाओं को बढ़ाता है, उन्हें उस स्थिति तक ले जाता है जहाँ से...
वह सीमा जिसके आगे वे नहीं जा सकते। असंगति की यह चरम सीमा सार्वभौमिक अनिवार्य सैन्य सेवा है।
आम तौर पर यह माना जाता है कि सार्वभौमिक सैन्य सेवा और उससे जुड़े हथियारों में वृद्धि,
इसके परिणामस्वरूप करों और राष्ट्रीय ऋणों में होने वाली वृद्धि एक क्षणिक घटना है, जो यूरोप की विशेष राजनीतिक स्थिति के कारण उत्पन्न हुई है, और इसे कुछ राजनीतिक संयोजनों द्वारा दूर किया जा सकता है।
जीवन की आंतरिक व्यवस्था में बिना किसी बदलाव के।
यह बिल्कुल गलत है। सार्वभौमिक सैन्य सेवा केवल जीवन की सामाजिक अवधारणा में निहित आंतरिक असंगति है, जो अपनी चरम सीमा तक पहुँच जाती है और एक निश्चित अवस्था में स्पष्ट हो जाती है।
भौतिक विकास की अवस्था प्राप्त हो गई है।
जैसा कि हमने देखा है, जीवन की सामाजिक अवधारणा में जीवन के उद्देश्य को स्थानांतरित करना शामिल है।
व्यक्तियों से लेकर समूहों और उनके भरण-पोषण तक – चाहे वह जनजाति, परिवार, नस्ल या राज्य हो।
जीवन की सामाजिक अवधारणा में यह माना जाता है कि चूंकि जीवन का उद्देश्य समूहों में पाया जाता है
व्यक्ति स्वेच्छा से समूह के हितों के लिए अपने स्वयं के हितों का त्याग करेंगे। और

दरअसल, कुछ समूहों में ऐसा होता आया है और आज भी होता है, अंतर केवल इतना है कि ये समूह परिवार, जनजाति, नस्ल या यहाँ तक कि पितृसत्तात्मक राज्य में भी जुड़ाव के सबसे आदिम रूप हैं। परंपरा के माध्यम से
शिक्षा द्वारा प्रदत्त और धार्मिक भावनाओं द्वारा समर्थित, बिना किसी बाध्यता के व्यक्ति
उन्होंने समूह के हित में अपने हितों को आपस में मिला दिया और आम कल्याण के लिए अपने स्वयं के हितों का त्याग कर दिया।
लेकिन जैसे-जैसे समाज अधिक जटिल और विशाल होते जाते हैं, और विशेष रूप से विजय की घटनाएं बढ़ती जाती हैं
लोगों के एक राज्य में विलय का कारण बनने वाली बात यह है कि व्यक्ति जितनी बार किसी चीज़ को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, उतनी ही अधिक बार यह बात सामने आती है।
सार्वजनिक खर्च पर अपने स्वयं के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, और इन उद्देश्यों को रोकना जितनी बार आवश्यक होता जा रहा है, उतनी ही बार ऐसा हो रहा है।
सत्ता का सहारा लेकर, यानी हिंसा के माध्यम से अवज्ञाकारी व्यक्तियों को वश में किया जाता है। जीवन की सामाजिक अवधारणा के समर्थक आमतौर पर सत्ता, यानी हिंसा के विचार को नैतिक मूल्यों के विचार से जोड़ने का प्रयास करते हैं।
प्रभाव, लेकिन यह संबंध बिल्कुल असंभव है।
नैतिक प्रभाव का मनुष्य पर यह प्रभाव होता है कि वह उसकी इच्छाओं को बदल देता है और उन्हें उसके कर्तव्य की दिशा में मोड़ देता है। नैतिक प्रभाव से नियंत्रित मनुष्य अपने स्वयं के विवेक के अनुसार कार्य करता है।
इच्छाएँ। अधिकार, जिस अर्थ में इस शब्द को सामान्यतः समझा जाता है, किसी व्यक्ति को बाध्य करने का एक साधन है।
अपनी इच्छाओं के विरुद्ध कार्य करने के लिए। जो व्यक्ति सत्ता के अधीन हो जाता है, वह अपनी इच्छा से नहीं, बल्कि सत्ता के दबाव में आकर कार्य करता है। शारीरिक बल के अलावा कोई भी चीज़ किसी व्यक्ति को वह कार्य करने के लिए बाध्य नहीं कर सकती जो वह नहीं चाहता।

बल प्रयोग, या बल प्रयोग की धमकी, अर्थात् स्वतंत्रता छीनना, मारपीट, कारावास, या ऐसे दंडों की आसानी से अमल में लाई जा सकने वाली धमकियाँ। सत्ता का आधार यही है और हमेशा से यही रहा है।
सत्ता में बैठे लोगों द्वारा इसे छिपाने और इसका दोष दूसरों पर डालने के अथक प्रयासों के बावजूद
इसके कुछ अन्य महत्वों के बावजूद, मनुष्य के लिए अधिकार का अर्थ हमेशा वह रस्सी, वह जंजीर जिससे वह बंधा और जकड़ा हुआ है, या वह कोड़ा जिससे उसे कोड़े मारे जाने हैं, या वह कुल्हाड़ी जिससे उसे दंडित किया जाना है।
हाथ, कान, नाक या सिर काट देना, या कम से कम इन भयावहताओं का खतरा पैदा करना। नीरो के शासनकाल में यही स्थिति थी।
चंगेज़ खान के समय से ही ऐसा है, और आज भी, संयुक्त राज्य अमेरिका या फ्रांस के गणराज्यों में सबसे उदार सरकारों के अधीन भी यही स्थिति है। यदि लोग सत्ता के आगे झुकते हैं, तो केवल इसलिए क्योंकि वे इन परिस्थितियों के प्रति उत्तरदायी होते हैं।
अनुपालन न करने पर दंड। सभी राज्य दायित्व, करों का भुगतान, राज्य के दायित्वों की पूर्ति।
कर्तव्य, और दंड, निर्वासन, जुर्माना आदि के प्रति समर्पण, जिनके प्रति लोग स्वेच्छा से समर्पण करते प्रतीत होते हैं।
ये हमेशा शारीरिक हिंसा या उसकी धमकी पर आधारित होते हैं।
सत्ता का आधार शारीरिक हिंसा है। लोगों पर शारीरिक हिंसा करने की संभावना है।

इन सबसे ऊपर, सशस्त्र पुरुषों के एक संगठन द्वारा प्रदान किया गया, जिन्हें एक ही इच्छा के अधीन एकजुट होकर कार्य करने के लिए प्रशिक्षित किया गया है।

एक ही इच्छा के प्रति समर्पित, सशस्त्र पुरुषों के ये समूह ही सेना का निर्माण करते हैं। सेना हमेशा से सत्ता का आधार रही है और आज भी है। सत्ता हमेशा उन्हीं के हाथों में होती है जो सेना को नियंत्रित करते हैं।

और सत्ता में बैठे सभी पुरुष – रोमन सम्राटों से लेकर रूसी और जर्मन सम्राटों तक – अधिक लेते हैं

वे अपनी सेना में किसी भी अन्य चीज से अधिक रुचि रखते हैं, और सेना में लोकप्रियता हासिल करने का प्रयास करते हैं, यह जानते हुए कि यदि सेना उनके पक्ष में है तो उनकी सत्ता सुरक्षित है।

सत्ता को बनाए रखने के लिए सेना का गठन और विस्तार अपरिहार्य है।

किस बात ने जीवन की सामाजिक अवधारणा में उस सिद्धांत को जन्म दिया है जो इसे नष्ट कर रहा है?

सत्ता का उद्देश्य और उसके अस्तित्व का औचित्य उन लोगों पर अंकुश लगाने में निहित है जो समाज के हितों की कीमत पर अपने व्यक्तिगत हितों को प्राप्त करने का लक्ष्य रखते हैं।

लेकिन सत्ता चाहे जिस भी तरीके से हासिल की गई हो, इसे धारण करने वाले लोग अन्य मनुष्यों से किसी भी प्रकार से भिन्न नहीं होते हैं। इसलिए वे दूसरों की तुलना में अपने हितों को समाज के हितों के अधीन करने के लिए अधिक इच्छुक नहीं हैं। इसके विपरीत, ऐसा करने की शक्ति उनके पास होने के कारण, वे दूसरों की तुलना में अधिक इच्छुक हैं।

वे जनहितों को अपने स्वार्थों के अधीन कर देते हैं। जो भी तरीके वे इन हितों को रोकने के लिए अपनाते हैं, वे उन्हें प्रभावित करते हैं।

सार्वजनिक हितों को दरकिनार करते हुए अपने स्वयं के लाभ के लिए सत्ता हथियाने या केवल सबसे निर्दोष लोगों को ही सत्ता सौंपने के मामले में, वे अब तक इन दोनों ही उद्देश्यों में सफल नहीं हुए हैं।

अधिकारियों की नियुक्ति के लिए आजमाए गए सभी तरीके, दैवीय अधिकार और चुनाव, और

वंशानुक्रम, मतदान, विधानसभाएं, संसदें और सीनेट - ये सभी अप्रभावी साबित हुए हैं।

सर्वविदित है कि इनमें से कोई भी विधि न तो सत्ता को केवल भ्रष्ट न होने वाले व्यक्तियों को सौंपने के उद्देश्य को पूरा करती है, न ही सत्ता के दुरुपयोग को रोकने में सहायक होती है। इसके विपरीत, सर्वविदित है कि

सत्ताधारी चाहे सम्राट हों, सरकारी मंत्री हों, राज्यपाल हों या पुलिस अधिकारी हों, वे हमेशा सरलता से सत्ताधारी होते हैं।

सत्ता के धारक, सत्ताहीन व्यक्तियों की तुलना में अधिक नैतिक पतन की ओर अग्रसर होते हैं, अर्थात् वे सार्वजनिक हितों को अपने व्यक्तिगत उद्देश्यों के अधीन कर लेते हैं। वास्तव में, ऐसा होना स्वाभाविक ही है।

राज्य की जीवन संबंधी अवधारणा तभी तक उचित ठहराई जा सकती थी जब तक सभी मनुष्य स्वेच्छा से अपना बलिदान देते।

व्यक्तिगत हितों को जन कल्याण से ऊपर रखा गया। लेकिन जैसे ही कुछ ऐसे व्यक्ति सामने आए जिन्होंने स्वेच्छा से अपने हितों और अधिकार का त्याग करने से इनकार कर दिया, तब उन्हें नियंत्रित करने के लिए हिंसा की आवश्यकता पड़ी, और फिर...

एक समूह द्वारा दूसरे समूह पर दबाव डालने का विघटनकारी सिद्धांत सामाजिक परिवेश में प्रवेश कर गया।

इसके आधार पर संगठन की अवधारणा।

एक समूह के अधिकार को दूसरे समूह पर कायम रखने और उन लोगों को नियंत्रित करने के उद्देश्य को पूरा करने के लिए जो अपने व्यक्तिगत स्वार्थों के लिए सार्वजनिक हितों की अवहेलना करते हैं, सत्ता केवल निर्दोष लोगों के हाथों में ही सौंपी जानी चाहिए, क्योंकि

यह चीनी लोगों के बीच प्रचलित माना जाता है, जैसा कि मध्य युग में माना जाता था, और आज भी है।
यह उन लोगों द्वारा किया जाना चाहिए जो अभिषेक द्वारा पवित्रीकरण में विश्वास करते हैं। केवल इन्हीं परिस्थितियों में सामाजिक संगठन को उचित ठहराया जा सकता है।
लेकिन चूंकि ऐसा नहीं है, और इसके विपरीत सत्ता में बैठे लोग हमेशा संत होने से बहुत दूर होते हैं,
सत्ता पर उनके अधिकार के कारण ही, सत्ता पर आधारित सामाजिक संगठन का कोई औचित्य नहीं रह जाता।

73

भले ही एक समय ऐसा रहा हो जब नैतिकता के निम्न स्तर और पुरुषों की हिंसा की प्रवृत्ति के कारण, ऐसी हिंसा को रोकने के लिए किसी प्राधिकरण का अस्तित्व एक लाभ था, क्योंकि
सरकार की हिंसा व्यक्तियों की हिंसा से कम थी, यह समझना आवश्यक है कि इस लाभ का क्या अर्थ हो सकता है।
यह स्थायी नहीं हो सकता। जैसे-जैसे व्यक्तियों की हिंसा की प्रवृत्ति कम होती गई, लोगों की आदतें अधिक सभ्य होती गईं, और संयम की कमी के कारण सत्ता का मनोबल गिरता गया, यह लाभ समाप्त होता चला गया।
गायब हुआ।
पिछले दो हजार वर्षों का संपूर्ण इतिहास जनमानस के नैतिक विकास और दूसरी ओर समाज के नैतिक पतन के बीच संबंधों में क्रमिक परिवर्तन का ही इतिहास है।
दूसरी ओर सरकारें।
सरल शब्दों में कहें तो, यही वह स्थिति है जिसके कारण ऐसा हुआ है।
मनुष्य परिवारों, कबीलों और जातियों में रहते थे, आपस में झगड़ते, लूटपाट करते, अत्याचार करते और एक-दूसरे को मारते थे। ये हिंसक शत्रुताएँ बड़े और छोटे पैमाने पर होती थीं: मनुष्य बनाम मनुष्य।
परिवार बनाम परिवार, जनजाति बनाम जनजाति, नस्ल बनाम नस्ल और लोग बनाम लोग।
अधिक शक्तिशाली समूह कमजोर समूहों पर विजय प्राप्त करके उन्हें अपने में समाहित कर लेते थे, और वे जितने बड़े और मजबूत होते जाते थे, उतने ही आंतरिक झगड़े कम होते जाते थे और समूह की निरंतरता अधिक सुनिश्चित प्रतीत होती थी।
एक समुदाय में एकजुट परिवार या कबीले के सदस्य आपस में कम शत्रुतापूर्ण होते हैं।
और परिवार और कबीले एक व्यक्ति की तरह नहीं मरते, बल्कि उनका अस्तित्व निरंतर बना रहता है। एक ही सत्ता के अधीन एक ही राज्य के सदस्यों के बीच, व्यक्तियों के बीच संघर्ष और भी कम प्रतीत होता है और
राज्य का अस्तित्व और भी अधिक सुरक्षित प्रतीत होता है।
उनका बड़े से बड़े समूहों में शामिल होना, सचेत रूप से इस बात की पहचान का परिणाम नहीं था।
जैसा कि वरयागी की कहानी में कहा गया है, ऐसे संगठनों के लाभ थे। यह एक ओर तो जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि से, और दूसरी ओर संघर्ष और विजय से उत्पन्न हुआ था।
विजय के बाद सम्राट की शक्ति आंतरिक कलह को समाप्त कर देती है, और इस प्रकार राज्य की शक्ति भी समाप्त हो जाती है।

जीवन की अवधारणा स्वयं को उचित ठहराती है। लेकिन यह औचित्य कभी भी अस्थायी से अधिक नहीं होता। आंतरिक मतभेद केवल सत्ता द्वारा किए गए दमन की मात्रा के अनुपात में ही समाप्त होते हैं।

असंतुष्ट व्यक्ति। सत्ता द्वारा कुचले गए आंतरिक कलह की हिंसा स्वयं सत्ता में ही पुनः प्रकट हो जाती है।

जो ऐसे लोगों के हाथों में पड़ जाता है जो, बाकी लोगों की तरह, अक्सर या हमेशा ही सार्वजनिक कल्याण को अपने व्यक्तिगत हित के लिए बलिदान करने को तैयार रहते हैं, फर्क सिर्फ इतना है कि उनकी प्रजा उनका विरोध नहीं कर सकती, और

इस प्रकार वे सत्ता के सभी अनैतिक प्रभावों के संपर्क में आ जाते हैं। और इस प्रकार हिंसा की बुराई, जब

यह सत्ता के हाथों में चला जाता है, लगातार बढ़ता रहता है, और समय के साथ उससे भी बड़ा हो जाता है।

जिस बुराई को दबाने का इसका उद्देश्य है, उसे दबाने के साथ-साथ समाज के सदस्यों में हिंसा की प्रवृत्ति भी कमजोर होती जाती है, जिससे सत्ता की हिंसा की आवश्यकता कम होती जाती है।

सरकारी प्राधिकरण, भले ही वह निजी हिंसा को दबा दे, फिर भी हमेशा जीवन में कुछ न कुछ बाधा उत्पन्न करता है।

पुरुषों में हिंसा के नए रूप सामने आते हैं, जो सरकार की अवधि और शक्ति के अनुपात में लगातार बढ़ते जाते हैं।

परिणामस्वरूप, यद्यपि सत्ता का दुरुपयोग सरकार में उतना स्पष्ट नहीं होता जितना कि सत्ता के दुरुपयोग में होता है,

समाज के सदस्यों द्वारा एक दूसरे के खिलाफ इस्तेमाल किए जाने के बावजूद, क्योंकि यह संघर्ष में नहीं बल्कि समर्पण में व्यक्त होता है, यह मौजूद है, और अक्सर पहले के दिनों की तुलना में कहीं अधिक हद तक मौजूद है।

और ऐसा होना स्वाभाविक ही था, क्योंकि सत्ता के मनोबल गिराने वाले प्रभाव के अलावा, नीति या

सत्ता में बैठे लोगों की अवचेतन प्रवृत्ति भी हमेशा अपने नागरिकों को चरम सीमा तक गिराने की ही रहेगी।

कमजोरी की बात करें तो, उत्पीड़ित जितना कमजोर होता है, उसे अधीन रखने के लिए उतना ही कम प्रयास करना पड़ता है।

और इसलिए उत्पीड़ितों पर अत्याचार हमेशा चरम सीमा तक बढ़ता रहता है।

जिसके आगे जाने पर सोने के अंडे देने वाली हंस मर जाएगी। और अगर हंस अंडे नहीं देती है तो...

अमेरिकी मूलनिवासियों, नीग्रो और फिजीवासियों की तरह, अधिक अंडे देने वाली प्रजातियों को परोपकारियों के सच्चे विरोध के बावजूद मार दिया जाता है।

इसका सबसे ठोस उदाहरण हमारे देश के श्रमिक वर्गों की स्थिति में पाया जा सकता है।

इस युग के लोग, वास्तव में प्राचीन काल के उन गुलामों से बेहतर नहीं हैं जिन्हें विजय के माध्यम से वश में कर लिया गया था।

उच्च वर्गों द्वारा श्रमिकों की स्थिति में सुधार लाने के दिखावटी प्रयासों के बावजूद, सभी

आज के श्रमिक वर्ग को उस कठोर नियम द्वारा दबा दिया गया है जिसके तहत उन्हें केवल उचित वेतन ही मिलता है।

जो कुछ भी नाममात्र का आवश्यक है, ताकि उन्हें बिना रुके काम करने के लिए मजबूर किया जा सके, जबकि उनके पास अपने नियोक्ताओं के लिए श्रम करने के लिए पर्याप्त शक्ति बची रहे, जो वास्तव में वे लोग हैं जिन्होंने उन्हें जीत लिया है और गुलाम बना लिया है।

ऐसा हमेशा से होता आया है। सत्ता की अवधि और बढ़ती ताकत के अनुपात में इसके लाभ हैं।

इसके लाभार्थी गायब हो जाते हैं और इसके नुकसान बढ़ जाते हैं।

और यह स्थिति उन शासन प्रणालियों से स्वतंत्र रूप से रही है जिनके तहत राष्ट्रों का अस्तित्व रहा है।
अंतर सिर्फ इतना है कि निरंकुश शासन प्रणाली में सत्ता एक छोटे से समूह के हाथों में केंद्रित होती है।
उत्पीड़कों की संख्या बढ़ने पर हिंसा अधिक क्रूर रूप ले लेती है; फ्रांस और अमेरिका जैसे संवैधानिक राजतंत्रों और गणराज्यों में सत्ता बड़ी संख्या में उत्पीड़कों के बीच विभाजित हो जाती है और हिंसा के रूप बदल जाते हैं।
हिंसा द्वारा माना जाने वाला तरीका कम क्रूर है, लेकिन इसका प्रभाव सत्ता के नुकसानों को उसके लाभों से कहीं अधिक बढ़ा देता है।
लाभ उठाने के बजाय, उत्पीड़ितों को उस हद तक कमजोर करना जहाँ तक उन्हें कमज़ोर किया जा सकता है।
उत्पीड़कों को मिलने वाला लाभ हमेशा एक जैसा ही रहता है।
उत्पीड़ितों की यही स्थिति रही है और आज भी है, लेकिन अब तक उन्होंने इसे स्वीकार नहीं किया है।
तथ्य यह है कि अधिकांश मामलों में उन्होंने सरलता से यह मान लिया है कि सरकारें उनके हितों के लिए ही अस्तित्व में हैं।
लाभ; कि वे सरकार के बिना खो जाएँगे; कि सरकार के बिना जीने का विचार ही एक ईशनिंदा है जिसे शब्दों में व्यक्त करने की हिम्मत शायद ही कोई करे; कि यह – किसी कारणवश भयानक – सिद्धांत है
अराजकतावाद के साथ, जिसके साथ हर तरह की भयावहता की मानसिक छवि जुड़ी हुई है।
लोगों का मानना रहा है, मानो यह पूरी तरह से सिद्ध हो चुका हो और इसलिए इसे किसी प्रमाण की आवश्यकता न हो, कि चूंकि अब तक सभी राष्ट्र राज्यों के रूप में विकसित हुए हैं, इसलिए संगठन का वह रूप अनिवार्य है।
मानवता के विकास की स्थिति।
और इस तरह यह सैकड़ों-हजारों वर्षों तक कायम रहा है, और सरकारें - वे जो
जो लोग सत्ता में आए हैं, उन्होंने ऐसा करने की कोशिश की है, और अब वे पहले से कहीं अधिक उत्साह से अपने नागरिकों को इस भ्रम में बनाए रखने की कोशिश कर रहे हैं।
रोमन सम्राटों के शासनकाल में भी यही स्थिति थी और अब भी यही स्थिति है। इस तथ्य के बावजूद कि
राज्य हिंसा की निरर्थकता और यहां तक कि इसके हानिकारक प्रभाव लोगों की चेतना में गहराई से समाते जा रहे हैं; अगर सरकारें सत्ता के अधीन न होतीं तो शायद चीजें हमेशा इसी तरह चलती रहतीं।
अपनी शक्ति बनाए रखने के लिए उन्हें लगातार अपनी सेनाओं को बढ़ाना आवश्यक था।
आम तौर पर यह माना जाता है कि सरकारें अपनी सेनाओं को केवल दूसरे राज्यों से अपनी रक्षा करने के लिए मजबूत करती हैं, इस तथ्य को अनदेखा करते हुए कि सरकारों की रक्षा के लिए सेनाएँ सर्वोपरि हैं।
अपने ही शोषित और गुलाम प्रजाजनों से।
यह हमेशा से आवश्यक रहा है, और बढ़ती हुई आवश्यकता के साथ यह और भी अधिक आवश्यक हो गया है।
जनमानस में शिक्षा का प्रसार, साथ ही समान और भिन्न राष्ट्रीयताओं के लोगों के बीच बेहतर संचार व्यवस्था। यह वर्तमान समय में विशेष रूप से अपरिहार्य हो गया है।
साम्यवाद, समाजवाद, अराजकतावाद और सामान्यतः श्रमिक आंदोलन। सरकारों को लगता है कि ऐसा ही है।
और अपनी अनुशासित सेनाओं की शक्ति को मजबूत करें।13
कुछ समय पहले जर्मन रैहस्टैग में, इस सवाल के जवाब में कि धन जुटाने के लिए धन की आवश्यकता क्यों थी,

अधीनस्थ अधिकारियों के वेतन के संबंध में, जर्मन चांसलर ने खुले तौर पर घोषणा की कि भरोसेमंद अधीनस्थ अधिकारी
समाजवाद का मुकाबला करने के लिए ये आवश्यक थे। कैप्रिवी ने वही बात ज़ोर से कही जो हर राजनेता जानता है और जनता से बड़ी लगन से छुपाता है। जिस कारण को उन्होंने व्यक्त किया, वह मूलतः वही है जो...
जिस कारण फ्रांसीसी राजाओं और पोप को स्विस और स्कॉटिश गार्डों की तैनाती करनी पड़ी, और जो इस बात को प्रेरित करता है कि...
आज के रूसी अधिकारी रंगरूटों का वितरण इतनी सावधानी से करते हैं कि सीमावर्ती क्षेत्रों से आने वाली रेजिमेंटें
केंद्रीय जिलों में तैनात हैं, और केंद्र से आने वाली रेजिमेंटें सीमाओं पर तैनात हैं।

13 अमेरिका में सैनिकों की कम संख्या के बावजूद सत्ता का दुरुपयोग होना इस धारणा को न केवल गलत साबित नहीं करता, बल्कि इसे और भी पुष्ट करता है। अमेरिका में अन्य देशों की तुलना में कम सैनिक हैं। यही कारण है कि कहीं और श्रमिक वर्गों पर इतना कम अत्याचार नहीं होता, और न ही कोई ऐसा देश है जहाँ सरकार के दुरुपयोग और स्वयं सरकार के अंत का इतना निकट प्रतीत होता हो। हाल ही में, जैसे-जैसे श्रमिक संगठनों की शक्ति बढ़ रही है, सेना बढ़ाने की मांग अधिकाधिक सुनाई दे रही है, हालाँकि संयुक्त राज्य अमेरिका पर बाहरी आक्रमण का कोई खतरा नहीं है। उच्च वर्ग जानता है कि पचास हजार सैनिकों की सेना जल्द ही अपर्याप्त हो जाएगी, और पिंकर्टन के सैनिकों पर निर्भर न रहते हुए, वे महसूस करते हैं कि उनकी स्थिति की सुरक्षा सेना की बढ़ी हुई शक्ति पर निर्भर करती है।

कैप्रिवी के भाषण का सरल शब्दों में अर्थ यह है कि विदेशी शत्रुओं का प्रतिरोध करने के लिए नहीं, बल्कि गुलाम मेहनतकश जनता के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए तैयार अधीनस्थ अधिकारियों को खरीदने के लिए धन की आवश्यकता है।
कैप्रिवी ने लापरवाही से वह बात कह दी जो हर कोई अच्छी तरह जानता है, या कम से कम अस्पष्ट रूप से महसूस करता है।
यदि वह इसे नहीं पहचानता है, यानी कि जीवन की वर्तमान व्यवस्था जैसी है वैसी इसलिए नहीं है, जैसा कि स्वाभाविक और सही होता, कि लोग ऐसा चाहते हैं, बल्कि इसलिए है क्योंकि इसे राज्य की हिंसा, सेना द्वारा कायम रखा गया है।
अपने खरीदे हुए अधीनस्थ अधिकारियों और जनरलों के साथ।
यदि मजदूर के पास जमीन नहीं है, यदि वह जमीन से अपने और अपने परिवार के लिए जीविका कमाने के प्रत्येक व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकार का उपयोग नहीं कर सकता है, तो इसका कारण जनता की इच्छा नहीं है, बल्कि एक
कुछ खास लोगों, यानी भूस्वामियों ने, प्रवेश देने या न देने का अधिकार अपने हाथ में ले लिया है।
मजदूरों को जमीन। और इस असामान्य व्यवस्था को सेना द्वारा बनाए रखा जाता है। यदि विशाल
श्रमिक वर्गों के श्रम से उत्पन्न धन को सभी की संपत्ति नहीं, बल्कि कुछ विशिष्ट व्यक्तियों की संपत्ति माना जाता है; यदि श्रम पर सत्ता द्वारा कर लगाया जाता है और करों को कुछ लोगों द्वारा किस पर खर्च किया जाता है
वे इसे उचित समझते हैं; यदि श्रमिकों की हड़तालों को दबा दिया जाता है, जबकि पूंजीपतियों की हड़तालों को दबा दिया जाता है, तो उन्हें मुक्त कर दिया जाता है।
प्रोत्साहित किया जाता है; यदि कुछ व्यक्ति बच्चों की धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष शिक्षा के स्वरूप को चुनने का अधिकार हथिया लेते हैं, और कुछ व्यक्ति उन कानूनों को बनाने का अधिकार अपने हाथ में ले लेते हैं जिनका सभी को पालन करना पड़ता है, तो ऐसा होता है।

दूसरे लोगों के जीवन और संपत्ति का निपटान करना – यह सब इसलिए नहीं किया जाता क्योंकि लोग ऐसा चाहते हैं।
क्योंकि यह स्वाभाविक और सही है, लेकिन सरकार और शासक वर्ग अपने लाभ के लिए ऐसा चाहते हैं, और शारीरिक हिंसा द्वारा भी ऐसा करने पर जोर देते हैं।
यदि कोई व्यक्ति अभी इसे नहीं पहचानता है, तो वह पहले ही प्रयास में जान जाएगा कि यह सच है।
अवज्ञा या मौजूदा व्यवस्था में क्रांति।
इसलिए, सरकारों और शासक वर्गों को मुख्य रूप से वर्तमान व्यवस्था को बनाए रखने के लिए सेनाओं की आवश्यकता होती है, जो जनता की जरूरतों का परिणाम होने के बजाय अक्सर उनके सीधे विरोध में होती है, और
यह केवल सरकार और शासक वर्ग के लिए ही लाभदायक है।
अपनी प्रजा को दमन में रखने और उनके श्रम के फल का आनंद लेने के लिए सरकार को सशस्त्र बलों की आवश्यकता होती है।
लेकिन केवल एक ही सरकार नहीं है। अन्य सरकारें भी हैं, जो अपने नागरिकों का शोषण करती हैं।
हिंसा का भी वही हाल है, और किसी भी दूसरी सरकार पर झपटने और उसके गुलाम नागरिकों की मेहनत का फल छीनने के लिए हमेशा तैयार रहना। इसलिए हर सरकार को अपनी रक्षा के लिए सेना की भी आवश्यकता होती है।
अपने पड़ोसी डाकुओं से लूटा गया माल। इस प्रकार प्रत्येक सरकार अनैच्छिक रूप से इस आवश्यकता में विवश हो जाती है कि...
वे अपनी सेनाओं की संख्या बढ़ाने में एक-दूसरे का अनुकरण कर रहे हैं। यह वृद्धि संक्रामक है, जैसा कि मोंटेस्क्यू ने कहा है।
150 साल पहले इस बात की ओर इशारा किया गया था।
किसी राज्य की सेना में, अपने नागरिकों से आत्मरक्षा के उद्देश्य से की गई प्रत्येक वृद्धि, एक अपराध बन जाती है।
यह पड़ोसी राज्यों के लिए खतरे का स्रोत है और उनकी सेनाओं में भी इसी तरह की वृद्धि की मांग करता है।
सशस्त्र बलों की वर्तमान लाखों की संख्या न केवल पड़ोसी राज्यों से उत्पन्न खतरे के कारण है, बल्कि मुख्य रूप से विद्रोह के हर प्रयास को कुचलने की आवश्यकता के कारण है।
विषयों की ओर से।
परस्पर निर्भर ये दोनों कारण एक ही परिणाम की ओर ले जाते हैं; आंतरिक बलों के विरुद्ध और अन्य राज्यों के साथ संबंध बनाए रखने के लिए सैनिकों की आवश्यकता होती है। एक दूसरे का परिणाम है।
किसी सरकार की निरंकुशता हमेशा सेना की ताकत और उसकी बाहरी सफलताओं के साथ बढ़ती है।
और किसी सरकार की आक्रामकता उसके आंतरिक निरंकुशता के साथ बढ़ती है।
यूरोपीय राज्यों की सेनाओं को लगातार बढ़ाने की होड़ ने उन्हें सार्वभौमिक सैन्य सेवा का सहारा लेने के लिए विवश कर दिया है, क्योंकि इस माध्यम से अधिकतम संभव
सैनिकों की संख्या न्यूनतम संभव खर्च पर प्राप्त की जाती है। जर्मनी ने सबसे पहले इस तकनीक का आविष्कार किया। और
जैसे ही एक राज्य ने इसे अपनाया, दूसरे राज्य भी ऐसा करने के लिए बाध्य हो गए। और इस तरह सभी नागरिक अपने ऊपर किए गए अन्याय का समर्थन करने के लिए हथियारबंद हो गए; सभी नागरिक अपने ही बन गए।
उत्पीड़क।

सार्वभौमिक सैन्य सेवा एक अपरिहार्य तार्किक आवश्यकता थी, जिसके लिए हम बाध्य थे। लेकिन यह जीवन की सामाजिक अवधारणा में निहित असंगति की अंतिम अभिव्यक्ति भी है, जब हिंसा
इसे बनाए रखने के लिए आवश्यक है। यह असंगति सार्वभौमिक सैन्य सेवा में स्पष्ट हो गई है। वास्तव में,

जीवन की सामाजिक अवधारणा का संपूर्ण महत्व व्यक्तियों के बीच संघर्ष की बर्बरता, व्यक्तिगत जीवन की क्षणभंगुर प्रकृति और लक्ष्य के हस्तांतरण की मनुष्य की पहचान में निहित है।
व्यक्तियों के समूहों के लिए जीवन का। लेकिन सार्वभौमिक सैन्य सेवा के साथ ऐसा होता है कि पुरुष, करने के बाद।
संघर्ष की क्रूरता और जीवन की असुरक्षा से मुक्ति पाने के लिए किए गए हर बलिदान के बदले, उन्हें उन सभी खतरों का सामना करना पड़ता है जिनसे वे बचना चाहते थे। और इसके अतिरिक्त, राज्य, जिसके हित में व्यक्ति
अपने व्यक्तिगत लाभों का त्याग करने के बाद, वे एक बार फिर असुरक्षा और अभाव के उन्हीं जोखिमों के संपर्क में आ जाते हैं।
स्थायित्व, जैसा कि स्वयं व्यक्ति पूर्वकाल में था।
सरकारों को मनुष्यों को व्यक्तिगत कलह की क्रूरता से मुक्ति और सुरक्षा प्रदान करनी थी।
अस्तित्व की राज्य व्यवस्था की स्थायित्वता। लेकिन ऐसा करने के बजाय, वे व्यक्तियों को इसके जोखिम में डाल देते हैं।
संघर्ष की वही आवश्यकता, पड़ोसियों के साथ संघर्ष के स्थान पर अन्य राज्यों के व्यक्तियों के साथ संघर्ष को प्रतिस्थापित करना। और व्यक्ति और राज्य दोनों के लिए विनाश का खतरा मंडरा रहा है, इसलिए वे इसे यथावत छोड़ देते हैं।
सार्वभौमिक सैन्य सेवा की तुलना एक ऐसे व्यक्ति के प्रयासों से की जा सकती है जो अपने गिरते हुए घर को सहारा देने की कोशिश कर रहा हो।
इसलिए वह इसे चारों ओर से घेर लेता है और इसे सहारे, खूंटे, तख्तों और मचानों से भर देता है ताकि वह इसे बनाए रख सके।
घर को इस तरह खड़ा रखना कि उसमें रहना असंभव हो जाए।
ठीक उसी प्रकार, सार्वभौमिक सैन्य सेवा सामाजिक व्यवस्था के सभी लाभों को नष्ट कर देती है।
रखरखाव के लिए नियुक्त।
सामाजिक संगठन के लाभ संपत्ति और श्रम की सुरक्षा और जीवन स्तर में सुधार के लिए सामूहिक कार्रवाई हैं - सार्वभौमिक सैन्य सेवा इन सभी को नष्ट कर देती है।
युद्ध की तैयारियों के लिए जनता से वसूले गए करों में श्रम उत्पादन का अधिकांश भाग समाहित हो जाता है।
जिसकी रक्षा सेना को करनी चाहिए।
सभी मनुष्यों का सामान्य जीवन से विमुख हो जाना श्रम की संभावना को ही नष्ट कर देता है। युद्ध का खतरा, जो कभी भी छिड़ सकता है, सामाजिक जीवन के सभी सुधारों को व्यर्थ और निष्फल बना देता है।
पुराने समय में यदि किसी व्यक्ति से कहा जाता कि यदि वह राज्य के अधिकार को स्वीकार नहीं करेगा, तो उसे
उसे घरेलू और विदेशी शत्रुओं के हमले का सामना करना पड़ेगा, उसे अकेले ही उनका मुकाबला करना होगा और उसकी जान भी जा सकती है, इसलिए उसके लिए कुछ सहन करना फायदेमंद होगा।

इन विपत्तियों से खुद को बचाने के लिए उसने जो कष्ट सहे, उसे देखकर वह शायद इस बात पर यकीन कर सकता था, क्योंकि उसने जो बलिदान दिए थे, वे वाकई काबिले तारीफ थे।

राज्य को किए गए बलिदान आंशिक ही थे और उनसे उसे एक स्थायी राज्य में शांतिपूर्ण जीवन की आशा मिली थी। लेकिन अब, जब बलिदान दस गुना बढ़ गए हैं और वादे के अनुसार मिलने वाले लाभ गायब हो रहे हैं,

यह एक स्वाभाविक प्रतिबिंब होगा कि सत्ता के प्रति समर्पण बिल्कुल बेकार है।

लेकिन सार्वभौमिक सैन्य सेवा का घातक महत्व, विरोधाभास की अभिव्यक्ति के रूप में

जीवन की सामाजिक अवधारणा में निहित विरोधाभास केवल उसी में प्रकट नहीं होता। इस विरोधाभास की सबसे बड़ी अभिव्यक्ति इस तथ्य में निहित है कि प्रत्येक नागरिक को सैनिक बनाकर उसे एक मोहरा बना दिया जाता है।

सरकारी संगठन है, और सरकार द्वारा किए जाने वाले हर काम की जिम्मेदारी साझा करता है, भले ही

वह इसकी वैधता को स्वीकार नहीं कर सकता है।

सरकारें दावा करती हैं कि सेनाओं की सबसे अधिक आवश्यकता बाहरी रक्षा के लिए होती है, लेकिन यह सच नहीं है।

मुख्य रूप से उनकी प्रजा के विरुद्ध उनकी आवश्यकता होती है, और सार्वभौमिक सैन्य सेवा के तहत प्रत्येक व्यक्ति सैन्य सेवा के अंतर्गत आता है।

वह अपनी मर्जी के बिना, नागरिकों के खिलाफ सरकार द्वारा की गई सभी हिंसक कार्रवाइयों में भागीदार था।

इस बात को समझने के लिए बस इतना याद रखना काफी है कि हर राज्य में किस नाम पर क्या-क्या किया जाता है।

व्यवस्था और जन कल्याण के लिए, जिसका क्रियान्वयन हमेशा सेना के जिम्मे होता है। सभी नागरिक विद्रोहों के लिए

वंशवादी या अन्य पार्टी कारणों से, ऐसी अशांतियों के परिणामस्वरूप होने वाली सभी फांसियां, विद्रोहों का सभी दमन, बैठकों को भंग करने और हड़तालों को दबाने के लिए सैन्य हस्तक्षेप, सभी प्रकार की जबरन वसूली।

करों के सभी अन्यायपूर्ण वितरण, भूमि के सभी अन्यायपूर्ण वितरण, श्रम पर सभी प्रतिबंध - या तो लागू किए जाते हैं

सीधे सेना द्वारा या पुलिस द्वारा, जिनके पीछे सेना का समर्थन हो। सेना में सेवा करने वाला कोई भी व्यक्ति इन सभी चीजों की जिम्मेदारी साझा करता है, जिनके बारे में वह कुछ मामलों में संदिग्ध होता है, जबकि बहुत

अक्सर ये बातें उनकी अंतरात्मा के सीधे विपरीत होती हैं। लोग अपनी ज़मीन से बेदखल होने को तैयार नहीं होते।

या तो वे पीढ़ियों से खेती करते आ रहे हैं, या वे सरकारी आदेश मिलने पर तितर-बितर होने को तैयार नहीं हैं, या वे अपने ऊपर लगाए गए करों का भुगतान करने को तैयार नहीं हैं, या वे कानूनों को अपने ऊपर बाध्यकारी मानने को तैयार नहीं हैं।

जब उन्हें इन्हें बनाने में कोई हाथ नहीं रहा हो, या उनकी राष्ट्रीयता से वंचित कर दिया जाए - और मैं,

अपने सैन्य कर्तव्य का निर्वाह करने के लिए, मुझे जाकर उन्हें गोली मारनी होगी। ऐसे दंडों में भाग लेते समय मैं स्वयं से यह प्रश्न पूछे बिना कैसे रह सकता हूँ कि क्या वे न्यायसंगत हैं, और क्या मुझे उन्हें अंजाम देने में सहायता करनी चाहिए?

सार्वभौमिक सेवा संपूर्ण राज्य के भरण-पोषण के लिए आवश्यक हिंसा की चरम सीमा है।

यह संगठन, प्रजा की ओर से समर्पण की वह चरम सीमा है। यह संपूर्ण संरचना की आधारशिला है, और इसके गिरने से यह पूरी संरचना ध्वस्त हो जाएगी।

अब समय आ गया है जब सरकारों द्वारा सत्ता का बढ़ता दुरुपयोग और उनके संघर्षों को रोका जाए।

एक-दूसरे के प्रति उनके अंतर्संबंधों ने उन्हें अपने विषयों से ऐसे भौतिक और नैतिक बलिदानों की मांग करने के लिए प्रेरित किया है कि हर कोई चिंतन करने और स्वयं से यह प्रश्न पूछने के लिए विवश है, "क्या मैं ये बलिदान कर सकता हूँ? और किस बात के लिए मैं ये बलिदान कर रहा हूँ?"

क्या मैं ये सब कर रहा हूँ? मुझसे राज्य के हित में ये बलिदान करने, सब कुछ त्यागने की अपेक्षा की जाती है।

जो मनुष्य के लिए अनमोल हो सकते हैं - शांति, परिवार, सुरक्षा और मानवीय गरिमा।" यह राज्य क्या है, किसके लिए?

क्या ऐसे भयानक बलिदान इसलिए ज़रूरी हैं? और यह इतना अनिवार्य क्यों है? वे हमें बताते हैं, "राज्य की आवश्यकता सबसे पहले तो इसलिए है क्योंकि इसके बिना हमारी रक्षा नहीं हो सकती।"

दुष्ट व्यक्तियों के हमलों के विरुद्ध; और दूसरे, राज्य के अलावा हम बर्बर होते और

हमारे पास न तो धर्म, न संस्कृति, न शिक्षा, न वाणिज्य, न संचार के साधन, न ही अन्य सामाजिक संस्थाएँ होंगी; और तीसरा, राज्य के बिना जो हमारी रक्षा करे, हम पराजित होने के लिए उत्तरदायी होंगे।

पड़ोसी लोगों द्वारा गुलाम बनाए गए।

वे कहते हैं, "राज्य के अलावा, हमें अपने ही देश में दुर्भावनापूर्ण व्यक्तियों के हमलों का सामना करना पड़ेगा।"

लेकिन हमारे बीच ये दुष्ट प्रवृत्ति वाले लोग कौन हैं जिनके हमलों से हम सुरक्षित हैं?

राज्य और उसकी सेना? भले ही, तीन या चार शताब्दियों पहले, जब लोग अपनी युद्ध क्षमता पर गर्व करते थे

जब लोगों को मारना एक वीरतापूर्ण उपलब्धि मानी जाती थी, तब ऐसे लोग हुआ करते थे; हम अच्छी तरह जानते हैं कि अब ऐसे लोग नहीं हैं, क्योंकि हम आजकल आग्नेयास्त्र नहीं रखते या उनका उपयोग नहीं करते हैं, लेकिन

हर कोई मानवीय सिद्धांतों का पालन करता है और अपने साथियों के प्रति सहानुभूति रखता है, और इससे अधिक कुछ नहीं चाहता सिवाय इसके कि

हम सभी यही चाहते हैं – यानी, हमें शांतिपूर्वक रहने और बिना किसी बाधा के अपने जीवन का आनंद लेने दिया जाए। परिणामस्वरूप, आजकल ऐसे कोई विशेष अपराधी नहीं हैं जिनसे राज्य हमारी रक्षा कर सके। यदि इन दुष्ट व्यक्तियों द्वारा

यानी जिन पुरुषों को अपराधी के रूप में दंडित किया जाता है, हम अच्छी तरह जानते हैं कि वे किसी अलग प्रकार के नहीं हैं।

भेड़ों के बीच जंगली जानवरों की तरह होने के बावजूद, वे भी हमारी ही तरह इंसान हैं, और अपराध करने के लिए उतने ही स्वाभाविक रूप से प्रवृत्त नहीं होते जितने कि वे लोग जिनके खिलाफ वे अपराध करते हैं। अब हम जानते हैं कि धमकियों और दंडों से काम नहीं चलेगा।

उनकी संख्या कम करना; और यह केवल वातावरण में बदलाव और नैतिक प्रभाव से ही संभव है।

परिणामस्वरूप, बुराई से सुरक्षा प्रदान करने के आधार पर राज्य हिंसा का औचित्य सिद्ध करना-

निर्धन व्यक्तियों के प्रति यह धारणा, भले ही तीन-चार शताब्दियों पहले इसका कुछ आधार रहा हो, अब बिलकुल भी नहीं है। वर्तमान में इसके विपरीत यह कहना अधिक उचित होगा कि राज्य की क्रूर विधियों सहित की गई कार्रवाई

उस युग के सामान्य नैतिक मानकों से नीचे की सजाएँ, जैसे कि कारागार, नौकागृह, फांसी के तख्ते आदि।

गिलोटिन जैसी प्रणाली लोगों को सभ्य बनाने की बजाय उन्हें और अधिक क्रूर बनाती है, और परिणामस्वरूप अपराधियों की संख्या कम होने की बजाय बढ़ जाती है।

वे हमसे कहते हैं, "राज्य के अलावा, हमारे पास कोई धर्म, शिक्षा, संस्कृति, साधन आदि नहीं होने चाहिए।"

संचार, इत्यादि। राज्य के बिना मनुष्य किसी भी कार्य को करने के लिए आवश्यक सामाजिक संस्थाओं का निर्माण नहीं कर पाता। यह तर्क भी कुछ शताब्दियों पहले तक पूरी तरह से सही था।

अगर कभी ऐसा समय भी आया हो जब लोग इतने विभाजित थे, जब उनके पास संचार के इतने कम साधन थे

और विचारों के आदान-प्रदान के कारण, वे किसी भी सामान्य कार्य में सहयोग और सहमति नहीं बना सके।

यदि वाणिज्य, अर्थशास्त्र या शिक्षा में राज्य केंद्र न हो, तो सामूहिक कार्रवाई की यह कमी नहीं रह जाती। संचार और विचारों के आदान-प्रदान के साधनों के व्यापक विस्तार ने मनुष्यों को सक्षम बनाया है।

समाज, संघ, निगम आदि के गठन में राज्य की सहायता से पूरी तरह से मुक्त होने में सक्षम।

वैज्ञानिक, आर्थिक और राजनीतिक उद्देश्यों के लिए आयोजित सम्मेलन। वास्तव में, इन उद्देश्यों को प्राप्त करने में सरकार अक्सर सहायता की अपेक्षा बाधा ही बनती है।

पिछली शताब्दी के अंत से लेकर अब तक मानवता का शायद ही कोई प्रगतिशील आंदोलन हुआ हो जो

सरकार द्वारा इसमें कोई बाधा नहीं डाली गई है। शारीरिक दंड, यातना द्वारा परीक्षण और दास प्रथा के उन्मूलन के साथ-साथ प्रेस की स्वतंत्रता और अधिकारों की स्थापना के मामले में भी ऐसा ही हुआ है।

सार्वजनिक सभा। हमारे समय में सरकारें न केवल हर आंदोलन को प्रोत्साहित करने में विफल रहती हैं, बल्कि सीधे तौर पर उसमें बाधा भी डालती हैं।

जिसके द्वारा लोग अपने लिए जीवन के नए स्वरूप विकसित करने का प्रयास करते हैं। श्रम, भूमि, राजनीति और धर्म से संबंधित समस्याओं के समाधान के हर प्रयास का सरकार द्वारा सीधा विरोध किया जाता है।

“सरकारों के बिना राष्ट्र अपने पड़ोसियों के गुलाम बन जाएंगे।” यह शायद ही आवश्यक है कि

इस आखिरी तर्क का खंडन कीजिए। इसका खंडन स्पष्ट है। वे कहते हैं कि सरकार, अपनी सेना के साथ, हमें पड़ोसी राज्यों से बचाने के लिए आवश्यक है जो हमें गुलाम बना सकते हैं। लेकिन हम जानते हैं कि यह क्या है

सभी सरकारें एक-दूसरे के बारे में यही कहती हैं, फिर भी हम जानते हैं कि सभी यूरोपीय राष्ट्र एक ही बात का दावा करते हैं।

स्वतंत्रता और बंधुत्व के सिद्धांतों का पालन करते हुए, उन्हें एक-दूसरे से सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है। और यदि बर्बर राष्ट्रों से रक्षा का उद्देश्य होता, तो वर्तमान में सशस्त्र सैनिकों का एक हजारवां हिस्सा ही पर्याप्त होता।

उस उद्देश्य के लिए यह पर्याप्त होगा। हम देखते हैं कि यह वास्तव में हमारे पास जो है उसके बिल्कुल विपरीत है।

जैसा बताया गया है। राज्य की शक्ति, हमारे पड़ोसियों के हमलों से सुरक्षा प्रदान करने के बजाय, उजागर करती है...

इसके विपरीत, हम ऐसे हमलों के कहीं अधिक खतरे में पड़ जाते हैं। इसलिए, प्रत्येक व्यक्ति जो सेना में अपनी अनिवार्य सेवा के माध्यम से उस राज्य के महत्व पर विचार करने के लिए प्रेरित होता है जिसके लिए वह सेवा कर रहा है, उसे इस बात पर विचार करना चाहिए।

जो व्यक्ति अपनी शांति, सुरक्षा और जीवन का बलिदान करने के लिए तैयार रहने की उम्मीद रखता है, वह इस बात को समझने में असफल नहीं हो सकता कि किसी भी प्रकार का
आधुनिक समय में ऐसे बलिदान को उचित ठहराने के संबंध में।
और यह केवल सैद्धांतिक दृष्टिकोण से ही नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति को बलिदानों को समझना चाहिए।
राज्य द्वारा की गई मांगों का कोई औचित्य नहीं है। व्यावहारिक रूप से भी देखें, यानी सभी पहलुओं पर विचार करें तो भी।
राज्य द्वारा उस पर डाले गए बोझों को देखते हुए, कोई भी व्यक्ति यह स्पष्ट रूप से देख सकता है कि उसके लिए व्यक्तिगत रूप से राज्य की मांगों का पालन करना और सेना में सेवा करना, अधिकांश मामलों में, इनकार करने की तुलना में अधिक नुकसानदेह होगा।
ऐसा करने के लिए।
यदि अधिकांश पुरुष इनकार करने के बजाय समर्पण करना चुनते हैं, तो यह समझदारी से किए गए संतुलन का परिणाम नहीं है।
इसके फायदे और नुकसान दोनों हैं, लेकिन ऐसा इसलिए होता है क्योंकि उन पर एक प्रकार की सम्मोहन प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है।
समर्पण में वे बिना सोचे-समझे आदेशों के रूप में दिए गए सुझावों का पालन कर देते हैं।
इच्छाशक्ति का प्रयास। प्रतिरोध करने के लिए स्वतंत्र चिंतन और प्रयास की आवश्यकता होगी, जो हर किसी के बस की बात नहीं है।
अनुपालन या गैर-अनुपालन के नैतिक महत्व को अलग रखते हुए भी, केवल भौतिक लाभ पर विचार करें तो, सामान्य तौर पर गैर-अनुपालन अधिक लाभदायक होगा।
मैं चाहे जो भी होऊं, चाहे मैं उत्पीड़कों के धनी वर्ग से संबंध रखूं या श्रमिक वर्ग से।
उत्पीड़ितों के संदर्भ में, दोनों ही मामलों में असहयोग के नुकसान कम और इसके लाभ सहयोग के नुकसान से अधिक होते हैं। यदि मैं उत्पीड़कों के अल्पसंख्यक वर्ग से संबंधित हूँ, तो असहयोग के नुकसान...
इसका परिणाम यह होगा कि मुझे राज्य के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करने से इनकार करने के लिए न्याय के कटघरे में लाया जाएगा, और यदि मैं
सौभाग्य से बरी हो जाना या, जैसा कि रूस में मेनोनाइट्स के मामले में होता है, मुझे अपनी सजा पूरी करने के लिए नियुक्त किया जाना।
राज्य के लिए किसी नागरिक व्यवसाय में सैन्य सेवा; जबकि यदि मैं दुर्भाग्यशाली रहा, तो मुझे दो या तीन साल के लिए निर्वासन या कारावास की सजा हो सकती है (रूस में घटित मामलों के आधार पर मेरा यही अनुमान है)।
इससे भी अधिक समय तक कारावास, या संभवतः मृत्युदंड, हालांकि बाद वाली संभावना बहुत कम है।
अअनुपालन के नुकसानों के बारे में बस इतना ही। अनुपालन के नुकसान इस प्रकार होंगे: यदि मैं भाग्यशाली रहा तो मुझे अपने साथी मनुष्यों की हत्या करने के लिए नहीं भेजा जाएगा, और न ही मुझे किसी खतरे का सामना करना पड़ेगा।
अपंग होने और मारे जाने का बहुत बड़ा खतरा है, लेकिन मुझे केवल सैन्य गुलामी में भर्ती किया जाएगा। मैं
एक विदूषक के वेश में, मैं अपने से उच्च पद के प्रत्येक अधिकारी, कॉर्पोरल से लेकर फील्ड मार्शल तक, के इशारों पर चलूँगा, उनकी इच्छा अनुसार किसी भी प्रकार के शारीरिक विरूपण से गुजरूँगा, और उसके बाद
एक से पाँच साल तक रखा गया है, इसके बाद मेरे पास दस साल का समय होगा ताकि मैं इसे पूरी तरह से करने के लिए तैयार रहूँ।
फिर किसी भी क्षण। अगर मैं बदकिस्मत रहा तो मुझे युद्ध में भी भेजा जा सकता है, जहाँ मुझे मारने के लिए मजबूर होना पड़ेगा।

विदेशी राष्ट्रों के वे लोग जिन्होंने मुझे कोई हानि नहीं पहुँचाई है, जहाँ मुझे अपंग किया जा सकता है या मार डाला जा सकता है, या निश्चित विनाश की ओर भेजा जा सकता है जैसा कि सेवस्तोपोल की चौकी के मामले में और हर युद्ध में अन्य मामलों में होता है, या जो भी हो सकता है सबसे भयानक बात यह है कि मुझे अपने ही देशवासियों के खिलाफ भेजा जा सकता है और मुझे अपने ही भाइयों को मारना पड़ सकता है। कुछ वंशवादी या अन्य राजकीय हित जिनका मुझसे बिलकुल भी कोई लेना-देना नहीं है। तुलनात्मक कमियों की बात यहीं खत्म होती है।
अनुपालन और गैर-अनुपालन के तुलनात्मक लाभ निम्नलिखित हैं:
जो व्यक्ति आत्मसमर्पण करता है, उसे यह लाभ होगा कि तमाम अपमान सहने और सभी आवश्यक बर्बरतापूर्ण कार्य करने के बाद, यदि वह मृत्यु से बच जाता है, तो उसे एक पदक प्राप्त हो सकता है।
उसे अपने विदूषक के वस्त्र पर चिपकाने के लिए लाल या सुनहरे रंग की झालरें मिलेंगी; यदि वह बहुत भाग्यशाली रहा, तो उसे कमान सौंपी जा सकती है।

उसके जैसे ही लाखों अन्य लोगों के साथ क्रूरता हुई हो; उसे फील्ड मार्शल कहा जाए और उसे खूब पैसा मिले।
आज्ञा मानने से इनकार करने वाले व्यक्ति को मिलने वाला लाभ यह होगा कि वह एक पुरुष के रूप में अपनी गरिमा को बनाए रखेगा। अच्छे लोगों की स्वीकृति प्राप्त करना, और सबसे बढ़कर यह जानना कि वह ईश्वर का कार्य कर रहा है, और इस प्रकार निस्संदेह अपने साथी मनुष्यों का भला कर रहा है।
धनवान व्यक्ति के लिए दोनों प्रकार के आचरण के लाभ और हानियों के बारे में बस इतना ही।
वर्ग, एक उत्पीड़क। गरीब श्रमिक वर्ग के व्यक्ति के लिए लाभ और हानियाँ समान होंगी, लेकिन हानियों में भारी वृद्धि होगी। समर्पण करने वाले गरीब व्यक्ति के लिए हानियाँ होंगी
इस तथ्य से स्थिति और बिगड़ जाएगी कि इसमें भाग लेकर और एक तरह से इस पर सहमति जताकर वह स्थिति को और मजबूत करेगा। वह अधीनता की स्थिति जिसमें वह स्वयं फंसा हुआ है।
लेकिन इस बात पर कोई विचार नहीं किया गया कि राज्य उन पुरुषों के लिए कितना उपयोगी या लाभदायक है जो सेना में सेवा करके इसका समर्थन करते हैं, न ही अनुपालन करने या न करने से व्यक्ति को होने वाले लाभ या हानि पर विचार किया गया।
राज्य की मांगों का अनुपालन ही इसके निरंतर अस्तित्व या उन्मूलन के प्रश्न का निर्णय करेगा।
सरकार। यह प्रश्न अंततः हर उस व्यक्ति की धार्मिक चेतना या अंतरात्मा द्वारा अपील से परे तय किया जाएगा, जिसे सार्वभौमिक अनिवार्य सैन्य सेवा के माध्यम से, चाहे वह चाहे या न चाहे, इसका सामना करने के लिए मजबूर किया जाता है।
यह सवाल कि क्या राज्य का अस्तित्व बना रहेगा या नहीं।

अध्याय 8

बुराई का बलपूर्वक प्रतिरोध न करने के सिद्धांत को अनिवार्य रूप से स्वीकार करना ही होगा।
आज के पुरुषों द्वारा

ईसाई धर्म नियमों की एक प्रणाली नहीं, बल्कि जीवन की एक नई अवधारणा है, और इसलिए यह अनिवार्य नहीं था और इसे इसके सच्चे अर्थों में सभी ने स्वीकार नहीं किया, बल्कि केवल कुछ ही लोगों ने। इसके अलावा, ईसाई धर्म मूर्तिपूजा के जीवन के विनाश की भविष्यवाणी करता है, और इसलिए ईसाई सिद्धांतों को स्वीकार करने की आवश्यकता पर बलपूर्वक बल का प्रयोग नहीं करता है। बुराई का बलपूर्वक प्रतिरोध न करना ईसाई सिद्धांत का एक पहलू है, जिसे हमारे समय में मनुष्यों को अनिवार्य रूप से स्वीकार करना होगा। हर झगड़े को सुलझाने के दो तरीके हैं - पहला तरीका बुराई की एक सार्वभौमिक परिभाषा खोजना है, जिसे सभी को स्वीकार करना चाहिए, और बलपूर्वक इस बुराई का प्रतिरोध करना है। दूसरा तरीका ईसाई धर्म का पूर्ण रूप से बलपूर्वक प्रतिरोध न करने का तरीका है। यद्यपि पहले तरीके की विफलता ईसाई धर्म के आरंभिक दिनों से ही पहचानी गई थी, फिर भी इसे प्रस्तावित किया गया था, और जैसे-जैसे मानव जाति ने प्रगति की है, यह और अधिक स्पष्ट होता गया है कि बुराई की कोई सार्वभौमिक परिभाषा नहीं हो सकती। यह आज सभी द्वारा मान्यता प्राप्त है, और यदि अभी भी बल का प्रयोग किया जाता है, तो बुराई का प्रतिरोध करना इसलिए नहीं है कि अब इसे सही माना जाता है, बल्कि इसलिए है क्योंकि लोग इससे बचने का तरीका नहीं जानते – इससे बचने में कठिनाई सरकार द्वारा बल प्रयोग की सूक्ष्म और जटिल प्रकृति का परिणाम है – बल का प्रयोग चार तरीकों से किया जाता है: डराना-धमकाना, रिश्वतखोरी, सम्मोहन और हथियारों के बल पर दबाव डालना – राज्य हिंसा को सरकार के बलपूर्वक तख्तापलट से कभी दबाया नहीं जा सकता – मूर्तिपूजा के जीवन के कष्टों से प्रेरित होकर मनुष्य मसीह की शिक्षाओं को स्वीकार करने के लिए बाध्य होते हैं, जिसमें बल द्वारा प्रतिरोध न करने का सिद्धांत शामिल है – हमारे समाज में व्याप्त इसकी सत्यता की चेतना भी इसकी स्वीकृति लाएगी – यह चेतना हमारे जीवन के साथ पूर्णतः विरोधाभास में है – यह विशेष रूप से अनिवार्य सैन्य सेवा में स्पष्ट है, लेकिन आदत और राज्य द्वारा हिंसा के चार तरीकों के प्रयोग के कारण, मनुष्य एक सैनिक के जीवन के साथ ईसाई धर्म की इस असंगति को नहीं देख पाते – वे नहीं देखते भले ही अधिकारी स्वयं सैनिक के कर्तव्यों की अनैतिकता को पूर्ण स्पष्टता से प्रदर्शित करते हों, फिर भी इसे देखा जा सकता है - सैन्य सेवा का आह्वान प्रत्येक व्यक्ति के लिए सर्वोच्च परीक्षा है, जब उसे ईसाई धर्म के अहिंसा के सिद्धांत को अपनाने या मौजूदा राज्य संगठन के प्रति दासतापूर्वक समर्पण करने का विकल्प दिया जाता है - लोग आमतौर पर अपने सभी पवित्र विश्वासों का त्याग कर सरकार की मांगों के आगे झुक जाते हैं, मानो उन्हें कोई अन्य मार्ग दिखाई ही न दे - जीवन की मूर्तिपूजक अवधारणा वाले लोगों के लिए कोई अन्य मार्ग खुला नहीं है, और युद्ध की बढ़ती भयावहता के बावजूद कभी नहीं होगा - ऐसे लोगों से बना समाज नष्ट हो जाएगा, और कोई भी सामाजिक पुनर्गठन इसे बचा नहीं सकता - मूर्तिपूजक जीवन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया है, और स्वयं को नष्ट कर देगा।

अक्सर कहा जाता है कि अगर ईसाई धर्म एक सत्य है, तो इसे शुरुआत में ही सभी को स्वीकार कर लेना चाहिए था।
जिस क्षण यह प्रकट हुआ, और इससे मनुष्यों के जीवन में बेहतर परिवर्तन आना चाहिए था। लेकिन यह कहना ऐसा ही है कि यदि बीज पक जाए तो उसमें तुरंत डंठल, फूल और फल लग जाने चाहिए।

ईसाई धर्म कोई ऐसी कानूनी व्यवस्था नहीं है जिसे हिंसा के बल पर थोपा जाए और जो मनुष्यों के जीवन को बदल दे।
जीवन। ईसाई धर्म जीवन की एक नई और उच्चतर अवधारणा है। जीवन की एक नई अवधारणा मनुष्यों पर थोपी नहीं जा सकती; इसे केवल स्वेच्छा से आत्मसात किया जा सकता है। और इसे केवल दो तरीकों से स्वेच्छा से आत्मसात किया जा सकता है: एक
एक आध्यात्मिक और आंतरिक है, जबकि दूसरा प्रयोगात्मक और बाहरी है।
कुछ लोग – एक अल्पसंख्यक – एक प्रकार की भविष्यसूचक प्रवृत्ति से इस सिद्धांत की सच्चाई को जान लेते हैं और इसके प्रति समर्पण कर देते हैं।
स्वयं इसे स्वीकार कर लेते हैं और अपना लेते हैं। अन्य लोग – अधिकांश लोग – गलतियों, प्रयोगों और कष्टों के लंबे दौर से गुजरने के बाद ही इस सिद्धांत की सत्यता और इसकी आवश्यकता को पहचान पाते हैं।
इसे अपनाना।
और इस प्रयोगात्मक बाह्य विधि द्वारा अधिकांश ईसाई पुरुषों को अब इस सिद्धांत को आत्मसात करने की आवश्यकता महसूस होने लगी है।
कभी-कभी आश्चर्य होता है कि इस भ्रष्टता की आवश्यकता क्यों पड़ी।
ईसाई धर्म, जो अब इसके वास्तविक अर्थ में स्वीकृति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है।
यदि ईसाई धर्म को उसके सच्चे, शुद्ध रूप में मनुष्यों के सामने प्रस्तुत किया जाता, तो इसे अधिकांश लोगों द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता, जो इससे उतने ही अप्रभावित रहते जितने कि आज एशिया के राष्ट्र हैं।
जिन लोगों ने इसे इसके विकृत रूप में स्वीकार किया, वे इसके धीमे लेकिन निश्चित प्रभाव के अधीन हो गए, और एक
गलतियों और प्रयोगों की लंबी श्रृंखला और उनके परिणामस्वरूप होने वाली पीड़ाओं को अब सामने लाया गया है।
इसे इसके वास्तविक अर्थ में आत्मसात करने की आवश्यकता है।
ईसाई धर्म का भ्रष्ट होना और अधिकांश लोगों द्वारा इसे इसके भ्रष्ट रूप में स्वीकार करना ऐसा था जैसे
यह आवश्यक है कि बीज अंकुरित होने के लिए कुछ समय तक मिट्टी में छिपा रहे।

ईसाई धर्म एक ही समय में सत्य का सिद्धांत और भविष्यवाणी दोनों है। अठारह शताब्दियों पहले ईसाई धर्म ने मनुष्यों को उस सत्य का ज्ञान कराया जिसमें उन्हें जीना चाहिए, और साथ ही मानव जीवन के भविष्य की भविष्यवाणी भी की।
यदि मनुष्य इसके अनुसार जीवन न जीएँ बल्कि अपने पुराने सिद्धांतों के अनुसार ही जीवन जीते रहें तो क्या होगा, और यह क्या होगा
यदि वे ईसाई धर्म के सिद्धांतों को स्वीकार कर लें और उन्हें अपने जीवन में लागू करें तो वे कैसे बन जाएंगे?
पर्वतीय उपदेश में मनुष्यों के जीवन को निर्देशित करने वाले सिद्धांतों को बताते हुए, मसीह ने कहा,
जो कोई मेरी इन बातों को सुनता है और उन पर अमल करता है, मैं उसे एक बुद्धिमान व्यक्ति के समान मानता हूँ, जो
उसने अपना घर एक चट्टान पर बनाया; और बारिश हुई, बाढ़ आई, हवा चली, और उस घर पर प्रहार किया; पर वह नहीं गिरा, क्योंकि उसकी नींव चट्टान पर रखी गई थी। और जो कोई भी ये बातें सुनता है
जो व्यक्ति केवल बातें कहता है और उन्हें व्यवहार में नहीं लाता, वह उस मूर्ख व्यक्ति के समान होगा जिसने अपना घर लकड़ी के टुकड़ों पर बनाया।

रेत गिरी; बारिश हुई, बाढ़ आई, हवा चली और उस घर पर प्रहार किया;
और वह गिर पड़ा, और उसका गिरना बहुत भयानक था।" (मत्ती 7:24-27)
और अब अठारह शताब्दियों के बाद भविष्यवाणी पूरी हो गई है। मसीह के मार्ग का अनुसरण न करने के कारण...
सामान्य शिक्षा और बुराई के प्रति अहिंसा के सामाजिक जीवन में इसके अनुप्रयोग के माध्यम से, लोगों को लाया गया है।
वे अपनी इच्छा के विरुद्ध भी उस अपरिहार्य विनाश की ओर अग्रसर होते हैं जिसकी भविष्यवाणी मसीह ने अपने उपदेशों का पालन न करने वालों के लिए की थी।
लोग अक्सर सोचते हैं कि बलपूर्वक बुराई का प्रतिरोध न करने का प्रश्न एक सैद्धांतिक प्रश्न है, जो कि
उपेक्षित। फिर भी यह प्रश्न स्वयं जीवन द्वारा सभी मनुष्यों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है, और प्रत्येक विचारशील व्यक्ति से इसका उत्तर अपेक्षित होता है। जब से ईसाई धर्म का प्रत्यक्ष रूप से प्रचार किया गया है, तब से यह प्रश्न मनुष्यों के लिए उनके जीवन में एक अनसुलझा प्रश्न बना हुआ है।
सामाजिक जीवन उस प्रश्न की तरह है जो एक यात्री के सामने तब आता है जब वह जिस रास्ते पर चल रहा होता है, वह उसे पार कर जाता है। यात्रा दो शाखाओं में बँट जाती है। उसे आगे बढ़ना ही होगा और वह यह नहीं कह सकता, "मैं इसके बारे में नहीं सोचूंगा, लेकिन
मैं पहले की तरह ही आगे बढ़ता रहूंगा। पहले एक ही रास्ता था, अब दो रास्ते हैं, और उसे अपना चुनाव करना होगा।
इसी प्रकार, जब से मनुष्यों को मसीह की शिक्षा का ज्ञान हुआ है, वे यह नहीं कह सकते, "मैं इस प्रकार जीवन व्यतीत करूँगा।"
पहले ही निर्णय ले लिया जाएगा और बुराई का प्रतिरोध करने या न करने का निर्णय बलपूर्वक नहीं लिया जाएगा।" हर नए अवसर पर जब संघर्ष उत्पन्न होता है तो अंततः यह निर्णय लेना पड़ता है: क्या मुझे बलपूर्वक उस चीज का विरोध करना चाहिए जिसे मैं बुराई मानता हूं या नहीं।
बुराई का प्रतिरोध करने या न करने का प्रश्न तब उठा जब मनुष्यों के बीच पहला संघर्ष हुआ।
क्योंकि हर संघर्ष बलपूर्वक उस चीज़ का प्रतिरोध करने के अलावा और कुछ नहीं है जिसे प्रत्येक पक्ष बुराई मानता है। लेकिन ईसा मसीह से पहले, मनुष्य बलपूर्वक उस चीज़ का प्रतिरोध करने के इस अर्थ को नहीं समझते थे जिसे प्रत्येक पक्ष बुराई मानता है।
महज इसलिए कि एक व्यक्ति किसी बात को बुरा समझता है और दूसरा उसे अच्छा, यह विवाद सुलझाने के तरीकों में से एक मात्र है।
विवाद है, और एक दूसरा तरीका भी है, वह है बुराई का बलपूर्वक विरोध न करना।
ईसा मसीह की शिक्षाओं से पहले, लोगों को लगता था कि किसी भी विवाद को सुलझाने का एकमात्र तरीका बुराई का बलपूर्वक विरोध करना है। और वे उसी के अनुसार कार्य करते थे, प्रत्येक पक्षकार अपने प्रतिद्वंद्वी को समझाने का प्रयास करता था।
स्वयं को और दूसरों को यह समझाना कि जिसे प्रत्येक व्यक्ति बुराई मानता है, वह वास्तव में पूर्णतः बुराई है।
और ऐसा करने के लिए, प्राचीन काल से ही मनुष्य ने बुराई की परिभाषाएँ गढ़ी हैं और उन्हें सभी पर बाध्यकारी बनाने का प्रयास किया है। और बुराई की ऐसी परिभाषाएँ कभी-कभी कानूनों का रूप ले लेती थीं, जिनके बारे में माना जाता था कि वे
अलौकिक साधनों से प्राप्त, कभी-कभी शासकों या सभाओं के आदेश जिन्हें
अचूकता का आरोप लगाया गया। लोगों ने दूसरों के खिलाफ हिंसा का सहारा लिया और खुद को और दूसरों को यह विश्वास दिलाया कि वे अपनी हिंसा को उस बुराई के खिलाफ निर्देशित कर रहे हैं जिसे सभी लोग बुराई के रूप में पहचानते हैं।
इस साधन का प्रयोग प्राचीन काल से ही किया जाता रहा है, विशेषकर उन लोगों द्वारा जिन्होंने अधिकार प्राप्त कर लिया था।

अधिकार का उल्लंघन हुआ, और लंबे समय तक इसकी अतार्किकता का पता नहीं चल पाया।
लेकिन जैसे-जैसे मनुष्य संसार में अधिक समय तक जीवित रहे और उनके संबंध अधिक जटिल होते गए, यह और भी स्पष्ट होता गया कि बलपूर्वक उस चीज़ का विरोध करना जिसे प्रत्येक व्यक्ति बुराई मानता था, तर्कहीन था, और संघर्ष किसी भी तरह से उचित नहीं था।
इससे इसमें कमी आई है, और कोई भी मानवीय परिभाषा उस चीज़ को परिभाषित करने में सफल नहीं हो सकती जिसे कुछ लोग बुराई मानते हैं।
दूसरों द्वारा इसे इसी रूप में स्वीकार किया जाता है।
ईसाई धर्म के उदय के समय ही, रोमन साम्राज्य में बहुत से लोगों को यह बात स्पष्ट रूप से ज्ञात थी।
जिस साम्राज्य में यह बात उभरी, वहाँ नीरो और कैलिगुला द्वारा जिसे बुराई माना जाता था, उसे बुराई नहीं माना जा सकता था।
दूसरों द्वारा। उस समय भी मनुष्य यह समझने लगे थे कि मानवीय नियम, यद्यपि दैवीय नियमों के रूप में दिए गए हैं, वास्तव में मनुष्यों द्वारा संकलित किए गए हैं, और चाहे उन्हें कितनी भी बाहरी भव्यता से प्रस्तुत किया जाए, वे अचूक नहीं हो सकते।
निवेश किया जाता है, और यह कि गलती करने वाले लोग एक साथ इकट्ठा होकर और आह्वान करके अचूक नहीं हो जाते।

स्वयं को सीनेट या किसी अन्य नाम से पुकारें। उस समय भी बहुतों ने इसे महसूस किया और समझा था। और तब मसीह ने अपने सिद्धांत का प्रचार किया, जिसमें न केवल प्रतिरोध की मनाही शामिल थी, बल्कि
बलपूर्वक बुराई करने के बजाय, इसने जीवन की एक नई अवधारणा और सभी के बीच संघर्ष को समाप्त करने का एक साधन प्रदान किया।
मनुष्यों को सुधारने के लिए, यह केवल मानव जाति के एक वर्ग का कर्तव्य नहीं बनाना चाहिए कि वे कुछ अधिकारियों द्वारा निर्धारित नियमों का बिना किसी संघर्ष के पालन करें, बल्कि इसे सभी का कर्तव्य बनाना चाहिए – और परिणामस्वरूप उन लोगों का भी जो इसमें शामिल हैं।
किसी भी परिस्थिति में किसी के भी खिलाफ बल का प्रयोग न करने का अधिकार।
उस समय इस सिद्धांत को केवल कुछ ही अनुयायियों ने स्वीकार किया था। अधिकांश लोग, विशेषकर सत्ता में बैठे सभी लोग, ईसाई धर्म को नाममात्र स्वीकार करने के बाद भी, इसके विपरीत रुख अपनाते रहे।
उन्होंने अपने लिए उस सिद्धांत को कायम रखा जिसके तहत वे बुराई के विरुद्ध बलपूर्वक प्रतिरोध करते थे। ऐसा ही था।
रोमन और बीजान्टिन सम्राटों के शासनकाल में भी यही स्थिति थी, और उसके बाद भी यही जारी रही।
बुराई की आधिकारिक परिभाषा और बलपूर्वक उसका प्रतिरोध करने के सिद्धांत की अपर्याप्तता, जो ईसाई धर्म के प्रारंभिक युगों में स्पष्ट थी, विभाजन के माध्यम से और भी स्पष्ट हो जाती है।
रोमन साम्राज्य को उनके आपसी संघर्षों और आपसी शत्रुता के कारण समान अधिकार वाले अनेक राज्यों में विभाजित कर दिया गया।
उनके भीतर फूट पड़ी।
लेकिन लोग मसीह द्वारा दिए गए समाधान और बुराई की पुरानी परिभाषाओं को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे, जो
इसका विरोध किया जाना चाहिए, इसे सभी पर बाध्यकारी कानून बनाकर और लागू करके निर्धारित किया जाना चाहिए।
बलपूर्वक। यह तय करने वाला प्राधिकरण कि किसे बुराई माना जाना चाहिए और बलपूर्वक किसका विरोध किया जाना चाहिए, कभी पोप होता था, कभी सम्राट या राजा, कभी निर्वाचित सभा या पूरा राष्ट्र। लेकिन दोनों

राज्य के भीतर और बाहर, हमेशा ऐसे लोग पाए जाते थे जो इसे बाध्यकारी नहीं मानते थे।
स्वयं वे कानून जो किसी देवता के आदेश के रूप में दिए गए हों, या पवित्र चरित्र से युक्त मनुष्यों द्वारा बनाए गए हों।
या फिर वे संस्थाएँ जो राष्ट्र की इच्छा का प्रतिनिधित्व करने वाली मानी जाती थीं; और ऐसे लोग भी थे जो मौजूदा अधिकारियों द्वारा बुरे माने जाने वाली बातों को अच्छा मानते थे, और जिन्होंने उन्हीं के खिलाफ संघर्ष किया।
उनके खिलाफ जिस प्रकार की हिंसा का प्रयोग किया गया था।
धार्मिक सत्ता से संपन्न लोग उस चीज़ को बुरा मानते थे जिसे लौकिक सत्ता से संपन्न लोग और संस्थाएँ अच्छा मानती थीं और इसके विपरीत भी, और यह संघर्ष और भी तीव्र होता चला गया।
और जैसे-जैसे पुरुष अपने विवादों को सुलझाने के साधन के रूप में हिंसा का उपयोग करते रहे, यह बात और भी स्पष्ट होती गई।
यह एक अनुपयुक्त साधन था, क्योंकि ऐसी कोई बाहरी सत्ता नहीं हो सकती थी जो सभी द्वारा मान्यता प्राप्त बुराई को परिभाषित कर सके।
अठारह शताब्दियों तक यही सिलसिला चलता रहा और अंततः यह वर्तमान स्थिति में पहुँच गया।
यह बिल्कुल स्पष्ट है कि बुराई की कोई बाहरी परिभाषा नहीं है, और न ही हो सकती है, जो सभी पर बाध्यकारी हो। मनुष्य
ऐसी सामान्य परिभाषा को खोजने और स्थापित करने की संभावना या वांछनीयता पर विश्वास करना बंद करने की स्थिति आ गई है। सत्ता में बैठे लोगों ने यह साबित करने का प्रयास करना बंद कर दिया है कि वे जिसे मानते हैं वह सही है।
क्योंकि बुराई तो बुराई ही है, और केवल यह घोषणा करना कि वे जिसे नापसंद करते हैं उसे बुराई मानते हैं, जबकि उनकी प्रजा उसे नापसंद करती है, यह गलत है।
अब वे बुराई की उनकी परिभाषा को स्वीकार करने के कारण उनका पालन नहीं करते, बल्कि इसलिए करते हैं क्योंकि वे खुद को रोक नहीं पाते। यह इसलिए नहीं था कि यह कोई अच्छी बात थी, आवश्यक थी और मनुष्यों के लिए लाभकारी थी।
और इसके विपरीत मार्ग अपनाना भी एक बुराई होती, लेकिन ऐसा केवल इसलिए नहीं हुआ क्योंकि यह सत्ता में बैठे लोगों की इच्छा थी।
कि नीस को फ्रांस में, लोरेन को जर्मनी में, और बोहेमिया को ऑस्ट्रिया में शामिल कर लिया गया था, और पोलैंड का विभाजन हो गया था, और आयरलैंड और भारत पर अंग्रेजी सरकार का शासन था, और चीनी लोग हैं
अमेरिकियों ने हमला किया और अफ्रीकियों का नरसंहार किया, और चीनियों को आप्रवास करने से रोका।
और रूसियों द्वारा सताए गए यहूदी, और यह कि भूस्वामी उन जमीनों पर कब्जा कर लेते हैं जिन पर वे खेती नहीं करते।
और पूंजीपति दूसरों के श्रम के फल का आनंद लेते हैं। स्थिति इस हद तक पहुँच गई है कि एक समूह हिंसा के कृत्यों को अब बुराई के प्रतिरोध के बहाने नहीं, बल्कि केवल अपने लाभ के लिए अंजाम देता है।
उनकी मनमानी के कारण, और दूसरा समूह हिंसा के आगे झुक जाता है, इसलिए नहीं कि वे ऐसा मानते हैं, जैसा कि पहले माना जाता था।
कई बार, यह कहा जाता है कि उन पर यह हिंसा बुराई से बचाने के लिए नहीं की जाती, बल्कि इसलिए की जाती है क्योंकि वे इससे बच नहीं सकते।
अगर वह रोमन होता, या मध्ययुगीन काल का आदमी होता, या पचास साल पहले का औसत रूसी होता, जैसा कि मुझे याद है
उसे इस बात का ज़रा भी संदेह नहीं था कि बुराई से बचने के लिए सत्ता का अत्याचार अपरिहार्य था; कि कर, शुल्क, दासता, कारागार, कोड़े मारना, चाबुक, फाँसी, सेना और
युद्ध ही वह स्थिति थी जो होनी चाहिए थी – अब हम जानते हैं कि ऐसा व्यक्ति शायद ही कभी मिलता है जो यह मानता हो कि ये सभी बातें

हिंसा के साधन किसी को भी किसी भी बुराई से बचाते हैं, और वास्तव में वह स्पष्ट रूप से यह नहीं समझ पाता कि हिंसा के वे अधिकांश कृत्य, जिनके वह संपर्क में आता है और जिनमें उसकी कुछ भागीदारी होती है, स्वयं में ही हिंसात्मक हैं।
एक महान और व्यर्थ बुराई।
आज ऐसा कोई नहीं है जो मेहनतकश जनता से कर वसूल कर आलसी अधिकारियों को समृद्ध करने की निरर्थकता और अन्याय को न देखता हो; या कमजोरों को दंडित करने की निरर्थकता को न देखता हो।
पतित व्यक्तियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर निर्वासित करने या कारावास के रूप में दंडित किया जाता है।
किला जहाँ सुरक्षा और आलस्य में रहते हुए वे केवल कमजोर और अधिक पतित हो जाते हैं; या निरर्थकता और अन्याय से भी बदतर, युद्ध की तैयारियों की घोर पागलपन और बर्बरता।
युद्ध, तबाही और विनाश का कारण बनते हैं, और इनका कोई औचित्य नहीं है। फिर भी हिंसा के ये रूप
ये प्रथाएँ जारी हैं और उन्हीं लोगों द्वारा समर्थित हैं जो इनकी निरर्थकता, अन्याय और क्रूरता को देखते हैं, और
उनसे पीड़ित हों। यदि पचास वर्ष पहले आलसी धनी व्यक्ति और अनपढ़ मजदूर दोनों को यह विश्वास था कि एक के लिए शाश्वत अवकाश और दूसरे के लिए शाश्वत परिश्रम की स्थिति ईश्वर द्वारा निर्धारित है, तो आज भी वे उनसे पीड़ित हैं।
हम स्वयं यह अच्छी तरह जानते हैं कि आजकल, जनसंख्या वृद्धि और प्रसार के कारण
पुस्तकों और शिक्षा के मामले में, यूरोप या रूस में भी, अमीर हो या गरीब, ऐसा कोई व्यक्ति मिलना मुश्किल होगा जिसके मन में इस व्यवस्था की न्यायसंगतता को लेकर कभी किसी न किसी रूप में संदेह न हुआ हो।
स्वयं। अमीर जानते हैं कि अमीर होने मात्र से ही वे दोषी हैं, और वे अपने अपराधबोध का प्रायश्चित करने का प्रयास करते हैं।
कला और विज्ञान के लिए बलिदान, जैसे पुराने समय में लोग चर्च को बलिदान देकर अपने पापों का प्रायश्चित करते थे। और यहाँ तक कि अधिकांश मेहनतकश लोग खुले तौर पर यह घोषणा करते हैं कि वर्तमान व्यवस्था अन्यायपूर्ण है और पतन की ओर अग्रसर है।
नष्ट या सुधारित। धार्मिक लोगों का एक समूह, जिनमें से रूस में लाखों लोग हैं, तथाकथित
संप्रदायवादी लोग मौजूदा सामाजिक व्यवस्था को अन्यायपूर्ण मानते हैं और सुसमाचार के आधार पर इसे नष्ट करना चाहते हैं।
शिक्षा को उसके सही अर्थ में लिया जाए तो। कुछ लोग इसे समाजवाद, साम्यवाद या अराजकतावाद के सिद्धांतों के आधार पर अन्यायपूर्ण मानते हैं, जो श्रमिक वर्ग के निचले तबके में पनप रहे हैं। हिंसा नहीं।
अब इसका अस्तित्व इसकी उपयोगिता में विश्वास पर आधारित नहीं है, बल्कि केवल इस तथ्य पर आधारित है कि यह इतने लंबे समय से अस्तित्व में है, और
सत्ताधारी वर्गों द्वारा संगठित, जो इससे लाभ कमाते हैं, ताकि उनके अधीन रहने वाले लोग इससे मुक्त न हो सकें। हमारे समय की सभी सरकारें - चाहे वे सबसे निरंकुश हों या सबसे निरंकुश -
उदारवादी भी – वही बन गए हैं जिसे हर्ज़ेन ने बहुत अच्छे से “टेलीग्राफ वाला चंगेज़ खान” कहा था; यानी
उदाहरण के लिए, हिंसा के ऐसे संगठन जो घोर अत्याचार के अलावा किसी सिद्धांत पर आधारित नहीं हैं, और साथ ही विज्ञान द्वारा स्वतंत्र लोगों की शांतिपूर्ण सामूहिक सामाजिक गतिविधि के लिए आविष्कृत सभी साधनों का लाभ उठाते हैं।

और समान पुरुषों को, जिनका उपयोग उन्होंने अपने साथियों को गुलाम बनाने और उन पर अत्याचार करने के लिए किया।
सरकारें और शासक वर्ग अब न तो सही और न ही उसके दिखावे पर अपना रुख अपनाते हैं।
न्याय, लेकिन विज्ञान की सहायता से इतनी कुशलता से संचालित संगठन पर आधारित है कि हर कोई हिंसा के चक्र में फंस जाता है और उससे निकलने का कोई मौका नहीं बचता। यह चक्र बना है
अब पुरुषों पर काम करने की चार विधियों का वर्णन किया गया है, जो एक चेन रिंग की कड़ियों की तरह आपस में जुड़ी हुई हैं।
सबसे पहला और सबसे पुराना तरीका है डराना-धमकाना। इसमें मौजूदा राज्य संगठन को – चाहे वह स्वतंत्र गणराज्य हो या सबसे क्रूर तानाशाही – किसी पवित्र चीज़ के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
और अपरिवर्तनीय है, और इसलिए इसे बदलने के किसी भी प्रयास के बाद सबसे क्रूर दंड दिए जाते हैं।
यह पद्धति अब भी प्रचलन में है – जैसा कि प्राचीन काल से होता आ रहा है – जहाँ भी सरकार है: रूस में तथाकथित शून्यवादियों के विरुद्ध, अमेरिका में अराजकतावादियों के विरुद्ध, फ्रांस में साम्राज्यवादियों, वैधतावादियों के विरुद्ध।
कम्यूनार्ड और अराजकतावादी।
रेलवे, तार, टेलीफोन, फोटोग्राफ और छुटकारा पाने के साधनों की महान पूर्णता
लोगों को वर्षों तक, बिना मारे, एकांत कारावास में रखा जाता है, जहाँ वे दुनिया से छिपे रहते हैं और मर जाते हैं और भुला दिए जाते हैं, और सरकार द्वारा उपयोग किए जाने वाले कई अन्य आधुनिक आविष्कार ऐसी शक्ति प्रदान करते हैं।
कि जब एक बार सत्ता कुछ निश्चित हाथों में आ जाती है, तो पुलिस, चाहे वह प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष, प्रशासन और
अभियोजक, जेलर और हर तरह के जल्लाद अपना काम इतनी लगन से करते हैं कि सरकार को उखाड़ फेंकने की कोई संभावना ही नहीं रहती, चाहे वह कितनी भी क्रूर और निरर्थक क्यों न हो।
दूसरा तरीका भ्रष्टाचार है। इसमें मेहनती और कर्मठ लोगों की संपत्ति लूटना शामिल है।
करों के माध्यम से धन अर्जित करना और उसे उन अधिकारियों के लालच को संतुष्ट करने में वितरित करना, जो बदले में जनता पर अत्याचार का समर्थन और उसे बनाए रखने के लिए बाध्य हैं। ये खरीदे हुए अधिकारी, उच्चतम स्तर से लेकर,
सरकारी मंत्रियों से लेकर सबसे गरीब नकलची क्लर्कों तक, पुरुषों का एक अटूट नेटवर्क बना हुआ है जो आपस में बंधे हुए हैं।

वे एक ही स्वार्थ से प्रेरित होकर एकजुट होते हैं – जनता के खर्चे पर जीना। वे सरकार की इच्छा का जितना अधिक आज्ञाकारी ढंग से पालन करते हैं, उतने ही अमीर होते जाते हैं; और हर समय और हर जगह, वे डटे रहते हैं।
सभी विभागों में, शब्दों और कार्यों से सरकार की हिंसा का समर्थन किया जाता है, जिस पर उनके अपने
समृद्धि भी इसी पर निर्भर करती है।
तीसरी विधि को मैं केवल लोगों को सम्मोहित करने के रूप में वर्णित कर सकता हूँ। इसमें जाँच करना शामिल है।
पुरुषों के नैतिक विकास को बढ़ावा देना और विभिन्न सुझावों के माध्यम से उन्हें जीवन के आदर्श से दूर रखना।
यह सम्मोहक प्रक्रिया, जो समग्र रूप से मानव जाति द्वारा पीछे छोड़ दी गई है, जिस पर सरकार की शक्ति टिकी हुई है। यह सम्मोहित करने वाली प्रक्रिया वर्तमान में अत्यंत जटिल तरीके से संगठित है, और उनके प्रारंभिक बचपन से ही शुरू होती है।

यह पुरुषों पर उनकी मृत्यु तक अपना प्रभाव डालता रहता है। इसकी शुरुआत उनके शुरुआती वर्षों में अनिवार्य शिक्षा प्रणाली में होती है।
इस उद्देश्य के लिए बनाए गए विद्यालय, जिनमें बच्चों को उनके जीवन के विचारों को आत्मसात कराया गया है।
हमारे पूर्वज, जो आधुनिक दुनिया की अंतरात्मा के सीधे विरोध में हैं। जिन देशों में राजकीय धर्म है, वहां बच्चों को चर्च की धार्मिक शिक्षाओं में वर्णित निरर्थक ईशनिंदाएं सिखाई जाती हैं।
अपने वरिष्ठों के प्रति आज्ञापालन के कर्तव्य के साथ-साथ। गणतंत्रात्मक राज्यों में वे उन्हें बर्बरता सिखाते हैं।
देशभक्ति का अंधविश्वास और शासकीय अधिकारियों के प्रति उसी प्रकार की दिखावटी आज्ञाकारिता।
धार्मिक और देशभक्तिपूर्ण प्रोत्साहन के माध्यम से बाद के वर्षों में भी यह प्रक्रिया जारी रहती है।
अंधविश्वास।
लोगों से लिए गए धन से मंदिर, जुलूस, स्मारक और त्योहार स्थापित करके धार्मिक अंधविश्वास को बढ़ावा दिया जाता है, जिसमें चित्रकला, वास्तुकला, संगीत और धूप का भी सहारा लिया जाता है।
जनता को मदहोश करना, और सबसे बढ़कर पादरियों के समर्थन से, जिनका कर्तव्य जनता को क्रूरतापूर्वक प्रताड़ित करना है।
लोगों को अपनी शिक्षाओं और उनकी गंभीरता के द्वारा स्थायी रूप से स्तब्ध रखना।
उनकी धार्मिक सेवाएं, उनके उपदेश और जन्म, मृत्यु और विवाह जैसे निजी जीवन में उनका हस्तक्षेप। देशभक्ति के अंधविश्वास को जनता से लिए गए धन से राष्ट्रीय उत्सवों के आयोजन द्वारा बढ़ावा दिया जाता है।
तमाशे, स्मारक और त्योहारों के माध्यम से लोगों को अपने राष्ट्र और अपने देश के प्रति सम्मान की भावना विकसित करने के लिए प्रेरित किया जाता है।
राज्य और उसके शासकों की महिमा बढ़ाने और अन्य राष्ट्रों के प्रति शत्रुता और यहाँ तक कि घृणा की भावना रखने के लिए। निरंकुश सरकारों के अधीन इन उद्देश्यों के लिए मुद्रण पर सीधा प्रतिबंध है।
लोगों को ज्ञान प्रदान करने के लिए पुस्तकों का प्रसार करना, और हर वह व्यक्ति जो लोगों को उनकी गलतियों से जगा सके।
आलस्य को निर्वासित या कैद कर दिया जाता है। इसके अलावा, हर सरकार के शासन में, बिना किसी अपवाद के, हर उस चीज़ को रोका जाता है जो मुक्ति दिला सकती है और हर उस चीज़ को बढ़ावा दिया जाता है जो लोगों को भ्रष्ट कर सकती है, जैसे कि...
साहित्यिक रचनाएँ जो उन्हें धार्मिक और देशभक्तिपूर्ण अंधविश्वास की बर्बरता में फंसाए रखने की प्रवृत्ति रखती हैं, सभी प्रकार की कामुक मनोरंजन, तमाशे, सर्कस, थिएटर और यहां तक कि शारीरिक रूप से उत्तेजित करने के साधन भी।
तंबाकू और शराब जैसे नशीले पदार्थों का सेवन राज्यों के राजस्व का मुख्य स्रोत है। यहां तक कि वेश्यावृत्ति को भी प्रोत्साहित किया जाता है, और न केवल इसे मान्यता दी जाती है, बल्कि सरकार द्वारा इसे संगठित भी किया जाता है।
अधिकांश राज्य। तीसरे तरीके के बारे में बस इतना ही।
चौथी विधि में, पिछली तीन विधियों द्वारा स्तब्ध और गुलाम बनाए गए सभी पुरुषों में से एक निश्चित संख्या का चयन करना और उन्हें विशेष और तीव्र साधनों के अधीन करना शामिल है।
स्तब्धता और क्रूरता, और इस प्रकार उन्हें सभी कृत्यों को अंजाम देने के लिए एक निष्क्रिय उपकरण बना देना।
सरकार को क्रूरता और बर्बरता की आवश्यकता होती है। यह परिणाम उन्हें युवावस्था में ही पकड़कर प्राप्त किया जाता है, जब पुरुषों को नैतिकता के स्पष्ट और निश्चित सिद्धांत बनाने का समय नहीं मिला होता है।

जीवन, घर, परिवार, रिश्तेदारी और उपयोगी श्रम की सभी प्राकृतिक और मानवीय स्थितियों से वंचित। उन्हें बंद कर दिया गया है।
विशेष वस्त्र पहने, बैरकों में एक साथ, चीखों, ढोल, संगीत और चमकती रोशनी के बीच काम करते हुए।
वस्तुओं को इस उद्देश्य के लिए आविष्कृत कुछ दैनिक क्रियाओं से गुजरने के लिए मजबूर किया जाता है, और इस माध्यम से उन्हें एक सम्मोहक अवस्था में लाया जाता है जिसमें वे मनुष्य होना बंद कर देते हैं और केवल संवेदनहीन मशीनें बन जाते हैं, आज्ञाकारी।
सम्मोहनकर्ता के लिए। ये शारीरिक रूप से चुस्त-दुरुस्त युवक (आजकल सार्वभौमिक सैन्य भर्ती के दौर में, सभी)
सम्मोहित, घातक हथियारों से लैस, हमेशा सत्ताधारी अधिकारियों के प्रति आज्ञाकारी और उनके आदेश पर किसी भी प्रकार की हिंसा के लिए तैयार रहने वाले युवा पुरुष, हिंसा की चौथी और प्रमुख विधि का गठन करते हैं।
पुरुषों को गुलाम बनाना।
इस विधि से हिंसा का चक्र पूरा हो जाता है।

धमकी, भ्रष्टाचार और सम्मोहन लोगों को ऐसी स्थिति में ला देते हैं जिसमें वे सैनिक बनने को तैयार हो जाते हैं; ये सैनिक उन्हें दंडित करने और लूटने (और अधिकारियों को रिश्वत देने) की शक्ति प्रदान करते हैं।
लूट का माल), और उन्हें सम्मोहित करके समय के साथ उन्हें फिर से उन्हीं सैनिकों में परिवर्तित कर देना।
यह चक्र पूरा हो चुका है, और बलपूर्वक इसे तोड़ने की कोई संभावना नहीं है।
कुछ लोगों का मानना है कि हिंसा से मुक्ति, या कम से कम उसमें भारी कमी, संभव है।
उत्पीड़ितों ने दमनकारी सरकार को बलपूर्वक उखाड़ फेंककर और उसकी जगह एक नई सरकार स्थापित करके यह उपलब्धि हासिल की।
जिसके तहत ऐसी हिंसा और उत्पीड़न अनावश्यक हो जाएगा, लेकिन वे खुद को और दूसरों को धोखा देते हैं, और उनके प्रयास उत्पीड़ितों की स्थिति में सुधार नहीं करते, बल्कि उसे और भी बदतर बना देते हैं। उनका आचरण केवल
इससे सरकार की निरंकुशता बढ़ने की संभावना रहती है। उनके प्रयास केवल एक तर्कसंगत बहाना प्रदान करते हैं।
सरकारें अपनी शक्ति को मजबूत करने के लिए ऐसा करती हैं।
भले ही हम यह मान लें कि सरकार के लिए विशेष रूप से प्रतिकूल परिस्थितियों के संयोजन के तहत, जैसा कि 1870 में फ्रांस में हुआ था, किसी भी सरकार को बलपूर्वक उखाड़ फेंका जा सकता है और सत्ता हथियाई जा सकती है।
यदि सत्ता किसी और के हाथों में चली जाए, तो नई सत्ता शायद ही कभी पुरानी सत्ता से कम दमनकारी होगी;
इसके विपरीत, अपने वंचित और क्रोधित शत्रुओं से हमेशा अपना बचाव करने के कारण, यह और भी निरंकुश और क्रूर हो जाएगा, जैसा कि सभी क्रांतियों में हमेशा से नियम रहा है।
जबकि समाजवादी और साम्यवादी समाज के व्यक्तिवादी, पूंजीवादी संगठन को एक
अराजकतावादी हर तरह की सरकार को बुराई मानते हैं, राजशाही समर्थक, रूढ़िवादी और पूंजीवादी भी किसी भी समाजवादी या साम्यवादी संगठन या अराजकता को बुराई मानते हैं, और ये सभी
दलों के पास लोगों को समझौते पर लाने के लिए हिंसा के अलावा कोई अन्य साधन नहीं है। इनमें से कोई भी दल
अपनी योजनाओं को सफलतापूर्वक पूरा करने में सक्षम होने पर, उन्हें मौजूदा सभी संस्थाओं को अपने अधिकार का समर्थन देना होगा।

हिंसा के तरीकों का इस्तेमाल करना, और यहां तक कि नए तरीके ईजाद करना भी।
उत्पीड़ित लोग एक अलग समूह होंगे, और ज़बरदस्ती एक नया रूप ले लेगी; लेकिन
हिंसा और उत्पीड़न अपरिवर्तित रहेंगे या और भी अधिक क्रूर हो जाएंगे, क्योंकि इससे घृणा और भी तीव्र हो जाएगी।
संघर्ष जारी रहता और दमन के नए-नए तरीके ईजाद किए जाते। ऐसा हमेशा से ही सभी क्रांतियों, क्रांति के सभी प्रयासों, सभी षड्यंत्रों और सरकार के सभी हिंसक परिवर्तनों के बाद होता आया है।
हर संघर्ष केवल उन लोगों के हाथों में दमन के साधनों को मजबूत करता है जो उस समय मौजूद होते हैं।
सत्ता में रहने का सही समय।
हमारे ईसाई समाज की स्थिति, और विशेष रूप से इसमें प्रचलित आदर्श, इस बात को सिद्ध करते हैं।
बेहद ही प्रभावशाली तरीके से।
अब मानव जीवन का केवल एक ही क्षेत्र ऐसा बचा है जिस पर सरकारी सत्ता का अतिक्रमण नहीं हुआ है –
यानी घरेलू, आर्थिक क्षेत्र, निजी जीवन और श्रम का क्षेत्र। और अब तो कम्युनिस्टों और समाजवादियों के प्रयासों के कारण सरकार धीरे-धीरे इस पर भी अतिक्रमण कर रही है।
यदि सुधारकों की आशाएँ पूरी होती हैं, तो श्रम और मनोरंजन, आवास, वस्त्र और भोजन धीरे-धीरे बेहतर होंगे।
सफल होने पर, सरकार द्वारा निर्धारित और विनियमित किया जाना चाहिए।
अठारह शताब्दियों की धीमी प्रगति ने ईसाई राष्ट्रों को एक बार फिर इस आवश्यकता की ओर अग्रसर कर दिया है कि
उस प्रश्न का निर्णय करना जिसे वे टालते रहे हैं - मसीह के स्वागत या अस्वीकृति का प्रश्न।
शिक्षा, और इसके बाद सामाजिक जीवन में बुराई का बलपूर्वक प्रतिरोध करने या न करने का प्रश्न। लेकिन अंतर यह है कि पहले मनुष्य समाधान को स्वीकार या अस्वीकार कर सकते थे।
ईसा मसीह द्वारा दिए गए इस समाधान को अब टाला नहीं जा सकता, क्योंकि केवल यही मनुष्य को गुलामी से बचा सकता है।
जिसमें वे जाल की तरह फंस जाते हैं।
लेकिन केवल इस स्थिति की दयनीयता ही इसे अपरिहार्य नहीं बनाती है।
जबकि मूर्तिपूजक संगठन की झूठी बातें लगातार साबित होती जा रही हैं, ईसाई धर्म की सच्चाई अभी भी कायम है।
धर्म का प्रभाव दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।
आध्यात्मिक अंतर्ज्ञान से सत्य को समझने वाले ईसाई मानवता के सर्वश्रेष्ठ पुरुषों ने अठारह शताब्दियों तक हर खतरे, हर अभाव और हर परिस्थिति के बावजूद इसकी गवाही दी है, और यह व्यर्थ नहीं गया है।
उन्होंने कष्ट सहे। अपनी शहादत के द्वारा उन्होंने जनता को सत्य से अवगत कराया और उसे उनके हृदयों में अंकित कर दिया।
ईसाई धर्म ने मानवता की चेतना में न केवल मूर्तिपूजा जीवन में निरंतरता की असंभवता को प्रदर्शित करके नकारात्मक रूप से प्रवेश किया है, बल्कि इसके सरलीकरण और इसके माध्यम से भी प्रवेश किया है।

इससे जुड़ी अंधविश्वासों से मुक्ति और स्पष्टता में वृद्धि हुई, और इसका प्रसार जनसंख्या के सभी वर्गों में हुआ।

अठारह शताब्दियों के ईसाई धर्म का प्रभाव उन लोगों पर भी पड़ा है जिन्होंने इसे स्वीकार किया था।
केवल बाहरी रूप से। इन अठारह शताब्दियों ने मनुष्य को इतनी प्रगति कराई है कि यद्यपि वे अभी भी उस मूर्तिपूजक जीवन शैली को जी रहे हैं जो अब मानवता के विकास के अनुरूप नहीं है, फिर भी वे न केवल सभी चीजों को स्पष्ट रूप से देख पाते हैं।
उनकी दयनीय स्थिति के बावजूद, वे अपने दिल की गहराई में मानते हैं कि (वे केवल जी सकते हैं)
इस विश्वास के माध्यम से) कि इस स्थिति से मुक्ति का एकमात्र मार्ग ईसाई धर्म के सिद्धांतों को उनके सही अर्थों में पूरा करने में निहित है।
मुक्ति के समय और तरीके के बारे में मत भिन्न-भिन्न हैं।
प्रत्येक समाज के बौद्धिक विकास और पूर्वाग्रहों के कारण। लेकिन आधुनिक दुनिया का हर आदमी
यह मानता है कि हमारा उद्धार मसीह के नियम को पूरा करने में निहित है। अलौकिक शक्तियों में विश्वास करने वाले कुछ लोग
ईसाई धर्म के कुछ अनुयायी मानते हैं कि उद्धार तभी आएगा जब सभी मनुष्य मसीह में विश्वास करेंगे, जिनका दूसरा आगमन निकट है।
अलौकिक ईसाई धर्म के अन्य अनुयायी मानते हैं कि उद्धार
चर्च के माध्यम से आओ, जो सभी मनुष्यों को अपनी शरण में ले लेगा, उन्हें ईसाई गुणों में प्रशिक्षित करेगा, और
उनके जीवन को बदल दें। तीसरा वर्ग, जो मसीह के देवत्व को स्वीकार नहीं करता, मानता है कि मानव जाति का उद्धार धीमी और क्रमिक प्रगति के माध्यम से होगा, जिसके द्वारा हमारे मूर्तिपूजक सिद्धांत समाप्त हो जाएंगे।
अस्तित्व को स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों से प्रतिस्थापित किया जाएगा - अर्थात् ईसाई सिद्धांतों से।
सिद्धांत। चौथा वर्ग, जो सामाजिक क्रांति में विश्वास करता है, मानता है कि मुक्ति तब आएगी जब एक हिंसक क्रांति के माध्यम से मनुष्यों को संपत्ति के समुदाय, सरकार के उन्मूलन और
व्यक्तिगत उद्योग के बजाय सामूहिक उद्योग – यानी, ईसाई धर्म के एक पहलू की प्राप्ति
सिद्धांत। किसी न किसी रूप में हमारे समय के सभी मनुष्य अपनी अंतरात्मा में मौजूदा व्यवस्था की निंदा करते हैं।
कमजोर मूर्तिपूजक व्यवस्था को त्याग देते हैं, और अक्सर अनजाने में और स्वयं को ईसाई धर्म का शत्रु मानते हुए यह स्वीकार करते हैं कि हमारा उद्धार केवल ईसाई सिद्धांतों या उनके कुछ हिस्सों के अनुप्रयोग में ही पाया जा सकता है।
इसका हमारे दैनिक जीवन में वास्तविक महत्व है।
जैसा कि इसके संस्थापक ने कहा था, ईसाई धर्म को अधिकांश मनुष्यों द्वारा एक ही बार में आत्मसात नहीं किया जा सकता; इसे एक छोटे से बीज से एक विशाल वृक्ष की तरह विकसित होना चाहिए। और इस प्रकार यह विकसित हुआ है, और अब अपने पूर्ण विकास तक पहुँच चुका है, हालांकि वास्तविक जीवन में नहीं, बल्कि आज के लोगों की अंतरात्मा में।
अब न केवल अल्पसंख्यक वर्ग, जिसने हमेशा आध्यात्मिक अंतर्ज्ञान से ईसाई धर्म को समझा है, बल्कि वह विशाल बहुसंख्यक वर्ग भी, जो अपने सामाजिक अस्तित्व में इससे बहुत दूर प्रतीत होता है, इसके वास्तविक महत्व को पहचानता है।
व्यक्तिगत पुरुषों के निजी जीवन को देखें, उनके आचरण के मानकों को सुनें और उनके निर्णय पर विचार करें।
एक-दूसरे से; न केवल उनके सार्वजनिक कथनों को सुनें, बल्कि माता-पिता और अभिभावकों द्वारा दी गई सलाहों को भी सुनें।
उनकी देखरेख में युवा हैं; और आप देखेंगे कि हिंसा पर आधारित उनका सामाजिक जीवन ईसाई सत्य को साकार करने से कितना भी दूर क्यों न हो, उनके निजी जीवन में जिसे सभी बिना अपवाद के अच्छा मानते हैं, वह कुछ भी नहीं है।
लेकिन ईसाई सद्गुण; जिसे बुरा माना जाता है वह ईसाई विरोधी बुराइयों के अलावा कुछ नहीं है। जो लोग

मानवता की सेवा में अपना जीवन निस्वार्थ भाव से समर्पित करने वाले लोग सर्वश्रेष्ठ पुरुष माने जाते हैं। वहीं, स्वार्थी लोग, जो दूसरों के दुर्भाग्य का लाभ उठाते हैं, सबसे बुरे पुरुष माने जाते हैं।

पुरुष।

यद्यपि कुछ गैर-ईसाई आदर्श, जैसे कि शक्ति, साहस और धन, अभी भी उन कुछ लोगों द्वारा पूजे जाते हैं जो ईसाई भावना से प्रभावित नहीं हुए हैं, लेकिन ये आदर्श पुराने हो चुके हैं और इन्हें त्याग दिया गया है।

यदि सभी द्वारा नहीं, तो कम से कम उन सभी द्वारा जिन्हें सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति माना जाता है। आदर्शों के अलावा और कोई आदर्श नहीं हैं।

ईसाई आदर्श, जिन्हें सभी स्वीकार करते हैं और सभी पर बाध्यकारी मानते हैं।

यदि आप हमारी ईसाई मानवता की स्थिति को बाहरी रूप से देखें, जिसमें मनुष्य के प्रति सभी क्रूरता और अवमानना शामिल है, तो यह वास्तव में भयावह है। लेकिन यदि कोई इसे भीतर से, इसकी आंतरिक चेतना में देखे, तो...

यह जो दृश्य प्रस्तुत करता है वह बिल्कुल अलग है।

हमारे जीवन की सारी बुराई केवल इसलिए मौजूद प्रतीत होती है क्योंकि यह बहुत लंबे समय से चली आ रही है; बुराई करने वालों को अभी तक यह सीखने का समय नहीं मिला है कि कैसे अलग तरह से व्यवहार किया जाए, हालांकि वे ऐसा व्यवहार करना नहीं चाहते हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि समस्त बुराई किसी ऐसे कारण से उत्पन्न होती है जो मनुष्य के विवेक से स्वतंत्र है।

यह बात जितनी अजीब और विरोधाभासी लगती है, उतनी ही सच यह है कि आज के सभी लोग उस सामाजिक व्यवस्था से नफरत करते हैं जिसका वे स्वयं समर्थन कर रहे हैं।

87

मुझे लगता है कि मैक्स मुलर ने ही ईसाई धर्म में परिवर्तित एक भारतीय व्यक्ति के आश्चर्य का वर्णन किया है, जिसने ईसाई धर्म के सार को आत्मसात करने के बाद यूरोप आकर ईसाइयों के वास्तविक जीवन को देखा।

वास्तविकता और उसके सामने मौजूद स्थिति के बीच पूर्ण विरोधाभास को देखकर वह अपने आश्चर्य से उबर नहीं पाया।

ईसाई राष्ट्रों में पाए जाने की उम्मीद है। यदि हमें अपनी मान्यताओं और अपने आचरण के बीच विरोधाभास पर आश्चर्य नहीं होता है, तो इसका कारण यह है कि जो प्रभाव इस विरोधाभास को धुंधला करने की प्रवृत्ति रखते हैं, वे एक

इसका हम पर भी असर पड़ता है। हमें बस उस भारतीय के नजरिए से अपने जीवन को देखना होगा, जिसने इसे समझा।

ईसाई धर्म को उसके सच्चे अर्थ में, बिना किसी समझौते या रियायत के, समझने के लिए हमें बस अपने जीवन में व्याप्त क्रूरताओं को देखना होगा, और अपने जीवन में व्याप्त विरोधाभासों को देखकर भयभीत होना होगा।

अक्सर हम उन्हें देखे बिना ही जीवन व्यतीत करते हैं।

हमें केवल युद्ध की तैयारियों, मशीनगनों, चांदी-सोने की गोलियों और टॉरपीडो को याद करने की आवश्यकता है।

और – रेड क्रॉस; एकांत कारावास की कोठरियाँ, बिजली से मृत्युदंड देने के प्रयोग – और कैदियों की स्वच्छता संबंधी देखभाल; धनियों का परोपकार, और उनका जीवन, जो गरीबों को जन्म देता है

उन्हें लाभ हो रहा है।

और ये विसंगतियाँ, जैसा कि लग सकता है, इसलिए नहीं हैं कि लोग ईसाई होने का दिखावा करते हैं जबकि वास्तव में वे मूर्तिपूजक हैं, बल्कि इसलिए हैं कि उनमें कुछ कमी है, या कोई ऐसी शक्ति है जो उन्हें ऐसा करने से रोक रही है।

वे वही हैं जो वे अपनी चेतना में स्वयं को पहले से ही महसूस करते हैं, और जो वे वास्तव में चाहते हैं।

आज के लोग केवल उत्पीड़न, असमानता, वर्गभेद और जानवरों के साथ-साथ मनुष्यों के प्रति हर प्रकार की क्रूरता से घृणा करने का दिखावा नहीं करते। वे वास्तव में इन सब से घृणा करते हैं, लेकिन वे ऐसा करते नहीं हैं।

इसे रोकने का तरीका नहीं जानते, या शायद उस चीज़ को छोड़ने का फैसला नहीं कर पा रहे हैं जो इसे बचाए रखती है, और ऐसा लगता है कि उन्हें आवश्यक है।

वास्तव में, प्रत्येक व्यक्ति से अलग-अलग पूछें कि क्या वह इस युग के किसी व्यक्ति के लिए ऐसे पद पर बने रहना प्रशंसनीय और उचित समझता है जिससे उसे अपने काम के अनुपात से अधिक वेतन मिलता है; जनता से लेना –

अक्सर गरीबी में रहने वाले लोग - करों का उपयोग तोपों, टॉरपीडो और अन्य हथियारों के निर्माण पर किया जाना था।

उन लोगों पर युद्ध छेड़ने के लिए कत्लेआम करना, जिनके साथ हम शांति बनाए रखना चाहते हैं, और जो हमारे प्रति भी यही इच्छा रखते हैं; या इन उपकरणों के निर्माण में अपना पूरा जीवन समर्पित करने के लिए वेतन प्राप्त करना।

कत्लेआम करना, या स्वयं को और दूसरों को हत्या के काम के लिए तैयार करना। और उससे पूछो कि क्या यह प्रशंसनीय है।

और एक आदमी के लिए उचित और एक ईसाई के लिए उपयुक्त है कि वह वेतन के बदले में दुखी, गुमराह, अक्सर अनपढ़ और शराबी लोगों को इसलिए पकड़ ले क्योंकि वे दूसरों की संपत्ति हड़प लेते हैं -

या इसलिए कि वे पुरुषों को हमसे अलग तरीके से मारते हैं - या इसलिए कि वे पुरुषों को उस तरीके से नहीं मारते जिस तरीके से हम मारते हैं।

इसे करने का बीड़ा उठाना – और इसके लिए उन्हें जेल में बंद करना, उनके साथ दुर्व्यवहार करना और उन्हें मार डालना; और क्या यह

क्या किसी व्यक्ति और ईसाई के लिए वेतन लेकर लोगों को ईसाई धर्म का नहीं, बल्कि उन अंधविश्वासों का प्रचार करना प्रशंसनीय और उचित है जिन्हें वह मूर्खतापूर्ण और हानिकारक जानता है? और क्या किसी व्यक्ति के लिए यह प्रशंसनीय और उचित है?

अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए अपने पड़ोसी को लूटना, अपनी सबसे सरल जरूरतों को पूरा करना, जैसे कि महान

जमींदार ऐसा करते हैं; या अपनी संपत्ति बढ़ाने के लिए उसे उसकी क्षमता से परे थका देने वाला श्रम करने के लिए मजबूर करते हैं, जैसा कि कारखाना मालिक और निर्माता करते हैं; या अपने लाभ को बढ़ाने के लिए लोगों की गरीबी का फायदा उठाते हैं, जैसा कि

व्यापारी ऐसा करते हैं। और हर व्यक्ति, विशेष रूप से यदि किसी की टिप्पणी किसी दूसरे व्यक्ति के लिए निर्देशित हो, तो ऐसा होता है।

खुद नहीं, तो जवाब देगा, "नहीं!" और फिर भी वही व्यक्ति जो उन कार्यों की सारी नीचता को अपनी स्वतंत्र इच्छा से, किसी के दबाव के बिना, अक्सर बिना किसी आर्थिक लाभ के, बल्कि केवल बचकाने घमंड से देखता है,

एक चीनी मिट्टी के क्रॉस, रिबन के एक टुकड़े, झालर के एक छोटे से टुकड़े के लिए जिसे उसे पहनने की अनुमति है, वह सैन्य सेवा में प्रवेश करेगा।

मजिस्ट्रेट या शांति न्यायाधीश, आयुक्त, आर्च, बिशप या बीडल बनना, हालांकि अपने कर्तव्यों को पूरा करने में

इन पदों पर रहते हुए उसे ऐसे कृत्य करने होंगे जिनकी नीचता और शर्मनाकता को वह अवश्य ही पहचान लेगा।

मुझे पता है कि इनमें से कई पुरुष आत्मविश्वास से यह साबित करने की कोशिश करेंगे कि उनके पास ऐसा मानने के कारण हैं।

वे अपनी स्थिति को वैध और अत्यंत अपरिहार्य मानते हैं। वे अपने बचाव में कहेंगे कि अधिकार प्रदत्त है।

ईश्वर की कसम, कि राज्य के कार्य मानवता के कल्याण के लिए अपरिहार्य हैं, कि संपत्ति ईसाई धर्म के विरुद्ध नहीं है, कि धनी युवक को केवल यह आदेश दिया गया था कि वह अपनी सारी संपत्ति बेचकर दान कर दे।
यदि वह परिपूर्ण होना चाहता है तो वह गरीब है, क्योंकि संपत्ति का मौजूदा वितरण और हमारी वाणिज्यिक प्रणाली
उन्हें हमेशा यथावत रहना चाहिए, और वे सभी के हित में हैं, इत्यादि। लेकिन, चाहे वे स्वयं को और दूसरों को कितना भी धोखा देने का प्रयास करें, वे सभी जानते हैं कि वे जो कर रहे हैं वह उन सभी मान्यताओं के विरुद्ध है जो
वे ऐसा दावा करते हैं, और अपने अंतर्मन में, जब वे अपने अंतरात्मा के साथ अकेले होते हैं, तो वे यही महसूस करते हैं।

उस घटना को याद करके वे शर्मिंदा और दुखी हो जाते हैं, विशेषकर यदि उन्हें उनके कृत्य की नीचता का एहसास कराया गया हो। आज का मनुष्य, चाहे वह ईसा मसीह के देवत्व में विश्वास करता हो या नहीं,
यह बात स्पष्ट है कि सम्राट, सरकारी मंत्री, राज्यपाल या आयुक्त के रूप में सहायता करना
किसी गरीब परिवार से करों के रूप में उसकी आखिरी गाय छीनकर तोपों पर खर्च करना, या विलासितापूर्ण जीवन जीने वाले और निकम्मे से भी बदतर अधिकारियों के वेतन और पेंशन पर खर्च करना; या किसी ऐसे व्यक्ति को जेल में डालना जिसे हमने
स्वयं भ्रष्ट होकर, उसके परिवार को सड़कों पर फेंक देना; या युद्ध में लूटपाट और नरसंहार करना; या
ईसा मसीह के कानून के स्थान पर बर्बर और मूर्तिपूजक अंधविश्वासों को बढ़ावा देना; या किसी की ज़मीन पर पाई गई गाय को ज़ब्त कर लेना, भले ही वह किसी ऐसे व्यक्ति की हो जिसके पास ज़मीन न हो; या किसी कामगार को धोखा देना।
कारखाने में गलती से खराब हुई वस्तुओं पर जुर्माना लगाकर; या किसी गरीब व्यक्ति से दुगुनी कीमत वसूल कर।
किसी भी चीज के लिए सिर्फ इसलिए कि वह घोर गरीबी में है; – आज के समय का कोई भी व्यक्ति इस बात से अनजान नहीं हो सकता।
ये सभी कार्य नीच और शर्मनाक हैं, और उन्हें इन्हें करने की कोई आवश्यकता नहीं है। वे सब यह जानते हैं। वे जानते हैं कि वे जो कर रहे हैं वह गलत है, और अगर उनके पास शक्ति होती तो वे दुनिया में किसी भी कीमत पर ऐसा नहीं करते।
उन ताकतों का विरोध करने की शक्ति जो उनके कार्यों की आपराधिकता को अनदेखा करती हैं और उन्हें प्रेरित करती हैं।
उन्हें प्रतिबद्ध करें।
आधुनिक जीवन में व्याप्त असंगति की पराकाष्ठा सार्वभौमिक स्थिति में सबसे अधिक स्पष्ट है।
अनिवार्य सैन्य सेवा, जो हिंसा का अंतिम उपाय और अंतिम अभिव्यक्ति है।
दरअसल, सार्वभौमिक शस्त्रीकरण की यह स्थिति धीरे-धीरे और अगोचर रूप से उत्पन्न हुई है, और सरकारों ने इसे बनाए रखने के लिए धमकी के हर साधन का प्रयोग किया है।
भ्रष्टाचार, क्रूरता और हिंसा, जिसके कारण हम ईसाई धर्म के साथ इसकी घोर असंगति को नहीं देख पाते।
वे विचार और भावनाएँ जिनसे आधुनिक दुनिया व्याप्त है।
हम इस असंगति के इतने आदी हो चुके हैं कि हम उन लोगों की घोर मूर्खता और अनैतिकता को नहीं देख पाते जो स्वेच्छा से कसाई का पेशा चुनते हैं मानो यह एक सम्मानजनक पेशा हो, और जो गरीब हैं।
दुर्भाग्यवश सैन्य सेवा स्वीकार करने वाले लोग, या उन देशों में जहां अनिवार्य सेवा लागू नहीं की गई है,

ऐसे लोग जो स्वेच्छा से उद्योग का जीवन छोड़कर सैनिकों की भर्ती करते हैं और उन्हें हत्यारों के रूप में प्रशिक्षित करते हैं। हम जानते हैं कि ये सभी लोग या तो ईसाई हैं, या मानवीय और उदार सिद्धांतों का पालन करते हैं, और वे जानते हैं
इस प्रकार वे आंशिक रूप से जिम्मेदार हो जाते हैं – सार्वभौमिक अनिवार्य सैन्य सेवा के माध्यम से, व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदार – सबसे भयावह, लक्ष्यहीन और क्रूर हत्याएं। और फिर भी वे सभी ऐसा करते हैं।
इससे भी बढ़कर, जर्मनी में, जहाँ अनिवार्य सेवा की शुरुआत सबसे पहले हुई थी, कैप्रिवी ने अपनी अभिव्यक्ति को और मजबूत किया है। अब तक जिस बात को इतनी लगन से छिपाया गया था – यानी, जिन लोगों को सैनिकों को
हत्या करने वाले केवल विदेशी ही नहीं, बल्कि उनके अपने ही देशवासी, वही मेहनतकश लोग हैं जिनसे उन्होंने ये सब हासिल किया है।
वे स्वयं ही ले जाए जाते हैं। और इस स्वीकारोक्ति ने लोगों की आँखें नहीं खोली हैं, उन्हें भयभीत नहीं किया है! वे अब भी भेड़ों की तरह वध के लिए जाते हैं, और उनसे जो भी अपेक्षित होता है, उसे स्वीकार कर लेते हैं।
और बात यहीं खत्म नहीं होती। जर्मनी के सम्राट ने हाल ही में अपने कर्तव्यों को और भी स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया है।
सेना द्वारा एक निहत्थे नागरिक को मारने वाले सैनिक को धन्यवाद और पुरस्कार देकर, जिसने लापरवाही से सेना के पास आने का प्रयास किया था, यह एक घृणित कार्य है। यह एक ऐसे कृत्य को पुरस्कृत करके किया गया है जिसे निम्नतम स्तर के लोग भी हमेशा नीच और कायरतापूर्ण मानते हैं।
नैतिकता के स्तर पर, विलियम ने दिखाया है कि एक सैनिक का मुख्य कर्तव्य - वह कर्तव्य जिसकी सबसे अधिक सराहना की जाती है - अधिकारियों का रवैया जल्लाद जैसा है; और यह कोई पेशेवर जल्लाद नहीं है जो केवल दोषी अपराधियों को मारता है, बल्कि वह है जो आदेश मिलते ही किसी भी निर्दोष व्यक्ति का वध करने के लिए तैयार रहता है।
और इतना ही नहीं। 1892 में, वही विलियम, जो राज्य सत्ता का विद्रोही था, जो कहता है
स्पष्ट रूप से वही जो दूसरे लोग केवल सोचते हैं, कुछ सैनिकों को संबोधित करते हुए उन्होंने सार्वजनिक रूप से निम्नलिखित बातें कही।
अगले दिन हजारों अखबारों में छपे उनके भाषण की रिपोर्ट इस प्रकार थी: "सैनिकों!" उन्होंने कहा, "तुमने वेदी के सामने और ईश्वर के सेवक के समक्ष मेरे प्रति निष्ठा की शपथ ली है! तुम अभी भी सब कुछ समझने के लिए बहुत छोटे हो।"
यहां जो कुछ कहा गया है उसका महत्व; सर्वप्रथम आपका ध्यान आदेशों का पालन करने पर होना चाहिए।
तुम्हें निर्देश दिए गए हैं। मेरे अंगरक्षकों, तुमने मेरे प्रति निष्ठा की शपथ ली है; इसका अर्थ है कि अब तुम मेरे सैनिक हो, तुमने तन-मन से स्वयं को मुझे समर्पित कर दिया है। अब तुम्हारा केवल एक ही शत्रु है।
मेरे शत्रु। समाजवादी विद्रोह के इन दिनों में ऐसा हो सकता है कि मैं तुम्हें अपने ही शत्रुओं पर गोली चलाने का आदेश दूं।
अपने सगे-संबंधी, अपने भाई, यहाँ तक कि अपने माता-पिता भी – भगवान न करे! – तब भी तुम बिना किसी संकोच के मेरे आदेशों का पालन करने के लिए बाध्य हो।

यह व्यक्ति उन सभी विचारों को व्यक्त करता है जो सभी समझदार शासक सोचते हैं, लेकिन जानबूझकर छिपाते हैं। वह खुलेआम कहता है कि सैनिक उसकी सेवा में हैं, उसके अधीन हैं, और उसके लाभ के लिए अपने साथियों की हत्या करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए।
भाइयों और पिताओं।

वह अत्यंत निर्मम शब्दों में उन सभी भयावहताओं और अपराधों को स्पष्ट रूप से उजागर करता है जिनके लिए पुरुष सेना में प्रवेश करने से पहले खुद को तैयार करते हैं, और उस अपमान की गहराई को भी उजागर करता है जिसमें वे आज्ञाकारिता का वादा करने के कारण गिर जाते हैं।
एक साहसी सम्मोहनकर्ता की तरह, वह सम्मोहित व्यक्ति की संवेदनहीनता की सीमा का परीक्षण करता है। वह उसके शरीर को छूता है।
त्वचा को गर्म लोहे से रगड़ने पर त्वचा से धुआं निकलता है और वह झुलस जाती है, लेकिन सोने वाला व्यक्ति जागता नहीं है।
सत्ता के नशे में चूर यह नीच, मूर्ख और मंदबुद्धि व्यक्ति अपने इस कथन में हर उस बात का अपमान करता है जो वह कर सकता है।
आधुनिक दुनिया के मनुष्य के लिए यह पवित्र है। और फिर भी सभी ईसाई, उदारवादी और सुसंस्कृत लोग, इससे कहीं अधिक
इस अत्याचार से आक्रोशित होकर उसने इसे देखा तक नहीं।
अंतिम, सबसे कठिन परीक्षा, अपने सबसे क्रूर रूप में मनुष्यों के सामने रखी जाती है। और वे यह भी नहीं समझते कि यह एक परीक्षा है, कि इसमें कोई विकल्प भी है। वे सोचते हैं कि कोई विकल्प खुला ही नहीं है।
दासतापूर्ण समर्पण। किसी ने सोचा होगा कि ये पागलपन भरे शब्द, जो एक आदमी के लिए हर चीज को ठेस पहुंचाते हैं,
आज के समय में जिन चीजों को पवित्र माना जाता है, उनसे आक्रोश उत्पन्न होना चाहिए। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ है।
पूरे यूरोप के सभी युवा हर साल इस परीक्षा से गुजरते हैं, और इसके साथ ही
कुछ अपवादों को छोड़कर, वे मनुष्य के लिए पवित्र माने जाने वाले सभी मूल्यों का त्याग कर देते हैं, और अपने प्रियजनों को मारने के लिए भी तत्पर रहते हैं।
भाई, यहाँ तक कि उनके पिता भी, लाल और सुनहरे रंग की किनारी वाले वस्त्र पहने पहले पागल प्राणी के आदेश पर हाज़िर हो जाते हैं, और केवल इस बात का इंतज़ार करते हैं कि उन्हें कहाँ और कब मारना है। और वे सचमुच तैयार हैं।
हर असभ्य व्यक्ति के पास कुछ न कुछ ऐसा होता है जिसे वह पवित्र मानता है, कुछ ऐसा जिसके लिए वह कष्ट सहने को तैयार रहता है, और वह ऐसा करने के लिए सहमत नहीं होगा। लेकिन आज के सभ्य मनुष्य के लिए पवित्र क्या है?
उससे कहो, "तुम्हें मेरा गुलाम बनना होगा, और यह गुलामी तुम्हें अपने पिता को भी मारने पर मजबूर कर सकती है"; और वह, जो अक्सर विश्वविद्यालय में सभी विज्ञानों में प्रशिक्षित और अच्छी तरह से शिक्षित होता है, चुपचाप अपना सिर मेरे सामने रख देता है।
जुए का बोझ। वे उसे विदूषक की पोशाक पहनाते हैं और उसे उछल-कूद करने, घूमने, मुड़ने, झुकने और नाचने का आदेश देते हैं।
हत्या। वह यह सब विनम्रतापूर्वक करता है। और जब वे उसे जाने देते हैं, तो वह मानो खुद को संभालकर अपने पुराने जीवन में लौट जाता है, और मनुष्य की गरिमा, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व पर प्रवचन देना जारी रखता है।
पहले।
"हाँ, लेकिन फिर क्या किया जाए?" लोग अक्सर वास्तविक असमंजस में पूछते हैं। "अगर हर कोई आगे आए तो कुछ बात होगी, लेकिन अकेले मैं केवल कष्ट भोगूँगा और किसी का भला नहीं कर पाऊँगा।"
और यह सच है। जीवन की सामाजिक अवधारणा रखने वाला व्यक्ति विरोध नहीं कर सकता। उसके जीवन का उद्देश्य ही उसका लक्ष्य है।
व्यक्तिगत कल्याण। उसके लिए समर्पण करना उसके व्यक्तिगत कल्याण के लिए बेहतर है, और वह समर्पण करता है।
चाहे वे उसके साथ कुछ भी करें, चाहे उसे कितना भी प्रताड़ित या अपमानित करें, वह सह लेगा, क्योंकि वह अकेला कुछ नहीं कर सकता;
उसके पास ऐसा कोई सिद्धांत नहीं है जिसके लिए वह अकेले हिंसा का विरोध कर सके। और जो लोग
उन पर नियंत्रण रखें, उन्हें कभी एकजुट न होने दें। अक्सर कहा जाता है कि भयानक हथियारों का आविष्कार

विनाश से युद्ध समाप्त हो जाएगा। यह एक भ्रम है। जैसे-जैसे संहार के साधन बेहतर होते जाते हैं, राज्य की जीवन अवधारणा को मानने वाले व्यक्तियों को अधीन करने के साधन भी बेहतर होते जाते हैं।
वे उनका हजारों की संख्या में, लाखों की संख्या में वध कर सकते हैं, वे उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर सकते हैं, और फिर भी।
वे बेसुध मवेशियों की तरह युद्ध की ओर चल पड़ेंगे। कुछ को तो पीट-पीटकर आगे बढ़ाना पड़ेगा, जबकि कुछ को अगर एक छोटा सा रिबन या सोने की फीती पहनने की इजाजत मिल जाए तो वे गर्व से जाने को तैयार हो जाएंगे।
और इन सभी लोगों में से, जो इतने क्रूरताग्रस्त हैं कि अपने माता-पिता को भी जान से मारने की कसम खाने को तैयार हैं, सामाजिक रूढ़िवादी, उदारवादी, समाजवादी और अराजकतावादी जैसे सुधारवादी एक तर्कसंगत और नैतिक व्यवस्था बनाने का प्रस्ताव रखते हैं।
समाज। ऐसे तत्वों से किस प्रकार का नैतिक और तर्कसंगत समाज बन सकता है? टेढ़ी-मेढ़ी और सड़ी हुई लकड़ियों से आप घर नहीं बना सकते, चाहे उन्हें कैसे भी जोड़ लें। और एक तर्कसंगत, नैतिक समाज का निर्माण करने के लिए
ऐसे लोगों का समाज बनाना उतना ही असंभव कार्य है। उन्हें केवल मवेशियों के झुंड में ही ढाला जा सकता है।
चरवाहों की चीख-पुकार और चाबुकों से प्रेरित होकर। और वास्तव में वे ऐसा ही कर रहे हैं।
तो, एक तरफ हमारे पास वे लोग हैं जो खुद को ईसाई कहते हैं और सिद्धांतों का दावा करते हैं।
स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व का समर्थक, और इसके साथ ही स्वतंत्रता के नाम पर सबसे कठोर परिस्थितियों के आगे झुकने को तैयार।
दासतापूर्ण अपमान; समानता के नाम पर, मनुष्यों का सबसे क्रूर, सबसे निरर्थक विभाजन स्वीकार करना।

बाहरी लोग केवल उच्च और निम्न वर्गों, सहयोगियों और शत्रुओं में विभाजित होते हैं; और भाईचारे के नाम पर अपने ही भाइयों की हत्या करने को तैयार रहते हैं।14
जीवन और अंतरात्मा के बीच का विरोधाभास और उससे उत्पन्न होने वाली पीड़ा इस हद तक पहुँच गई है कि
यह चरम सीमा पर पहुँच चुका है और इससे आगे नहीं जा सकता। हिंसा पर आधारित राज्य द्वारा संचालित जीवन व्यवस्था, जिसका उद्देश्य व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक कल्याण की सुरक्षा था, अब अपने मूल सिद्धांतों का ही त्याग करने के कगार पर आ गई है।
जिन उद्देश्यों के लिए इसकी स्थापना की गई थी - इसने मनुष्यों को पूर्ण त्याग और उस कल्याण के नुकसान की ओर धकेल दिया है जिसके लिए इसकी स्थापना की गई थी
सुरक्षित करना था।
भविष्यवाणी का पहला भाग उन मनुष्यों की पीढ़ी में पूरा हो चुका है जिन्होंने इसे स्वीकार नहीं किया है।
ईसा मसीह की शिक्षा। उनके वंशजों को अब इस परम आवश्यकता का सामना करना पड़ रहा है कि वे इसे लागू करें।
दूसरे भाग की सच्चाई अनुभव की कसौटी पर खरी उतरेगी।

14 यह तथ्य कि कुछ राष्ट्रों, जैसे कि अंग्रेज़ और अमेरिकी, में सैन्य सेवा अनिवार्य नहीं है (हालाँकि कुछ लोग इसे अनिवार्य बनाने की वकालत करते हैं), सैद्धांतिक रूप से नागरिकों की सरकार के प्रति अधीनता को प्रभावित नहीं करता। यहाँ हमें या तो जाकर मारना है या मरना है, वहीं वहाँ उन्हें सैनिकों की भर्ती और प्रशिक्षण के लिए अपनी मेहनत का फल देना पड़ता है।

अध्याय 9

ईसाई धर्म की जीवन अवधारणा को स्वीकार करने से पुरुषों को मुक्ति मिलेगी।
हमारे मूर्तिपूजक जीवन के दुखों से

ईसाई चेतना से ओतप्रोत होने के बावजूद, ईसाई लोगों का बाहरी जीवन मूर्तिपूजा जैसा ही रहता है। इस विरोधाभास का समाधान ईसाई जीवन सिद्धांत को स्वीकार करने में है। केवल ईसाई धर्म के माध्यम से ही प्रत्येक मनुष्य स्वतंत्र और समस्त मानवीय सत्ता से मुक्त हो सकता है। यह मुक्ति जीवन की बाहरी परिस्थितियों में परिवर्तन से नहीं, बल्कि जीवन की अवधारणा में परिवर्तन से ही प्राप्त हो सकती है। ईसाई जीवन आदर्श सभी प्रकार की हिंसा का त्याग करने की मांग करता है, और इसे स्वीकार करने वाले व्यक्ति को मुक्त करके, यह संपूर्ण विश्व को समस्त बाहरी सत्ताओं से मुक्त कर देता है। वर्तमान प्रतीत होने वाली निराशाजनक स्थिति से निकलने का मार्ग यह है कि प्रत्येक व्यक्ति जो ईसाई जीवन अवधारणा को आत्मसात करने में सक्षम है, उसे स्वीकार करे और उसके अनुसार जीवन व्यतीत करे। लेकिन लोग इस मार्ग को बहुत धीमा मानते हैं और सरकार की सहायता से जीवन की भौतिक परिस्थितियों में परिवर्तन के माध्यम से मुक्ति की तलाश करते हैं। इससे कोई सुधार नहीं होगा, क्योंकि यह केवल उस बुराई को बढ़ा रहा है जिससे मनुष्य पीड़ित हैं। इसका एक उल्लेखनीय उदाहरण समर्पण है। अनिवार्य सैन्य सेवा, जिसे स्वीकार करने की अपेक्षा अस्वीकार करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए अधिक लाभप्रद होगा – मनुष्य की मुक्ति केवल प्रत्येक व्यक्ति द्वारा स्वयं को मुक्त करने से ही संभव है, और इस आत्म-मुक्ति के जो उदाहरण पहले से ही प्रकट हो रहे हैं, वे सरकारी सत्ता के विनाश का खतरा पैदा करते हैं – सरकार की अधार्मिक मांगों का पालन करने से इनकार करना राज्य की सत्ता को कमजोर करता है और मनुष्य को मुक्त करता है – और इसलिए ऐसे गैर-अनुपालन के मामलों को राज्य अधिकारियों द्वारा किसी भी षड्यंत्र या हिंसा के कृत्यों से अधिक भय की दृष्टि से देखा जाता है – रूस में निष्ठा की शपथ, करों के भुगतान, पासपोर्ट, पुलिस कर्तव्यों और सैन्य सेवा के संबंध में गैर-अनुपालन के उदाहरण – अन्य राज्यों में ऐसे गैर-अनुपालन के उदाहरण – सरकारें उन लोगों के साथ कैसा व्यवहार करें जो ईसाई आधार पर उनकी मांगों का पालन करने से इनकार करते हैं, यह नहीं जानतीं – ऐसे लोग, बिना प्रहार किए, सरकार की नींव को ही भीतर से कमजोर कर देते हैं – उन्हें दंडित करना यह खुलेआम ईसाई धर्म का त्याग करने और उस सिद्धांत को फैलाने में सहायता करने के बराबर है जिसके आधार पर ये लोग अपने असहयोग को उचित ठहराते हैं - इसलिए सरकारें असहाय स्थिति में हैं - जो लोग व्यक्तिगत स्वतंत्रता की निरर्थकता को मानते हैं, वे केवल बल पर आधारित वर्तमान राज्य संगठन के विघटन को विलंबित करते हैं।

आज के समय में ईसाई लोगों की स्थिति उतनी ही क्रूर बनी हुई है जितनी कि उनके समय में थी।
मूर्तिपूजा। कई मायनों में, विशेषकर जनसमूह के उत्पीड़न में, यह और भी क्रूर हो गई है।
यह मूर्तिपूजा के दिनों की तुलना में कहीं अधिक था।
लेकिन प्राचीन काल के मनुष्यों की स्थिति और हमारे समय की उनकी स्थिति के बीच बस इतना ही अंतर है।
शरद ऋतु के अंतिम दिनों और वसंत ऋतु के पहले दिनों के बीच वनस्पति जगत में जो अंतर हम देखते हैं
वसंत ऋतु। शरद ऋतु में प्रकृति की बाहरी निर्जीवता उसकी आंतरिक मृत्यु की स्थिति से मेल खाती है।

जबकि वसंत ऋतु में बाहरी निर्जीवता, आंतरिक पुनर्जीवन और जीवन के नए रूपों में परिवर्तित होने की स्थिति के बिल्कुल विपरीत होती है।
इसी प्रकार प्राचीन मूर्तिपूजक जीवन और आज के जीवन के बीच समानता मात्र है।
बाह्य। मूर्तिपूजा के समय में मनुष्यों की आंतरिक स्थिति वर्तमान समय की उनकी आंतरिक स्थिति से बिल्कुल भिन्न थी।
तब क्रूरता और गुलामी की बाहरी स्थिति आंतरिक स्थिति के साथ पूर्ण रूप से सामंजस्य में थी।
मनुष्य की अंतरात्मा में, और हर कदम आगे बढ़ने के साथ यह सामंजस्य और भी तीव्र होता गया; अब क्रूरता और गुलामी की बाहरी स्थिति
मनुष्य की ईसाई चेतना के बिल्कुल विपरीत है, और हर कदम आगे बढ़ने के साथ यह सामंजस्य और भी गहरा होता गया।
पहले से ही जानकारी देने से यह विरोधाभास और भी बढ़ जाता है।
मानवता अनावश्यक और निरर्थक पीड़ाओं से गुजर रही है।
कुछ-कुछ प्रसव पीड़ा जैसा। नई जिंदगी के लिए सब कुछ तैयार है, लेकिन फिर भी नई जिंदगी का आगमन नहीं होता।
इस स्थिति से निकलने का कोई रास्ता नहीं दिखता। और कोई रास्ता होता भी नहीं, सिवाय इसके कि एक आदमी (और इस प्रकार)
सभी मनुष्यों को जीवन का एक भिन्न, उच्चतर सिद्धांत बनाने की शक्ति प्राप्त होती है, जो उन्हें उन सभी बंधनों से तुरंत मुक्त कर देता है जिनसे वे अटूट रूप से जकड़े हुए प्रतीत होते हैं।
और ऐसा ही एक सिद्धांत जीवन के प्रति ईसाई दृष्टिकोण है जो अठारह सौ साल पहले मानव जाति के सामने प्रकट हुआ था।

किसी व्यक्ति को बस जीवन के इस सिद्धांत को अपना लेना चाहिए, और उस पर जकड़ी हुई बेड़ियाँ स्वतः ही टूट जाएँगी, और वह स्वयं को पूर्णतः स्वतंत्र महसूस करेगा, ठीक वैसे ही जैसे एक पक्षी महसूस करता है।
जिस क्षण उसने अपने पंख फैलाए, उसी क्षण वह स्वयं एक बाड़ वाले स्थान पर स्वतंत्र रूप से मौजूद था।
लोग ईसाई चर्च की स्वतंत्रता के बारे में बात करते हैं, ईसाइयों को स्वतंत्रता देने या न देने के बारे में बात करते हैं। इन सभी विचारों और अभिव्यक्तियों के पीछे एक अजीब गलतफहमी छिपी है। स्वतंत्रता
किसी ईसाई या ईसाइयों को स्वतंत्रता प्रदान नहीं की जा सकती और न ही उनसे छीनी जा सकती है। स्वतंत्रता एक अविभाज्य अधिकार है।
ईसाई।
यदि हम ईसाइयों को स्वतंत्रता प्रदान करने या उनसे इसे छीनने की बात करते हैं, तो हम स्पष्ट रूप से बात कर रहे हैं
ये सच्चे ईसाइयों की बात नहीं है, बल्कि उन लोगों की बात है जो खुद को ईसाई कहते हैं। एक ईसाई कभी असफल नहीं हो सकता।
स्वतंत्र, क्योंकि उसके द्वारा निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति को रोका या बाधित नहीं किया जा सकता है।
कोई भी व्यक्ति या वस्तु।
मनुष्य को अपने जीवन को केवल उसी प्रकार समझना चाहिए जिस प्रकार ईसाई धर्म उसे समझाता है, उसे समझना चाहिए।
यानी, उसका जीवन उसका अपना नहीं है – न तो उसकी अपनी व्यक्तिगत पहचान का, न उसके परिवार का, न ही राज्य का।
लेकिन जिसने उसे संसार में भेजा है, उसे एक बार यह समझ लेना चाहिए कि इसलिए उसे न तो अपनी व्यक्तिगतता के नियम का पालन करना है, न ही अपने परिवार के नियम का, न ही राज्य के नियम का, बल्कि उससे उत्पन्न अनंत नियम का पालन करना है।
जिसके पास वह आया है; और वह न केवल स्वयं को हर मानवीय शक्ति से पूर्णतः मुक्त महसूस करेगा, बल्कि

यहां तक कि ऐसी शक्ति को किसी को भी बाधित करने में सक्षम मानने से भी परहेज करें।
यदि मनुष्य यह समझ ले कि उसके जीवन का उद्देश्य ईश्वर के नियमों का पालन करना है, तो वह नियम स्वयं ही उसका स्थान ले लेगा।
वह अपने लिए अन्य सभी कानूनों को त्याग देगा, और अपनी एकमात्र निष्ठा इसी कानून के प्रति रखेगा, ताकि उसी निष्ठा के कारण प्रत्येक मनुष्य
उनकी नजरों में कानून अपनी सारी बाध्यकारी और नियंत्रणकारी शक्ति खो देगा।
ईसाई किसी भी मानवीय सत्ता से स्वतंत्र होता है क्योंकि वह प्रेम के उस दिव्य नियम को एकमात्र आधार मानता है, जो प्रत्येक मनुष्य की आत्मा में निहित है और जिसे मसीह द्वारा उसकी चेतना के समक्ष लाया गया है।
यह उनके जीवन और अन्य पुरुषों के जीवन का भी मार्गदर्शक था।
एक ईसाई बाहरी हिंसा का शिकार हो सकता है, उसे शारीरिक स्वतंत्रता से वंचित किया जा सकता है, वह अपनी वासनाओं का गुलाम हो सकता है (पाप करने वाला पाप का गुलाम होता है), लेकिन वह आंतरिक बंधन में नहीं हो सकता।
किसी भी खतरे या बाहरी नुकसान की धमकी से विवश होकर कोई ऐसा कार्य करने की अनुभूति जो
अपनी अंतरात्मा के विरुद्ध।
उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता, क्योंकि इस तरह के अभाव और कष्टों के कारण ही ऐसा संभव हो पाता है।
राज्य की जीवन अवधारणा के विरुद्ध शक्तिशाली हथियार भी उसे विवश करने की जरा भी शक्ति नहीं रखते।
अभाव और कष्ट उनसे उस खुशी को छीन लेते हैं जिसके लिए वे जीते हैं; लेकिन इसके विपरीत
ये कष्ट ईसाई के उस सुख को भंग कर सकते हैं, जो ईश्वर की इच्छा को पूरा करने की चेतना में निहित है, और जब ईश्वर की इच्छा को पूरा करने के कारण ही ये कष्ट उस पर थोपे जाते हैं, तो वे इसे और भी तीव्र कर सकते हैं।
और इसलिए ईसाई, जो केवल आंतरिक दिव्य कानून के अधीन है, न केवल इसका पालन नहीं कर सकता है
बाह्य कानून के अधिनियम, जब वे उस दिव्य प्रेम के कानून के अनुरूप नहीं होते जिसे वह स्वीकार करता है (जैसा कि आमतौर पर राज्य के दायित्वों के मामले में होता है), तो वह अपने कर्तव्य को भी नहीं पहचान सकता।
वह किसी भी व्यक्ति या वस्तु के प्रति आज्ञापालन करने में विश्वास नहीं रखता, वह निष्ठा नामक कर्तव्य को पहचान ही नहीं पाता।
एक ईसाई के लिए किसी भी सरकार के प्रति निष्ठा की शपथ लेना - वह कार्य जिसे राज्य के अस्तित्व का आधार माना जाता है - ईसाई धर्म का प्रत्यक्ष त्याग है।
यह वादा भविष्य में बनाए गए या बनाए जाने वाले कानूनों के प्रति बिना शर्त आज्ञापालन का वचन देता है, और इसी वादे के द्वारा यह वचन निहित है।
ईसाई धर्म का त्याग करने का सबसे सकारात्मक तरीका, जिसका अर्थ है जीवन की हर परिस्थिति में आज्ञापालन करना।
वह अपने भीतर केवल प्रेम के दिव्य नियम को ही पहचानता है।
मूर्तिपूजक जीवन की अवधारणा के तहत सांसारिक अधिकारियों की इच्छा का पालन करना संभव था।
खतना, सब्त, प्रार्थना के निश्चित समय और संयम में व्यक्त ईश्वर के नियम का उल्लंघन किए बिना।
कुछ प्रकार के भोजन से परहेज़, इत्यादि। एक नियम दूसरे के विपरीत नहीं था। लेकिन यही ईसाई धर्म और मूर्तिपूजा के बीच का अंतर है। ईसाई धर्म मनुष्य से कुछ भी अपेक्षा नहीं करता।

कुछ निश्चित नकारात्मक कृत्यों को छोड़कर, यह उसे मनुष्यों के साथ एक नए, भिन्न संबंध में स्थापित करता है, जिससे यह परिणाम हो सकता है कि

अत्यंत विविध कार्य, जिन्हें पहले से परिभाषित नहीं किया जा सकता। इसलिए एक ईसाई न केवल किसी अन्य व्यक्ति की इच्छा का पालन करने का वादा नहीं कर सकता, जब तक कि वह यह न जान ले कि उस इच्छा में क्या अपेक्षित होगा; बल्कि वह

वह न केवल मनुष्य के बदलते नियमों का पालन नहीं कर सकता, बल्कि किसी भी समय कोई निश्चित कार्य करने का वादा भी नहीं कर सकता।

किसी निश्चित समय के लिए किसी कार्य को न करना, या किसी निश्चित समय के लिए किसी भी कार्य से परहेज करना। क्योंकि वह यह नहीं जान सकता कि किसी भी समय उससे प्रेम के उस ईसाई नियम के अनुसार क्या अपेक्षित होगा, जिसका पालन करना ही जीवन का अर्थ है। उसके लिए। ईसाई, भविष्य में मनुष्यों के नियमों की बिना शर्त पूर्ति का वादा करते हुए,

उस वादे से यह स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होता है कि ईश्वर का आंतरिक नियम उसके जीवन का एकमात्र नियम नहीं है।

किसी ईसाई के लिए मनुष्यों या मनुष्यों के कानूनों के प्रति आज्ञापालन का वादा करना ठीक वैसा ही है जैसे कोई मजदूर बंधा हुआ हो।

एक नियोक्ता को यह भी वादा करना चाहिए कि वह बाहरी लोगों द्वारा दिए गए हर आदेश का पालन करेगा। एक व्यक्ति दो स्वामियों की सेवा नहीं कर सकता।

ईसाई व्यक्ति मानवीय सत्ता से स्वतंत्र होता है, क्योंकि वह केवल ईश्वर की सत्ता को ही स्वीकार करता है।

वह अपने भीतर मसीह द्वारा प्रकट किए गए उनके नियम को पहचानता है और स्वेच्छा से उसका पालन करता है।

और यह स्वतंत्रता संघर्ष के माध्यम से नहीं, न ही जीवन के मौजूदा स्वरूपों के विनाश से, बल्कि केवल जीवन की व्याख्या में परिवर्तन से प्राप्त होती है। यह स्वतंत्रता सर्वप्रथम ईसाई धर्म से उत्पन्न होती है।

अपने गुरु द्वारा प्रकट किए गए प्रेम के नियम को सभी मानवीय आवश्यकताओं के लिए पूर्णतः पर्याप्त मानते हुए।

संबंधों के कारण, वह बल के हर प्रयोग को अनावश्यक और गैरकानूनी मानता है; और दूसरा, इस तथ्य से कि वे वंचनाएँ और पीड़ाएँ, या वंचनाओं और पीड़ाओं की धमकियाँ (जो कम करती हैं)

जीवन की सामाजिक अवधारणा के मनुष्य से लेकर आज्ञापालन की आवश्यकता तक) ईसाई तक, उसके विभिन्न दृष्टिकोणों से।

जीवन की अवधारणा, स्वयं को मात्र अस्तित्व की अपरिहार्य स्थितियों के रूप में प्रस्तुत करती है। और इन स्थितियों को, बलपूर्वक चुनौती दिए बिना, वह धैर्यपूर्वक सहन करता है, जैसे कि बीमारी, भूख, और हर तरह की पीड़ा।

अन्य कठिनाइयाँ, लेकिन वे उसके कार्यों के लिए मार्गदर्शक नहीं बन सकतीं। ईसाई के लिए एकमात्र मार्गदर्शक...

कर्मों का आधार उसके भीतर निवास करने वाले दिव्य सिद्धांत में निहित है, जिसे रोका या नियंत्रित नहीं किया जा सकता है।

कुछ भी।

ईसाई अपने गुरु पर लागू भविष्यवाणी के शब्दों के अनुसार कार्य करता है: “वह ऐसा नहीं करेगा”

न तो प्रयास करो, न रोओ; न ही गलियों में कोई उसकी आवाज सुनेगा। वह कुचले हुए सरकंडे को नहीं तोड़ेगा, और

जब तक वह न्याय को विजय तक न पहुंचा दे, तब तक वह जलती हुई बाती को नहीं बुझाएगा। (मत्ती 12:19,20)

ईसाई किसी से विवाद नहीं करेगा, न ही किसी पर हमला करेगा और न ही किसी के खिलाफ हिंसा का प्रयोग करेगा।

इसके विपरीत, वह हिंसा का विरोध किए बिना उसे सहन करेगा। लेकिन हिंसा के प्रति इसी रवैये से वह
वह स्वयं तो स्वतंत्र होगा ही, साथ ही वह समस्त विश्व को सभी बाहरी शक्तियों से मुक्त कर देगा।
"तुम सत्य को जानोगे, और सत्य तुम्हें स्वतंत्र करेगा।" यदि इस बात में कोई संदेह हो तो
ईसाई धर्म ही सत्य है, वह पूर्ण स्वतंत्रता है जिसे कोई भी सीमित नहीं कर सकता, जिसका अनुभव मनुष्य करता है।
जिस क्षण वह ईसाई जीवन सिद्धांत को अपना लेता है, वही इस सिद्धांत का अकाट्य प्रमाण होगा।
सच।
वर्तमान अवस्था में मनुष्य मधुमक्खियों के झुंड की तरह हैं जो एक शाखा पर गुच्छे में लटके हुए हैं।
शाखा पर मधुमक्खियों की स्थिति अस्थायी होती है, और इसे अनिवार्य रूप से बदलना पड़ता है। उन्हें शुरुआत करनी होगी
और अपना निवास स्थान खोज लेते हैं। हर मधुमक्खी यह जानती है और अपनी और दूसरों की स्थिति बदलना चाहती है, लेकिन जब तक बाकी
सभी ऐसा नहीं करतीं, तब तक कोई भी ऐसा नहीं कर सकती। वे सभी एक ही जगह से शुरुआत नहीं कर सकतीं।
एक बार, क्योंकि एक दूसरे से चिपकी रहती है और उसे झुंड से अलग होने से रोकती है, और इसलिए
वे सभी वहीं लटके रहते हैं। ऐसा लगता है कि मधुमक्खियाँ कभी भी अपनी स्थिति से बच नहीं सकतीं, ठीक वैसे ही जैसे सांसारिक मनुष्य,
जीवन की राज्य-परिकल्पना के जाल में फँसे हुए, कभी भी बच नहीं सकते। और
अगर हर मधुमक्खी एक जीवित, स्वतंत्र प्राणी न होती, तो उनके बचने का कोई रास्ता नहीं होता।
इसके अपने पंख हैं। इसी प्रकार, यदि प्रत्येक मनुष्य एक सजीव प्राणी न होता, तो उसके लिए भी कोई बचाव नहीं होता।
ईसाई जीवन की अवधारणा में प्रवेश करने की क्षमता के साथ।
यदि उड़ने में सक्षम प्रत्येक मधुमक्खी उड़ने का प्रयास न करे, तो अन्य मधुमक्खियाँ भी कभी नहीं हिलेंगी, और झुंड
वह कभी भी अपनी स्थिति नहीं बदलेगा। और यदि वह व्यक्ति जिसने जीवन की ईसाई अवधारणा में महारत हासिल कर ली है
अगर कोई दूसरे लोगों के इस विचार के अनुसार जीना शुरू करने का इंतज़ार किए बिना ऐसा नहीं करेगा, तो मानवता कभी अपना रुख नहीं
बदलेगी। लेकिन अगर सिर्फ एक मधुमक्खी अपने पंख फैलाकर उड़ना शुरू कर दे, तो उसके बाद
एक और, फिर एक और, और चिपका हुआ, निष्क्रिय समूह मधुमक्खियों के एक स्वतंत्र रूप से उड़ने वाले झुंड में बदल जाएगा।
ठीक उसी प्रकार, केवल एक व्यक्ति को ही जीवन को उस दृष्टि से देखने दें जिस दृष्टि से ईसाई धर्म उसे देखने की शिक्षा देता है, और उसके बाद
दूसरे और तीसरे को भी ऐसा ही करने दें, और इस प्रकार जीवन की अवस्थागत अवधारणा में अस्तित्व का जादुई चक्र चलता रहेगा।
जिससे बचने का कोई रास्ता नहीं दिख रहा था, उसे तोड़ दिया जाएगा।

लेकिन लोग सोचते हैं कि इस तरीके से सभी मनुष्यों को मुक्त करना बहुत धीमी प्रक्रिया है, उन्हें कोई और तरीका खोजना होगा जिससे वे सभी
मनुष्यों को एक साथ मुक्त कर सकें। यह ठीक वैसा ही है जैसे मधुमक्खियाँ जो उड़ान भरना चाहती हैं
और उड़ जाने वालों को झुंड के एक-एक करके शुरू होने का इंतजार करना बहुत लंबी प्रक्रिया समझनी चाहिए; और
उन्हें यह सोचना चाहिए कि उन्हें कोई ऐसा उपाय ढूंढना चाहिए जिससे प्रत्येक मधुमक्खी को अपने पंख फैलाकर उड़ने की आवश्यकता न हो,
बल्कि पूरा झुंड एक साथ अपनी इच्छानुसार उड़ सके। लेकिन

यह संभव नहीं है; जब तक पहली, दूसरी, तीसरी, सौवीं मधुमक्खी अपने पंख फैलाकर उड़ नहीं जाती।
अपनी मर्जी से, झुंड उड़कर नहीं जाएगा और अपना नया जीवन शुरू नहीं करेगा। जब तक प्रत्येक व्यक्ति ईसाई जीवन अवधारणा को अपना नहीं लेता और उसके अनुसार जीना शुरू नहीं करता, तब तक कोई समाधान नहीं हो सकता।
मानव जीवन की समस्या, न कि जीवन के किसी नए स्वरूप की स्थापना।
हमारे समय की सबसे उल्लेखनीय घटनाओं में से एक गुलामी की वकालत करना है, जो कि
इसका प्रचार-प्रसार सरकारों द्वारा नहीं किया जाता, जिनके लिए यह अपरिहार्य है, बल्कि उन व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जो समाजवादी सिद्धांतों की वकालत करते हुए स्वयं को स्वतंत्रता के रक्षक मानते हैं।
ये लोग यह मत प्रस्तुत करते हैं कि जीवन में सुधार लाना, जीवन की वास्तविकताओं को सामने लाना
अंतरात्मा के साथ सामंजस्य व्यक्तिगत प्रयासों के फलस्वरूप नहीं, बल्कि समाज के किसी न किसी संभावित पुनर्निर्माण के परिणामस्वरूप स्वतः ही प्राप्त होगा।
यह धारणा प्रचारित की जाती है कि पुरुषों को अपनी इच्छा से अपने पैरों पर चलकर वहाँ नहीं जाना चाहिए जहाँ वे जाना चाहते हैं, बल्कि कि उनके पैरों के नीचे की ज़मीन किसी तरह खिसक जाएगी, ताकि वे अपने पैरों को हिलाए बिना उस पर चलकर वहाँ पहुँच सकें जहाँ उन्हें जाना चाहिए। और इसलिए, उनके सभी प्रयास इस ओर निर्देशित होने चाहिए, न कि
अपनी क्षमता के अनुसार उस दिशा में आगे बढ़ना, जिस दिशा में उन्हें जाना चाहिए, लेकिन स्थिर खड़े रहना और
इस प्रकार का फर्श बनाना।
राजनीतिक अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में एक सिद्धांत प्रतिपादित किया जाता है जिसका सार यह है कि जितनी बुरी चीजें होंगी, उतनी ही बेहतर होंगी; कि पूंजी का संचय जितना अधिक होगा, और परिणामस्वरूप उतना ही अधिक उत्पीड़न होगा।
जैसे-जैसे मुक्ति का दिन नजदीक आता है, श्रमिक वर्ग के लिए हर संभव व्यक्तिगत प्रयास आवश्यक हो जाता है।
पूंजी के उत्पीड़न से मनुष्य का स्वयं को मुक्त करना व्यर्थ है। शासन के क्षेत्र में यह तर्क दिया जाता है कि सरकार की शक्ति जितनी अधिक होगी, जो इस सिद्धांत के अनुसार होनी चाहिए...
निजी जीवन के हर उस विभाग में हस्तक्षेप करना जिसमें इसने अभी तक हस्तक्षेप नहीं किया है, उतना ही बेहतर होगा, और
अतः हमें निजी जीवन में सरकार के हस्तक्षेप का सहारा लेना चाहिए। राजनीति और अंतर्राष्ट्रीय मामलों में यह तर्क दिया जाता है कि विनाश के साधनों में सुधार,
हथियारों की बढ़ती संख्या से सम्मेलनों के माध्यम से युद्ध करना आवश्यक हो जाएगा।
मध्यस्थता इत्यादि। और आश्चर्य की बात यह है कि मनुष्य इतने मूर्ख हैं कि वे इन बातों पर विश्वास करते हैं।
इस तथ्य के बावजूद कि जीवन का पूरा क्रम, उनके द्वारा उठाया गया हर कदम, यह दर्शाता है कि वे सिद्धांत विश्वास के कितने अयोग्य हैं।
लोग उत्पीड़न से पीड़ित हैं, और उन्हें इस उत्पीड़न से मुक्ति दिलाने के लिए उन्हें सलाह दी जाती है।
अपनी स्थिति में सुधार के लिए सामान्य उपाय तैयार करना, जो उपाय अधिकारियों को सौंपे जाने हैं, और स्वयं अधिकारियों के प्रति आज्ञाकारिता बनाए रखना। और जाहिर है कि यह सब
इसका परिणाम केवल अधिकारियों के हाथों में अधिक शक्ति और परिणामस्वरूप अधिक दमन ही होता है।
यह से।

मनुष्य की कोई भी गलती उन्हें उस लक्ष्य से इतना दूर नहीं ले जाती जिसके लिए वे संघर्ष कर रहे हैं।
ठीक इसी की तरह। वे अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कई तरह के काम करते हैं, लेकिन वह नहीं जो वे करते हैं।
एक सरल, स्पष्ट बात जो हर किसी की पहुँच में है। वे बदलाव लाने के लिए सबसे सूक्ष्म तरीके अपनाते हैं।
ऐसी स्थिति जो उन्हें परेशान करती है, लेकिन इतनी सरल नहीं है, इसका मतलब यह है कि सभी को ऐसा करने से बचना चाहिए जो उस स्थिति की ओर ले जाता है।
मुझे एक बहादुर पुलिस अधिकारी की कहानी सुनाई गई है, जो एक ऐसे गाँव में आया जहाँ किसान
विद्रोह भड़क उठा था और सेना को बुलाया गया था, और उसने निकोलस प्रथम की भावना से प्रेरित होकर, केवल अपने व्यक्तिगत प्रभाव से विद्रोह को शांत करने का बीड़ा उठाया। उसने छड़ियों के कुछ ढेर मंगवाने का आदेश दिया, और
सभी किसानों को एक खलिहान में इकट्ठा करके, वह उनके साथ अंदर चला गया और अपने पीछे दरवाजा बंद कर दिया।
सबसे पहले, उसने अपनी ऊँची-ऊँची धमकियों से किसानों को इतना डरा दिया कि वे उसके सामने झुक गए और उसके आदेश पर एक-दूसरे को कोड़े मारने लगे। और इस तरह वे एक-दूसरे को तब तक कोड़े मारते रहे जब तक कि एक मूर्ख नहीं मिल गया।
जिसने खुद को कोड़े खाने नहीं दिया और अपने साथियों से चिल्लाकर कहा कि वे एक-दूसरे को कोड़े न मारें।

तभी कोड़े मारना बंद हुआ और पुलिस अधिकारी भाग निकला। खैर, इस मूर्ख की सलाह को राज्य की जीवन अवधारणा वाले लोग कभी नहीं मानेंगे, जो एक-दूसरे को कोड़े मारते रहते हैं, और
लोगों को यह सिखाएं कि आत्म-निंदा का यही कार्य मानवीय ज्ञान का अंतिम शब्द है।
वास्तव में, क्या हम पुरुषों द्वारा स्वयं को कोड़े मारने का इससे अधिक आश्चर्यजनक उदाहरण सोच सकते हैं कि हमारे समय के पुरुष अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए उनसे अपेक्षित कर्तव्यों का पालन कितनी विनम्रता से करते हैं?
गुलामी में, विशेषकर सैन्य सेवा के कर्तव्य में? हम लोगों को खुद को गुलाम बनाते और पीड़ित होते देखते हैं।
इस गुलामी को स्वीकार करना और यह मानना कि ऐसा होना ही है, कि इससे कोई फर्क नहीं पड़ता और यह मनुष्यों की मुक्ति में बाधा नहीं डालेगा, जिसकी तैयारी कहीं न कहीं, किसी न किसी तरह, गुलामी के लगातार बढ़ते रहने के बावजूद की जा रही है।
दरअसल, आज के किसी भी व्यक्ति को ले लीजिए (मेरा मतलब किसी सच्चे ईसाई से नहीं है, बल्कि एक औसत व्यक्ति से है)।
आज के समय के, शिक्षित हों या अशिक्षित, आस्तिक हों या नास्तिक, अमीर हों या गरीब, विवाहित हों या
अविवाहित। ऐसा व्यक्ति अपने काम में लगा रहता है या अपने मनोरंजन में मग्न रहता है, अपनी मेहनत का फल खुद पर या अपने करीबियों पर खर्च करता है, और हर किसी की तरह, हर तरह के प्रतिबंध से नफरत करता है।
अभाव, कलह और पीड़ा। ऐसा व्यक्ति शांतिपूर्वक अपने मार्ग पर चल रहा होता है, तभी अचानक लोग
आकर उससे कहो, “पहले, हमसे वादा करो और शपथ लो कि तुम हमारे हर आदेश का अंधाधुंध पालन करोगे, और हमारी हर योजना, निर्णय और घोषणा को पूर्णतः सही और प्रामाणिक मानोगे।”
कानून। दूसरा, अपनी मेहनत के फल का एक हिस्सा हमें सौंप दें ताकि हम उसका निपटान कर सकें - हम उस पैसे का उपयोग करेंगे।

आपको गुलामी में रखने और हमारे आदेशों का जबरदस्ती विरोध करने से रोकने के लिए। तीसरा, दूसरों को चुनकर या स्वयं निर्वाचित होकर सरकार में दिखावटी हिस्सेदारी लेना, यह जानते हुए कि सरकार
आप और आप जैसे अन्य लोगों द्वारा कही जाने वाली मूर्खतापूर्ण बातों की परवाह किए बिना आगे बढ़ेंगे, और
यह जानते हुए कि इसकी कार्यवाही हमारी इच्छा के अनुसार होगी, उन लोगों की इच्छा के अनुसार जिनके पास सेना है।
चौथे, एक निश्चित समय पर कानून की अदालतों में आओ और उन निरर्थक क्रूरताओं में अपना हिस्सा लो जो हम पापियों और भ्रष्ट लोगों पर, जैसे कि कारावास, निर्वासन आदि के रूप में करते हैं।
एकांत कारावास और मृत्यु। और पाँचवीं और आखिरी बात, इन सबसे भी बढ़कर, इस तथ्य के बावजूद कि आप
भले ही आप अन्य राष्ट्रों के लोगों के साथ अत्यंत मैत्रीपूर्ण संबंध रखते हों, लेकिन जिस क्षण हम आपको ऐसा करने का आदेश दें, उसी क्षण उन लोगों को अपना शत्रु मानने के लिए तैयार रहें जिन्हें हम आपको अपने शत्रु के रूप में इंगित करते हैं; और सहायता करने के लिए तैयार रहें।
स्वयं या प्रतिनिधि के माध्यम से, उनके पुरुषों, महिलाओं, बच्चों और अन्य लोगों के विनाश, लूटपाट और हत्या में।
एक ही उम्र के लोग - संभवतः आपके अपने रिश्तेदार या संबंधी - यदि यह हमारे लिए आवश्यक हो।"
यह उम्मीद की जा सकती है कि आज के समय में जिस भी व्यक्ति में थोड़ी सी भी समझ बची है, वह इसका जवाब देगा।
ऐसी आवश्यकताओं को देखकर, "लेकिन मुझे यह सब क्यों करना चाहिए?" कोई भी सोचेगा कि हर समझदार व्यक्ति को यही कहना चाहिए।
आश्चर्य से उसने कहा, “मुझे उन सभी बातों का पालन करने का वादा क्यों करना चाहिए जो पहले से ही निर्धारित की गई हैं?”
सैलिसबरी द्वारा, फिर ग्लैडस्टोन द्वारा; एक दिन बोलेंजर द्वारा, और दूसरे दिन संसद द्वारा; एक दिन पीटर तृतीय द्वारा, अगले दिन कैथरीन द्वारा, और उसके अगले दिन पौगाशेफ द्वारा; एक दिन बवेरिया के एक पागल राजा द्वारा, दूसरे दिन...
विलियम? मैं उन्हें दुष्ट या मूर्ख लोग जानते हुए भी उनकी बात मानने का वादा क्यों करूँ?
क्या मैं उन्हें जानता भी हूँ? मैं अपनी मेहनत का फल उन्हें करों के रूप में क्यों दूँ, यह जानते हुए कि वह पैसा अधिकारियों, जेलों, गिरजाघरों, सेनाओं आदि के भरण-पोषण पर खर्च किया जाएगा?
जो हानिकारक हैं, और क्या मैं स्वयं को गुलाम बना लूँ? मुझे खुद को क्यों दंडित करना चाहिए? मुझे अपना समय क्यों बर्बाद करना चाहिए?
मैं अपना समय बर्बाद कर रहा हूँ और खुद को धोखा दे रहा हूँ, चुनाव में भाग लेकर और सरकार में हिस्सा होने का दिखावा करके दुष्टों को वैधता का आभास दे रहा हूँ, जबकि मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि असलियत कुछ और ही है।
सरकार की बागडोर उन लोगों के हाथों में है जिन्होंने सेना पर कब्जा कर लिया है? मुझे क्यों जाना चाहिए?
कानून की अदालतें उन लोगों के मुकदमे और दंड में भाग लेंगी जिन्होंने पाप किया है, यह जानते हुए कि यदि मैं
एक ईसाई के लिए, क्या प्रतिशोध का कानून प्रेम के कानून से प्रतिस्थापित हो जाता है, और यदि मैं एक शिक्षित व्यक्ति हूँ, तो क्या मैं यह समझ सकता हूँ कि दंड सुधार नहीं करते, बल्कि उन लोगों को और भ्रष्ट कर देते हैं जिन पर वे लागू होते हैं? और सबसे बढ़कर, क्यों?
क्या मुझे पड़ोसी राष्ट्र के लोगों को शत्रु मानना चाहिए, जिनके साथ मैं अब तक रहता आया हूँ?
जिनके साथ मैं प्रेम और सद्भाव से रहना चाहता हूँ, उन्हें मारना, लूटना या उन्हें दुख में डालना चाहता हूँ, केवल इसलिए कि यरूशलेम के मंदिर की चाबियाँ एक ही आर्कबिशप के हाथों में रहें, न कि किसी और के।
एक और बात यह है कि बुल्गारिया में एक जर्मन राजकुमार हो सकता है, न कि कोई दूसरा, या यह कि अंग्रेज, न कि कोई और।
क्या अमेरिकी व्यापारी सील पकड़ सकते हैं?

और सबसे बढ़कर, मुझे अपने ही भाइयों की हत्या में स्वयं भाग क्यों लेना चाहिए या दूसरों को क्यों काम पर रखना चाहिए?
रिश्तेदार? मैं खुद को क्यों कोड़े मारूँ? यह मेरे लिए बिल्कुल अनावश्यक है; यह मेरे लिए हानिकारक है, और

हर दृष्टिकोण से यह अनैतिक, नीच और घृणित है। तो मुझे ऐसा क्यों करना चाहिए? यदि आप मुझसे कहते हैं कि ऐसा न करने पर मुझे किसी से कुछ हानि होगी, तो सबसे पहले तो मैं किसी से भी किसी प्रकार की हानि की उम्मीद नहीं कर सकता।
यदि मैं आपकी बात मान लूँ तो मुझे उतना ही गंभीर नुकसान होगा जितना कि आप मुझे पहुँचाएँगे; और दूसरी बात, यह मेरे लिए पूरी तरह स्पष्ट है कि
अगर हम खुद को कोड़े नहीं मारेंगे, तो कोई हमें कोड़े नहीं मारेगा।
“जहां तक सरकार की बात है – इसका मतलब है ज़ार, सरकारी मंत्री और कलम वाले अधिकारी।”
ऐसे हाथ जो हमें कुछ भी करने के लिए मजबूर नहीं कर सकते, जैसे उस पुलिस अधिकारी ने किसानों को मजबूर किया था;
जो लोग हमें अदालत, जेल और फांसी तक घसीटेंगे, वे न तो सम्राट हैं और न ही कलम लिए अधिकारी, बल्कि वे आम लोग हैं जो हमारी ही तरह की स्थिति में हैं। और यह उतना ही निष्फल है।
मेरे जैसे कोड़े खाना उनके लिए हानिकारक और अप्रिय होगा, और इसलिए पूरी संभावना है कि अगर मैं
अगर वे अपनी आंखें खोलें तो वे न केवल मेरे साथ हिंसा नहीं करेंगे, बल्कि ठीक वही करेंगे जो मैं कर रहा हूं।
“तीसरा, अगर ऐसा हो भी जाए कि मुझे इसके लिए भुगतना पड़े, तब भी मेरे लिए सामान्य ज्ञान और सही बात के लिए खड़े होने के लिए देश निकाला या जेल जाना बेहतर होगा – जो कि, अगर आज नहीं तो कम से कम
बहुत कम समय में ही विजय प्राप्त करना बेहतर है – बजाय इसके कि मूर्खता और गलत काम के लिए भुगतना पड़े।
सीधे अंत हो जाएगा। और इसलिए, उस स्थिति में भी, मेरे द्वारा निर्वासित किए जाने, जेल में बंद किए जाने या मुझे फाँसी दिए जाने का जोखिम उठाना बेहतर है, बजाय इसके कि मैं अपने ही दोष के कारण जीवन भर गुलामी में रहूँ।
दुष्ट पुरुषों। विजयी शत्रुओं द्वारा नष्ट होने और बच जाने की संभावना से यह बेहतर है।
एक तोप के लिए, या किसी के काम की न होने वाली जमीन के एक टुकड़े के लिए, या फिर एक झंडे नामक एक अर्थहीन चिथड़े के लिए लड़ते हुए, उनके द्वारा मूर्खतापूर्ण ढंग से प्रताड़ित और मार डाला गया।
मैं खुद को कोड़े नहीं मारना चाहता और न ही मारूंगा। मेरे पास ऐसा करने का कोई कारण नहीं है। अगर आप चाहें तो खुद मार लीजिए।
मैं चाहता हूं कि यह काम हो जाए; लेकिन मैं इसे नहीं करूंगा।
किसी को लग सकता था कि केवल धार्मिक या नैतिक भावना ही नहीं, बल्कि सामान्य ज्ञान और दूरदर्शिता ही आज के प्रत्येक व्यक्ति को उस तरह से जवाब देने और कार्य करने के लिए प्रेरित करेगी। लेकिन ऐसा नहीं है।
राज्य की जीवन अवधारणा में विश्वास रखने वाले लोगों का मानना है कि उस तरह से कार्य करना आवश्यक नहीं है, बल्कि यह अनुचित भी है। यह उनके उद्देश्य, यानी मनुष्यों को गुलामी से मुक्ति दिलाने में बाधक है। उनका मानना है कि हमें पुलिस अधिकारी के किसानों की तरह एक-दूसरे को कोड़े मारते रहना चाहिए, और खुद को इस बात से तसल्ली देनी चाहिए कि...
यह इस बात का प्रतिबिंब है कि हम सभाओं और बैठकों में चर्चा कर रहे हैं, ट्रेड यूनियन की स्थापना कर रहे हैं, मार्च निकाल रहे हैं।

1 मई को सड़कों पर उतरकर, साजिशें रचकर, और चुपके से उस सरकार को चिढ़ाकर जो हमें कोड़े मार रही है, और इन सब के माध्यम से यह होगा कि, खुद को और अधिक गुलाम बनाकर
और भी गहरे बंधन से, हम बहुत जल्द मुक्त हो जाएंगे।
गुलामी से पुरुषों की मुक्ति में सबसे बड़ी बाधा यही भयानक त्रुटि है।
प्रत्येक व्यक्ति अपनी ऊर्जा को स्वयं को मुक्त करने, जीवन के प्रति अपनी अवधारणा को बदलने में लगा रहा है, लोग स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए एक बाहरी एकीकृत विधि की तलाश करते हैं, और अपनी जंजीरों को तेजी से और तेजी से जकड़ते जा रहे हैं।
यह कुछ ऐसा ही है जैसे लोग यह दावा करें कि आग जलाने के लिए किसी भी लकड़ी को जलाने की आवश्यकता नहीं है।
कोयले थे, लेकिन जो आवश्यक था वह केवल कोयलों को एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित करना था। फिर भी, यह तथ्य कि सभी मनुष्यों की स्वतंत्रता केवल व्यक्तिगत व्यक्तियों की स्वतंत्रता के माध्यम से ही प्राप्त होगी, और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है।
और समय बीतने के साथ-साथ यह और भी स्पष्ट होता जाता है। ईसाई अवधारणा के नाम पर, व्यक्तिगत मनुष्यों की स्वतंत्रता।
राज्य के प्रभुत्व से जीवन को होने वाला नुकसान, जो पहले एक असाधारण और अनदेखी घटना थी, हाल ही में राज्य के अधिकारियों के लिए एक खतरनाक मुद्दा बन गया है।
यदि अतीत में, रोमन काल में, ऐसा हुआ होता कि एक ईसाई ने अपने धर्म को स्वीकार किया होता और
उन्होंने बलिदानों में भाग लेने और सम्राटों या देवताओं की पूजा करने से इनकार कर दिया; या मध्य युग में एक
ईसाईयों द्वारा मूर्तियों की पूजा करने से इनकार करना, या पोप के अधिकार को स्वीकार न करना – ये मामले मूलतः संयोगवश थे। किसी व्यक्ति को अपने विश्वास को स्वीकार करने की बाध्यता का सामना करना पड़ सकता है, या
वह अपना पूरा जीवन इस आवश्यकता के अधीन आए बिना बिता सकता था। लेकिन अब सभी मनुष्य, बिना किसी अपवाद के,
उन्हें अपने विश्वास की इस परीक्षा से गुजरना पड़ता है। आज के प्रत्येक व्यक्ति को या तो मूर्तिपूजा के क्रूर जीवन में भाग लेना पड़ता है, या फिर उसमें भाग लेने से पूरी तरह इनकार करना पड़ता है। और दूसरे, उन दिनों में
देवताओं, मूर्तियों या पोप की पूजा करने से इनकार करने के मामले ऐसी घटनाएँ नहीं थीं जिनका कोई ठोस प्रभाव हो।
राज्य पर इसका प्रभाव पड़ता था। चाहे लोग देवताओं, मूर्तियों या पोप की पूजा करते हों या न करते हों, राज्य उतना ही शक्तिशाली बना रहता था। लेकिन अब अधार्मिक मांगों का पालन करने से इनकार करने के मामले सामने आ रहे हैं।

सरकार राज्य के अधिकार की जड़ पर ही प्रहार कर रही है, क्योंकि राज्य का संपूर्ण अधिकार इन अमानवीय मांगों के अनुपालन पर आधारित है।
समय के साथ-साथ विश्व की संप्रभु शक्तियां ऐसी स्थिति में आ गई हैं कि,
अपनी सुरक्षा के लिए, उन्हें सभी मनुष्यों से ऐसे कार्यों की अपेक्षा करनी चाहिए जो सच्चे ईसाई धर्म का दावा करने वाले मनुष्य नहीं कर सकते।
और इसलिए हमारे दिनों में किसी भी व्यक्ति द्वारा सच्चे ईसाई धर्म का हर दावा, इस बात पर प्रहार करता है कि
यह राज्य की सबसे आवश्यक शक्ति है, और अनिवार्य रूप से सभी की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है।
कोई सोच सकता है कि दर्जनों पागलों जैसी घटना को क्या महत्व दिया जा सकता है?
लोग, जैसा कि लोग उन्हें कहेंगे, सरकार के प्रति निष्ठा की शपथ लेने से इनकार कर रहे हैं, इनकार कर रहे हैं...

क्या आप करों का भुगतान करने, कानूनी कार्यवाही में भाग लेने या सैन्य सेवा में शामिल होने के लिए ऐसा करते हैं?
इन लोगों को दंडित किया जाता है और दूर देश निकाला दे दिया जाता है, और जीवन पहले की तरह चलता रहता है। कोई सोच सकता है कि ऐसी घटनाओं का कोई महत्व नहीं है; लेकिन फिर भी, ये घटनाएं ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं।
जो राज्य की शक्ति को कमजोर करेगा और मनुष्यों की स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त करेगा। ये वे उपाय हैं जो राज्य की शक्ति को कमज़ोर करेंगे और मानव स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त करेंगे।
मधुमक्खियाँ झुंड से अलग होने लगती हैं और उसके पास ही उड़ती रहती हैं, तब तक इंतज़ार करती हैं जब तक कि पूरा झुंड उनके पीछे जाने से रोका न जा सके। और सरकारें यह जानती हैं।
और वे समाजवादियों, साम्यवादियों और अराजकतावादियों और उनकी साजिशों से भी ज्यादा ऐसी घटनाओं से डरते हैं।
डायनामाइट बम।
एक नए युग का आरंभ हो रहा है। सार्वभौमिक नियम और स्थापित व्यवस्था के अनुसार, यह आवश्यक है कि सभी
प्रजा को नई सरकार के प्रति निष्ठा की शपथ लेनी चाहिए। इस संबंध में एक सामान्य आदेश जारी किया गया है।
इसका प्रभाव यह हुआ कि सभी को शपथ लेने के लिए परिषद भवनों में बुलाया गया। अचानक पर्म में एक आदमी,
तुला में एक और, मॉस्को में तीसरा और कालूगा में चौथा व्यक्ति शपथ नहीं लेने की घोषणा करते हैं, और हालांकि उनके बीच कोई संवाद नहीं है, वे सभी अपने इनकार का कारण एक ही आधार पर बताते हैं।
अर्थात्, मसीह के नियम के अनुसार शपथ लेना निषिद्ध है, और यदि शपथ लेना निषिद्ध न भी होता तो भी
निषिद्ध होने के कारण, वे मसीह के नियम की भावना के अनुसार, शपथ में उनसे अपेक्षित बुरे कार्यों को करने का वादा नहीं कर सकते थे, जैसे कि उन सभी के खिलाफ सूचना देना जो उनके हितों के विरुद्ध कार्य कर सकते हैं।
सरकार, या अपनी सरकार की रक्षा के लिए हथियारों का इस्तेमाल करना या उसके दुश्मनों पर हमला करना। उन्हें लाया जाता है
ग्रामीण पुलिस अधिकारियों, जिला पुलिस कप्तानों, पुजारियों और राज्यपालों के समक्ष। उन्हें चेतावनी दी जाती है, उनसे पूछताछ की जाती है, उन्हें धमकाया जाता है और दंडित किया जाता है; लेकिन वे अपने संकल्प पर अडिग रहते हैं और शपथ नहीं लेते। और
जिन लाखों लोगों ने शपथ ली, उनमें से कुछ दर्जन लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने शपथ नहीं ली और अब भी जीवित हैं।
और उनसे पूछताछ की जाती है:
“क्या, आपने शपथ नहीं ली?”
नहीं, मैंने शपथ नहीं ली।
और फिर क्या हुआ – कुछ नहीं?
"कुछ नहीं।"
किसी राज्य के सभी नागरिक कर देने के लिए बाध्य होते हैं। और सभी लोग कर देते हैं, जब तक कि अचानक एक व्यक्ति
खार्किव में एक, टवर में एक और, और समारा में एक तीसरा, करों का भुगतान करने से इनकार करते हैं - मानो सभी मिलीभगत में हों।
दोनों एक ही बात कह रहे हैं। एक कहता है कि वह तभी भुगतान करेगा जब उसे बताया जाएगा कि उससे लिया गया पैसा किस उद्देश्य पर खर्च किया जाएगा। “अगर यह अच्छे कामों के लिए है,” वह कहता है, “तो वह स्वेच्छा से देगा, और अधिक।”
उससे अपेक्षित से भी अधिक। यदि यह बुरे कर्मों के लिए है, तो वह स्वेच्छा से कुछ भी नहीं देगा, क्योंकि

वह जिस ईसा मसीह के नियम का अनुयायी है, उसके अनुसार वह बुरे कामों में भाग नहीं ले सकता। अन्य लोग भी यही बात कहते हैं।
दूसरे शब्दों में कहें तो, वे स्वेच्छा से करों का भुगतान नहीं करेंगे।
जिनके पास कुछ भी छीना जा सकता है, उनसे उनकी संपत्ति बलपूर्वक छीन ली जाती है; जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जो
उनके पास कुछ नहीं होता, वे अकेले रह जाते हैं।
“क्या, आपने टैक्स नहीं चुकाया?”
नहीं, मैंने इसका भुगतान नहीं किया।
और फिर क्या हुआ – कुछ नहीं?
"कुछ नहीं।"
पासपोर्ट की व्यवस्था है। अपने निवास स्थान से बाहर जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को पासपोर्ट रखना अनिवार्य है।
एक, और उस पर शुल्क का भुगतान करना। अचानक विभिन्न स्थानों पर लोग यह घोषणा करते हुए पाए जाते हैं कि एक सामान ले जाना

पासपोर्ट आवश्यक नहीं है, किसी को भी बलपूर्वक अस्तित्व में आए राज्य पर अपनी निर्भरता स्वीकार नहीं करनी चाहिए; और ये लोग पासपोर्ट नहीं रखते, न ही उन पर लगने वाला शुल्क चुकाते हैं। और फिर, यह है...
उन लोगों को किसी भी तरह से आवश्यक कार्य करने के लिए मजबूर करना असंभव है। वे उन्हें जेल भेज देते हैं, और छोड़ देते हैं।
उन्हें फिर से बाहर निकाल दिया गया, और ये लोग बिना पासपोर्ट के रहते हैं।
सभी किसानों को कुछ पुलिस पदों को भरना अनिवार्य है – ग्राम कांस्टेबल, चौकीदार आदि।
इसी तरह आगे भी। अचानक खार्किव में एक किसान इस कर्तव्य को निभाने से इनकार कर देता है, और अपने इनकार को उचित ठहराता है।
कि ईसा मसीह के नियम के अनुसार, जिसका वह अनुयायी है, वह किसी भी व्यक्ति को जंजीरों में नहीं बांध सकता, उसे कैद नहीं कर सकता या उसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर घसीट नहीं सकता। यही कथन टवर के एक किसान और एक अन्य किसान द्वारा भी किया गया है।
ताम्बोव। इन किसानों के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है, उन्हें पीटा जाता है, जेल में बंद किया जाता है, लेकिन वे अपने संकल्प पर अडिग रहते हैं और
उनकी मान्यताओं के विरुद्ध इन पदों को न भरें। और अंततः वे उन्हें कांस्टेबल के रूप में नियुक्त करना बंद कर देते हैं।
और फिर भी कुछ नहीं होता।
सभी नागरिकों को न्यायिक कार्यवाही में जूरी सदस्य के रूप में भाग लेना अनिवार्य है। अचानक
लगभग सभी अलग-अलग लोग - मैकेनिक, प्रोफेसर, व्यापारी, किसान, नौकर - मानो किसी समझौते के तहत एक साथ आए हों।
वे इस पद को भरने से इनकार करते हैं, और इसका कारण कानून द्वारा पर्याप्त माने जाने वाले आधार नहीं हैं, बल्कि इसलिए कि उनके विचार में कोई भी कानूनी प्रक्रिया ईसाई धर्म के विरुद्ध है। वे इन लोगों पर जुर्माना लगाते हैं, ताकि उन्हें कोई पद न मिल सके।
उन्हें सार्वजनिक रूप से अपने इरादों को स्पष्ट करने का अवसर दिया जाए, और उनकी जगह दूसरों को नियुक्त किया जाए। और फिर भी कुछ नहीं हो सकता।
हो गया।

इक्कीस वर्ष की आयु के सभी युवकों को सेना में सेवा के लिए लॉटरी निकालनी अनिवार्य है।
एक बार एक युवक मॉस्को में, दूसरा टवर में, तीसरा खार्किव में और चौथा कीव में उपस्थित था।
वे स्वयं को अधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत करेंगे, और मानो पूर्व समझौते के अनुसार, यह घोषणा करेंगे कि वे कोई कार्रवाई नहीं करेंगे।
शपथ के बावजूद, वे सेवा नहीं करेंगे क्योंकि वे ईसाई हैं। मैं पहले मामलों में से एक का विवरण दूंगा, क्योंकि ऐसे मामले अधिक बार सामने आए हैं, जिनके बारे में मुझे जानकारी है।15 उनके साथ भी ऐसा ही व्यवहार किया गया है।
अन्य सभी मामलों में यही दोहराया गया। एक अच्छी शिक्षा प्राप्त युवक ने मॉस्को के टाउन हॉल में लेने से इनकार कर दिया।
शपथ। उसकी बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता, और उससे अनुरोध किया जाता है कि वह बाकी लोगों की तरह शपथ के शब्द बोले। वह मना कर देता है, और सुसमाचार के एक विशेष अंश का हवाला देता है जिसमें शपथ लेना मना है।
मना किया गया। उसकी दलीलों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया, और उससे फिर से आदेश का पालन करने का अनुरोध किया गया, लेकिन वह इसका पालन नहीं करता। तब यह माना जाता है कि वह एक संप्रदायवादी है और इसलिए ईसाई धर्म को सही अर्थों में नहीं समझता, यानी उस अर्थ में नहीं जिस अर्थ में वेतनभोगी पादरी इसे समझते हैं।
सरकार इसे समझती है। और उस युवक को सुरक्षाकर्मियों के साथ पुजारियों के पास ले जाया जाता है, ताकि वे
उसे समझाने की कोशिश करो। पुजारी उससे तर्क करने लगते हैं, लेकिन मसीह के नाम पर उन्हें समझाने के उनके प्रयास विफल हो जाते हैं।
स्पष्ट है कि उसे ईसा मसीह को त्यागने के लिए कहने का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा; उसे सुधारा न जा सकने वाला घोषित कर सेना में वापस भेज दिया गया। उसने शपथ लेने से इनकार कर दिया और खुले तौर पर किसी भी सैन्य कर्तव्य को निभाने से मना कर दिया।
यह एक ऐसा मामला है जिसका कानूनों में प्रावधान नहीं है। इस प्रकार के अनुपालन से इनकार को नजरअंदाज करना उचित नहीं है।
अधिकारियों की मांगों का तो सवाल ही नहीं उठता, लेकिन ऐसे मामले को अनुशासनहीनता के साधारण उल्लंघन के बराबर मानना भी अनुचित है।
आपस में विचार-विमर्श करने के बाद, सैन्य अधिकारियों ने उपद्रवी लोगों से छुटकारा पाने का फैसला किया।
उस युवक को क्रांतिकारी समझकर, उसे गुप्त पुलिस समिति के पास सुरक्षा घेरे में भेज दिया जाता है। पुलिस अधिकारी और सिपाही उससे पूछताछ करते हैं, लेकिन उसकी कोई भी बात पकड़ में नहीं आती।
इसे उनके अधिकार क्षेत्र में आने वाले किसी भी दुराचार के अंतर्गत लाया जा सकता है। और ऐसा है
उन पर क्रांतिकारी कृत्यों या क्रांतिकारी साजिशों का आरोप लगाने की कोई संभावना नहीं है, क्योंकि वे घोषणा करते हैं कि
वह किसी पर हमला नहीं करना चाहता, बल्कि इसके विपरीत, बल प्रयोग के किसी भी प्रकार का विरोधी है, और गुप्त रूप से साजिश रचने के बजाय, वह अपने कहे और किए गए सभी कार्यों को सार्वजनिक रूप से कहने और करने का हर अवसर तलाशता है।
सबसे खुले तरीके से। और जेंडरमे (पुलिसकर्मी), हालांकि वे किसी कठोर नियम से बंधे नहीं हैं, फिर भी उन्हें कोई
युवक के खिलाफ आपराधिक आरोप लगाने का आधार बनता है, और पादरियों की तरह, वे उसे वापस सेना में भेज देते हैं। फिर अधिकारी आपस में विचार-विमर्श करते हैं और उसे स्वीकार करने का निर्णय लेते हैं, हालांकि उसने अभी तक कोई शपथ नहीं ली है।
शपथ दिलाई और उसे सैनिकों में भर्ती किया। उन्होंने उसे वर्दी पहनाई, भर्ती किया और भेज दिया।
सेना के शिविर स्थल तक पहरे में ले जाया गया। वहाँ उस दल का मुख्य अधिकारी था।

15 इस मामले के सभी विवरण, साथ ही इससे पहले के सभी विवरण भी प्रामाणिक हैं।

फिर से प्रवेश करता है और उस युवक से अपने सैन्य कर्तव्यों का पालन करने की अपेक्षा करता है, लेकिन वह फिर से आज्ञा मानने से इनकार कर देता है और अन्य सैनिकों की उपस्थिति में अपने इनकार का कारण बताते हुए कहता है कि एक ईसाई होने के नाते वह ऐसा नहीं कर सकता।

स्वेच्छा से हत्या करने की तैयारी करना, जो मूसा की व्यवस्था द्वारा निषिद्ध है।

यह घटना एक प्रांतीय कस्बे में घटित होती है। इस मामले ने न केवल बाहरी लोगों, बल्कि अधिकारियों की भी रुचि और सहानुभूति जगाई। परिणामस्वरूप, उच्च अधिकारी इस मामले में कोई निर्णय नहीं लेते हैं।

आज्ञापालन से इनकार करने पर अनुशासनात्मक कार्रवाई करें। हालाँकि, दिखावा बनाए रखने के लिए, उन्होंने दरवाजा बंद कर दिया।

उस युवक को जेल में डाल दिया जाए और वह सर्वोच्च सैन्य अधिकारियों को पत्र लिखकर पूछे कि उन्हें क्या करना चाहिए। उस सेना में सेवा करने से इनकार कर दिया जाए जिसमें स्वयं ज़ार सेवा करता है और जिसे ज़ार का आशीर्वाद प्राप्त है।

आधिकारिक दृष्टिकोण से देखें तो चर्च का यह रवैया पागलपन जैसा लगता है। परिणामस्वरूप, पीटर्सबर्ग से वे लिखते हैं कि,

चूंकि युवक का मानसिक संतुलन बिगड़ा हुआ है, इसलिए उसके साथ कठोर व्यवहार नहीं करना चाहिए, बल्कि

उसे पागलखाने भेज दो, ताकि उसकी मानसिक स्थिति की जांच की जा सके और वैज्ञानिक तरीके से उसका इलाज किया जा सके। वे उसे इस उम्मीद में पागलखाने भेजते हैं कि वह वहीं रहेगा, जैसे एक और युवक, जिसने मना कर दिया था।

दस साल पहले वह टवर में सेना में भर्ती होने गया था, और उसे पागलखाने में तब तक यातनाएं दी गईं जब तक उसने आत्मसमर्पण नहीं कर दिया। लेकिन

इस कदम से भी सैन्य अधिकारियों को उस असुविधाजनक व्यक्ति से छुटकारा नहीं मिलता। डॉक्टर उसकी जांच करते हैं, उसके मामले में गहरी दिलचस्पी लेते हैं, और स्वाभाविक रूप से उसमें मानसिक बीमारी के कोई लक्षण नहीं पाते हैं।

उसे वापस सेना में भेज दो। वहाँ उसका स्वागत किया जाता है, और वे उसके इनकार को भूल जाने का दिखावा करते हैं।

जब उनसे इस बारे में पूछा गया कि ऐसा करने के पीछे उनका क्या मकसद था, तो उन्होंने फिर से उन्हें अभ्यास के लिए बुलाया, और अन्य सैनिकों की मौजूदगी में उन्होंने फिर से इनकार कर दिया और अपने इनकार का कारण बताया। यह मामला लगातार अधिकाधिक लोगों का ध्यान आकर्षित करता रहा।

सैनिकों और शहर के निवासियों दोनों का ध्यान आकर्षित हुआ। उन्होंने फिर से पीटर्सबर्ग को लिखा, और

इसके बाद युवक को सेना की किसी टुकड़ी में स्थानांतरित करने का आदेश जारी हुआ जो उस क्षेत्र में तैनात थी।

सीमावर्ती क्षेत्र में, किसी ऐसी जगह पर जहाँ सेना में मार्शल लॉ लागू है, जहाँ आज्ञा न मानने पर उसे गोली मारी जा सकती है, और जहाँ मामला बिना किसी का ध्यान आकर्षित किए आगे बढ़ सकता है, क्योंकि वहाँ रूसी सैनिक कम हैं।

इस दूरस्थ क्षेत्र में ईसाई तो हैं, लेकिन अधिकांश लोग विदेशी और मुसलमान हैं। इसी के अनुरूप यह व्यवस्था की गई है।

वे उसे ज़ाकास्पियन सीमा पर तैनात एक डिवीजन में स्थानांतरित कर देते हैं, और कैदियों के साथ उसे एक ऐसे मुख्य अधिकारी के पास भेज देते हैं जो अपनी क्रूरता और सख्ती के लिए कुख्यात है।

इस पूरे समय के दौरान, स्थान-स्थान के इन सभी परिवर्तनों के बावजूद, युवक के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है, उसे रखा जाता है
ठंड, भूख और गंदगी में, उसका जीवन आम तौर पर बोझिल हो जाता है। लेकिन ये सभी कष्ट उसे अपना संकल्प बदलने के लिए विवश नहीं करते। ज़ाकास्पियन सीमा पर, जहाँ उसे फिर से जाने का अनुरोध किया जाता है...
पूरी तरह से हथियारों से लैस पहरेदार के बावजूद, वह फिर से आज्ञा मानने से इनकार कर देता है। वह भूसे के ढेर के पास जाकर खड़े होने से मना नहीं करता।
जहां उसे रखा जाता है, वह उसके हथियार लेने से इनकार कर देता है और घोषणा करता है कि वह किसी भी हालत में हिंसा का प्रयोग नहीं करेगा।
किसी के भी खिलाफ। यह सब अन्य सैनिकों की उपस्थिति में होता है। ऐसे इनकार को बिना दंड के जाने देना असंभव है, और उस युवक पर अनुशासन भंग करने का मुकदमा चलाया जाता है। मुकदमा चलता है।
उसे स्थानांतरित कर दिया जाता है, और उसे दो साल के लिए सैन्य कारागार में कैद की सजा सुनाई जाती है। उसे फिर से स्थानांतरित कर दिया जाता है,
कैदियों के साथ, एक पट्टे के द्वारा, काकेशस ले जाया जाता है, और वहाँ उसे जेल में बंद कर दिया जाता है और वह जेलर की मनमानी और निरंकुश शक्ति के अधीन आ जाता है। वहाँ उसे डेढ़ साल तक प्रताड़ित किया जाता है, लेकिन इन सबके बावजूद वह कुछ नहीं कर पाता।
वह हथियार न उठाने के अपने फैसले को बदल देता है, और वह अपने सभी परिचितों को बताता है कि वह ऐसा क्यों नहीं करेगा।
संपर्क स्थापित किया गया। दूसरे वर्ष के अंत में, उनकी कारावास की अवधि समाप्त होने से पहले ही उन्हें रिहा कर दिया गया, क्योंकि सैन्य सेवा की अवधि समाप्त होने के बाद उन्हें जेल में रखना कानून के विरुद्ध माना गया।
सब खत्म हो गया, और उससे जल्द से जल्द छुटकारा पाने में मुझे बेहद खुशी हुई।
रूस के विभिन्न हिस्सों में अन्य पुरुष, मानो आपसी सहमति से, ठीक उसी तरह व्यवहार करते हैं जैसे
इस युवक के मामले में, और इन सभी मामलों में सरकार ने वही डरपोक, अनिर्णायक और गुप्त रवैया अपनाया है। इनमें से कुछ लोगों को पागलखाने भेज दिया जाता है, कुछ को क्लर्क के रूप में भर्ती कर लिया जाता है।
और उन्हें साइबेरिया स्थानांतरित कर दिया जाता है, कुछ को जंगलों में काम करने के लिए भेजा जाता है, कुछ को जेल भेजा जाता है, कुछ पर जुर्माना लगाया जाता है।
और ठीक इसी समय इस प्रकार के कुछ लोग जेल में हैं, उन पर उनके वास्तविक अपराध का आरोप नहीं है - अर्थात् सरकार की कार्रवाई की वैधता को नकारना - बल्कि विशेष दायित्वों का पालन न करने का आरोप है।
सरकार द्वारा लगाया गया। इस प्रकार एक आरक्षित अधिकारी, जिसने अपने निवास स्थान में परिवर्तन की सूचना नहीं दी, और
उसने यह कहकर इसे उचित ठहराया कि वह अब सेना में सेवा नहीं करेगा, और उसे उच्च अधिकारी के आदेशों का पालन न करने के लिए तीस रूबल का जुर्माना लगाया गया। उसने स्वेच्छा से इस जुर्माने का भुगतान करने से भी इनकार कर दिया।

इसी प्रकार, कुछ किसानों और सैनिकों को, जिन्होंने प्रशिक्षण लेने और हथियार उठाने से इनकार कर दिया है, अनुशासन भंग करने और उद्दंडता के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया है।

और ऐसे मामले जिनमें सरकार की मांगों का पालन करने से इनकार किया जाता है जब वे सरकार के विरोध में हों।
ईसाई धर्म, और विशेष रूप से सेना में सेवा करने से इनकार करने के मामले, हाल ही में न केवल रूस में बल्कि हर जगह देखने को मिल रहे हैं।
इस प्रकार मुझे पता चला है कि सर्बिया में तथाकथित नाज़रीन संप्रदाय के लोग...
वे लगातार सेना में सेवा करने से इनकार कर रहे हैं, और ऑस्ट्रियाई सरकार एक निष्फल प्रयास में लगी हुई है।
वर्षों तक उनसे संघर्ष करते हुए उन्हें कारावास की सजा दी जाती थी। वर्ष 1885 में ऐसे 130 मामले थे। मुझे पता है कि स्विट्जरलैंड में वर्ष 1890 में चिलोन के किले में कई लोग कैद थे।
सेना में सेवा करने से इनकार करने वाले, जिनका संकल्प उनकी सजा से नहीं डिगा।
स्वीडन में भी ऐसे ही मामले सामने आए। जिन पुरुषों ने आज्ञापालन से इनकार किया, उन्हें ठीक उसी तरह जेल भेज दिया गया।
और सरकार ने जानबूझकर इन मामलों को जनता से छिपाया। प्रशिया में भी ऐसे ही मामले सामने आए हैं। मुझे गार्ड्स के एक सब-लेफ्टिनेंट का मामला पता है, जिसने 1891 में सरकार को बताया था कि...
बर्लिन के अधिकारियों को उन्होंने बताया कि एक ईसाई होने के नाते वे सेवा करना जारी नहीं रखेंगे, और तमाम चेतावनियों के बावजूद, धमकियों और दंडों के बावजूद वह अपने संकल्प पर अडिग रहा। हाल ही में दक्षिणी फ्रांस में हिंशिस्ट नाम से एक संस्था का उदय हुआ है (ये तथ्य पीस हेराल्ड, जुलाई 1891 से लिए गए हैं)।
जिसके सदस्य अपने ईसाई सिद्धांतों के आधार पर सैन्य सेवा में प्रवेश करने से इनकार करते हैं।
उन्हें एम्बुलेंस कोर में भर्ती कराया गया था, लेकिन अब, जैसे-जैसे उनकी संख्या बढ़ रही है, उन्हें नियमों का पालन न करने पर दंडित किया जा रहा है, लेकिन वे अब भी हथियार उठाने से इनकार कर रहे हैं।
समाजवादी, साम्यवादी, अराजकतावादी, अपने बमों, दंगों और क्रांतियों के साथ, नहीं हैं
विभिन्न क्षेत्रों से आने वाले इन असावधान व्यक्तियों से सरकारें लगभग उतना ही भयभीत रहती हैं।
और वे सभी अपने असहयोग को उसी धर्म के आधार पर उचित ठहरा रहे हैं, जो पूरी दुनिया में जाना जाता है।
हर सरकार जानती है कि क्रांतिकारियों से खुद को बचाने के लिए किन साधनों और किन तरीकों का इस्तेमाल करना है।
और उसके पास ऐसा करने के लिए संसाधन हैं, इसलिए वह इन बाहरी शत्रुओं से भयभीत नहीं है। लेकिन सरकारें उन लोगों के विरुद्ध क्या करें जो सभी चीजों की निरर्थकता, अनावश्यकता और हानिकारकता को दर्शाते हैं?
जो लोग सरकारों का विरोध नहीं करते, बल्कि जिन्हें उनकी आवश्यकता नहीं है और वे उनके बिना ही काम चलाते हैं,
और इसलिए वे उनमें कोई हिस्सा लेने को तैयार नहीं हैं?
क्रांतिकारियों का कहना है, “सरकार का स्वरूप इस लिहाज से और उस लिहाज से खराब है; हमें अवश्य ही
इसे उलट दो और इसके स्थान पर इस या उस प्रकार की सरकार स्थापित कर दो।” ईसाई कहता है, “मुझे इसके बारे में कुछ नहीं पता।”
सरकार का स्वरूप। मुझे नहीं पता कि यह अच्छा है या बुरा, और मैं इसे पलटना नहीं चाहता।
ठीक इसी कारण से कि मुझे नहीं पता कि यह अच्छा है या बुरा, और इसी कारण से मैं इसका समर्थन भी नहीं करना चाहता। और मैं न केवल इसका समर्थन नहीं करना चाहता, बल्कि कर भी नहीं सकता, क्योंकि यह मुझसे जो अपेक्षा करता है वह मेरे सिद्धांतों के विरुद्ध है।
अंतरात्मा।"

राज्य के सभी दायित्व एक ईसाई की अंतरात्मा के विरुद्ध हैं – निष्ठा की शपथ, कर, कानूनी कार्यवाही और सैन्य सेवा। और सरकार की संपूर्ण शक्ति इन्हीं पर टिकी है।

दायित्वों।

क्रांतिकारी शत्रु सरकार पर बाहर से हमला करते हैं। ईसाई धर्म सरकार पर बिल्कुल भी हमला नहीं करता, बल्कि भीतर से ही उन सभी आधारों को नष्ट कर देता है जिन पर सरकार टिकी हुई है।

रूसी लोगों में, विशेषकर पीटर प्रथम के युग से, ईसाई धर्म का विरोध जारी रहा।

सरकार कभी बंद नहीं हुई है, और सामाजिक संगठन ऐसा रहा है कि लोग कम्यून में प्रवास करते हैं।

तुर्की, चीन और निर्जन भूमि तक, और न केवल राज्य सहायता की कोई आवश्यकता महसूस नहीं करते, बल्कि हमेशा राज्य को एक बेकार बोझ मानते हैं, जिसे केवल एक दुर्भाग्य के रूप में सहन किया जाना चाहिए, चाहे वह तुर्की ही क्यों न हो।

रूसी या चीनी। और इसी तरह, रूसी लोगों के बीच भी, इसके उदाहरण अधिकाधिक देखने को मिल रहे हैं।

राज्य के अधीनता से मुक्त सचेत ईसाई स्वतंत्रता के विचार हाल ही में सामने आए। और ये उदाहरण सरकार के लिए और भी चिंताजनक हैं क्योंकि ये गैर-अनुपालन करने वाले व्यक्ति अक्सर राज्य के बाहर के समुदायों से संबंधित होते हैं।

तथाकथित निम्न अशिक्षित वर्ग, लेकिन वे उचित या अच्छी शिक्षा प्राप्त पुरुष हैं; और इस तथ्य से भी कि

इन दिनों वे अपने दृष्टिकोण को किसी रहस्यमय और असाधारण विचारों से उचित नहीं ठहराते, जैसा कि पहले होता था, और न ही वे किसी अंधविश्वासी या कट्टरपंथी अनुष्ठानों से जुड़ते हैं, जैसे कि वे संप्रदाय जो स्वयं को धार्मिक अनुष्ठानों में शामिल करते हैं।

चाहे अग्नि द्वारा आत्मदाह हो या भटकते तीर्थयात्री, उनके इनकार को सबसे सरल और स्पष्ट आधारों पर रखें, जो सभी के लिए समझने योग्य हों और सभी द्वारा सत्य के रूप में मान्यता प्राप्त हों।

इसलिए वे करों के स्वैच्छिक भुगतान से इनकार करते हैं, क्योंकि कर हिंसात्मक कृत्यों पर खर्च किए जाते हैं -

हिंसा करने वाले लोगों – सैनिकों – के वेतन का उपयोग जेलों, किलों और तोपों के निर्माण में किया जाता है। ईसाई होने के नाते वे ऐसे कार्यों में किसी भी प्रकार का हाथ रखना पाप और अनैतिक मानते हैं।

जो लोग निष्ठा की शपथ लेने से इनकार करते हैं, वे इसलिए इनकार करते हैं क्योंकि उन्हें अधिकारियों के प्रति आज्ञापालन का वादा करना पड़ता है।

यानी, हिंसा के कृत्यों में लिप्त पुरुषों के लिए, यह मसीह की शिक्षा के अर्थ के विपरीत है। वे अदालतों में शपथ लेने से इनकार करते हैं, क्योंकि शपथ लेना सुसमाचार द्वारा स्पष्ट रूप से निषिद्ध है। वे इनकार करते हैं

पुलिस कर्तव्यों का पालन करने के लिए, क्योंकि इन कर्तव्यों के निर्वहन में उन्हें अपने ही लोगों के खिलाफ बल का प्रयोग करना पड़ता है।

वे अपने भाइयों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं और उन्हें सताते हैं, और एक ईसाई ऐसा नहीं कर सकता। वे कानूनी मुकदमों में भाग लेने से इनकार करते हैं।

क्योंकि वे कानून की हर अपील को प्रतिशोध के कानून को पूरा करना मानते हैं, जो क्षमा और प्रेम के ईसाई कानून के विपरीत है। वे सैन्य तैयारियों में और किसी भी तरह की भागीदारी से इनकार करते हैं।

सेना, क्योंकि वे जल्लाद नहीं बन सकते, और वे ऐसा बनने के लिए खुद को तैयार करने को तैयार नहीं हैं।
इन सभी मामलों में इरादे इतने उत्कृष्ट हैं कि सरकारें चाहे कितनी भी निरंकुश क्यों न हों, वे शायद ही उन्हें खुलेआम दंडित कर सकेंगी। अपने अंतरात्मा के विरुद्ध कार्य करने से इनकार करने वाले व्यक्तियों को दंडित करना...
सरकार को अच्छे विवेक और परोपकारिता के सभी दावों का त्याग करना होगा। और वे लोगों को आश्वस्त करते हैं कि वे
केवल विवेक और परोपकार के नाम पर ही शासन करें।
सरकारें ऐसे लोगों के खिलाफ क्या कर सकती हैं?
सरकारें बेशक अपने सभी शत्रुओं को कोड़े मारकर मौत की सजा दे सकती हैं, उन्हें फांसी दे सकती हैं या उन्हें आजीवन कारावास में रख सकती हैं।
जो लोग हिंसा के बल पर इन्हें उखाड़ फेंकना चाहते हैं, वे जनता के उस वर्ग पर सोने की वर्षा कर सकते हैं जो इसके लिए तैयार हैं।
अपने शत्रुओं को नष्ट करने के लिए। लेकिन वे उन लोगों के विरुद्ध क्या कर सकते हैं जो किसी भी चीज़ को उलट-पुलट या नष्ट करने की इच्छा रखे बिना, केवल मसीह के नियम के विरुद्ध कुछ भी न करने की इच्छा रखते हैं, और जो इसलिए इनकार करते हैं।
राज्य की सबसे सामान्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, जो कि इसलिए सबसे अपरिहार्य हैं।
राज्य का रखरखाव?
यदि वे क्रांतिकारी होते, हिंसा और हत्या की वकालत और अभ्यास करने वाले होते, तो उनका दमन
यह एक आसान मामला होता; उनमें से कुछ को खरीदा जा सकता था, कुछ को
कुछ को धोखा दिया गया होगा, कुछ को डराया-धमकाया गया होगा, और जिन्हें खरीदा, धोखा दिया या डराया नहीं जा सका, उन्हें अपराधी, समाज का दुश्मन माना गया होगा, उन्हें फाँसी दी गई होगी या जेल में डाल दिया गया होगा, और
भीड़ सरकार की कार्रवाई का समर्थन करती। अगर वे कट्टरपंथी होते, तो...
कुछ विचित्र विश्वासों के कारण, संभव हो सकता था कि अंधविश्वासों से जुड़ी त्रुटियों को दूर करने में मदद मिली हो।
उनके धर्म पर हमला करने के लिए, और साथ ही उस सत्य पर भी हमला करने के लिए जिसका वे समर्थन करते हैं। लेकिन उन लोगों का क्या किया जाए जो न तो क्रांतिकारी विचारों का पालन करते हैं और न ही किसी विशेष धार्मिक सिद्धांत का, बल्कि केवल इसलिए कि वे बुराई करने को तैयार नहीं हैं।
किसी भी व्यक्ति को शपथ लेने से इनकार करना, करों का भुगतान करने से इनकार करना, कानूनी कार्यवाही में भाग लेने से इनकार करना, सेना में सेवा करने से इनकार करना, आदि।
क्या वे वास्तव में उन दायित्वों में से किसी को भी पूरा कर पाते हैं जिन पर राज्य की संपूर्ण संरचना टिकी है? ऐसे लोगों का क्या किया जाए?
उन्हें रिश्वत देकर खरीदना असंभव है; वे जिन जोखिमों को स्वेच्छा से उठाते हैं, वे ही जोखिम वास्तव में उन्हें पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं।
खुद को बेनकाब करना, यह दिखाना कि वे भ्रष्ट नहीं हो सकते। उन्हें यह विश्वास दिलाना कि यह उनका कर्तव्य है।
ईश्वर के प्रति भी उनका इनकार असंभव है, क्योंकि उनका इनकार ईश्वर के स्पष्ट, निर्विवाद नियम पर आधारित है, जिसे वे लोग भी मानते हैं जो लोगों को इसके विरुद्ध कार्य करने के लिए विवश करने का प्रयास कर रहे हैं। उन्हें धमकियों से डराना तो और भी कम प्रभावी है।
यह संभव है, क्योंकि जिन अभावों और कष्टों का वे सामना करते हैं, वे केवल उनकी इच्छा को और मजबूत करते हैं।

उन्हें जिस धर्म का पालन करने का आदेश दिया गया है, उसका पालन करना; मनुष्यों की अपेक्षा ईश्वर की आज्ञा मानना, और किसी से भयभीत न होना।

शरीर को नष्ट करने वाला कोई नहीं, लेकिन उससे डरना चाहिए जो शरीर और आत्मा दोनों को नष्ट कर सकता है। उन्हें मारना या हमेशा के लिए कैद में रखना भी असंभव है। इन लोगों के दोस्त हैं, उनका अतीत है; उनकी सोच का तरीका अलग है।

और अभिनय के लिए वे प्रसिद्ध हैं; वे सभी के बीच अच्छे, विनम्र और शांतिप्रिय लोगों के रूप में जाने जाते हैं, और वे

उन्हें अपराधी नहीं माना जा सकता जिन्हें समाज की सुरक्षा के लिए हटाना आवश्यक है। और अच्छे माने जाने वाले लोगों को मौत की सजा देना दूसरों को उनका समर्थन करने और अपने इनकार को सही ठहराने के लिए उकसाना है। और यह

केवल उनके इनकार के कारणों को स्पष्ट करना आवश्यक है ताकि सभी को यह स्पष्ट हो सके कि ये कारण क्या हैं।

सभी मनुष्यों के लिए समान बल, और यह कि उन सभी को बहुत पहले ही ऐसा कर लेना चाहिए था। इन मामलों ने सत्ताधारियों को विकट स्थिति में डाल दिया है। वे देखते हैं कि ईसाई धर्म की भविष्यवाणी सच हो रही है।

पारित होने से जंजीरों में जकड़े लोगों के बंधन खुल रहे हैं और गुलामी में फंसे लोगों को मुक्ति मिल रही है, और यह कि

यह सभी उत्पीड़कों का अंत होना तय है। सत्ताधारी अधिकारी यह देख रहे हैं, वे जानते हैं कि उनके दिन गिने-चुने हैं, और वे कुछ नहीं कर सकते। खुद को बचाने के लिए वे केवल टालमटोल ही कर सकते हैं।

उनके पतन का समय आ गया है। और वे ऐसा करते भी हैं, लेकिन उनकी स्थिति कम निराशाजनक नहीं होती।

यह उस विजेता की स्थिति के समान है जो अपने ही निवासियों द्वारा जलाए गए शहर को बचाने का प्रयास कर रहा है। जिस क्षण वह एक जगह की आग बुझाता है, उसी क्षण दो अन्य जगहों पर आग भड़क उठती है।

स्थानों पर; ठीक उसी क्षण जब वह आग के आगे हार मान लेता है और एक बड़ी इमारत से आग लगी हुई चीजों को अलग कर देता है, इमारत दोनों सिरों से आग की लपटों में घिरी हुई है। ये अलग-अलग आग भले ही कम हों, लेकिन इनकी लपटें इतनी तीव्र हैं कि चाहे चिंगारी कितनी भी छोटी क्यों न हो, ये तब तक बुझती नहीं जब तक कि पूरी इमारत को अपनी चपेट में न ले लें।

इस प्रकार सत्ताधारी अधिकारी उन लोगों के सामने बेहद असहाय स्थिति में होते हैं जो वकालत करते हैं।

ईसाई धर्म का मानना है कि इस शक्तिशाली प्रतीत होने वाली संप्रभु शक्ति को उखाड़ फेंकने के लिए बहुत कम ही आवश्यक है, और सदियों से इसे इतना उच्च स्थान प्राप्त है। फिर भी, समाज सुधारक इस विचार का प्रचार करने में लगे हैं कि यह आवश्यक नहीं है और यहाँ तक कि हर मनुष्य के लिए हानिकारक और अनैतिक भी है।

अपनी स्वतंत्रता के लिए अलग से प्रयास करना। मानो, एक तरफ पुरुषों का एक समूह लंबे समय से काम कर रहा हो।

एक नदी को नए मार्ग में बदलते समय, जब उन्होंने एक पूरा जलमार्ग खोद लिया था और केवल पानी को अंदर आने और बाकी काम करने के लिए बाढ़ के द्वार खोलने बाकी थे, तभी पुरुषों का एक और समूह आया और काम शुरू कर दिया।

उन्हें यह सलाह देना कि पानी को बाहर निकालने के बजाय, एक ऐसी मशीन का निर्माण करना कहीं बेहतर होगा जो

वह एक तरफ से पानी उठाती और दूसरी तरफ डाल देती।

लेकिन मामला हद से आगे बढ़ चुका है। सत्ताधारी सरकारें पहले से ही अपनी कमजोर और रक्षाहीन स्थिति को महसूस कर रही हैं।

और ईसाई सिद्धांतों वाले लोग अपनी उदासीनता से जाग रहे हैं, और पहले से ही अपनी शक्ति को महसूस करने लगे हैं।
“मैं पृथ्वी पर आग लगाने आया हूँ,” ईसा मसीह ने कहा, “और काश यह आग पहले से ही प्रज्वलित हो चुकी होती!”
और यह आग अब भड़कने लगी है।

अध्याय 10

सरकार की शारीरिक शक्ति से बुराई को दबाया नहीं जा सकता।
मानवता की नैतिक प्रगति केवल व्यक्तियों के प्रयासों से ही नहीं होती।
सत्य की पहचान, लेकिन साथ ही एक सार्वजनिक व्यवस्था की स्थापना के माध्यम से भी

राय

ईसाई धर्म राज्य का नाश करता है – लेकिन सबसे आवश्यक क्या है: ईसाई धर्म या राज्य? – कुछ लोग राज्य संगठन की आवश्यकता पर ज़ोर देते हैं, और कुछ इसका खंडन करते हैं, दोनों एक ही मूलभूत सिद्धांतों के आधार पर तर्क देते हैं – किसी भी तर्क को अमूर्त तर्क से सिद्ध नहीं किया जा सकता – यह प्रश्न प्रत्येक व्यक्ति के विवेक के विकास के उस चरण पर निर्भर करता है जो उसे सरकारी संगठन का समर्थन करने से रोकता है या अनुमति देता है – ईसाई सिद्धांतों के विपरीत राज्य संगठन का समर्थन करने की निरर्थकता और अनैतिकता को पहचानना ही प्रत्येक व्यक्ति के लिए इस प्रश्न का निर्णय करेगा, चाहे राज्य की ओर से कोई भी कार्रवाई की जाए – सरकार का बचाव करने वालों का तर्क है कि यह सामाजिक जीवन का एक रूप है, जो अच्छाई को बुराई से बचाने के लिए आवश्यक है, जब तक कि सभी राष्ट्र और प्रत्येक राष्ट्र के सभी सदस्य ईसाई न बन जाएं – सबसे दुष्ट हमेशा सत्ता में होते हैं – मानव जाति का संपूर्ण इतिहास दुष्टों द्वारा सत्ता के जबरन हथियाने और अच्छाई पर उनके अत्याचार का इतिहास है – सरकारों द्वारा बलपूर्वक बुराई का विरोध करने की आवश्यकता को स्वीकार करना उनके लिए आत्महत्या के समान है – राज्य हिंसा का उन्मूलन हिंसा की घटनाओं की कुल संख्या में वृद्धि नहीं कर सकता – बल प्रयोग का दमन न केवल संभव है, बल्कि हमारी आँखों के सामने हो भी रहा है – लेकिन इसका दमन कभी भी सरकार की हिंसा से नहीं होगा, बल्कि उन व्यक्तियों के माध्यम से होगा जिन्होंने सत्ता की निरर्थकता को पहचानकर और बल प्रयोग में कम सक्षम होकर सत्ता प्राप्त की है – व्यक्ति और संपूर्ण राष्ट्र इस प्रक्रिया से गुजरते हैं – इस माध्यम से ईसाई धर्म न केवल सरकार द्वारा हिंसा के प्रयोग के बावजूद, बल्कि उसके कार्यों के माध्यम से भी मनुष्यों की चेतना में फैलता है, और इसलिए दमन से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि यह जीवन की राष्ट्रीय प्रगति द्वारा होता है – राज्य संगठन का बचाव करने वालों की यह आपत्ति कि ईसाई धर्म को सार्वभौमिक रूप से अपनाना कभी भी संभव नहीं है – ईसाई धर्म के सत्यों को व्यापक रूप से अपनाना न केवल क्रमिक और आंतरिक साधनों से, अर्थात् सत्य के ज्ञान, भविष्यसूचक अंतर्दृष्टि और पहचान द्वारा हो रहा है सत्ता की निरर्थकता और व्यक्तियों द्वारा इसके त्याग के साथ-साथ एक अन्य बाहरी माध्यम से भी, निम्न स्तर के विकास वाले लोगों द्वारा अपने नेताओं में साधारण विश्वास के माध्यम से एक नए सत्य की स्वीकृति – जब सत्य के प्रसार का एक निश्चित चरण आ जाता है, तो एक जनमत का निर्माण होता है जो पहले नए सत्य के विरोधी रहे लोगों के एक पूरे समूह को इसे स्वीकार करने के लिए प्रेरित करता है – और इसलिए एक बार ईसाई जनमत स्थापित हो जाने पर सभी लोग हिंसा के प्रयोग का त्याग करने के लिए शीघ्र ही प्रेरित हो सकते हैं – बल प्रयोग आवश्यक होने का विश्वास ईसाई जनमत की स्थापना में बाधा डालता है – हिंसा का प्रयोग लोगों को उस आध्यात्मिक शक्ति पर अविश्वास करने की ओर ले जाता है जो एकमात्र शक्ति है जिसके द्वारा वे प्रगति करते हैं – न तो राष्ट्र और न ही व्यक्ति वास्तव में बल द्वारा अधीन किए गए हैं, बल्कि केवल जनमत द्वारा, जिसका कोई भी बल प्रतिरोध नहीं कर सकता – बर्बर राष्ट्रों और बर्बर लोगों को केवल उनके बीच एक ईसाई ध्वज के प्रसार द्वारा ही वश में किया जा सकता है, जबकि वास्तव में ईसाई राष्ट्र उन्हें वश में करने के लिए हर संभव प्रयास करते हैं ईसाई आदर्श को नष्ट करना संभव

नहीं है – असभ्यों को सभ्य बनाने के ये निष्फल प्रयास इस बात का प्रमाण नहीं हो सकते कि मनुष्य को ईसाई धर्म द्वारा वश में नहीं किया जा सकता – हिंसा जनमत को भ्रष्ट करके सामाजिक संगठन को उसके वास्तविक स्वरूप में आने से रोकती है – और हिंसा के प्रयोग को दबाकर ईसाई जनमत स्थापित किया जा सकता है – बल प्रयोग के दमन का परिणाम चाहे जो भी हो, यह अज्ञात भविष्य वर्तमान स्थिति से बदतर नहीं हो सकता, इसलिए इससे भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं है – अज्ञात का ज्ञान प्राप्त करना और उसकी ओर अग्रसर होना ही जीवन का सार है।

अपने सच्चे अर्थों में ईसाई धर्म शासन व्यवस्था का अंत करता है। इसकी शुरुआत से ही इसे इसी रूप में समझा गया था; इसी कारण ईसा मसीह को सूली पर चढ़ाया गया था। इसे हमेशा से इसी रूप में समझा जाता रहा है।
उन लोगों द्वारा, जिन्हें ईसाई सरकार को सही ठहराने की आवश्यकता नहीं थी। केवल
जिस समय सरकार के प्रमुखों ने बाहरी और नाममात्र का ईसाई धर्म अपना लिया, उसी समय लोगों ने नए-नए आविष्कार करने शुरू कर दिए। वे सभी असंभव, चालाकी से गढ़ी गई सिद्धांत जिनके माध्यम से ईसाई धर्म को सरकार के साथ सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। लेकिन हमारे समय का कोई भी ईमानदार और गंभीर व्यक्ति इस असंगतता को देखे बिना नहीं रह सकता।
सच्चा ईसाई धर्म – नम्रता, चोटों की क्षमा और प्रेम का सिद्धांत – सरकार के साथ,
इसकी शान-शौकत, हिंसा, फाँसी और युद्ध। सच्चे ईसाई धर्म का पालन करना न केवल सरकार को मान्यता देने की संभावना को नकारता है, बल्कि इसकी बुनियाद को भी नष्ट कर देता है।
लेकिन अगर ऐसा है, और हम यह कहने में सही हैं कि ईसाई धर्म सरकार के साथ असंगत है, तो
स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उठता है: मानवता की भलाई के लिए कौन सा अधिक आवश्यक है, और किस प्रकार से?

मानव सुख को सुरक्षित रखने का सबसे अच्छा तरीका क्या है? क्या यह सरकार की व्यवस्था को बनाए रखने से है, या इसे नष्ट करके इसके स्थान पर ईसाई धर्म को स्थापित करने से है?
कुछ लोगों का मानना है कि मानवता के लिए सरकार अधिक आवश्यक है, और सरकार का विनाश
राज्य संगठन में मानवता की अब तक की सभी उपलब्धियों का विनाश शामिल होगा, और राज्य ही एकमात्र ऐसा स्वरूप रहा है और अभी भी है जिसमें मानवता का विकास हो सकता है। लोगों के बीच जो बुराई हम देखते हैं...
सरकारी संगठन के अधीन रहने का कारण वे उस प्रकार के समाज को नहीं, बल्कि उसके दुर्व्यवहारों को मानते हैं, जो कि...
उनका कहना है कि इसे नष्ट किए बिना सुधारा जा सकता है, और इस प्रकार मानवता राज्य संगठन को त्यागे बिना विकास कर सकती है और उच्च स्तर की खुशी प्राप्त कर सकती है। और इस विचारधारा के लोग लाते हैं
वे अपने विचारों के समर्थन में ऐसे तर्क प्रस्तुत करते हैं, जिन्हें वे इतिहास से प्राप्त अकाट्य मानते हैं।
दर्शनशास्त्र और यहाँ तक कि धर्म भी। लेकिन कुछ लोग इसके विपरीत यह मानते हैं कि एक समय ऐसा था जब
जब मानवता बिना सरकार के रहती थी, तब ऐसा संगठन अस्थायी होता था, और एक समय अवश्य आता है जब मनुष्यों को एक नए संगठन की आवश्यकता होती है, और वह समय अब आ गया है। और इस तरह की सोच वाले मनुष्य

वे अपने विचारों के समर्थन में ऐसे तर्क भी प्रस्तुत करते हैं जिन्हें वे दर्शनशास्त्र से अकाट्य मानते हैं।
इतिहास और धर्म।
पूर्व दृष्टिकोण के समर्थन में कई पुस्तकें लिखी जा सकती हैं (और वास्तव में बहुत पहले ही लिखी जा चुकी हैं)।
उस पक्ष पर लिखा जा चुका है और आगे भी लिखा जाएगा), लेकिन इसके विरुद्ध भी बहुत कुछ लिखा जा सकता है (और बहुत कुछ)।
इसके अलावा, और सबसे शानदार ढंग से, इस पक्ष पर लिखा गया है - हालांकि यह हाल ही में लिखा गया है)।
और यह साबित नहीं किया जा सकता, जैसा कि राज्य के समर्थक दावा करते हैं, कि सरकार का विनाश
इसमें सामाजिक अराजकता, आपसी लूटपाट और हत्या, सभी सामाजिक संस्थाओं का विनाश और
मानव जाति का बर्बरता की ओर लौटना। और न ही इसे साबित किया जा सकता है, जैसा कि सरकार के विरोधी दावा करते हैं कि मनुष्य
वे पहले ही इतने बुद्धिमान और अच्छे हो चुके हैं कि वे एक-दूसरे को लूटेंगे या मारेंगे नहीं, बल्कि शत्रुता के बजाय शांतिपूर्ण संबंधों को
प्राथमिकता देंगे; वे अपनी मर्जी से, राज्य की सहायता के बिना, सभी निर्णय लेंगे।
उन्हें जिन व्यवस्थाओं की आवश्यकता है, और इसलिए सरकार, सहायता प्रदान करने के बजाय, दिखावे के तहत...
सुरक्षाकर्मियों पर निगरानी रखने से उन पर हानिकारक और क्रूर प्रभाव पड़ता है। अमूर्त तर्क से इन दोनों ही कथनों को सिद्ध करना असंभव है।
प्रयोग द्वारा इन्हें सिद्ध करना तो और भी कम संभव है, क्योंकि
सारा मामला इस सवाल पर टिका है कि क्या हमें प्रयोग करना चाहिए? यह सवाल कि क्या प्रयोग करना चाहिए या नहीं
सरकार को समाप्त करने का समय आ गया है, यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर देना असंभव होगा, सिवाय इसके कि इसे विवाद से परे
सुलझाने का एक और कारगर तरीका मौजूद है।
हम इस प्रश्न पर बहस कर सकते हैं कि क्या चूजे मुर्गी माँ के बिना रहने के लिए तैयार हैं और
या फिर वे अंडों से बाहर आने के लिए तैयार हैं या अभी पूरी तरह विकसित नहीं हुए हैं। लेकिन इसका फैसला नन्हे पक्षी ही करेंगे।
जब अंडों में जगह कम पड़ने लगती है, तो वे हमारी दलीलों पर ध्यान दिए बिना ही सवाल पूछने लगते हैं। फिर वे अपनी चोंच से उन्हें तोड़ने की
कोशिश करने लगते हैं और अपनी मर्जी से बाहर आ जाते हैं।
यही बात इस सवाल पर भी लागू होती है कि क्या सरकारी प्रकार की व्यवस्था को खत्म करने का समय आ गया है।
समाज को एक नए प्रकार के समाज से प्रतिस्थापित करना। यदि कोई व्यक्ति, उच्चतर विवेक के विकास के कारण, सरकार की मांगों का पालन
नहीं कर पाता, तो वह स्वयं को उससे जकड़ा हुआ पाता है और साथ ही साथ कुछ भी नहीं।
अब इसे सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है। जब ऐसा होता है, तो सवाल उठता है कि क्या पुरुष इसे त्यागने के लिए तैयार हैं।
सरकारी प्रकार का मुद्दा हल हो गया है। और यह निष्कर्ष उनके लिए उतना ही अंतिम होगा जितना कि अंडों से निकले नन्हे पक्षियों के लिए।
जिस प्रकार दुनिया की कोई भी शक्ति उन्हें वापस खोल में नहीं डाल सकती, उसी प्रकार इस दुनिया की कोई भी शक्ति उन्हें वापस खोल में नहीं
डाल सकती।
जब पुरुष एक बार शासन प्रणाली से बाहर निकल चुके होते हैं, तो दुनिया उन्हें फिर से शासन प्रणाली के अधीन ले आती है।
यह संभव है कि सरकार आवश्यक थी और उन सभी लाभों के लिए अभी भी आवश्यक है जो आपको प्राप्त हैं।
“इसे इसका श्रेय दें,” ईसाई जीवन सिद्धांत में पारंगत व्यक्ति कहते हैं। “मैं केवल इतना जानता हूँ कि एक ओर तो मेरे लिए सरकार की अब
आवश्यकता नहीं है, और दूसरी ओर, मैं अब इसे निभा नहीं सकता।”

सरकार के अस्तित्व के लिए आवश्यक उपाय। अपनी आवश्यकताओं के अनुसार समझौता कर लें।
आपका जीवन। मैं सामान्यतः सरकारों की आवश्यकता या हानि को सिद्ध नहीं कर सकता। मैं केवल इतना जानता हूँ कि मुझे क्या चाहिए और क्या नहीं चाहिए, मैं क्या कर सकता हूँ और क्या नहीं कर सकता। मैं जानता हूँ कि मुझे स्वयं को दूसरों से अलग करने की आवश्यकता नहीं है। मैं राष्ट्रों से संबंधित हूं, और इसलिए मैं यह स्वीकार नहीं कर सकता कि मैं विशेष रूप से किसी राज्य या राष्ट्र से संबंधित हूं, या मैं किसी का ऋणी हूं।
किसी भी सरकार के प्रति निष्ठा नहीं। मैं जानता हूँ कि मुझे राज्य के भीतर संगठित सभी सरकारी संस्थानों की आवश्यकता नहीं है, और इसलिए मैं उन लोगों को, जिन्हें मेरे श्रम की आवश्यकता है, करों के रूप में अपना श्रम देने से वंचित नहीं कर सकता।
मुझे उन संस्थानों की आवश्यकता नहीं है, जो मेरे ज्ञान के अनुसार हानिकारक भी हो सकते हैं। मैं जानता हूँ कि मुझे इनकी कोई आवश्यकता नहीं है।

मैं न तो बल पर आधारित प्रशासन में और न ही न्याय न्यायालयों में भाग ले सकता हूँ, और इसलिए मैं इनमें से किसी में भी भाग नहीं ले सकता। मैं जानता हूँ कि मुझे अन्य राष्ट्रों पर आक्रमण करने और उनका नरसंहार करने या उनसे हथियारों से अपना बचाव करने की आवश्यकता नहीं है।
इसलिए मैं युद्धों या युद्ध की तैयारियों में भाग नहीं ले सकता। ऐसा हो सकता है कि कुछ लोग हों।
जो इन सब बातों को आवश्यक और अपरिहार्य मानने से खुद को रोक नहीं सकते। मैं उनसे इस प्रश्न पर बहस नहीं कर सकता, मैं केवल अपने लिए बोल सकता हूँ; लेकिन मैं पूर्ण निश्चितता के साथ कह सकता हूँ कि मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है, और मैं
मैं ऐसा नहीं कर सकता। और मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है और मैं ऐसा नहीं कर सकता, इसलिए नहीं कि यह मेरी अपनी इच्छा है, मेरी निजी इच्छा है।
लेकिन क्योंकि यही उसकी इच्छा है जिसने मुझे जीवन दिया और मुझे जीवन भर आचरण के लिए एक निर्विवाद नियम दिया।
चाहे इस दावे के समर्थन में कोई भी तर्क दिए जाएं कि दमन
सरकारी सत्ता हानिकारक होगी और इससे बड़ी आपदाएँ उत्पन्न होंगी, उन लोगों के लिए जो एक बार
जो व्यक्ति शासनात्मक समाज से आगे निकल चुका है, वह वापस उसमें नहीं लौट सकता। और दुनिया भर के तर्क भी उस व्यक्ति को, जो शासनात्मक समाज से आगे निकल चुका है, किसी भी प्रकार की कार्रवाई में शामिल होने के लिए बाध्य नहीं कर सकते।
जिस प्रकार एक पूर्ण विकसित पक्षी को अंडे में वापस नहीं भेजा जा सकता, उसी प्रकार उसकी अंतरात्मा भी इसे अस्वीकार करती है।
शंख।
“लेकिन ऐसा होने पर भी,” मौजूदा व्यवस्था के समर्थकों का कहना है, “फिर भी दमन जारी रहेगा।”
सरकारी हिंसा तभी संभव और वांछनीय हो सकती है जब सभी मनुष्य ईसाई बन जाएं।
जिस प्रकार नाममात्र के ईसाई लोगों में भी अईसाई दुष्ट पुरुष होते हैं, जो अपनी वासनाओं की पूर्ति के लिए दूसरों को नुकसान पहुंचाने को तैयार रहते हैं, उसी प्रकार सरकारी सत्ता का दमन करना, किसी भी तरह से ईसाई धर्म के विरुद्ध कार्य नहीं है।
दूसरों को आशीर्वाद देने से केवल उनकी पीड़ा ही बढ़ेगी। सरकारी प्रकार के दमन से

समाज तब तक न केवल अवांछनीय है जब तक उसमें सच्चे ईसाइयों की संख्या अल्पसंख्यक है; बल्कि यह तो और भी बुरा होगा।
यह वांछनीय है कि पूरा राष्ट्र ईसाई हो, लेकिन उनके बीच और आसपास अभी भी अन्य राष्ट्रों के गैर-ईसाई लोग मौजूद हों। क्योंकि ये गैर-ईसाई लोग ईसाइयों को लूटेंगे, उन पर अत्याचार करेंगे और बिना किसी दंड के उनकी हत्या कर देंगे।
और इससे उनका जीवन दुखमय हो जाएगा। इसका परिणाम यह होगा कि बुरे लोग अत्याचार करेंगे और
अच्छे लोगों पर अत्याचार करना निर्धनता का काम है। इसलिए सरकार की सत्ता को तब तक दबाया नहीं जाना चाहिए जब तक कि दुनिया के सभी दुष्ट और लालची लोग विलुप्त न हो जाएं। और चूंकि ऐसा या तो कभी नहीं होगा, या
कम से कम लंबे समय तक तो ऐसा नहीं हो सकता, भले ही व्यक्तिगत ईसाई इसके लिए प्रयास कर रहे हों।
सरकार के अधिकार से स्वतंत्र, इसे बहुमत के हित में बनाए रखा जाना चाहिए। सरकार के समर्थक दावा करते हैं कि इसके बिना दुष्ट लोग अच्छे लोगों पर अत्याचार और उत्पीड़न करेंगे, और यह कि
सरकार की शक्ति अच्छे लोगों को दुष्टों का प्रतिरोध करने में सक्षम बनाती है।
लेकिन इस दावे में, मौजूदा व्यवस्था के समर्थक इस प्रस्ताव को मानकर चलते हैं।
वे इसे साबित करना चाहते हैं। जब वे कहते हैं कि सरकार के बिना बुरे लोग अच्छे लोगों पर अत्याचार करेंगे, तो वे यह मानकर चलते हैं कि अच्छे लोग वे हैं जो वर्तमान में सत्ता में हैं, और बुरे लोग सत्ता में नहीं हैं।
वे लोग हैं जो इसके अधीन हैं। लेकिन यही तो साबित करना बाकी है। यह तभी सच होगा जब
हमारे समाज की परंपरा वही है जो चीन में है, या यूं कहें कि मानी जाती है; यानी कि अच्छाई हमेशा शासन करती है, और ठीक उसी क्षण जब सरकार के मुखिया अच्छे नहीं रह जाते।
जिन पर वे शासन करते हैं, उनसे अधिक शक्तिशाली लोगों को नागरिक हटा देंगे। ऐसा माना जाता है कि यह प्रथा है।
चीन। वास्तविकता में ऐसा नहीं है और कभी हो भी नहीं सकता। क्योंकि बलपूर्वक शासन करने वाली सरकार के मुखियाओं को हटाने के लिए केवल अधिकार ही नहीं, बल्कि ऐसा करने की शक्ति भी आवश्यक है। परिणामस्वरूप, चीन में भी यही स्थिति है।
यह महज एक काल्पनिक प्रथा है। और हमारी ईसाई दुनिया में हम ऐसी किसी प्रथा की कल्पना भी नहीं करते, और हम
इस धारणा को पुष्ट करने के लिए कोई आधार नहीं है कि सत्ता में अच्छे या श्रेष्ठ लोग हैं;
वास्तविकता यह है कि सत्ता पर कब्जा करने वाले और उसे अपने और अपने समर्थकों के लाभ के लिए बनाए रखने वाले ही असली अपराधी हैं।
अच्छे लोग न तो सत्ता हथिया सकते हैं और न ही उसे बरकरार रख सकते हैं; ऐसा करने के लिए लोगों को सत्ता से प्रेम करना होगा। और सत्ता का प्रेम ही...
अच्छाई के विपरीत; लेकिन इसके ठीक विपरीत गुणों - अभिमान, धूर्तता - के साथ पूर्णतः संगत।
क्रूरता।
स्वयं की महिमा और दूसरों को नीचा दिखाने के बिना, पाखंड और छल के बिना,
जेलों, किलों, फाँसी और हत्याओं के बिना कोई भी शक्ति अस्तित्व में नहीं आ सकती या कायम नहीं रह सकती।
बनाए रखा।
“यदि सरकार की शक्ति को दबा दिया जाए तो अधिक दुष्ट लोग कम दुष्टों पर अत्याचार करेंगे,” ऐसा कहा जाता है।
राज्य सत्ता के समर्थक। लेकिन जब मिस्रियों ने यहूदियों पर विजय प्राप्त की, तो रोमनों ने उन पर विजय प्राप्त कर ली।

यूनानियों और बर्बरों ने रोमनों को हराया, क्या यह संभव है कि सभी विजेता अपने परास्त लोगों से हमेशा बेहतर थे? और यही बात किसी राज्य में सत्ता के हस्तांतरण पर भी लागू होती है।
एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को सत्ता का हस्तांतरण: क्या सत्ता हमेशा एक बुरे व्यक्ति से एक अच्छे व्यक्ति को ही हस्तांतरित होती रही है? जब लुई
सोलहवें शासनकाल में रोबेस्पियर सत्ता में आए और उसके बाद नेपोलियन का शासन आया – तब शासन करने वाला कौन बेहतर था या बदतर? और सत्ता में बेहतर लोग कब थे, वर्सायवादी पार्टी के समय या कम्यून के समय?
सत्ता में कौन था? जब चार्ल्स प्रथम शासक थे, या जब क्रॉमवेल थे? और जब पीटर तृतीय ज़ार थे, या जब
उसकी हत्या कर दी गई और रूस के एक हिस्से में कैथरीन महारानी बनीं और दूसरे हिस्से पर पौगाशेफ का शासन रहा? तब कौन सा बुरा था और कौन सा अच्छा? सत्ता में बैठे सभी लोग दावा करते हैं कि उनकी सत्ता
यह आवश्यक है कि बुराई अच्छाई पर अत्याचार न करे, यह मानते हुए कि वे स्वयं अच्छाई के अंश हैं।
उत्कृष्टता, जो अच्छे लोगों को बुरे लोगों से बचाती है।
लेकिन शासन करने का अर्थ है बल का प्रयोग करना, और बल का प्रयोग करने का अर्थ है जिसके साथ बल का प्रयोग किया जाता है, उसके साथ वह करना जो उसे पसंद नहीं है, और वह जो बल का प्रयोग करने वाला स्वयं अपने साथ करवाना बिल्कुल नहीं चाहेगा। परिणामस्वरूप, शासन करने का अर्थ है दूसरों के साथ वैसा व्यवहार करना जैसा हम नहीं चाहते कि वे हमारे साथ करें, अर्थात् उनके साथ गलत व्यवहार करना। समर्पण का अर्थ है बल प्रयोग की बजाय कष्ट सहना। और बल प्रयोग की बजाय कष्ट सहना अच्छा होना है, या कम से कम उन लोगों से कम दुष्ट होना है जो दूसरों के साथ वैसा व्यवहार करते हैं जैसा वे स्वयं नहीं चाहते।
और इसलिए, पूरी संभावना है कि हमेशा से बेहतर नहीं बल्कि बुरे लोगों ने ही शासन किया है और अब भी शासन कर रहे हैं।
शासितों में बुरे लोग हो सकते हैं, लेकिन ऐसा नहीं हो सकता कि बेहतर लोगों ने आम तौर पर बुरे लोगों पर शासन किया हो।
यह बात शायद मूर्तिपूजक धर्म में अच्छे की अस्पष्ट परिभाषा के साथ संभव हो सकती है; लेकिन स्पष्ट परिभाषा के साथ
ईसाई धर्म के अनुसार अच्छे और बुरे की परिभाषा की कल्पना करना असंभव है।
यदि गैर-ईसाई जगत में कमोबेश अच्छे और कमोबेश बुरे में अंतर नहीं किया जा सकता, तो ईसाई धर्म में अच्छे और बुरे की अवधारणा ने अच्छे और बुरे की विशेषताओं को इतनी स्पष्ट रूप से परिभाषित किया है।
दुष्टों को भ्रमित करना असंभव है। मसीह की शिक्षा के अनुसार अच्छे वे हैं जो
जो नम्र और सहनशील हैं, वे बुराई का बलपूर्वक विरोध नहीं करते, चोटों को क्षमा करते हैं और अपने शत्रुओं से प्रेम करते हैं; जो स्वयं को ऊंचा उठाते हैं, अत्याचार करते हैं, झगड़ा करते हैं और बल का प्रयोग करते हैं, वे दुष्ट हैं। अतः मसीह की शिक्षा के अनुसार
इसमें कोई संदेह नहीं है कि अच्छे लोग शासकों या शासितों के बीच पाए जाते हैं, और दुष्ट लोग भी।
शासितों के बीच या शासकों के बीच। वास्तव में, ईसाइयों के शासन करने की बात करना भी बेतुका है।
गैर-ईसाई, यानी वे लोग जो अपने जीवन का उद्देश्य सांसारिक सुख में पाते हैं, उन्हें ही हमेशा शासन करना चाहिए।
ईसाई, जिनके जीवन का उद्देश्य सांसारिक सुखों का त्याग करना है।

यह अंतर हमेशा से मौजूद रहा है और ईसाई धर्म के साथ-साथ यह और भी स्पष्ट होता चला गया है।
इसका प्रसार अधिक व्यापक रूप से हुआ है और इसे अधिक सही ढंग से समझा गया है।
जैसे-जैसे सच्चा ईसाई धर्म व्यापक रूप से फैलता गया और लोगों के अंतरात्मा में गहराई तक उतरता गया, वैसे-वैसे
ईसाइयों के लिए शासक बनना उतना ही असंभव होता गया, और गैर-ईसाइयों के लिए शासन करना उतना ही आसान होता गया।
उन्हें।
"ऐसे समाज में सरकारी हिंसा से छुटकारा पाना, जिसमें सभी सच्चे ईसाई नहीं हैं, केवल यही परिणाम देगा।"
दुष्ट लोग अच्छे लोगों पर हावी हो जाते हैं और उन्हें बिना किसी दंड के सताते हैं," ऐसा धर्म के समर्थकों का कहना है।
मौजूदा व्यवस्था के विपरीत। लेकिन ऐसा कभी नहीं हुआ है, और न ही हो सकता है। संसार की शुरुआत से ही ऐसा रहा है, और आज भी ऐसा ही है। दुष्ट लोग हमेशा अच्छे लोगों पर हावी रहेंगे, और हमेशा रहेंगे।
उन पर अत्याचार करो। कैन ने हाबिल को पराजित किया, धूर्त याकूब ने भोले-भाले एसाव पर अत्याचार किया और उसे अपने अधीन कर लिया।
लाबान द्वारा धोखा खाकर, कैफास और पिलातुस ने ईसा मसीह पर अत्याचार किया, रोमन सम्राटों ने सेनेका पर अत्याचार किया।
एपिक्टेटस और उनके समय में रहने वाले अच्छे रोमन लोग। जॉन चतुर्थ अपने प्रिय लोगों के साथ, सिफिलिस से पीड़ित शराबी पीटर अपने मसखरों के साथ, दुष्ट कैथरीन अपने प्रेमियों के साथ, शासन करते थे और अत्याचार करते थे।
अपने समय के मेहनती और धार्मिक रूसी लोग।
विलियम जर्मनों पर शासन कर रहा है, स्टैम्बुलॉफ बुल्गारियाई लोगों पर और रूसी अधिकारी रूसी जनता पर। जर्मनों ने इटालियंस पर प्रभुत्व जमाया था, अब वे हंगरीवासियों पर प्रभुत्व जमा रहे हैं।
स्लावोनियन; तुर्कों ने स्लावोनियन और यूनानियों पर प्रभुत्व जमाया है और अभी भी जमाए हुए हैं; अंग्रेज
हिंदुओं पर प्रभुत्व स्थापित करने वाले मंगोल, चीनियों पर प्रभुत्व स्थापित करने वाले हैं।
परिणामस्वरूप, चाहे सरकारी हिंसा को दबाया जाए या नहीं, अच्छे लोगों की स्थिति,
दुष्टों द्वारा सताए जाने की स्थिति में कोई बदलाव नहीं आएगा।

दुष्टों द्वारा अच्छाई पर हावी होने की संभावना से लोगों को भयभीत करना असंभव है, क्योंकि यही हमेशा से होता आया है, अभी भी है और आगे भी ऐसा ही होना चाहिए।
मूर्तिपूजा काल का संपूर्ण इतिहास उन घटनाओं और साधनों का वर्णन मात्र है जिनके द्वारा
अधिक दुष्टों ने कम दुष्टों पर सत्ता प्राप्त कर ली और क्रूरता एवं छल के द्वारा उसे बनाए रखा, सत्य की रक्षा करने और भले लोगों को बुराई से बचाने के बहाने भले लोगों पर शासन किया।
दुष्टों द्वारा। इतिहास की सभी क्रांतियाँ दुष्टों द्वारा सत्ता हथियाने और अत्याचार करने के उदाहरण मात्र हैं।
अच्छाई। यह घोषणा करते हुए कि यदि उनका अधिकार न होता तो दुष्ट लोग अच्छाई पर अत्याचार करते, सत्ताधारी अधिकारी केवल यह दर्शाते हैं कि वे अन्य उत्पीड़कों को सत्ता में आने देना नहीं चाहते जो अच्छाई को छीनना चाहते हैं।

इसे उनसे प्राप्त करें।

लेकिन ऐसा कहकर वे खुद पर ही आरोप लगा रहे हैं। उनका कहना है कि उनकी शक्ति, यानी हिंसा, आवश्यक है।

वर्तमान या भविष्य में अन्य संभावित उत्पीड़कों से पुरुषों की रक्षा करना।16

हिंसा के प्रयोग की कमजोरी इस तथ्य में निहित है कि सभी तर्क जो सामने लाए गए हैं

उत्पीड़कों के बचाव में उनके विरुद्ध और भी बेहतर तर्क प्रस्तुत किए जा सकते हैं। वे यह दलील देते हैं कि

हिंसा का खतरा - जिसे अक्सर भविष्य में कल्पना के रूप में देखा जाता है - लेकिन वे स्वयं वास्तविक हिंसा का अभ्यास जारी रखते हैं। "आप कहते हैं कि अतीत में लोग लूटपाट और हत्या करते थे, और आप..."

मुझे डर है कि अगर आपकी सत्ता समाप्त हो गई तो वे एक-दूसरे को लूटेंगे और मार डालेंगे। ऐसा हो सकता है - या

ऐसा शायद न हो। लेकिन यह तथ्य कि आप जेलों, किलों, नौका विहारों और निर्वासन में हजारों पुरुषों को बर्बाद कर देते हैं, लाखों परिवारों को तोड़ देते हैं और सेना में लाखों पुरुषों को शारीरिक और नैतिक रूप से बर्बाद कर देते हैं,

तथ्य कोई काल्पनिक नहीं बल्कि हिंसा का एक वास्तविक कृत्य है, जिसे, आपके अपने तर्क के अनुसार, किसी को अवश्य ही करना चाहिए।

हिंसा द्वारा विरोध करो। और इसलिए तुम स्वयं ही वे दुष्ट पुरुष हो जिनके विरुद्ध, तुम्हारे अपने अनुसार

“अगर हिंसा का प्रयोग करना बिल्कुल आवश्यक हो तो,” उत्पीड़ित लोग अपने उत्पीड़कों से यही कहेंगे। और गैर-ईसाई लोग हमेशा इसी तर्क के आधार पर कहते, सोचते और कार्य करते हैं। यदि उत्पीड़ित लोग अधिक

अपने उत्पीड़कों से भी अधिक दुष्ट, वे उन पर हमला करते हैं और उन्हें उखाड़ फेंकने का प्रयास करते हैं; और अनुकूल परिस्थितियों में

या तो वे परिस्थितियों के चलते उन्हें उखाड़ फेंकने में सफल हो जाते हैं, या जो कि अधिक सामान्य है, वे उत्पीड़कों की श्रेणी में शामिल हो जाते हैं और उनकी हिंसात्मक गतिविधियों में सहायता करते हैं।

परिणामस्वरूप, वही हिंसा जिसे सरकार के समर्थक आतंक के रूप में पेश करते हैं - दिखावा करते हुए

यह तथ्य कि दुष्ट लोग अपनी दमनकारी शक्ति के बिना अच्छे लोगों पर अत्याचार करेंगे, वास्तव में मानव समाज में हमेशा से मौजूद रहा है और रहेगा। इसलिए राज्य हिंसा का दमन किसी भी स्थिति में समाधान नहीं हो सकता।

दुष्टों द्वारा भले लोगों पर बढ़ते अत्याचार का कारण।

यदि राज्य हिंसा बंद हो जाए, तो संभवतः अलग-अलग लोगों द्वारा हिंसा की घटनाएं होंगी, अन्य

उन लोगों की तुलना में जिन्होंने पहले हिंसा की थी। लेकिन सत्ता के एक समूह से दूसरे समूह के हाथों में जाने मात्र से हिंसा की कुल मात्रा में किसी भी तरह की वृद्धि नहीं हो सकती थी।

“राज्य हिंसा तभी समाप्त हो सकती है जब समाज में कोई दुष्ट व्यक्ति न बचे,” इसके समर्थकों का कहना है।

मौजूदा व्यवस्था, यह मानते हुए कि दुष्ट लोग हमेशा रहेंगे, इसलिए यह कभी समाप्त नहीं हो सकती। और यह काफी हद तक सही होता अगर ऐसा होता, जैसा कि वे मानते हैं, कि उत्पीड़क

हमेशा सर्वश्रेष्ठ पुरुष, और बुराई से मनुष्यों को बचाने का एकमात्र साधन हिंसा है। तो, वास्तव में,

हिंसा कभी समाप्त नहीं हो सकती। लेकिन चूंकि ऐसा नहीं है, बल्कि इसके ठीक विपरीत है, कि बेहतर लोग बुरे लोगों पर अत्याचार नहीं करते, बल्कि बुरे लोग बेहतर लोगों पर अत्याचार करते हैं, और चूंकि हिंसा कभी बुराई का अंत नहीं कर सकती, और

इसके अलावा, इसे समाप्त करने का एक और तरीका भी है, यह दावा करना कि हिंसा कभी समाप्त नहीं होगी।

गलत। हिंसा का प्रयोग लगातार कम होता जा रहा है और जाहिर तौर पर यह पूरी तरह समाप्त हो जाना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं होगा। मौजूदा व्यवस्था के कुछ समर्थकों की कल्पना के अनुसार, उत्पीड़ितों की सरकार के प्रभाव में लगातार बेहतरी होती जाती है (इसके विपरीत, सरकार का प्रभाव उनकी निरंतर बदहाली का कारण बनता है)।
पतन के बजाय, इस तथ्य के माध्यम से कि सभी मनुष्य लगातार स्वयं में बेहतर होते जा रहे हैं, इसलिए

16 इस संदर्भ में मैं रूसी अधिकारियों के बेहद भोले और हास्यास्पद बयान का हवाला देना चाहूंगा, जो अन्य राष्ट्रीयताओं – पोलैंडवासियों, जर्मनीवासियों, बाल्टिक प्रांतों के लोगों और यहूदियों – के उत्पीड़क हैं। रूसी सरकार सदियों से अपनी प्रजा पर अत्याचार करती रही है, और उसने कभी पोलैंड के छोटे रूसियों, बाल्टिक प्रांतों के लेट लोगों या सभी द्वारा शोषित रूसी किसानों के बारे में चिंता नहीं की। और अब अचानक वह उत्पीड़ितों की रक्षक बन गई है – उन्हीं उत्पीड़ितों की, जिन पर वह स्वयं अत्याचार कर रही है।

यहां तक कि सत्ता में बैठे सबसे दुष्ट लोग भी धीरे-धीरे कम दुष्ट होते जाएंगे, यहां तक कि अंत में वे इतने अच्छे हो जाएंगे कि हिंसा का प्रयोग करने में असमर्थ हो जाएंगे।
मानवता का प्रगतिशील आंदोलन समाज के बेहतर तत्वों द्वारा सत्ता हथियाने से आगे नहीं बढ़ता है।
सत्ता का दुरुपयोग करना और बलपूर्वक अपने अधीन लोगों को सुधारना, जैसा कि रूढ़िवादी और क्रांतिकारी दोनों कल्पना करते हैं। यह मुख्य रूप से इस तथ्य से उत्पन्न होता है कि सामान्यतः सभी मनुष्य
ईसाई धर्म के अधिक से अधिक सचेत आत्मसात की ओर निरंतर और अविचलित रूप से आगे बढ़ते हुए
जीवन का सिद्धांत; और दूसरा, इस तथ्य से कि सचेत आध्यात्मिक जीवन के अलावा भी, मनुष्य अनजाने में ही एक समूह के आध्यात्मिक जीवन की प्रक्रिया द्वारा जीवन के प्रति अधिक ईसाई दृष्टिकोण अपना लेते हैं।
सत्ता हथियाना, और फिर दूसरों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना।
समाज के सबसे बुरे तत्व, सत्ता पर कब्जा करने के बाद, उस गंभीर प्रभाव के तहत
सत्ता के साथ हमेशा आने वाली क्रूरता धीरे-धीरे कम होती जाती है, और वे हिंसा के क्रूर रूपों का उपयोग करने में असमर्थ हो जाते हैं।
परिणामस्वरूप, अन्य लोग उनका स्थान लेने में सक्षम हो जाते हैं, और नरमी की वही प्रक्रिया फिर से शुरू हो जाती है।
कहते हैं, उनमें अचेतन रूप से ईसाईकरण की प्रक्रिया चलती रहती है। यह कुछ-कुछ उबलते हुए बुलबुले जैसी प्रक्रिया है। अधिकांश जीवन के प्रति गैर-ईसाई दृष्टिकोण रखने वाले पुरुष हमेशा सत्ता के लिए प्रयासरत रहते हैं और उसे प्राप्त करने के लिए संघर्ष करते हैं। इस संघर्ष में समाज के सबसे क्रूर, सबसे अशिष्ट और सबसे कम ईसाई तत्व सबसे सौम्य तत्वों पर हावी हो जाते हैं।
अच्छे स्वभाव वाले, और ईसाई, और अपनी हिंसा के माध्यम से समाज के उच्च वर्गों में उठते हैं। और
इस प्रकार मसीह की भविष्यवाणी पूरी हुई: “धनवानों पर धिक्कार! भरे-पूरे शरीर वालों पर धिक्कार! जब सब लोग तुम्हारी प्रशंसा करें, तब तुम पर धिक्कार!” क्योंकि जो लोग सत्ता और उसके सभी लाभों के अधिकार में हैं, उन पर धिक्कार है।
इससे यश और धन प्राप्त करने वाले तथा अपने द्वारा निर्धारित विभिन्न लक्ष्यों को प्राप्त करने वाले लोग इसे पहचानते हैं।
इन सब बातों का व्यर्थ होना और उस पद पर वापस लौटना जहाँ से वे आए थे। चार्ल्स पंचम, जॉन चतुर्थ और अलेक्जेंडर प्रथम।

सत्ता की निरर्थकता और बुराई को पहचानते हुए, उन्होंने इसका त्याग कर दिया क्योंकि वे अपने स्वयं के लाभ के लिए हिंसा का उपयोग करने में असमर्थ थे, जैसा कि उन्होंने पहले किया था।

लेकिन सत्ता की शून्यता और बुराई की इस पहचान के वे अकेले उदाहरण नहीं हैं।

सत्ता का वह पद जिसे पाने के लिए उसने कड़ी मेहनत की है, हर जनरल, हर सरकारी मंत्री, हर करोड़पति, हर छोटा अधिकारी जिसने दस साल से जिस पद की लालसा की थी, उसे हासिल कर लिया है, हर अमीर

कुछ सौ रूबल बचाकर रखने वाला किसान, धीरे-धीरे नरम पड़ने की इस अचेतन प्रक्रिया से गुजरता है।

और न केवल व्यक्तिगत व्यक्ति, बल्कि मनुष्यों के समाज, संपूर्ण राष्ट्र भी इस प्रक्रिया से गुजरते हैं।

सत्ता का आकर्षण, और उससे मिलने वाला सारा धन, सम्मान और विलासिता, एक पर्याप्त लक्ष्य प्रतीत होता है।

मनुष्य के प्रयास तभी तक सार्थक होते हैं जब तक वे लक्ष्य प्राप्त नहीं कर लेते। जिस क्षण मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है, उसे पता चल जाता है कि...

वे अपने सारे घमंड में डूबे रहते हैं और धीरे-धीरे अपनी सारी आकर्षण शक्ति खो देते हैं। वे बादलों की तरह हैं जिनका कोई आकार नहीं होता। और दूर से ही उनकी सुंदरता दिखाई देती है; जैसे ही कोई उनमें प्रवेश करता है, उनकी सारी भव्यता गायब हो जाती है।

सत्ता और धन के धनी पुरुष, कभी-कभी वे भी जिन्होंने इसे हासिल किया है

जब वे स्वयं अपनी शक्ति और धन को प्राप्त कर लेते हैं, तो वे स्वयं भी, लेकिन अक्सर उनके उत्तराधिकारी, सत्ता के लिए इतने उत्सुक नहीं रह जाते और इसे प्राप्त करने के प्रयासों में इतने क्रूर नहीं रह जाते।

ईसाई प्रभाव के फलस्वरूप, अनुभव से यह सीखकर कि जो कुछ भी है वह व्यर्थ है

हिंसा से प्राप्त शक्ति और धन के लालच से उत्पन्न बुराइयाँ कभी एक पीढ़ी में तो कभी कई पीढ़ियों में खत्म हो जाती हैं। वे कम क्रूर हो जाते हैं और इसलिए अपनी क्रूरता को बरकरार नहीं रख पाते।

पद पर रहते हुए, उन्हें कम ईसाई और अधिक दुष्ट लोगों द्वारा सत्ता से बेदखल कर दिया जाता है। इस प्रकार वे एक

समाज में सामाजिक स्तर निम्न होता है, लेकिन नैतिकता उच्च होती है, जिससे ईसाई धर्म के औसत स्तर में वृद्धि होती है।

पुरुषों में चेतना। लेकिन उनके तुरंत बाद समाज के सबसे बुरे, सबसे अशिष्ट, सबसे कम ईसाई तत्व फिर से शीर्ष पर आ जाते हैं, और अपने पूर्ववर्तियों के समान ही प्रक्रिया से गुजरते हैं, और फिर से एक

लगभग एक पीढ़ी बाद, हिंसा से प्राप्त होने वाली व्यर्थता को देखकर और ईसाई धर्म को आत्मसात करने के बाद, वे

उत्पीड़ितों के बीच फिर से सत्ता आ जाती है, और उनकी जगह नए उत्पीड़क ले लेते हैं, जो पहले के उत्पीड़कों से कम क्रूर होते हैं, हालांकि उन लोगों से कहीं अधिक क्रूर होते हैं जिन पर वे अत्याचार करते हैं। परिणामस्वरूप, यद्यपि सत्ता बनी रहती है

बाह्य रूप से तो यह पहले जैसा ही दिखता है, लेकिन सत्ता में आने वाले लोगों के हर बदलाव के साथ इसमें लगातार वृद्धि होती जा रही है।

ऐसे पुरुषों की संख्या बहुत अधिक है जिन्हें अनुभव से ईसाई जीवन शैली को आत्मसात करने की आवश्यकता महसूस हुई है, और हर बदलाव के साथ - भले ही वह सबसे कठोर, असभ्य और सबसे कम ईसाई हो।

सत्ता पर काबिज होने के बाद, वे अपने पूर्ववर्तियों की तुलना में कम क्रूर और निर्दयी तथा अधिक ईसाई होते हैं।

सत्ता समाज के सबसे बुरे तत्वों का चयन करती है और उन्हें आकर्षित करती है, उन्हें रूपांतरित करती है, उनमें सुधार लाती है और उन्हें नरम बनाती है।

और उन्हें समाज में वापस लौटा देता है।

यह वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से ईसाई धर्म, मानव प्रगति में आने वाली बाधाओं के बावजूद, आगे बढ़ता है।

सत्ता के दुरुपयोग से उत्पन्न हिंसा, मनुष्यों पर अधिकाधिक हावी होती जाती है। ईसाई धर्म का प्रसार होता है।

मनुष्य की चेतना, न केवल सत्ता की हिंसा के बावजूद, बल्कि उसके माध्यम से भी विकसित होती है।

और इसलिए राज्य के समर्थकों का यह दावा है कि यदि सरकार की शक्ति

दुष्टों को दबाने से भले लोगों पर अत्याचार होगा, यह न केवल यह दिखाने में विफल रहता है कि इससे डरने की कोई बात है, बल्कि यह भी कि यह ठीक वही है जो अभी हो रहा है, लेकिन इसके विपरीत यह साबित करता है कि यह सरकारी शक्ति ही है जो इसे संभव बनाती है।

दुष्टों का उद्देश्य अच्छे लोगों पर अत्याचार करना है, और बुराई को दबाना सबसे वांछनीय है, और यह स्वाभाविक रूप से धीरे-धीरे दब रही है।

लेकिन अगर यह सच होता कि सत्ता में बैठे लोग इतने शक्तिशाली हो जाने पर सरकारी शक्ति भी समाप्त हो जाएगी

“ईसाई धर्म के समर्थक कहते हैं कि वे स्वेच्छा से सत्ता का त्याग कर रहे हैं, और उनकी जगह लेने के लिए कोई इच्छुक व्यक्ति नहीं मिल रहा है, और भले ही यह प्रक्रिया पहले से ही चल रही हो,” “यह कब होगा जब

क्या ऐसा हो सकता है? यदि अठारह सौ वर्षों के बाद भी इतने सारे लोग सत्ता के लिए उत्सुक हैं, और इतने कम

आज्ञापालन करने के लिए उत्सुक होने के बावजूद, ऐसा बहुत जल्द होने की कोई संभावना नहीं दिखती - या वास्तव में ऐसा कभी होने की भी कोई संभावना नहीं दिखती।

"भले ही कुछ ऐसे पुरुष हों, जैसा कि हमेशा से रहे हैं, जो सत्ता का आनंद लेने के बजाय उसका त्याग करना पसंद करते हैं,"

आरक्षित रखे गए पुरुषों की वह विशाल संख्या, जो अधीनता की अपेक्षा प्रभुत्व को प्राथमिकता देते हैं, इतनी बड़ी है कि इसकी कल्पना करना कठिन है।

वह समय जब संख्या समाप्त हो जाएगी।

इससे पहले कि यह ईसाईकरण प्रक्रिया एक-एक करके सभी मनुष्यों को इस प्रकार प्रभावित कर पाती कि वे गुजर जाते

यदि कोई व्यक्ति गैर-ईसाई धर्म से ईसाई धर्म की जीवन अवधारणा की ओर अग्रसर होता है, और स्वेच्छा से सत्ता और धन का त्याग कर देता है, तो...

यह आवश्यक होगा कि वे सभी असभ्य, अर्ध-जंगली पुरुष, जो ईसाई धर्म को समझने या उस पर अमल करने में पूरी तरह असमर्थ हैं, जिनकी संख्या हर ईसाई समाज में हमेशा बहुत अधिक होती है, उन्हें ईसाई धर्म को समझना चाहिए।

ईसाई धर्म में परिवर्तित हो जाएं। इससे भी बढ़कर, सभी असभ्य और पूर्णतः गैर-ईसाई लोग, जो

ईसाई जगत से बाहर इतने सारे लोग हैं, उन्हें भी परिवर्तित होना होगा। और इसलिए, भले ही हम यह मान लें कि ईसाईकरण की यह प्रक्रिया एक दिन सभी को प्रभावित करेगी, फिर भी, हुई प्रगति की मात्रा को देखते हुए...

जो उपलब्धि अठारह सौ वर्षों में हासिल की है, उसे हासिल करने में कई गुना अठारह शताब्दियाँ लगेंगी। और यह

इसलिए, फिलहाल किसी ऐसी अव्यावहारिक चीज़ के बारे में सोचना असंभव और लाभहीन है जो कि

सत्ता का दमन। हमें तो केवल सत्ता को योग्यतम हाथों में सौंपने का प्रयास करना चाहिए।

और यह आलोचना बिल्कुल न्यायसंगत होगी, यदि जीवन की एक अवधारणा से दूसरी अवधारणा में संक्रमण
ये सब केवल सभी मनुष्यों द्वारा, अलग-अलग और क्रमिक रूप से, एक ही प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त किए गए थे, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति ने अपने लिए यह महसूस किया था।
स्वयं को समझना, सत्ता की निरर्थकता को जानना और आंतरिक आध्यात्मिक मार्ग से ईसाई सत्य तक पहुंचना। यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है, और लोग इस आंतरिक मार्ग से एक-एक करके ईसाई धर्म की ओर अग्रसर होते रहते हैं।
लेकिन एक अन्य बाहरी माध्यम भी है जिसके द्वारा मनुष्य ईसाई धर्म तक पहुँचते हैं और जिसके द्वारा संक्रमण होता है।
यह कम क्रमिक है।
जीवन की एक व्यवस्था से दूसरी व्यवस्था में यह परिवर्तन रेत की तरह धीरे-धीरे नहीं होता।
रेत घड़ी से एक-एक दाना करके गुजरता हुआ। यह कुछ-कुछ तैरते हुए बर्तन में पानी भरने जैसा है।
पानी। शुरू में पानी केवल एक तरफ से धीरे-धीरे अंदर आता है, लेकिन जैसे-जैसे बर्तन भारी होता जाता है, अचानक
यह डूबने लगता है और लगभग तुरंत ही पानी से भर जाता है।
मानव जाति के एक अवधारणा से दूसरी अवधारणा में परिवर्तन के साथ भी ठीक ऐसा ही होता है – और इस प्रकार एक अन्य अवधारणा से दूसरी अवधारणा में परिवर्तन होता है।
जीवन का संगठन – दूसरे की ओर। पहले तो धीरे-धीरे, एक-एक करके, मनुष्य इसे प्राप्त करते हैं।
आंतरिक आध्यात्मिक मार्ग से नए सत्य की खोज करें और जीवन में उसका अनुसरण करें। लेकिन जब सत्य के प्रसार में एक निश्चित बिंदु आ जाता है, तो वह अचानक सभी द्वारा आत्मसात कर लिया जाता है, आंतरिक मार्ग से नहीं, बल्कि जैसे-जैसे यह प्रकट होता है।
अनजाने में हुए थे।
इसीलिए मौजूदा व्यवस्था के समर्थकों का यह तर्क गलत है कि चूंकि अठारह शताब्दियों में मानव जाति का केवल एक छोटा सा हिस्सा ही ईसाई धर्म में परिवर्तित हुआ है, इसलिए यह संख्या कई गुना अठारह होनी चाहिए।
सदियों पहले बाकी सभी भी ऐसा ही करते हैं। क्योंकि उस तर्क में वे किसी भी बात को ध्यान में नहीं रखते।

आंतरिक आध्यात्मिक साधन के अलावा, अन्य साधन भी हैं जिनके द्वारा मनुष्य एक नए सत्य को आत्मसात करता है और जीवन के एक क्रम से दूसरे क्रम में प्रवेश करता है।
मनुष्य किसी सत्य को केवल भविष्यसूचक अंतर्दृष्टि या अनुभव के माध्यम से ही आत्मसात नहीं करते।
जीवन। जब सत्य पर्याप्त रूप से व्यापक रूप से फैल जाता है, तो विकास के निचले स्तर पर मौजूद मनुष्य इसे उन लोगों पर विश्वास के माध्यम से एक साथ स्वीकार कर लेते हैं जिन्होंने आंतरिक आध्यात्मिक मार्ग से इसे प्राप्त किया है।
और वे इसे अपने जीवन में लागू कर रहे हैं।
प्रत्येक नया सत्य, जिसके द्वारा मानव जीवन की व्यवस्था बदल जाती है और मानवता का विकास होता है, प्रारंभ में केवल कुछ ही लोगों द्वारा स्वीकार किया जाता है जो इसे आंतरिक आध्यात्मिक अंतर्ज्ञान के माध्यम से समझते हैं।
मानवजाति का शेष भाग जिसने उस पूर्व सत्य को विश्वासपूर्वक स्वीकार किया जिस पर वर्तमान व्यवस्था आधारित है,

वे हमेशा नए सत्य के प्रसार का विरोध करते हैं।
लेकिन यह देखते हुए कि, पहली बात तो यह है कि मनुष्य स्थिर नहीं रहते, बल्कि सत्य की अधिक पहचान और अपने जीवन को उसके अनुरूप ढालने की दिशा में निरंतर आगे बढ़ते रहते हैं, और दूसरी बात यह है कि सभी मनुष्य अलग-अलग रूपों में
उनकी उम्र, शिक्षा और नस्ल के आधार पर उनकी समझ का स्तर अलग-अलग होता है।
सबसे पहले, जो लोग आध्यात्मिक अंतर्ज्ञान द्वारा नए सत्य को प्राप्त कर चुके हैं, उनके सबसे निकट रहने वाले लोग धीरे-धीरे और एक-एक करके, लेकिन बाद में तेजी से, नए सत्य की ओर अग्रसर होते हैं। इस प्रकार
नए सत्य को स्वीकार करने वाले पुरुषों की संख्या बढ़ती ही जा रही है, और सत्य अधिक से अधिक स्पष्ट होता जा रहा है।
अधिक समझने योग्य।
और इस प्रकार शेष बचे लोगों में अधिक आत्मविश्वास जागृत होता है, जो क्षमता के कम उन्नत स्तर पर हैं।
सत्य को समझने के लिए। और उनके लिए इसे समझना आसान हो जाता है, और अधिकाधिक लोग इसे स्वीकार करने लगते हैं।
यह।
और इस तरह आंदोलन एक बर्फ के गोले की तरह तेजी से और लगातार बढ़ते पैमाने पर आगे बढ़ता है, जब तक कि अंततः नए सत्य के अनुरूप जनमत का निर्माण नहीं हो जाता, और फिर पूरा
इसकी गति से प्रेरित होकर मनुष्य का एक विशाल जनसमूह एक साथ नए सत्य की ओर अग्रसर हो जाता है और एक नए सामाजिक परिवेश की स्थापना करता है।
इसके अनुसार आदेश दें।
जो लोग किसी नई सच्चाई को तब स्वीकार करते हैं जब उसे एक निश्चित स्तर की स्वीकृति मिल चुकी होती है, वे हमेशा आगे बढ़ते हैं।
वे एक साथ भारी मात्रा में आते हैं। वे उस गिट्टी की तरह हैं जिससे हर जहाज हमेशा भरा जाता है, एक ही बार में।
इसे सीधा रखने और इसे ठीक से चलने में सक्षम बनाने के लिए। यदि बैलास्ट न हो, तो जहाज पानी में पर्याप्त नीचे नहीं रहेगा और स्थितियों में जरा से भी बदलाव होने पर अपनी स्थिति बदल लेगा। यह बैलास्ट, जो
जो चीज पहली नजर में अनावश्यक और यहां तक कि जहाज की प्रगति में बाधक प्रतीत होती है, वह वास्तव में अपरिहार्य है।
इसके बेहतर नेविगेशन के लिए।
मानवजाति के साथ भी ऐसा ही होता है, जो व्यक्तिगत रूप से नहीं, बल्कि हमेशा एक समूह के रूप में, एक नए सामाजिक विचार के प्रभाव में आकर एक ही पल में जीवन की एक व्यवस्था से दूसरी व्यवस्था में परिवर्तित हो जाती है।
अपनी जड़ता के कारण, यह सामाजिक व्यवस्था में होने वाली उन लगातार और तीव्र क्रांतियों में हमेशा बाधा डालता है जो अब तक नहीं हुई हैं।
मानव अनुभव द्वारा यह पर्याप्त रूप से सिद्ध हो चुका है। और यह प्रत्येक सत्य को लंबे समय तक विलंबित करता है जब तक कि वह दीर्घ संघर्षों की कसौटी पर खरा न उतर जाए और मानवता की चेतना में पूरी तरह से समाहित न हो जाए।
और इसीलिए यह कहना गलत है कि केवल बहुत कम संख्या में पुरुषों ने ही आत्मसात किया है।
अठारह शताब्दियों में ईसाई धर्म की स्थापना हुई, समस्त मानवजाति को इसे आत्मसात करने में इससे कई गुना अधिक शताब्दियाँ लगेंगी, और चूंकि वह समय अभी बहुत दूर है, इसलिए हमें, जो वर्तमान में जी रहे हैं, इसके बारे में सोचने की भी आवश्यकता नहीं है।
यह एक गलती है, क्योंकि संस्कृति के निचले स्तर पर मौजूद पुरुष, वे पुरुष और राष्ट्र जो

ईसाई जीवन शैली की प्राप्ति में बाधा के रूप में जिन लोगों को दर्शाया गया है, वे स्वयं वही लोग हैं जो
किसी भी सत्य को जब एक बार जनमत द्वारा मान्यता मिल जाती है, तो लोग हमेशा एक साथ बड़ी संख्या में उसका समर्थन करने लगते हैं।
और इसलिए मानव जीवन का रूपांतरण, जिसके माध्यम से सत्ता में बैठे लोग इसका त्याग करेंगे, और
उनकी जगह लेने के लिए कोई उत्सुक नहीं होगा, यह तभी संभव है जब सभी लोग सचेत रूप से और अलग-अलग रूप से ऐसा करें।
ईसाई जीवन अवधारणा को आत्मसात करना। यह तब होगा जब एक ईसाई जनमत उत्पन्न होगा, जो इतना निश्चित और आसानी से समझ में आने वाला होगा कि वह निष्क्रिय जनसमूह के उस हिस्से तक पहुँच सके जो इसे प्राप्त करने में असमर्थ है।
सत्य अपने अंतर्ज्ञान से ही सिद्ध होता है, और इसलिए यह हमेशा जनमत के प्रभाव में रहता है।
जनमत स्वतः उत्पन्न होता है और सैकड़ों-हजारों वर्षों तक फैलता है, लेकिन इसमें संक्रमण के माध्यम से मनुष्यों पर प्रभाव डालने की शक्ति होती है, और यह बड़ी तेजी से बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित कर लेता है।

लेकिन, मौजूदा व्यवस्था के समर्थकों का कहना है, "भले ही यह सच हो कि जनमत, जब एक निश्चित स्तर की स्पष्टता और सटीकता प्राप्त कर लेता है, तो वह बाहर के निष्क्रिय जनसमूह को परिवर्तित कर सकता है..."
ईसाई जगत – गैर-ईसाई जातियाँ – साथ ही साथ उसमें रहने वाले अशिष्ट और भ्रष्ट लोग
इस बीच, हमारे पास क्या सबूत हैं कि यह ईसाई जनमत उत्पन्न हुआ है और बल का स्थान लेने और उसे अनावश्यक बनाने में सक्षम है।
हमें उस बल का त्याग नहीं करना चाहिए जिसके बल पर वर्तमान व्यवस्था कायम है, और न ही अस्पष्टता पर भरोसा करना चाहिए।
जनमत का अप्रत्यक्ष प्रभाव ईसाइयों को सभ्य समाज के अंदर और बाहर के बर्बर लोगों द्वारा लूटे जाने, हत्या किए जाने और हर तरह से प्रताड़ित किए जाने के जोखिम में डालता है।
"चूंकि, बल प्रयोग के समर्थन से भी, हम उन गैर-ईसाई तत्वों को मुश्किल से ही नियंत्रित कर सकते हैं जो..."
क्या यह संभव है कि वह हमेशा हम पर कहर बरपाने और सभ्यता द्वारा अर्जित सभी चीजों को नष्ट करने के लिए तैयार रहता है?
क्या जनमत बल का स्थान ले सकता है और हमें सुरक्षित कर सकता है? और इसके अलावा, हम वह क्षण कैसे खोजेंगे जब जनमत इतना मजबूत हो जाए कि बल प्रयोग का स्थान ले सके? अस्वीकार करना
बल का प्रयोग करना और जनमत पर भरोसा करके अपनी रक्षा करना उतना ही मूर्खतापूर्ण होगा जितना कि सभी हथियारों को हटा देना।
एक चिड़ियाघर में बचाव करना, और फिर सभी शेरों और बाघों को खुला छोड़ देना, इस तथ्य पर भरोसा करते हुए कि जानवर अपने पिंजरों में बंद रहने और गर्म लोहे से नियंत्रित रहने पर शांत प्रतीत होते हैं। और इसलिए लोग
सत्ताधारी लोग, जिन्हें भाग्य या ईश्वर द्वारा अधिकार के पदों पर आसीन किया गया है, उन्हें जोखिम उठाने का अधिकार नहीं है।
वे सभ्यता द्वारा हासिल की गई हर चीज को बर्बाद कर रहे हैं, सिर्फ इसलिए कि वे यह देखने के लिए एक प्रयोग करना चाहते हैं कि क्या जनमत सत्ता द्वारा दी गई सुरक्षा का स्थान ले सकता है या नहीं।
अब भुला दिए गए एक फ्रांसीसी लेखक, अल्फोंस कार ने कहीं कहा था, असंभवता को दर्शाने का प्रयास करते हुए
मृत्युदंड को समाप्त करते हुए, "हत्यारों को पहले हमें कुछ देने दो।"

उदाहरण के लिए।” मैंने अक्सर इस चुटीले कथन को उन लोगों द्वारा दोहराते हुए सुना है जो सोचते थे कि ये शब्द मृत्युदंड के उन्मूलन के खिलाफ एक चतुर और ठोस तर्क थे। और फिर भी, सभी
उन लोगों का तर्क गलत है जो मानते हैं कि सरकारें बल प्रयोग को त्याग नहीं सकतीं।
जब तक सभी लोग ऐसा करने में सक्षम न हो जाएं, इस बात को उस सूक्ति से अधिक स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं किया जा सकता है।
राज्य हिंसा के पैरोकार कहते हैं, "हत्यारों को हत्या छोड़ कर हमें उदाहरण पेश करने दो।"
और फिर हम इसे छोड़ देंगे।” लेकिन हत्यारे भी ठीक यही कहते हैं, बल्कि कहीं अधिक सही तरीके से। वे कहते हैं, “जिन्होंने हमें सिखाने और मार्गदर्शन करने का दायित्व लिया है, वे हमें कानूनी हत्या को छोड़ने का उदाहरण प्रस्तुत करें।”
और फिर हम उनका अनुकरण करेंगे।” और वे यह बात मजाक में नहीं, बल्कि गंभीरता से कहते हैं, क्योंकि यह वास्तव में सच है।
मामले की स्थिति।
“हम हिंसा का प्रयोग नहीं छोड़ सकते, क्योंकि हम हिंसक बदमाशों से घिरे हुए हैं।” हमारे समय में कोई भी चीज़ मानवता की प्रगति और उसके अनुरूप संगठन की स्थापना में बाधा नहीं डालती।
वर्तमान विकास इस झूठे तर्क से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। सत्ता में बैठे लोग आश्वस्त हैं कि मनुष्य केवल
वे बल प्रयोग के माध्यम से ही प्रगति को निर्देशित और संचालित करते हैं, और इसलिए वे मौजूदा संगठन का समर्थन करने के लिए आत्मविश्वास से इसका उपयोग करते हैं। मौजूदा व्यवस्था बल से नहीं, बल्कि जनमत से कायम है।
जिसकी क्रिया बल प्रयोग से बाधित होती है। फलस्वरूप, बल प्रयोग का प्रभाव उसे बाधित करना होता है।
और जिस चीज को वह बनाए रखने की कोशिश करता है, उसे ही कमजोर कर देता है।
हिंसा, यहां तक कि सबसे अनुकूल परिस्थितियों में भी, जब इसका उपयोग केवल कुछ व्यक्तिगत उद्देश्यों के लिए नहीं किया जाता है, तो यह सत्ता में बैठे लोग हमेशा कानून के एक ही अपरिवर्तनीय सूत्र के तहत उसी बात को दंडित करते हैं जो बहुत पहले ही तय हो चुकी होती है।
जनमत द्वारा निंदा की गई। लेकिन इसमें यह अंतर है कि जबकि जनमत निंदा करता है और
नैतिक कानून के विरुद्ध सभी कृत्यों की निंदा करता है, जिसमें इसकी निंदा के सबसे विविध मामले भी शामिल हैं, जबकि हिंसा पर आधारित कानून केवल एक निश्चित, बहुत सीमित श्रेणी के कृत्यों की निंदा और दंड देता है, और इस प्रकार
ऐसा करने से उसी प्रकार के अन्य सभी कृत्यों को उचित ठहराया जा सकता है जो इसके दायरे में नहीं आते हैं।
मूसा के समय से ही जनमत लोभ, व्यभिचार और क्रूरता को गलत मानता आया है और तदनुसार इनकी निंदा करता रहा है। और यह हर प्रकार की ऐसी अभिव्यक्ति की निंदा करता है।
लालच, न केवल बलपूर्वक, धोखाधड़ी या छल से दूसरों की संपत्ति पर कब्जा करना है, बल्कि इससे भी अधिक
धन का क्रूर दुरुपयोग; यह हर प्रकार के दुराचार की निंदा करता है, चाहे वह रखैल, दासी, तलाकशुदा महिला या यहाँ तक कि अपनी पत्नी के साथ ही क्यों न हो; यह हर प्रकार की क्रूरता की निंदा करता है, चाहे वह मारपीट के रूप में दिखाई जाए।
न केवल मनुष्यों बल्कि पशुओं के साथ भी दुर्व्यवहार या हत्या करना। केवल बल पर आधारित कानून

यह कानून कुछ प्रकार के लोभ, जैसे चोरी और धोखाधड़ी, और कुछ प्रकार के दुराचार और क्रूरता, जैसे वैवाहिक बेवफाई, हत्या और चोट पहुँचाने को दंडित करता है। और इस तरह यह सभी प्रकार के दुराचार को स्वीकार करता प्रतीत होता है।
लोभ, फिजूलखर्ची और क्रूरता की वे अभिव्यक्तियाँ जो इसकी संकीर्ण परिभाषा के अंतर्गत नहीं आतीं।
लेकिन जनमत को भ्रष्ट करने के अलावा, बल का प्रयोग लोगों को इस घातक धारणा की ओर ले जाता है कि वे आध्यात्मिक प्रेरणा के माध्यम से नहीं, बल्कि सत्य की प्राप्ति और उसके अहसास के माध्यम से प्रगति कर रहे हैं।
जीवन में, और यही मानवता के हर प्रगतिशील आंदोलन का एकमात्र स्रोत है, लेकिन इसके माध्यम से
हिंसा, वह शक्ति जो मनुष्य को सत्य की ओर ले जाने के बजाय, उससे और दूर ले जाती है। यह एक घातक त्रुटि है, क्योंकि यह मनुष्य को अपने जीवन की मूल शक्ति – अपनी आध्यात्मिक शक्ति – की उपेक्षा करने की ओर ले जाती है।
गतिविधि – और अपना सारा ध्यान और ऊर्जा हिंसा के उपयोग की ओर लगाना, जो सतही और सुस्त है।
और आम तौर पर इसका प्रभाव हानिकारक होता है।
वे वही गलती करते हैं जो वे लोग करते हैं जो भाप के इंजन को चालू करने की कोशिश करते समय उसके पहियों को अपने हाथों से घुमाते हैं, यह जाने बिना कि उसकी गति का मूल कारण क्या था।
पहियों की गति से नहीं, बल्कि भाप के विस्तार से। पहियों को हाथ से और लीवर से घुमाकर।
वे केवल गति का आभास ही उत्पन्न कर सकते थे, और इस बीच वे पहियों को तोड़-मरोड़ कर उन्हें वास्तविक गति के लिए अनुपयुक्त बना देते थे।
जो लोग बाह्य बल के माध्यम से मनुष्यों की प्रगति कराने की सोचते हैं, वे ठीक यही कर रहे हैं।
उनका कहना है कि हिंसा के प्रयोग के बिना ईसाई जीवन स्थापित नहीं किया जा सकता, क्योंकि अफ्रीका और एशिया में ईसाई समाजों से बाहर बर्बर जातियाँ रहती हैं (कुछ तो यहाँ तक कि हिंसा का प्रयोग भी करते हैं)।
चीनियों को सभ्यता के लिए खतरा बताना), और यह कि ईसाई समाजों के बीच में भी
बर्बर, भ्रष्ट और, वंशानुक्रम के नए सिद्धांत के अनुसार, जन्मजात अपराधी। और हिंसा, वे
कहते हैं, यह आवश्यक है कि बर्बरों और अपराधियों को हमारी सभ्यता का विनाश करने से रोका जाए।
लेकिन ईसाई समाज के भीतर और बाहर के ये बर्बर लोग, जो हमारे लिए इतने आतंक का कारण हैं, कभी भी
हिंसा द्वारा अधीन किए गए थे, और अब हिंसा द्वारा अधीन नहीं हैं। राष्ट्रों ने कभी अन्य राष्ट्रों को अधीन नहीं किया है।
केवल हिंसा के बल पर। यदि कोई राष्ट्र जिसने दूसरे राष्ट्र को अपने अधीन किया, सभ्यता के निचले स्तर पर था, तो ऐसा कभी नहीं हुआ कि वह हिंसा के माध्यम से अपने जीवन संगठन को लागू करने में सफल हुआ हो। इसके विपरीत, ऐसा कभी नहीं हुआ कि उसने हिंसा के बल पर अपने जीवन को व्यवस्थित किया हो।
हमेशा विजित राष्ट्र में प्रचलित जीवन व्यवस्था को अपनाने के लिए मजबूर किया जाता था। यदि कभी भी कोई
बलपूर्वक जीते गए राष्ट्र वास्तव में अधीन किए गए हों, या लगभग अधीन ही कर लिए गए हों, यह हमेशा जनमत की कार्रवाई के माध्यम से हुआ है, न कि हिंसा के माध्यम से, जो केवल जनता को और अधिक विद्रोह की ओर धकेलने की प्रवृत्ति रखती है।
जब संपूर्ण राष्ट्र एक नए धर्म के अधीन हो जाते हैं और ईसाई या मुसलमान बन जाते हैं,
ऐसा रूपांतरण कभी नहीं हुआ क्योंकि अधिकारियों ने इसे अनिवार्य बना दिया था (पर

इसके विपरीत, हिंसा ने अक्सर विपरीत दिशा में काम किया है), लेकिन क्योंकि जनमत ने ऐसे परिवर्तन को अपरिहार्य बना दिया। इसके विपरीत, वे राष्ट्र जिन्हें बलपूर्वक अपने धर्म को स्वीकार करने के लिए विवश किया गया है।

विजेताओं का हमेशा से इसके प्रति शत्रुतापूर्ण रवैया रहा है।

यही हाल हमारे सभ्य समाजों के बीच मौजूद बर्बर तत्वों का भी है। न तो सजा की गंभीरता बढ़ाने से, न ही घटाने से, न ही जेलों में बदलाव से, न ही

पुलिस की संख्या बढ़ने से अपराधियों की संख्या में वृद्धि होगी या कमी आएगी? उनकी संख्या में केवल यही बदलाव आएगा।

समाज के नैतिक मानकों में बदलाव के कारण इनकी संख्या कम हो गई है। कुछ जिलों में कठोर दंड भी द्वंद्वयुद्ध और प्रतिशोध को समाप्त नहीं कर सके। डकैती के आरोप में कई चेरकेसों को फांसी दिए जाने के बावजूद, ये प्रथा जारी है।

बचपन से ही लुटेरे बने रहना, क्योंकि कोई भी युवती चेरकेस युवक से तब तक विवाह नहीं करेगी जब तक वह सबूत न दे दे।

घोड़े या कम से कम भेड़ को उठाकर ले जाने से उसकी बहादुरी का प्रदर्शन होता है। यदि पुरुष द्वंद्वयुद्ध करना बंद कर दें, और

अगर चोर लुटेरे बनना छोड़ देते हैं, तो यह सजा के डर से नहीं होगा (दरअसल, यह डर युवाओं के लिए अपराध को और भी आकर्षक बना देता है), बल्कि जनमत के नैतिक मानकों में बदलाव के कारण होगा।

यही बात अन्य सभी अपराधों पर भी लागू होती है। बल प्रयोग कभी भी जनमत द्वारा स्वीकृत चीज़ को दबा नहीं सकता।

इसके विपरीत, बल प्रयोग के पूरे प्रभाव को निष्प्रभावी करने के लिए जनमत का बल के प्रत्यक्ष विरोध में होना ही पर्याप्त है। शहादत के हर मामले में ऐसा ही होता आया है और हमेशा ऐसा ही रहेगा।

यदि शत्रु राष्ट्रों और आपराधिक तत्वों के विरुद्ध बल का प्रयोग न किया जाए तो क्या होगा?

समाज के बारे में हम नहीं जानते। लेकिन लंबे अनुभव से हम इतना जरूर जानते हैं कि न तो दुश्मनों को और न ही अपराधियों को बल प्रयोग से सफलतापूर्वक दबाया जा सका है।

और वास्तव में, राष्ट्रों को हिंसा द्वारा कैसे अधीन किया जा सकता है, जबकि उनकी संपूर्ण शिक्षा, उनकी परंपराएँ और यहाँ तक कि उनका धर्म भी उन्हें अपने ही विरोधियों से युद्ध करने में सर्वोच्च सद्गुण देखने के लिए प्रेरित करता है।

उत्पीड़कों और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष के बीच हम बलपूर्वक उन कृत्यों को कैसे दबा सकते हैं जो उनके बीच किए गए हैं?

हमारे समाज में ऐसी कौन-सी घटनाएं हैं जिन्हें सरकार अपराध मानती है और जनता साहसिक कारनामे समझती है?

हिंसा के बल पर ऐसे राष्ट्रों और ऐसे अपराधियों का सफाया करना संभव है, और वास्तव में किया भी जाता है, लेकिन

उन्हें वश में करना असंभव है।

मनुष्य और राष्ट्रों को दिशा देने वाला एकमात्र मार्गदर्शक हमेशा से ही अदृश्य, अमूर्त, अंतर्निहित शक्ति रही है और है, जो किसी विशेष जाति या समस्त मानवता की सभी आध्यात्मिक शक्तियों का परिणाम है, जो

इसका बाहरी स्वरूप जनमत में व्यक्त होता है।

हिंसा का प्रयोग केवल इस शक्ति को कमजोर करता है, इसमें बाधा डालता है और इसे भ्रष्ट करता है, तथा इसे किसी और चीज से बदलने का प्रयास करता है।

एक और बात जो मानवता की प्रगति के लिए अनुकूल होने के बजाय उसके लिए हानिकारक है।
ईसाई जगत से बाहर स्थित सभी असभ्य राष्ट्रों को ईसाई धर्म के प्रभाव में लाना।
सभी ज़ुलू, मंगोल और चीनी, जिन्हें कई लोग बर्बर मानते हैं, और वे बर्बर जो हमारे बीच रहते हैं
इन सबके बीच, केवल एक ही साधन है। वह साधन है इन राष्ट्रों में ईसाई आदर्श समाज का प्रचार-प्रसार, जिसे केवल ईसाई जीवन, ईसाई कार्यों और ईसाई उदाहरणों के माध्यम से ही साकार किया जा सकता है।
और इस बीच, हालांकि लोगों पर पकड़ हासिल करने का यही एकमात्र साधन है,
यदि कोई व्यक्ति गैर-ईसाई बना रहा, तो हमारे समय के लोगों ने इस परिणाम को प्राप्त करने के लिए ठीक विपरीत तरीके से काम करना शुरू कर दिया।
उन बर्बर राष्ट्रों को ईसाई धर्म के प्रभाव में लाना जो हम पर हमला नहीं करते और जिन्हें हमने
इसलिए अत्याचार करने का कोई बहाना नहीं है, हमें सबसे पहले उन्हें शांति से रहने देना चाहिए, और यदि हम
यदि हमें उनसे घनिष्ठ संबंध स्थापित करने की आवश्यकता या इच्छा है, तो हमें केवल ईसाई शिष्टाचार और ईसाई शिक्षाओं द्वारा ही उन्हें प्रभावित करना चाहिए, और उन्हें धैर्य, नम्रता जैसे ईसाई गुणों का उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए।
धीरज, पवित्रता, भाईचारा और प्रेम। इसके बजाय हम उनके बीच नए संबंध स्थापित करके शुरुआत करते हैं।
हम अपने लाभ के एकमात्र उद्देश्य से अपने व्यापार के लिए बाज़ार बनाते हैं; फिर हम उनकी ज़मीनें हड़प लेते हैं, अर्थात् उन्हें लूटते हैं; फिर हम उन्हें शराब, तंबाकू और अफीम बेचते हैं, अर्थात् उन्हें भ्रष्ट करते हैं; फिर हम अपने नैतिक मूल्यों को स्थापित करते हैं।
उनमें हिंसा का प्रयोग और विनाश के नए तरीके सिखाओ, अर्थात् हम उन्हें कुछ भी नहीं सिखाते।
लेकिन पशुवत संघर्ष का नियम, जिसके नीचे मनुष्य नहीं गिर सकता, और हम अपने भीतर की हर ईसाई भावना को उनसे छिपाने का भरसक प्रयास करते हैं। इसके बाद हम कुछ दर्जन मिशनरियों को भेजते हैं जो उन्हें ईसाई धर्म के बारे में उपदेश देते हैं।
चर्च के पाखंडी निरर्थकों का वर्णन करते हुए, फिर गैर-ईसाइयों को ईसाई धर्म में परिवर्तित करने के हमारे प्रयासों की विफलता का हवाला देते हैं।
ईसाई धर्म को इस बात के अकाट्य प्रमाण के रूप में प्रस्तुत करना कि ईसाई धर्म की सच्चाइयों को लागू करना असंभव है।
व्यावहारिक जीवन।
हमारे बीच रहने वाले तथाकथित अपराधियों के साथ भी यही स्थिति है। इन लोगों को कानून के दायरे में लाना
ईसाई धर्म के प्रभाव को कम करने का केवल एक ही साधन है, अर्थात् ईसाई सामाजिक आदर्श, जो केवल इसी प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।
सच्चे ईसाई उपदेशों द्वारा और सच्चे ईसाई जीवन के उदाहरण द्वारा समर्थित होकर, हमने उनके बीच इस ईसाई सत्य का प्रचार करने और ईसाई उदाहरण द्वारा इसका समर्थन करने के लिए कारागार स्थापित किए।
गिलोटिन, फांसी के फंदे और हत्या की तैयारी; हम आम लोगों के बीच मूर्तिपूजा फैलाते हैं
हम अंधविश्वासों से उन्हें स्तब्ध कर देते हैं; हम उन्हें शराब, तंबाकू और अफीम बेचकर उन्हें प्रताड़ित करते हैं; हम वेश्यावृत्ति को भी वैध बनाते हैं; हम उन लोगों को जमीन देते हैं जिन्हें इसकी जरूरत नहीं है; हम निरर्थक चीजों का प्रदर्शन करते हैं।
गरीबी और कष्ट के बीच विलासिता; हम एक ईसाई जनसमूह की संभावना को ही नष्ट कर देते हैं।

राय, और ईसाई जनमत को दबाने का जानबूझकर प्रयास करना। और फिर, इसके बाद
हमने स्वयं ही इन पुरुषों को बड़े ही सजगता से भ्रष्ट कर दिया है, हम उन्हें जंगली जानवरों की तरह ऐसी जगहों पर बंद कर देते हैं जहाँ से वे भाग नहीं सकते, और जहाँ वे और भी अधिक क्रूर हो जाते हैं, या फिर हम उन्हें मार डालते हैं। और इन्हीं पुरुषों को
हमने हर तरह से भ्रष्ट और क्रूर व्यवहार किया है, हम इस बात को सबूत के तौर पर पेश करते हैं कि इससे निपटा नहीं जा सकता।
अपराधियों को क्रूर बल के अलावा किसी अन्य तरीके से नहीं मारा जा सकता।
हम उन अज्ञानी डॉक्टरों की तरह हैं जो प्राकृतिक कारणों से बीमारी से उबर रहे व्यक्ति को फिर से उसी स्थिति में डाल देते हैं।
स्वच्छता की सबसे प्रतिकूल परिस्थितियों में, और उसे सबसे हानिकारक दवाओं की खुराक देकर, फिर
वे गर्वपूर्वक दावा करते हैं कि उनकी स्वच्छता और उनकी दवाओं ने उसकी जान बचाई, जबकि अगर उन्होंने उसे अकेला छोड़ दिया होता तो मरीज बहुत पहले ही ठीक हो गया होता।

हिंसा, जिसे ईसाई जीवन व्यवस्था को बनाए रखने के साधन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, न केवल उस प्रभाव को उत्पन्न करने में विफल रहती है, बल्कि यह जीवन की सामाजिक व्यवस्था को उस स्तर तक पहुँचने से भी रोकती है, जिस स्तर तक वह पहुँच सकती थी।
ऐसा होना ही चाहिए। सामाजिक संगठन जितना अच्छा है, वह बल प्रयोग के परिणामस्वरूप नहीं, बल्कि बल प्रयोग के बावजूद है।
और इसलिए मौजूदा व्यवस्था के पैरोकार यह तर्क देने में गलत हैं कि चूंकि बल प्रयोग के बावजूद भी मानवता के बुरे और गैर-ईसाई तत्वों को हम पर हमला करने से रोकना मुश्किल है,
बल प्रयोग का उन्मूलन और उसके स्थान पर जनमत का उपयोग मानवता को काफी हद तक बदल देगा।
असुरक्षित।
वे गलत हैं, क्योंकि बल मानवता की रक्षा नहीं करता, बल्कि इसके विपरीत, उसे उससे वंचित कर देता है।
स्वयं को वास्तव में सुरक्षित रखने का एकमात्र संभव साधन ईसाई धर्म की स्थापना और प्रसार है।
जनमत। हिंसा के दमन से ही ईसाई जनमत का अस्तित्व समाप्त होगा।
यदि भ्रष्टाचार दूर हो जाए और बिना किसी बाधा के इसका प्रसार हो सके, तो मनुष्य अपने प्रयासों को आध्यात्मिक दिशा में मोड़ेंगे, जिसके द्वारा ही वे उन्नति प्राप्त कर सकते हैं।
लेकिन हम सशस्त्र पुलिसकर्मी की प्रत्यक्ष और ठोस सुरक्षा को कैसे त्याग सकते हैं, और भरोसा कर सकते हैं?
क्या जनमत जैसी कोई अमूर्त चीज़ भी अस्तित्व में है? क्या यह अभी भी मौजूद है? इसके अलावा, हम जिस स्थिति में जी रहे हैं, चाहे वह अच्छी हो या बुरी, हम उसे जानते हैं। हम उसकी कमियों को जानते हैं और उसके अभ्यस्त हो चुके हैं।
हमें पता है कि वर्तमान परिस्थितियों में क्या करना है और कैसा व्यवहार करना है। लेकिन जब हम इसे छोड़ देंगे तो क्या होगा?
और क्या हम किसी अदृश्य, अमूर्त और पूरी तरह से अज्ञात चीज़ पर भरोसा कर सकते हैं?
जिस अज्ञात संसार में वे अपने अभ्यस्त जीवन शैली का त्याग करके प्रवेश कर रहे हैं, वह प्रतीत होता है
यह बात उन्हें अपने आप में भयावह लगती है। जब हमारी वर्तमान स्थिति स्थिर हो तो अज्ञात से डरना स्वाभाविक है।
और सुरक्षित। लेकिन हमारी स्थिति सुरक्षा से इतनी दूर है कि हम बिना किसी संदेह के जानते हैं कि हम

खाई के कगार पर खड़ा होना।
यदि हमें डरना ही है तो हमें उस चीज से डरना चाहिए जो वास्तव में खतरनाक है, न कि उस चीज से जिसे हम खतरनाक समझते हैं।
हम अपनी इस खतरनाक स्थिति से खुद को अलग करने का प्रयास करने से डरते हैं क्योंकि भविष्य अनिश्चित है।
अगर हमें पूरी तरह से स्पष्ट न भी हो, तो हम एक डूबते हुए जहाज के यात्रियों की तरह हैं, जो किनारे तक ले जाने वाली नाव पर भरोसा करने से डरते हुए, खुद को केबिन में बंद कर लेते हैं और बाहर निकलने से इनकार कर देते हैं।
इससे बाहर निकल आओ; या भेड़ों की तरह, जो अपने बाड़े में आग लगने से भयभीत होकर एक कोने में दुबक जाती हैं और बाहर नहीं जातीं।
खुले दरवाजे से बाहर।
हम सामाजिक क्रांति के उस खूनी युद्ध की दहलीज पर खड़े हैं, जो अपनी विपत्तियों में भयावह है।
इसके आगे, जैसा कि इसे तैयार करने वाले हमें बताते हैं, 1793 की भयावहता बच्चों का खेल लगेगी। और क्या हम
दाहोमे के योद्धाओं, ज़ुलू और ऐसे ही अन्य लोगों से हमें मंडरा रहे खतरे की बात हो रही है, जो इतनी दूर रहते हैं।
दूर हैं और हम पर हमला करने का सपना भी नहीं देख रहे हैं, और हजारों धोखेबाजों, चोरों और हत्यारों से, जिन्हें हमने खुद क्रूरता और भ्रष्टाचार का शिकार बनाया है, जिनकी संख्या हमारे सभी प्रयासों से किसी भी तरह कम नहीं हुई है।
सजाएं, जेलें और फांसी?
इसके अलावा, पुलिसकर्मियों की प्रत्यक्ष सुरक्षा के दमन का यह भय मूलतः शहरवासियों की भावना है, अर्थात् उन लोगों की जो असामान्य और कृत्रिम परिस्थितियों में रह रहे हैं।
शहरों में नहीं, बल्कि प्रकृति के बीच, प्राकृतिक परिस्थितियों में जीवन व्यतीत करना और संघर्ष जारी रखना।
प्रकृति के साथ, इस सुरक्षा के बिना जियो और जानो कि कितनी कम शक्ति हमें उन वास्तविक खतरों से बचा सकती है जिनसे हम घिरे हुए हैं।
इस भय में कुछ अस्वस्थता है, जो मूलतः निर्भर है।
उन कृत्रिम परिस्थितियों पर जिनमें हममें से कई लोग रहते हैं और पले-बढ़े हैं।
एक डॉक्टर, जो मानसिक रोगों का विशेषज्ञ था, ने एक कहानी सुनाई कि एक गर्मी के दिन जब वह पागलखाने से निकल रहा था,
पागल लोग उसके साथ गली के दरवाजे तक गए। डॉक्टर ने उनसे कहा, "चलिए मेरे साथ शहर में सैर पर चलें।" पागलों ने सहमति जताई और एक छोटा समूह डॉक्टर के पीछे चल पड़ा। लेकिन जैसे-जैसे वे आगे बढ़ते गए,
जैसे-जैसे हम उस सड़क पर आगे बढ़ते गए जहाँ स्वस्थ लोग स्वतंत्र रूप से घूम रहे थे, वैसे-वैसे वे और अधिक भयभीत होते गए।
और वे डॉक्टर के और करीब आते गए, जिससे उन्हें चलने में बाधा होने लगी। अंत में वे सभी उनसे विनती करने लगे कि उन्हें वापस पागलखाने ले जाएं, उनकी अर्थहीन लेकिन प्रथागत जीवनशैली में, उनके
रखवालों से लेकर मारपीट, जंजीरों में जकड़ने और एकांत कारावास तक।
आज के लोग इसी तरह भय से दुबक जाते हैं और अपने तर्कहीन जीवनशैली, कारखानों, अदालतों, जेलों, फाँसी और युद्धों की ओर लौट जाते हैं, जबकि ईसाई धर्म उन्हें स्वतंत्रता और मुक्त जीवन की ओर बुलाता है।
आने वाले युग का तर्कसंगत जीवन।

लोग पूछते हैं, “मौजूदा संगठन के दमन के बाद हमारी सुरक्षा कैसे सुनिश्चित होगी? उसकी जगह लेने वाला नया संगठन वास्तव में क्या होगा?”
जब तक हमें ठीक-ठीक पता नहीं चल जाता, तब तक हम इस बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकते।
हमारा जीवन किस तरह व्यवस्थित होगा, इस बात से हम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाएंगे।
किसी अज्ञात देश की यात्रा पर जाने वाले खोजकर्ता के लिए यात्रा शुरू करने से पहले उस देश का विस्तृत नक्शा मांग लेना बेहतर होगा।
यदि कोई व्यक्ति एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाने से पहले अपने भविष्य के जीवन को पूरी तरह से जान ले, तो वह
जीने का कोई मकसद नहीं रह जाएगा। यही बात मानव जीवन पर भी लागू होती है। अगर जीवन के किसी नए चरण में प्रवेश करने से पहले
उसका कोई निर्धारित कार्यक्रम होता, तो यह इस बात का सबसे पुख्ता संकेत होता कि वह जी नहीं रहा है, न ही जी रहा है।
आगे बढ़ रहा है, लेकिन बस एक ही जगह पर घूम रहा है।
हम जीवन की नई व्यवस्था की परिस्थितियों को पहले से नहीं जान सकते क्योंकि हमें उन्हें बनाना होगा।
अपने स्वयं के परिश्रम से। जीवन का यही सार है, अज्ञात को सीखना और इस नए ज्ञान के अनुसार अपने कार्यों को ढालना।
यही प्रत्येक व्यक्ति का जीवन है, और यही मानव समाजों और मानवता का जीवन है।

अध्याय 11

हमारे समाज में जीवन की ईसाई अवधारणा पहले ही उत्पन्न हो चुकी है, और
यह हमारे जीवन के वर्तमान संगठन को निश्चित रूप से समाप्त कर देगा।
लागू होने की तारीख – यह कब लागू होगा?

हमारे समाज की स्थिति और संगठन दयनीय हैं, लेकिन ये केवल जनमत पर आधारित हैं और इसी से नष्ट हो सकते हैं। हिंसा को अब अलग नजरिए से देखा जा रहा है; सरकार की सेवा करने के इच्छुक लोगों की संख्या घट रही है; और यहां तक कि सरकारी कर्मचारी भी अपने पद से शर्मिंदा हैं, और इसलिए अक्सर अपने कर्तव्यों का पालन नहीं करते। ये सभी तथ्य एक ऐसे जनमत के उदय के संकेत हैं, जो लगातार बढ़ता हुआ सरकारी सेवा में प्रवेश करने की इच्छा को समाप्त कर देगा। इसके अलावा, यह और भी स्पष्ट होता जा रहा है कि इन पदों का कोई व्यावहारिक उपयोग नहीं है। लोग हिंसा पर आधारित सभी संस्थाओं की निरर्थकता को समझने लगे हैं, और यदि कुछ लोग इसे समझ रहे हैं, तो एक दिन सभी इसे समझ जाएंगे। मुक्ति का दिन अज्ञात है, लेकिन यह स्वयं मनुष्यों पर निर्भर करता है, कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर के प्रकाश के अनुसार कितना जीवन जीता है।

ईसाई मानवता की स्थिति, जिसमें उसकी जेलें, जहाज़, फांसी के फंदे, कारखाने और संचय शामिल हैं।
पूंजी, उसके कर, गिरजाघर, शराबखाने, लाइसेंस प्राप्त वेश्यालय, उसका लगातार बढ़ता हुआ शस्त्र भंडार और उसके लाखों क्रूरताग्रस्त पुरुष, जो जंजीरों में बंधे कुत्तों की तरह, अपने स्वामी द्वारा उकसाए गए किसी भी व्यक्ति पर हमला करने के लिए तैयार हैं।
अगर यह हिंसा का परिणाम होता तो वास्तव में भयानक होता, लेकिन यह मुख्य रूप से इसका परिणाम है
जनमत। और जनमत द्वारा स्थापित की गई बात जनमत द्वारा ही नष्ट की जा सकती है – और वास्तव में, जनमत द्वारा ही नष्ट की जा रही है।
करोड़ों नागरिकों द्वारा खर्च किया गया धन, करोड़ों अनुशासित सैनिक, हथियार
आश्चर्यजनक विनाशकारी शक्ति से परिपूर्ण, सभी संगठन पूर्णता के उच्चतम स्तर पर पहुँच चुके हैं, लोगों को भ्रमित करने और सम्मोहित करने के कार्य में लगी हुई पुरुषों की एक पूरी सेना, और यह सब, इन साधनों के माध्यम से...
ऐसी बिजली जो दूरी को मिटा देती है, उन लोगों के सीधे नियंत्रण में है जो इस तरह के संगठन को महत्व देते हैं।
समाज को न केवल लाभ के लिए, बल्कि आत्मरक्षा के लिए भी आवश्यक समझना और इसलिए इसे संरक्षित करने के लिए अपनी पूरी क्षमता का उपयोग करना - यह कितनी अजेय शक्ति प्रतीत होगी! और फिर भी हमें केवल कल्पना करने की आवश्यकता है
एक क्षण के लिए यह सोचें कि वास्तव में अनिवार्य रूप से क्या घटित होगा, अर्थात् ईसाई सामाजिक मानक का स्थान लेना।
मूर्तिपूजक सामाजिक मानक और स्थापित व्यवस्था समान शक्ति और सार्वभौमिकता के साथ स्थापित है, और अधिकांश पुरुष
वे हिंसा में भाग लेने या उससे लाभ उठाने में उतने ही शर्मिंदा थे, जितने कि आज वे चोरी, धोखाधड़ी, भीख मांगने और कायरता से शर्मिंदा होते हैं; और एक ही बार में हम इस पूरी जटिलता को देख लेते हैं, और यह प्रतीत होता है कि यह सब कुछ स्पष्ट है।
समाज का शक्तिशाली संगठन बिना किसी संघर्ष के ही ध्वस्त हो जाता है।

और इसे साकार करने के लिए, मनुष्यों के मन में कुछ भी नया लाने की आवश्यकता नहीं है। बस उस धुंध को छंटने दीजिए जो मनुष्यों की आँखों से हिंसा के कुछ कृत्यों के सही अर्थ को छिपाती है, और ईसाई
उभरती हुई जनमत उस विलुप्त जनमत पर हावी हो जाएगी जिसने इसकी अनुमति दी थी और
हिंसा के न्यायसंगत कृत्य। लोगों को हिंसा के कृत्यों को करने, उनमें सहायता करने या उनसे लाभ उठाने में उतना ही शर्म महसूस करने की आवश्यकता है, जितना कि वे अब ठग, चोर या किसी अन्य अपराधी के रूप में जाने या बदनाम होने में शर्म महसूस करते हैं।
कायर, या भिखारी। और यह बदलाव पहले से ही शुरू हो चुका है। हम इसे वैसे ही नहीं देख पाते जैसे हम
हमें पृथ्वी की गति का एहसास नहीं होता, क्योंकि हम अपने आसपास की हर चीज के साथ गतिमान हैं।
यह सच है कि समाज का संगठन अपने मूल स्वरूप में आज भी उतना ही हिंसा पर आधारित संगठन है जितना कि एक हजार साल पहले था, और कुछ मामलों में तो विशेष रूप से
युद्ध की तैयारी में और युद्ध के दौरान, यह और भी अधिक क्रूर प्रतीत होता है। लेकिन बढ़ता हुआ ईसाई आदर्श,
जो विकास के एक निश्चित चरण में जीवन के मूर्तिपूजक आदर्श का स्थान ले लेता है, वह पहले से ही अपना प्रभाव दिखाना शुरू कर देता है।
एक सूखा पेड़ देखने में पहले की तरह ही मजबूती से खड़ा रहता है - बल्कि शायद और भी मजबूत लगता है क्योंकि वह
यह कठिन है – लेकिन यह अंदर से सड़ा हुआ है, और जल्द ही इसका पतन होना ही है। समाज की वर्तमान व्यवस्था का भी यही हाल है।
बल पर आधारित। बाहरी स्वरूप अपरिवर्तित है। उत्पीड़क और उत्पीड़ित का विभाजन अभी भी वैसा ही है, लेकिन अपनी-अपनी स्थिति के महत्व और गरिमा के बारे में उनका दृष्टिकोण अब पहले जैसा नहीं रहा।
एक बार था।

उत्पीड़क, अर्थात् वे जो सरकार में भाग लेते हैं, और वे जो उत्पीड़न से लाभ उठाते हैं, अर्थात् धनी लोग, अब पहले की तरह यह नहीं सोचते कि वे दुनिया के चुने हुए लोग हैं, और यह कि वे
ये मानव सुख और महानता के आदर्श का निर्माण करते हैं, जिसे प्राप्त करना कभी सर्वोच्च लक्ष्य था।
उत्पीड़ित।
आजकल अक्सर ऐसा होता है कि उत्पीड़ित लोग उत्पीड़कों के पद को प्राप्त करने का प्रयास नहीं करते, बल्कि उत्पीड़कों के पद को प्राप्त करने की कोशिश करते हैं।
उनका अनुकरण करें, लेकिन इसके विपरीत, उत्पीड़क जो स्वेच्छा से अपने लाभों को त्याग देते हैं
अपनी स्थिति को बेहतर समझते हुए, शोषितों की स्थिति को महत्व देते हुए, उनके जीवन की सादगी में उनसे समानता रखने का प्रयास करें।
उन कर्तव्यों और व्यवसायों की तो बात ही छोड़िए जिन्हें अब खुलेआम तिरस्कृत किया जाता है, जैसे कि जासूस, गुप्त एजेंट आदि।
पुलिस, साहूकार और शराबखाना मालिक, ऐसे कई पेशे हैं जिन्हें पहले पुलिस या साहूकार माना जाता था।
सम्माननीय, जैसे कि पुलिस अधिकारियों, दरबारियों, न्यायाधीशों और प्रशासनिक पदाधिकारियों के पद।
पादरी, सैन्य अधिकारी, सट्टेबाज और बैंकर, ये ऐसे पद हैं जिन्हें अब हर कोई वांछनीय नहीं मानता, और यहां तक कि सबसे सम्मानित लोगों के एक विशेष समूह द्वारा भी इन्हें तिरस्कृत किया जाता है।

पहले से ही ऐसे पुरुष हैं जो स्वेच्छा से उन व्यवसायों को छोड़ देते हैं जिन्हें कभी निर्दोष माना जाता था, और
ऐसे कम लाभकारी व्यवसायों को प्राथमिकता दें जिनका बल प्रयोग से किसी भी प्रकार का कोई संबंध न हो।
और कुछ ऐसे धनी व्यक्ति भी हैं जो धार्मिक भावनाओं के कारण नहीं, बल्कि केवल विशेष कारणों से ऐसा करते हैं।
उभरते सामाजिक मानकों के प्रति संवेदनशीलता के कारण, वे अपनी पैतृक संपत्ति त्याग देते हैं, यह मानते हुए कि
मनुष्य केवल उसी चीज का न्यायसंगत उपभोग कर सकता है जो उसने अपने श्रम से अर्जित की हो।
सरकारी अधिकारी या धनी व्यक्ति का पद अब वैसा नहीं रहा जैसा पहले हुआ करता था, और आज भी वैसा ही है।
गैर-ईसाई लोगों को, जिन्हें अनिवार्य रूप से सम्माननीय और आदर के योग्य माना जाता है, और विशेष परिस्थितियों में
ईश्वर का आशीर्वाद। सबसे कोमल और नैतिक लोग (वे आम तौर पर सबसे सुसंस्कृत भी होते हैं) इससे बचते हैं।
वे ऐसे पदों को पसंद नहीं करते और बल प्रयोग पर निर्भर न रहने वाले अधिक विनम्र कार्यों को प्राथमिकता देते हैं।
हमारे युवाओं में सर्वश्रेष्ठ, उस उम्र में जब वे अभी भी जीवन की बुराइयों से अछूते हैं और एक विकल्प चुन रहे हैं
वे डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक, कलाकार, लेखक या फिर साधारण किसान बनने को अपना पेशा चुन सकते हैं।
या तो वह अपनी मेहनत से सरकारी वेतनभोगी कानूनी, प्रशासनिक, लिपिकीय और सैन्य पदों पर काम करे, या फिर उनकी आय पर
आलस्यपूर्ण जीवन व्यतीत करे।
इन दिनों स्मारक और स्मृति चिन्ह अधिकतर सरकारी अधिकारियों के सम्मान में नहीं बनाए जाते हैं।
या तो सेनापतियों की बात हो, या फिर धनी व्यक्तियों की, बल्कि कलाकारों, वैज्ञानिकों और आविष्कारकों की, ऐसे व्यक्तियों की, जिनका
सरकार से कोई लेना-देना नहीं है, और अक्सर तो वे सरकार के साथ संघर्ष में भी रहे हैं; वे ही हैं
वे पुरुष जिनकी प्रशंसा कविता में की जाती है, जिन्हें मूर्तिकला द्वारा सम्मानित किया जाता है और जिनका विजयी स्वागत किया जाता है।
उल्लास।
हमारे समय के सभी सर्वश्रेष्ठ पुरुष ऐसे ही सम्मान के पदों के लिए प्रयासरत हैं। परिणामस्वरूप, धनी और सरकारी अधिकारियों का वर्ग संख्या
में घटता जा रहा है और उसका रुतबा भी कम होता जा रहा है।
बुद्धि और शिक्षा, और उससे भी अधिक नैतिक गुण। परिणामस्वरूप, आजकल धनी वर्ग
और सरकार के मुखिया पुरुष, पहले की तरह, समाज के अभिजात वर्ग का गठन नहीं करते हैं। इसके विपरीत, वे मध्यम वर्ग से हीन हैं।
रूस और तुर्की में, अमेरिका और फ्रांस की तरह, सरकारें अक्सर बदलती रहती हैं।
अधिकांश अधिकारी स्वार्थी और भ्रष्ट हैं, उनका नैतिक स्तर इतना नीच है कि वे सरकार द्वारा अपेक्षित सामान्य ईमानदारी की बुनियादी
आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं करते।
आजकल अक्सर अधिकारियों से यह भोली-भाली शिकायत सुनने को मिलती है कि सबसे अच्छे लोग हमेशा,
विपक्ष के खेमे में पाए जाने का उनका भाग्य कुछ अजीब सा था—जैसा कि उन्हें लगता था। मानो लोग
वे शिकायत करते थे कि जल्लाद का पद स्वीकार करने वाले सभी लोग - किसी विचित्र नियति के कारण - बहुत कम शिष्टाचार या चरित्र की
सुंदरता वाले व्यक्ति होते थे।
हमारे समाज के सबसे सुसंस्कृत और सभ्य लोग आजकल उन लोगों में नहीं पाए जाते हैं जो सबसे उच्च वर्ग के हैं।

पहले की तरह अमीर होना आम बात नहीं है। अमीर लोग ज्यादातर लालची और भ्रष्ट होते हैं, जो केवल बेईमानी से अपनी संपत्ति बढ़ाने में लगे रहते हैं, या फिर ऐसे धनवानों के पतित वारिस होते हैं।

ये लोग, जो समाज में कोई प्रमुख भूमिका निभाने के बजाय, आम तौर पर तिरस्कार के साथ व्यवहार किए जाते हैं, वे ग्रबर्स कहलाते हैं।

और इस तथ्य के अलावा कि सरकारी कर्मचारियों और धनी लोगों का वर्ग संख्या में घटता जा रहा है और उनकी योग्यता भी कम होती जा रही है, वे स्वयं भी अपने काम को उतना महत्व नहीं देते जितना पहले देते थे।

वे अपने पुराने पदों पर बने रहने के लिए मजबूर हैं; अक्सर वे अपने पेशे की बदनामी से शर्मिंदा होते हैं और उस तरह से काम नहीं करते।

वे अपने पद के अनुसार जिन कर्तव्यों का पालन करने के लिए बाध्य हैं, उन्हें पूरा नहीं करते। राजा और सम्राट शायद ही कभी शासन करते हैं; वे शायद ही कभी आंतरिक सुधार या विदेश नीति में कोई नया निर्णय लेते हैं। वे अधिकतर मामलों को छोड़ देते हैं।

ऐसे प्रश्नों का निर्णय सरकारी संस्थानों या जनमत पर छोड़ दिया जाता है। उनके सभी कर्तव्य हैं।

सरकार की एकता और गरिमा का प्रतिनिधित्व करने तक सीमित हो गए हैं। और इस कर्तव्य को भी वे कम से कम सफलतापूर्वक निभा पा रहे हैं। उनमें से अधिकांश अपनी पुरानी अजेय गरिमा को बरकरार नहीं रख पाते, बल्कि और अधिक भ्रष्ट होते जा रहे हैं।

अधिक लोकतांत्रिक और यहां तक कि अश्लील भी हो गए, उन्होंने अपनी बची हुई बाहरी प्रतिष्ठा को भी त्याग दिया, और

इस प्रकार वे उस चीज को ही नष्ट कर देते हैं जिसे बनाए रखना उनका कर्तव्य था।

सेना के साथ भी यही हाल है। उच्च पदस्थ सैन्य अधिकारी प्रोत्साहन देने के बजाय...

अपने सैनिकों को उनके काम के लिए आवश्यक क्रूरता और उग्रता सिखाना, सैनिकों के बीच शिक्षा का प्रसार करना।

मानवता का संचार करते हैं, और अक्सर स्वयं भी जनता के समाजवादी विचारों को साझा करते हैं और उनकी निंदा करते हैं।

युद्ध। रूसी सरकार के खिलाफ पिछली साजिशों में कई साजिशकर्ता सेना में थे। और सेना में असंतुष्टों की संख्या लगातार बढ़ रही है। और ऐसा अक्सर होता है (एक मामला था,

दरअसल, पिछले कुछ दिनों में यह बात सामने आई है कि जब उन्हें अशांति को शांत करने के लिए कहा जाता है तो वे गोली चलाने से इनकार कर देते हैं।

लोग। सैन्य कारनामों की खुलेआम स्वयं सेना द्वारा निंदा की जाती है, और अक्सर उनके बीच मजाक का विषय होते हैं।

न्यायाधीशों और लोक अभियोजकों के मामले में भी यही बात लागू होती है। न्यायाधीश, जिनका कर्तव्य न्याय करना और

अपराधियों की निंदा करना और उन्हें यथासंभव निर्दोष साबित करने के लिए कार्यवाही करना। परिणामस्वरूप, रूसी सरकार, जिन्हें वह दंडित करना चाहती है, उनकी निंदा सुनिश्चित करने के लिए कभी भी किसी को इस काम में नहीं लगाती।

उन्हें सामान्य न्यायाधिकरणों के समक्ष पेश न करें, बल्कि उन्हें कोर्ट मार्शल के समक्ष पेश करें, जो कि केवल एक मज़ाक है।

न्याय। अभियोजक स्वयं अक्सर कार्यवाही करने से इनकार कर देते हैं, और जब वे कार्यवाही करते भी हैं, तो अक्सर

कानून की अवहेलना करते हुए, वे वास्तव में उन्हीं का बचाव करते हैं जिन पर उन्हें आरोप लगाना चाहिए। वे विद्वान न्यायविद जिनका काम सत्ता के अत्याचार को उचित ठहराना है, दंड के अधिकार को नकारने और

इसे गैरजिम्मेदारी और यहां तक कि नैतिक पागलपन के सिद्धांतों से प्रतिस्थापित करें, और उनसे निपटने के लिए नए तरीके सुझाएं।

अपराधियों को केवल चिकित्सा उपचार के माध्यम से ही बुलाया जा सकता है।
जेलर और गैली के निरीक्षक आम तौर पर उन्हीं लोगों के रक्षक बन जाते हैं जिनका उन्हें रक्षक होना चाहिए।
यातना। पुलिस अधिकारी और जासूस लगातार उन लोगों को भागने में मदद कर रहे हैं जिन्हें उन्हें गिरफ्तार करना चाहिए।
धर्मगुरु सहिष्णुता का उपदेश देते हैं, और कभी-कभी बल प्रयोग की निंदा भी करते हैं, और उनमें से अधिक शिक्षित लोग अपने उपदेशों में उस धोखे से बचने का प्रयास करते हैं जो उनके इस दृष्टिकोण का आधार है और जो
समर्थन करना उनका कर्तव्य है। जल्लाद अपने कर्तव्यों का पालन करने से इनकार करते हैं, जिसके कारण रूस में मृत्युदंड के लिए मृत्युदंड दिया जाता है।
जल्लादों की कमी के कारण दंड का क्रियान्वयन नहीं किया जा सकता। और तमाम सुविधाओं के बावजूद
इन कैदियों में से चुने गए इन लोगों के लिए स्वयंसेवकों की संख्या लगातार घट रही है। राज्यपाल, पुलिस अधिकारी, कर संग्रहकर्ता अक्सर जनता के प्रति सहानुभूति रखते हैं और उनकी मदद करने का प्रयास करते हैं।
उनसे कर न वसूलने के बहाने। अमीर लोग अपनी संपत्ति केवल खर्च करने में सहज महसूस नहीं करते।
ज़मींदार अपनी संपत्ति पर स्कूल और अस्पताल बनवाते हैं, और कुछ तो अपनी ज़मीन का मालिकाना हक भी छोड़ देते हैं और उसे जनहित के कार्यों पर खर्च कर देते हैं। ज़मींदार अपनी ज़मीन पर स्कूल और अस्पताल बनवाते हैं, और कुछ तो अपनी ज़मीन का मालिकाना हक भी छोड़ देते हैं और उसे किसानों को सौंप देते हैं, या स्थापित करते हैं।
इस पर बस्तियाँ बसती हैं। चक्की मालिक और निर्माता अस्पताल, स्कूल, बचत बैंक, मानसिक अस्पताल आदि का निर्माण करते हैं।
और अपने कामगारों के लिए आवास। उनमें से कुछ सहकारी संघ बनाते हैं जिनमें उनके शेयर अन्य लोगों के समान शर्तों पर होते हैं। पूंजीपति अपनी पूंजी का एक हिस्सा शैक्षिक, कलात्मक,
परोपकारी और अन्य सार्वजनिक संस्थान। और कई ऐसे लोग हैं जो अपनी संपत्ति दान करने में सक्षम नहीं हैं।
वे अपने जीवनकाल में ही अपनी संपत्ति को सार्वजनिक संस्थानों के लिए वसीयत में छोड़ दें।
ये सभी घटनाएँ महज़ अपवाद प्रतीत हो सकती हैं, सिवाय इसके कि इन सभी का एक ही सामान्य कारण है। ठीक वैसे ही जैसे कोई सोच सकता है कि अप्रैल में पेड़ों पर उगने वाली पहली पत्तियाँ अपवाद हैं, अगर
हमें यह नहीं पता था कि उन सभी का एक ही कारण है, वसंत ऋतु, और यदि हम कुछ शाखाओं को देखें तो
पेड़ों में नई कोंपलें निकल रही हैं और वे हरे-भरे हो रहे हैं, यह निश्चित है कि जल्द ही सभी पेड़ों के साथ ऐसा ही होगा।
बल प्रयोग और उससे संबंधित सभी बातों पर ईसाई मत के प्रकटीकरण के साथ भी ऐसा ही है।
बल। यदि यह मानक पहले से ही कुछ लोगों को, सबसे अधिक प्रभावित होने वाले लोगों को प्रभावित करता है, और प्रत्येक को अपने-अपने तरीके से प्रेरित करता है।
यदि यह क्षेत्र बल प्रयोग पर आधारित लाभों को त्यागने लगे, तो इसका प्रभाव तब तक फैलता रहेगा जब तक कि यह मनुष्य के कार्यों की संपूर्ण व्यवस्था को बदल न दे और उसे ईसाई आदर्श के अनुरूप न कर दे।
मानवता के अग्रदूतों में पहले से ही एक जीवंत शक्ति के रूप में मौजूद है।

और यदि अब ऐसे शासक हैं, जो अपने अधिकार से कोई निर्णय नहीं लेते, जो राजाओं से जितना हो सके अलग और आम इंसानों की तरह बनने की कोशिश करते हैं, जो अपने पद त्यागने की तत्परता व्यक्त करते हैं

विशेषाधिकारों को ग्रहण करें और गणतंत्र के प्रथम नागरिक बन जाएं; यदि पहले से ही ऐसे सैनिक हैं जो यह बात समझते हैं

वे युद्ध के सभी पापों और हानियों से सावधान रहते हैं, और न तो अपने देश के लोगों पर और न ही किसी दूसरे देश के लोगों पर गोली चलाने को तैयार होते हैं; वे न्यायाधीश और अभियोजक अपराधियों पर मुकदमा चलाने और उन्हें दोषी ठहराने को पसंद नहीं करते; वे पुजारी छल का त्याग करते हैं;

कर वसूलने वाले जो अपने कर्तव्यों का यथासंभव कम से कम पालन करने का प्रयास करते हैं, और धनी व्यक्ति जो अपने कर्तव्यों का त्याग करते हैं

अगर धन की कमी हो जाए, तो यही हाल दूसरे शासकों, सैनिकों, न्यायाधीशों, पुजारियों, कर वसूलने वालों और धनी लोगों का भी होगा। और जब इन पदों को संभालने के लिए कोई इच्छुक व्यक्ति नहीं बचेगा, तो ये पद समाप्त हो जाएंगे।

वे स्वयं भी लुप्त हो जाएंगे।

लेकिन यह एकमात्र तरीका नहीं है जिससे जनमत लोगों को प्रचलित व्यवस्था को समाप्त करने की ओर ले जा रहा है।

एक व्यवस्था और उसके स्थान पर एक नई व्यवस्था की स्थापना। जैसे-जैसे बल के शासन पर आधारित पद कम आकर्षक होते जाएंगे और उन्हें भरने के इच्छुक लोगों की संख्या कम होती जाएगी, वैसे-वैसे उनकी निरर्थकता और अधिक स्पष्ट होती जाएगी।

पूरे ईसाई जगत में वही शासक, वही सरकारें, वही व्यवस्थाएँ

सेनाएँ, वही अदालतें, वही कर वसूलने वाले, वही पुजारी, वही धनी लोग, जमींदार, निर्माता और पूंजीपति, सब पहले जैसे ही हैं, लेकिन दुनिया का उनके प्रति रवैया और उनका उनके प्रति रवैया बदल गया है।

वे स्वयं पूरी तरह से बदल गए हैं।

वही शासक आज भी उन्हीं सभाओं और साक्षात्कारों में भाग लेते हैं, उन्हीं शिकारों और भोजों में शामिल होते हैं, उन्हीं नृत्य-पाठों और वर्दी में रहते हैं; वही राजनयिक हैं और वही गठबंधन और युद्धों पर विचार-विमर्श होते हैं; आज भी वही सब कुछ है।

वही संसदें, पूर्वी प्रश्न और अफ्रीका पर, संधियों पर वही बहसें और

संधियों का उल्लंघन, स्वशासन और आठ घंटे का कार्यदिवस; और सरकारी मंत्रियों का एक समूह

उसी तरह से, उसी भाषणों और उसी घटनाओं के साथ, किसी दूसरे को प्रतिस्थापित करना। लेकिन जो लोग यह देखते हैं कि एक अखबार का लेख दर्जनों शाही लेखों की तुलना में मामलों की स्थिति पर अधिक प्रभाव डालता है, उनके लिए यह बात मायने नहीं रखती।

चाहे श्रोता सभा हो या संसदीय सत्र, यह बात और भी स्पष्ट होती जा रही है कि ये श्रोता सभाएँ और

संसद में होने वाले साक्षात्कार और बहसें मामलों की दिशा तय नहीं करते, बल्कि कुछ ऐसा स्वतंत्र कारक है जिसे एक स्थान पर केंद्रित नहीं किया जा सकता।

वही सेनापति, अधिकारी, सैनिक, तोपें, किले, परेड और

सैन्य अभ्यास होते हैं, लेकिन युद्ध छिड़ता नहीं है। एक साल, दस साल, बीस साल बीत जाते हैं। और दंगों को शांत करने के लिए सेना पर भरोसा करना कम से कम संभव होता जाता है, और परिणामस्वरूप यह बात और भी स्पष्ट होती जाती है कि

सेनापति, अधिकारी और सैनिक केवल गंभीर जुलूसों में खड़े पात्र होते हैं – मनोरंजन के साधन मात्र।

सरकारें – एक प्रकार की विशाल और बेहद खर्चीली बैले मंडली।

वही वकील और न्यायाधीश, वही न्यायालय, लेकिन यह बात और भी स्पष्ट होती जा रही है कि दीवानी अदालतें न्याय की परवाह किए बिना, विभिन्न आधारों पर मामलों का फैसला करती हैं, और आपराधिक मुकदमे भी उसी तरह चलते हैं।

ये सजाएँ सरासर निरर्थक हैं, क्योंकि इनसे न्यायाधीशों द्वारा निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति नहीं होती है।

इसलिए इन संस्थानों का उद्देश्य उन पुरुषों को आजीविका का साधन प्रदान करने के अलावा और कुछ नहीं है जो इससे अधिक उपयोगी कुछ भी करने में सक्षम नहीं हैं।

वही पादरी, आर्कबिशप, चर्च और सभाएँ, लेकिन यह बात और भी स्पष्ट होती जा रही है।

कि वे बहुत पहले ही उस बात पर विश्वास करना छोड़ चुके हैं जिसका वे उपदेश देते हैं, और इसलिए वे किसी को भी उस बात पर विश्वास करने की आवश्यकता के बारे में आश्वस्त नहीं कर सकते जिस पर वे स्वयं विश्वास नहीं करते।

वही कर वसूलने वाले हैं, लेकिन वे लोगों से उनकी संपत्ति छीनने में पहले से कम सक्षम होते जा रहे हैं।

बल प्रयोग से, यह बात और भी स्पष्ट होती जा रही है कि लोग स्वेच्छा से सभी आवश्यक चीजें एकत्र कर सकते हैं।

उनकी सहायता के बिना सदस्यता प्राप्त करना।

वही धनी लोग, लेकिन यह बात और भी स्पष्ट होती जा रही है कि वे तभी उपयोगी हो सकते हैं जब वे ऐसा करना बंद कर दें।

अपनी संपत्ति का प्रबंधन स्वयं करते हुए और अपनी पूरी संपत्ति या कम से कम उसका कुछ हिस्सा समाज को दान कर देते हैं।

और जब यह सब सबके सामने पूरी तरह स्पष्ट हो जाएगा, तो स्वाभाविक रूप से मनुष्य स्वयं से यह प्रश्न पूछेगा, "लेकिन हमें इन सभी राजाओं, सम्राटों, राष्ट्रपतियों और सदस्यों को क्यों बनाए रखना और उनका भरण-पोषण करना चाहिए?"

सभी प्रकार की सीनेटों और मंत्रालयों का क्या होगा, क्योंकि उनकी तमाम बहसों और सभाओं से कुछ भी हासिल नहीं होता? क्या ऐसा नहीं होगा?

किसी हास्यकार के सुझाव के अनुसार, क्या रबर और प्लास्टिक से रानी बनाना बेहतर नहीं होगा?

और ये सेनाएँ, उनके सेनापतियों, टुकड़ियों, घोड़ों और ढोलों से हमें क्या लाभ है?

जब युद्ध ही नहीं है और कोई युद्ध करना ही नहीं चाहता, तो उनकी क्या आवश्यकता है? और अगर कोई युद्ध होता भी तो...

युद्ध में, अन्य राष्ट्र हमें इससे कोई लाभ नहीं उठाने देंगे; जबकि सैनिक अपने ही देशवासियों पर गोली चलाने से इनकार करते हैं।

और उन वकीलों और न्यायाधीशों का क्या फायदा जो दीवानी मामलों का फैसला न्यायपूर्वक नहीं करते?

क्या वे आपराधिक मामलों में सजाओं की निरर्थकता को स्वयं स्वीकार करते हैं?

और उन कर संग्रहकर्ताओं का क्या फायदा जो अनिच्छा से कर वसूलते हैं, जबकि सभी करों को आसानी से जुटाया जा सकता है।

जो उनके बिना वांछित है?

उन पादरियों का क्या फायदा जो अपने उपदेशों पर विश्वास ही नहीं करते?

और निजी व्यक्तियों के हाथों में पूंजी का क्या उपयोग है, जब इसका उपयोग केवल एक

क्या यह सबकी संपत्ति है?

और जब एक बार लोग खुद से ये सवाल पूछ लेते हैं, तो वे किसी न किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से खुद को रोक नहीं पाते।
यह निर्णय लेना और उन सभी संस्थानों का समर्थन बंद करना जो अब उपयोगी नहीं हैं।
लेकिन इससे पहले कि इन संस्थानों का समर्थन करने वाले लोग इन्हें समाप्त करने का निर्णय लें, कब्ज़ा करने वाले लोग
इन पदों की स्थिति इतनी बिगड़ जाएगी कि उन्हें त्यागना ही पड़ेगा।
जनमत बल प्रयोग की निंदा करता जा रहा है, और इसलिए लोग बल प्रयोग पर आधारित पदों को संभालने के लिए कम इच्छुक हैं, और यदि वे ऐसे पदों पर आसीन भी हो जाते हैं, तो वे निर्णय लेने में कम सक्षम होते जा रहे हैं।
उनमें बल का प्रयोग किया जाता है। और इसलिए वे धीरे-धीरे अनावश्यक होते चले जाते हैं।
मैंने एक बार मॉस्को में एक धार्मिक सभा में भाग लिया था जो आमतौर पर ईस्टर के बाद वाले सप्ताह में ओहोटनी रो में चर्च के पास आयोजित होती थी। लगभग बीस पुरुषों का एक छोटा समूह वहाँ इकट्ठा हुआ था।
फुटपाथ पर गंभीर धार्मिक चर्चा में मशगूल लोग थे। उसी समय एक तरह का संगीत कार्यक्रम भी चल रहा था।
उसी गली में कोर्ट क्लब की इमारतों में कुछ चल रहा था, और एक पुलिस अधिकारी ने उस छोटी सी घटना पर ध्यान दिया।
चर्च के पास जमा हुए एक समूह को तितर-बितर करने के लिए एक घुड़सवार पुलिसकर्मी को भेजा गया। अधिकारी का उन्हें तितर-बितर करना बिलकुल अनावश्यक था। बीस लोगों का समूह किसी के लिए कोई बाधा नहीं था, लेकिन वह पहले से ही मौजूद था।
वह पूरी सुबह वहीं खड़ा रहा और कुछ करना चाहता था। वह जवान पुलिसवाला था, जिसके साथ
अपने दाहिने हाथ को दृढ़ता से लहराते हुए और अपनी तलवार की खनक के साथ, वह हमारे पास आया और हमें सख्ती से आदेश दिया, "आगे बढ़ो! यह बैठक किस बारे में है?" सभी ने पुलिसकर्मी की ओर देखा, और वक्ताओं में से एक,
किसान के वेश में एक शांत व्यक्ति ने शांत और विनम्र भाव से उत्तर दिया, "हम गंभीर विषय पर बात कर रहे हैं।"
मामले हैं, और हमें आगे बढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं है; युवक, बेहतर होगा कि तुम अपने घोड़े से उतरकर सुनो। इससे तुम्हें लाभ हो सकता है।" और मुड़कर उसने अपना भाषण जारी रखा। पुलिसवाला
उसने अपना घोड़ा मोड़ा और बिना कुछ कहे चला गया।
हिंसा के सभी मामलों में यही किया जाना चाहिए।
अधिकारी ऊब गया था; उसके पास करने को कुछ नहीं था। बेचारे को ऐसी स्थिति में डाल दिया गया था जहाँ उसके पास आदेश देने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। वह मानवीय जीवन से पूरी तरह अलग-थलग था; वह कुछ और नहीं कर सकता था सिवाय
पर्यवेक्षण करना और आदेश देना, और आदेश देना और पर्यवेक्षण करना, हालाँकि उसका पर्यवेक्षण और उसके आदेश
इनका कोई उपयोगी उद्देश्य नहीं रह गया। और यही वह स्थिति है जिसमें ये सभी दुर्भाग्यशाली शासक, सरकारी मंत्री, संसद सदस्य, राज्यपाल, सेनापति, अधिकारी, आर्कबिशप, पादरी और अन्य लोग फंसे हुए हैं।
यहां तक कि धनी लोग भी कुछ हद तक स्वयं को पहचान चुके हैं, और समय बीतने के साथ-साथ वे पूरी तरह से स्वयं को पहचान लेंगे।
वे आदेश देने के अलावा कुछ नहीं कर सकते, और वे आदेश देते हैं और अपने दूतों को भेजते हैं, जैसे अधिकारी ने पुलिसकर्मी को लोगों के काम में बाधा डालने के लिए भेजा था। और क्योंकि जिन लोगों को वे रोकते हैं, वे उन्हीं की ओर मुड़ जाते हैं और
उनसे अनुरोध करें कि वे हस्तक्षेप न करें, क्योंकि वे खुद को बहुत उपयोगी समझते हैं।
लेकिन वह समय आएगा और आ रहा है जब यह सबके लिए पूरी तरह स्पष्ट हो जाएगा कि वे नहीं हैं

किसी काम के नहीं, बल्कि केवल बाधा हैं, और जिन लोगों के काम में वे दखल देते हैं, वे उनसे विनम्रतापूर्वक और शांत भाव से कहेंगे, जैसे मेरे दोस्त ने सड़क सभा में कहा था, "कृपया हमारे काम में दखल न दें।" और सभी संदेशवाहक और
जो लोग इन्हें भेजते हैं, उन्हें भी इस अच्छी सलाह का पालन करना होगा, यानी उन्हें ऐसा करना बंद कर देना होगा।
वे इधर-उधर सरपट दौड़ते हुए, हाथ कमर पर रखे, लोगों को परेशान करते हुए, अपने घोड़ों से उतरकर और अपने स्पर्स हटाकर, कही जा रही बातों को सुनेंगे और दूसरों के साथ घुलमिलकर उनके साथ अपनी जगह ले लेंगे।
उन्हें किसी वास्तविक मानवीय कार्य में लगाएँ।
वह समय आएगा और निश्चित रूप से आएगा जब बल पर आधारित सभी संस्थाएं अपनी निरर्थकता, मूर्खता और यहां तक कि असुविधा के स्पष्ट होने के कारण लुप्त हो जाएंगी।

121

वह समय अवश्य आएगा जब हमारे आधुनिक संसार के वे पुरुष जो हिंसा पर आधारित पदों पर आसीन हैं, स्वयं को एंडरसन की कहानी "सम्राट के नए कपड़े" के सम्राट की स्थिति में पाएंगे, जब
बच्चे ने सम्राट को नग्न देखकर बड़ी सरलता से कहा, "देखो, वह नंगा है!" और फिर सभी
बाकी लोग, जिन्होंने उसे देखा था और कुछ नहीं कहा था, वे भी इसे पहचानने से खुद को रोक नहीं पाए।
कहानी यह है कि एक समय में एक सम्राट था, जिसे नए कपड़े पहनने का बहुत शौक था। उसके पास दो दर्जी आए,
जिन्होंने उनके लिए कुछ असाधारण कपड़े बनाने का वादा किया था। सम्राट ने उन्हें काम पर रख लिया और उन्होंने कपड़े बनाना शुरू कर दिया।
उन्हें कपड़े सिलने के लिए कहा जाता है, लेकिन वे बताते हैं कि कपड़ों में एक असाधारण गुण है कि वे किसी भी ऐसे व्यक्ति को दिखाई नहीं देते जो अपनी स्थिति के लिए अयोग्य हो। दरबारी दर्ज़ियों का काम देखने आते हैं और उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं देता, क्योंकि
पुरुष खाली जगह में अपनी सुइयां चला रहे हैं। लेकिन असाधारण गुण को याद करते हुए
सभी लोग कपड़ों को देखकर उनकी प्रशंसा करते हैं और जोर-शोर से अपनी प्रशंसा व्यक्त करते हैं। सम्राट भी ऐसा ही करते हैं।
स्वयं। जुलूस का दिन आ जाता है जिसमें सम्राट को अपने नए वस्त्र पहनकर बाहर निकलना होता है। सम्राट अपने वस्त्र उतारकर नए वस्त्र पहन लेता है, अर्थात् नग्न अवस्था में रहता है, और नग्न अवस्था में ही चलता है।
शहर से होते हुए। लेकिन कपड़ों के जादुई गुण को याद करते हुए, कोई भी यह कहने का साहस नहीं करता कि वह
तभी एक छोटा बच्चा चिल्लाता है, "देखो, वह नंगा है!"
यही स्थिति उन सभी लोगों की होगी जो निष्क्रियता के कारण लंबे समय से खाली पड़े पदों को भरते रहेंगे।
ठीक उसी क्षण बेकार हो जाना जब कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसे अपनी बेकारता छिपाने में कोई दिलचस्पी न हो।
वह बड़ी सरलता से कहता है, "लेकिन ये लोग तो बहुत समय से किसी के काम के नहीं रहे हैं!"
ईसाई मानवता की स्थिति, जिसमें उसके किले, तोपें, डायनामाइट, बंदूकें, टॉरपीडो, जेलें आदि शामिल हैं,
फांसी के तख्ते, गिरजाघर, कारखाने, सीमा शुल्क कार्यालय और महल वास्तव में भयानक हैं। लेकिन फिर भी तोपें और बंदूकें मौजूद हैं।
लोग अपने आप आग नहीं बुझाएंगे, जेलें अपने आप लोगों को बंद नहीं करेंगी, फांसी के फंदे उन्हें अपने आप नहीं लटकाएंगे।

गिरजाघर उन्हें गुमराह नहीं करेंगे, न ही सीमा शुल्क कार्यालय उन्हें रोकेंगे, और न ही महल और कारखाने अपने आप बनते या चलते हैं। ये सब मनुष्य का काम है। यदि मनुष्य यह समझ लें कि वे
अगर उन्हें ये सब नहीं करना चाहिए, तो इनका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। और वे इसे समझने भी लगे हैं।
यद्यपि अभी सभी इसे नहीं समझते, अग्रिम पंक्ति के लोग इसे समझते हैं और बाकी लोग भी इसका अनुसरण करेंगे। और अग्रिम पंक्ति के लोग जो एक बार समझ चुके हैं, उसे समझना बंद नहीं कर सकते; और जो वे समझते हैं, उसे भी नहीं भूल सकते।
बाकी बातों को न केवल समझा जा सकता है, बल्कि भविष्य में उन्हें समझना अनिवार्य रूप से होगा।
परिणामस्वरूप, यह भविष्यवाणी कि वह समय आएगा जब मनुष्य ईश्वर के बारे में सीखेंगे, युद्ध करना नहीं सीखेंगे, अपनी तलवारों को हल में और अपने भालों को फसल काटने के औजारों में बदल देंगे, जिसका अर्थ है,
इसका हमारी भाषा में अनुवाद करने पर भी किले, जेल, बैरक, महल और गिरजाघर वैसे ही बने रहेंगे।
सब कुछ खाली हो जाएगा, और सभी फांसी के तख्ते, बंदूकें और तोपें बेकार पड़ी रहेंगी, यह अब कोई सपना नहीं है, बल्कि हकीकत है।
जीवन का एक निश्चित नया रूप जिसकी ओर मानव जाति तेजी से अग्रसर हो रही है।
लेकिन यह कब होगा?
ईसा मसीह ने अठारह सौ साल पहले इस प्रश्न का उत्तर दिया था कि दुनिया का अंत (अर्थात,
जीवन की एक नई व्यवस्था (जो कि मूर्तिपूजक जीवन शैली है) तब आएगी जब मनुष्यों का कष्ट पहले से कहीं अधिक होगा, और जब परमेश्वर के राज्य का सुसमाचार, अर्थात् जीवन की एक नई व्यवस्था की संभावना, प्रकट होगी।
दुनिया भर के सभी देशों में प्रचार किया गया। (मत्ती 24:3-28) परन्तु उस दिन और उस घड़ी के विषय में कोई नहीं जानता – केवल प्रभु ही जानते हैं।
हे पिता (मत्ती 24:3-6), मसीह ने कहा। क्योंकि यह कभी भी आ सकता है, ऐसे समय में जिसकी आप अपेक्षा नहीं करते।
इस प्रश्न के उत्तर में कि यह घड़ी कब आएगी, मसीह कहते हैं कि हम नहीं जान सकते, लेकिन केवल इसलिए कि हम
हम नहीं जान सकते कि वह घड़ी कब आएगी; हमें हमेशा उसका सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे गुरु को होना चाहिए।
चोरों से अपने घर की रखवाली करने वाले की निगरानी करना, जैसे कुंवारी कन्याओं को दीपक जलाकर निगरानी करनी चाहिए।
दूल्हे के लिए; और इसके अलावा, हमें उस घड़ी को लाने के लिए दी गई सभी शक्तियों का उपयोग करना चाहिए, जैसे सेवकों को उन्हें सौंपी गई प्रतिभाओं का उपयोग करना चाहिए। (मत्ती 24:43 और 26:13-30)
और इसका केवल यही उत्तर हो सकता है। मनुष्य यह नहीं जान सकता कि वह दिन और वह घड़ी कब आएगी।
परमेश्वर का राज्य अवश्य आएगा, क्योंकि उसका आना केवल उन्हीं पर निर्भर करता है।
इसका उत्तर उस बुद्धिमान व्यक्ति के उत्तर के समान है, जिसने यह पूछे जाने पर कि क्या शहर दूर है, उत्तर दिया था,
"टहलना!"
हम यह कैसे कह सकते हैं कि मानवता अपने लक्ष्य की ओर कितनी दूर बढ़ रही है, जब हमें यह नहीं पता कि मनुष्य उस लक्ष्य की ओर कैसे बढ़ रहे हैं, जबकि यह उन्हीं पर निर्भर करता है कि वे आगे बढ़ें या न बढ़ें, स्थिर रहें या धीमे पड़ जाएं।
उनकी गति को बढ़ाना है या उसमें तेजी लाना है?

122

हम सब इतना ही जान सकते हैं कि परमेश्वर के राज्य के आगमन के लिए हमें, जो मनुष्य जाति का हिस्सा हैं, क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। और यह हम सब जानते हैं। और हमें बस इतना करना है कि हम सब अपने-अपने तरीके से काम करना शुरू करें।

हमें यही करना चाहिए; हमें बस अपने भीतर के सारे प्रकाश के साथ जीना है, ताकि प्रतिज्ञा को तुरंत पूरा किया जा सके।

परमेश्वर का वह राज्य जिसके लिए हर मनुष्य का हृदय तरसता है।

123

अध्याय 12

निष्कर्ष – पश्चाताप करो, क्योंकि स्वर्ग का राज्य निकट है।

1. भुखमरी से पीड़ित किसानों के बीच व्यवस्था बहाल करने के लिए सैनिकों को ले जा रही एक ट्रेन से आकस्मिक मुलाकात - अभियान का कारण - किसानों द्वारा अवज्ञा के मामलों में उच्च अधिकारियों के निर्णयों को कैसे लागू किया जाता है - ओरेल में जो हुआ, वह इस बात का उदाहरण है कि कैसे संपत्ति संपन्न वर्गों के अधिकारों को हत्या और यातना के माध्यम से बनाए रखा जाता है - धनी लोगों के सभी विशेषाधिकार हिंसा के ऐसे ही कृत्यों पर आधारित हैं।
2. टौला भेजे गए बल के तत्व और उसमें शामिल लोगों का आचरण – ये लोग ऐसे कृत्य कैसे कर सके – इसका स्पष्टीकरण अज्ञानता, दृढ़ विश्वास, क्रूरता, निर्दयता या नैतिक भावना की कमी में नहीं पाया जा सकता – वे ये कार्य इसलिए करते हैं क्योंकि ये मौजूदा व्यवस्था को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं, जिसे वे प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य मानते हैं – इस दृढ़ विश्वास का आधार कि मौजूदा व्यवस्था आवश्यक और अपरिहार्य है – उच्च वर्गों में यह विश्वास मौजूदा व्यवस्था से स्वयं को मिलने वाले लाभों पर आधारित है – लेकिन निम्न वर्गों के लोगों को मौजूदा व्यवस्था की अपरिवर्तनीयता में विश्वास करने के लिए कौन सी शक्तियाँ प्रेरित करती हैं, जिससे उन्हें कोई लाभ नहीं होता और जिसे बनाए रखने में वे सहायता करते हैं, जबकि ये तथ्य उनकी अंतरात्मा के विपरीत हैं? – यह निम्न वर्गों द्वारा उच्च वर्गों को गुमराह किए जाने का परिणाम है, चाहे वह मौजूदा व्यवस्था की अनिवार्यता के बारे में हो या इसे बनाए रखने के लिए आवश्यक हिंसा के कृत्यों की वैधता के बारे में – सामान्य रूप से धोखा – सैन्य सेवा के संबंध में धोखे का विशेष रूप – अनिवार्य सैन्य भर्ती।
3. नैतिकता के सिद्धांतों का उपदेश देते हुए मनुष्य हत्या को जायज़ कैसे ठहरा सकते हैं, और वे अपने बीच शारीरिक बल के एक ऐसे सैन्य संगठन के अस्तित्व को कैसे स्वीकार कर सकते हैं जो सार्वजनिक सुरक्षा के लिए निरंतर खतरा है? – इसे केवल उच्च वर्ग ही स्वीकार करते हैं, जो इस संगठन से लाभ उठाते हैं, क्योंकि उनके विशेषाधिकार इसी से कायम रहते हैं – उच्च वर्ग इसे स्वीकार करते हैं, और निम्न वर्ग हिंसा के कृत्यों की अनैतिकता के प्रति सचेत होने के बावजूद इसे अमल में लाते हैं, और भी आसानी से, क्योंकि सरकार की व्यवस्था के माध्यम से ऐसे कृत्यों की नैतिक जिम्मेदारी इसमें शामिल बड़ी संख्या में लोगों के बीच विभाजित होती है, और हर कोई जिम्मेदारी किसी और पर डाल देता है – इसके अलावा, असमानता के भ्रम और परिणामस्वरूप उच्च वर्ग के लोगों में सत्ता के नशे और निम्न वर्ग के लोगों में चाटुकारिता के कारण नैतिक जिम्मेदारी की भावना खो जाती है – अपने अंतरात्मा की आवाज के विरुद्ध कार्य करने वाले इन लोगों की स्थिति सम्मोहित व्यक्तियों के सुझावों के अनुसार कार्य करने जैसी है – सरकारी सुझावों के प्रति इस आज्ञाकारिता और जनमत तथा उच्च नैतिक मूल्यों वाले लोगों के मार्गदर्शन के प्रति आज्ञाकारिता के बीच अंतर स्पष्ट नहीं है। विवेक – समाज की वर्तमान व्यवस्था, जो एक विलुप्त जनमत का परिणाम है और भविष्य के मौजूदा जनमत के साथ असंगत है, केवल अंतरात्मा की सुस्ती से कायम है, जो उच्च वर्गों में स्वार्थ से स्वतः उत्पन्न होती है और निम्न वर्गों में सम्मोहन के माध्यम से उत्पन्न होती है। ऐसे लोगों की अंतरात्मा या सामान्य ज्ञान जागृत हो सकता है, और इसके अचानक जागृत होने के उदाहरण भी मौजूद हैं, इसलिए कोई भी उनके द्वारा किए जाने वाले हिंसक कृत्यों के बारे में निश्चित नहीं हो सकता। यह पूरी तरह से इस बात पर निर्भर करता है कि हिंसात्मक कृत्यों की गैरकानूनीता का बोध किस स्तर तक पहुँच गया है, और यह बोध लोगों में स्वतः जागृत हो सकता है, या अधिक विवेकशील लोगों के प्रभाव से पुनः जागृत हो सकता है।

4. सब कुछ प्रत्येक व्यक्ति में ईसाई सत्यों की चेतना की शक्ति पर निर्भर करता है – आधुनिक समय के प्रमुख व्यक्ति, हालांकि, ईसाई धर्म के सत्यों का प्रचार या अभ्यास करना आवश्यक नहीं समझते, बल्कि सरकारों द्वारा निर्धारित सीमा के भीतर अस्तित्व की बाहरी परिस्थितियों में संशोधन को ही मानवता के जीवन में सुधार के लिए पर्याप्त मानते हैं – धर्म के पाखंड की जगह ले चुके इस वैज्ञानिक पाखंड के सिद्धांत पर धनी वर्ग के लोग अपनी स्थिति का औचित्य सिद्ध करते हैं – इस पाखंड के माध्यम से वे बल और छल से अपनी स्थिति के अनन्य विशेषाधिकारों का आनंद ले सकते हैं, और फिर भी एक-दूसरे के सामने ईसाई होने का दिखावा कर सकते हैं और मन ही मन निश्चिंत रह सकते हैं – यह पाखंड ईसाई धर्म का प्रचार करने वालों को हिंसा पर आधारित संस्थानों में भाग लेने की अनुमति देता है – जीवन का कोई भी बाहरी सुधार इसे कम दयनीय नहीं बनाएगा – इसका दुख झूठ का अनुसरण करने से उत्पन्न अलगाव का परिणाम है, सत्य का नहीं – एकता केवल सत्य में ही संभव है – पाखंड इस एकता में बाधा डालता है, क्योंकि पाखंडी स्वयं से और दूसरों से उस सत्य को छिपाते हैं जिसे वे जानते हैं - पाखंड जीवन के सभी सुधारों को बुराई में बदल देता है - पाखंड अच्छाई और बुराई की धारणा को विकृत कर देता है, और इस प्रकार मनुष्य की पूर्णता की ओर प्रगति में बाधा उत्पन्न करता है - निर्भीक अपराधी और कुकर्म करने वाले उन लोगों की तुलना में कम नुकसान करते हैं जो पाखंड के आवरण में वैध हिंसा से जीते हैं - सभी मनुष्य अपने जीवन के अन्याय को महसूस करते हैं, और यदि यह पाखंड से ढका न होता तो बहुत पहले ही इसे बदल चुके होते - लेकिन ऐसा लगता है कि हम पाखंड की चरम सीमा तक पहुँच चुके हैं, और हमें केवल एक दुःस्वप्न से जागकर एक अलग वास्तविकता में आने के लिए अंतरात्मा के प्रयास की आवश्यकता है।

5. क्या मनुष्य यह प्रयास कर सकता है? – उस समय के पाखंडी सिद्धांत के अनुसार, मनुष्य अपने जीवन को बदलने के लिए स्वतंत्र नहीं है – मनुष्य अपने कार्यों में स्वतंत्र नहीं है, लेकिन वह अपने द्वारा ज्ञात सत्य को स्वीकार करने या अस्वीकार करने के लिए स्वतंत्र है – एक बार सत्य स्वीकार कर लेने पर, वह कर्म का आधार बन जाता है – सत्य के साथ मनुष्य का त्रिविध संबंध – स्वतंत्र इच्छा की समस्या की स्पष्ट अघुलनशीलता का कारण – मनुष्य की स्वतंत्रता उसे प्रकट किए गए सत्य की पहचान में निहित है। इसके अलावा कोई अन्य स्वतंत्रता नहीं है – सत्य की पहचान स्वतंत्रता प्रदान करती है, और वह मार्ग दिखाती है जिस पर मनुष्य को स्वेच्छा से या अनिच्छा से आगे बढ़ना चाहिए – सत्य की पहचान और वास्तविक स्वतंत्रता मनुष्य को ईश्वर के कार्य में भागीदार बनाती है, दास के रूप में नहीं, बल्कि एक

जीवन के रचयिता – मनुष्य को केवल इतना प्रयास करना चाहिए कि वह जीवन की बाहरी परिस्थितियों को बेहतर बनाने के सभी विचारों का त्याग कर दे और अपने सभी प्रयासों को उस सत्य को पहचानने और प्रचार करने में लगा दे जिसे वह जानता है, ताकि वर्तमान दयनीय स्थिति का अंत हो सके और ईश्वर के राज्य में प्रवेश किया जा सके, जहाँ तक यह मनुष्य के लिए अभी भी सुलभ है – केवल झूठ और पाखंड का अंत करना आवश्यक है – लेकिन फिर भविष्य में हमारा क्या इंतजार कर रहा है? – यदि मनुष्य अपनी अंतरात्मा की आवाज का पालन करते हैं तो मानवता का क्या होगा, और जिस सभ्य जीवन शैली के हम आदी हैं, उसके साथ जीवन कैसे चलता रहेगा? – इन सभी बिंदुओं पर चिंता इस चिंतन से दूर हो सकती है कि सत्य की प्राप्ति से कुछ भी सच्चा और अच्छा नष्ट नहीं हो सकता, बल्कि वह केवल असत्य के मिश्रण से मुक्त हो जाएगा।

6. हमारा जीवन दुख की चरम सीमा तक पहुँच चुका है और किसी भी संगठनात्मक व्यवस्था से इसमें सुधार नहीं हो सकता – हमारा सारा जीवन और हमारी सारी संस्थाएँ निरर्थक हैं – क्या हम सरकार के प्रति अपने विशेषाधिकारों और कर्तव्यों का पालन करके वही कर रहे हैं जो ईश्वर हमसे चाहता है? हम इस स्थिति में इसलिए नहीं हैं कि संसार ऐसा बना है और यह अपरिहार्य है, बल्कि इसलिए हैं क्योंकि हम ऐसा चाहते

हैं, क्योंकि यह हममें से कुछ लोगों के हित में है। हमारा विवेक हमारी स्थिति और हमारे सभी आचरण के विरुद्ध है, और इस विरोधाभास से निकलने का मार्ग ईसाई सत्य को पहचानने में निहित है: दूसरों के साथ वैसा व्यवहार न करो जैसा तुम नहीं चाहते कि वे तुम्हारे साथ करें। जिस प्रकार स्वयं के प्रति हमारे कर्तव्य दूसरों के प्रति हमारे कर्तव्यों के अधीन होने चाहिए, उसी प्रकार दूसरों के प्रति हमारे कर्तव्य ईश्वर के प्रति हमारे कर्तव्यों के अधीन होने चाहिए। हमारी स्थिति से निकलने का एकमात्र मार्ग, यदि हमारी स्थिति और विशेषाधिकारों का त्याग करने में नहीं, तो कम से कम अपने पाप को पहचानने और उसे उचित न ठहराने या छिपाने में है। जीवन का एकमात्र उद्देश्य सत्य को सीखना और उस पर अमल करना है। स्थिति और राज्य की कार्रवाई को स्वीकार करने से जीवन उद्देश्यहीन हो जाता है। यह ईश्वर की इच्छा है कि हम अपने जीवन में उसकी सेवा करें, अर्थात् हम सभी की सर्वोच्च एकता स्थापित करें। जीवन में एक ऐसी एकता है जो केवल सत्य में ही संभव है।

मैं इस किताब को पूरा कर रहा था, जिस पर मैं दो साल से काम कर रहा था, तभी संयोगवश 9 तारीख को...
सितंबर में, किसान टौला और रियाज़ान की सरकारों से होते हुए रेल द्वारा यात्रा करेंगे।
पिछले साल लोग भुखमरी से मर रहे थे और अब वहां अकाल और भी गंभीर है। एक रेलवे स्टेशन पर
मेरी ट्रेन एक अतिरिक्त ट्रेन के पास से गुजरी जो प्रांत के गवर्नर के नेतृत्व में सैनिकों की एक टुकड़ी को लेकर जा रही थी, साथ में बंदूकें, कारतूस और छड़ें भी थीं, जिनका उद्देश्य इन्हीं भूखे-प्यासे किसानों को कोड़े मारना और उनकी हत्या करना था।
अधिकारियों के आदेशों को लागू करने के लिए कोड़े मारने की सजा दी जाती रही है।
रूस में हाल के दिनों में इसे अधिकाधिक बार अपनाया जा रहा है, इस तथ्य के बावजूद कि शारीरिक दंड को तीस साल पहले कानून द्वारा समाप्त कर दिया गया था।
मैंने इसके बारे में सुना था, मैंने अखबारों में भी उन भयानक कोड़ों की सजाओं के बारे में पढ़ा था जो दी गई थीं।
चेर्निगोव, ताम्बोव, सारातोव, अस्त्रखान और ओरेल में, और उन लोगों में जिनके बारे में निजनी-नोवगोरोड के गवर्नर, जनरल बारानोव ने शेखी मारी थी। लेकिन इससे पहले मैंने कभी भी लोगों को इस प्रक्रिया में नहीं देखा था।
इन दंडों को क्रियान्वित करना।
और यहाँ मैंने ईसाई भावना से परिपूर्ण अच्छे रूसियों को हथियारों के साथ यात्रा करते हुए देखा।
अपने भूखे-प्यासे भाइयों को यातना देने और मारने के लिए उन्होंने छड़ें उठाईं। उनके इस अभियान का कारण निम्नलिखित था:
एक धनी जमींदार की जागीर में किसानों को जंगल पर साझा अधिकार प्राप्त थे, और
वे हमेशा इन अधिकारों का आनंद लेते थे, जंगल को अपना मानते थे, या कम से कम उसे अपना साझा अधिकार मानते थे।
भूस्वामी। भूस्वामी जंगल को पूरी तरह से अपने पास रखना चाहता था और उसने पेड़ काटने शुरू कर दिए। किसानों ने शिकायत दर्ज कराई।
न्यायाधीशों ने प्रथम दृष्ट्या अन्यायपूर्ण निर्णय दिया (मैं अन्यायपूर्ण इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि...)
वकील और राज्यपाल के अधिकार का हवाला देते हुए (जिन्हें मामले को समझना चाहिए था), उन्होंने मामले का फैसला पक्ष के पक्ष में किया।
भूस्वामी का। बाद के सभी निर्णयों में, यहाँ तक कि सीनेट के निर्णय में भी, यद्यपि वे देख सकते थे कि मामला अन्यायपूर्ण ढंग से तय किया गया था, उन्होंने निर्णय की पुष्टि की और जंगल भूस्वामी को सौंप दिया। उसने शुरू किया
पेड़ों को काटने का आदेश दिया गया, लेकिन किसानों को यह विश्वास नहीं हो रहा था कि उनके साथ इतना बड़ा अन्याय हो सकता है।
उच्च अधिकारियों द्वारा दिए गए निर्णय को उन्होंने नहीं माना और पेड़ काटने के लिए भेजे गए लोगों को भगा दिया।

पेड़ों को काटते हुए उन्होंने घोषणा की कि जंगल उनका है और वे उसे काटने देने से पहले ज़ार के पास जाएंगे।
मामला पीटर्सबर्ग को भेजा गया, और राज्यपाल को आदेश भेजा गया कि वह इसे आगे बढ़ाए।
अदालत के फैसले को लागू करने के लिए। राज्यपाल ने सैनिकों की एक टुकड़ी मंगवाई। और यहाँ संगीनों और कारतूसों से लैस सैनिक मौजूद थे, और इसके अलावा, लाठियों का एक जखीरा भी था, जो विशेष रूप से इसी उद्देश्य के लिए तैयार किया गया था।
एक ट्रक में सामान लादकर, उच्च अधिकारियों के फैसले को लागू करने के लिए ले जाया जा रहा था।
उच्च अधिकारियों के फैसलों को प्रतिरोध का सामना करने या न करने के आधार पर हत्या या यातना, या इनमें से किसी एक की धमकी के माध्यम से लागू किया जाता है।

पहले मामले में, यदि किसान प्रतिरोध करते हैं, तो यह प्रथा रूस में प्रचलित है, और यह हर जगह समान है जहां राज्य संगठन और निजी संपत्ति मौजूद है, जैसा कि नीचे दिया गया है:
राज्यपाल एक भाषण देते हैं जिसमें वे समर्पण की मांग करते हैं। उत्तेजित भीड़, आम तौर पर
अपने नेताओं के बहकावे में आकर, वे सत्ता के प्रतिनिधि द्वारा आडंबरपूर्ण आधिकारिक भाषा में कही गई बातों का एक शब्द भी नहीं समझते, और उनका उत्साह जारी रहता है। फिर राज्यपाल घोषणा करते हैं कि यदि वे ऐसा करते हैं
यदि भीड़ आत्मसमर्पण करके तितर-बितर नहीं होती, तो उसे बल प्रयोग करने के लिए विवश होना पड़ेगा।
इस पर भी राज्यपाल भीड़ के सिर के ऊपर गोली चलाने का आदेश देता है। यदि भीड़ तब भी तितर-बितर नहीं होती, तो राज्यपाल भीड़ पर सीधे गोली चलाने का आदेश देता है; सैनिक गोली चलाते हैं और मारे जाते हैं।
और घायल लोग सड़क पर गिर पड़ते हैं। फिर भीड़ आमतौर पर सभी दिशाओं में भाग जाती है, और सैनिक
राज्यपाल के आदेशानुसार, उन लोगों को पकड़ो जो सरगना माने जाते हैं और उन्हें अपने साथ ले जाओ।
वे साथ चलते हैं। फिर वे मरणासन्न, घायल और खून से लथपथ मृतकों को उठाते हैं, जिनमें कभी-कभी महिलाएं और बच्चे भी शामिल होते हैं। मृतकों को वे दफनाते हैं और घायलों को अस्पताल ले जाते हैं।
वे जिन्हें सरगना मानते हैं, उन्हें नगर परिषद में ले जाते हैं और एक विशेष कोर्ट-मार्शल द्वारा उन पर मुकदमा चलाते हैं।
और यदि उन्होंने हिंसा का सहारा लिया है, तो उन्हें फांसी की सजा दी जाती है। फिर फांसी का तख्ता खड़ा किया जाता है। और वे कुछ निहत्थे प्राणियों का गला घोंटकर उन्हें मार डालते हैं। यही अक्सर होता आया है।
यह रूस में किया जाता है, और हमेशा किया जाना चाहिए जहां सामाजिक व्यवस्था बल पर आधारित है।
लेकिन दूसरे मामले में, जब किसान आत्मसमर्पण कर देते हैं, तो रूस में कुछ बेहद खास और अनोखी घटना घटित होती है। राज्यपाल घटनास्थल पर पहुँचता है और जनता को भाषण देता है।
उनकी अवज्ञा के लिए उन्हें फटकार लगाते हुए, या तो गांवों के घरों में सैनिकों को तैनात कर देते हैं, जहां
कभी-कभी सैनिक पूरे एक महीने तक किसानों के संसाधनों को लूटते हैं, या फिर खुद को संतुष्ट कर लेते हैं
धमकियों के बाद, वह दयापूर्वक लोगों से विदा लेता है, या जो कि सबसे आम तरीका है, वह घोषणा करता है कि मुख्य साजिशकर्ताओं को दंडित किया जाना चाहिए, और बिना किसी मुकदमे के मनमाने ढंग से कुछ लोगों का चयन करता है।

उन्हें सरगना माना जाता है, और उन्हें अपनी उपस्थिति में कोड़े मारने का आदेश देता है।
इस तरह की चीजें कैसे की जाती हैं, इसका अंदाजा देने के लिए मैं ओरेल में हुई एक ऐसी ही कार्यवाही का वर्णन करूंगा, जिसे सर्वोच्च अधिकारियों की पूरी मंजूरी मिली थी।
ओरेल में यही हुआ। ठीक वैसे ही जैसे यहाँ टौला प्रांत में हुआ, एक जमींदार ने ज़मीन हथियाने की कोशिश की।
किसानों की संपत्ति पर कब्ज़ा करने की कोशिश की जा रही थी और ठीक उसी तरह किसानों ने इसका विरोध किया। विवाद का मुद्दा एक जलधारा था, जिससे किसानों के खेत सिंचित होते थे, और जिसे जमींदार काटकर दूसरी दिशा में मोड़ना चाहता था।
अपनी चक्की चलाने के लिए। किसानों ने इसका विरोध किया। जमींदार ने शिकायत दर्ज कराई।
जिला कमांडर, जिसने गैरकानूनी रूप से (जैसा कि बाद में एक कानूनी फैसले द्वारा भी स्वीकार किया गया) निर्णय लिया
मामला जमींदार के पक्ष में था, और उसे जलमार्ग मोड़ने की अनुमति मिल गई। जमींदार ने चक्की चलाने के लिए पानी छोड़ने हेतु नाली खुदवाने के लिए मजदूरों को भेजा। किसान
इस अन्यायपूर्ण निर्णय से क्रोधित होकर, उन्होंने अपनी महिलाओं को जमींदार के आदमियों को खुदाई करने से रोकने के लिए भेजा।
जलमार्ग। महिलाएं तटबंधों पर गईं, गाड़ियां पलट दीं और पुरुषों को भगा दिया। भूस्वामी ने कानून को अपने हाथ में लेने के लिए महिलाओं के खिलाफ शिकायत दर्ज कराई। जिला
कमांडर ने आदेश जारी किया कि पूरे गांव के हर घर से एक महिला को ले जाया जाए।
और उन्हें जेल में डाल दिया गया। आदेश का पालन करना आसान नहीं था। क्योंकि हर घर में कई महिलाएं थीं, और यह जानना असंभव था कि किसे गिरफ्तार किया जाना है। परिणामस्वरूप पुलिस ने ऐसा नहीं किया।
आदेश का पालन करें। भूस्वामी ने पुलिस की लापरवाही की शिकायत राज्यपाल से की।
और बाद वाले ने मामले की जांच किए बिना ही पुलिस के मुख्य अधिकारी को सख्त आदेश दिया कि वह कार्रवाई करे।
ज़िला कमांडर के निर्देशों का तुरंत पालन करो। पुलिस अधिकारी ने अपने वरिष्ठ अधिकारी के आदेश का पालन करते हुए गाँव जाकर रूसी अधिकारियों के विशिष्ट अभिमान के साथ अपने पुलिसकर्मियों को आदेश दिया।
प्रत्येक घर से एक स्त्री को बाहर निकालना था। लेकिन चूंकि प्रत्येक घर में एक से अधिक स्त्री थीं, और
यह स्पष्ट नहीं था कि किसे कारावास की सजा सुनाई गई है, विवाद और विरोध उत्पन्न हो गए। इन विवादों और विरोध के बावजूद, पुलिस अधिकारी ने आदेश दिया कि किसी महिला को...
जो भी पहले आए, उसे प्रत्येक घर से ले जाकर जेल में डाल दिया जाए। किसानों ने शुरू किया
अपनी पत्नियों और माताओं की रक्षा के लिए, उन्होंने उन्हें जाने नहीं दिया और पुलिस और उनके अधिकारी को पीटा। यह एक नया और भयानक अपराध था; अधिकारियों का विरोध किया गया। इस नए अपराध की रिपोर्ट दर्ज की गई।
शहर भेजा गया। और इसलिए यह राज्यपाल – ठीक वैसे ही जैसे उस दिन टौला का राज्यपाल कर रहा था –

तोपों और लाठियों से लैस सैनिकों की एक बटालियन, जिन्हें टेलीग्राफ, टेलीफोन और रेलवे के माध्यम से जल्दबाजी में इकट्ठा किया गया था, एक विशेष ट्रेन द्वारा युद्ध स्थल की ओर रवाना हुई, उनके साथ एक विद्वान डॉक्टर भी था।

यह सुनिश्चित करना उसका कर्तव्य था कि कोड़े मारने की क्रिया स्वच्छतापूर्वक की जाए। हर्ज़ेन की भविष्यवाणी
इस गवर्नर द्वारा आधुनिक चंगेज खान और उसके टेलीग्रामों की छवि को पूरी तरह से साकार किया गया है।
जिले के टाउन हॉल के सामने सैनिक तैनात थे, पुलिस की एक बटालियन अपने कंधों पर रिवाल्वर लटकाए खड़ी थी।
किसानों में सबसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों और अपराधियों को लाल रस्सियों से घेर दो।
एक हजार या उससे अधिक लोगों की भीड़ चारों ओर खड़ी थी। राज्यपाल ने पहुँचकर अपनी गाड़ी से बाहर कदम रखा, पहले से तैयार भाषण दिया और दोषियों तथा एक बेंच की मांग की। बाद वाली मांग
पहले तो बात समझ में नहीं आई। लेकिन एक पुलिस कांस्टेबल, जिसे राज्यपाल हमेशा अपने साथ रखते थे, और
इस प्रकार के फाँसी के आयोजन का जिम्मा लेने वाले – जो उस प्रांत में किसी भी तरह से असामान्य नहीं थे – ने स्पष्ट किया कि
जिस चीज़ की ज़रूरत थी, वह थी कोड़े मारने के लिए एक बेंच। बेंच और कोड़े दोनों लाए गए, और फिर जल्लादों को बुलाया गया (बाद वालों को पहले से ही कुछ घोड़े चुराने वालों में से चुना गया था)।
उसी गाँव में, क्योंकि सैनिकों ने पद स्वीकार करने से इनकार कर दिया था। जब सब कुछ तैयार हो गया, तो राज्यपाल ने आदेश दिया...
ज़मींदार द्वारा सबसे दोषी बताए गए बारह अपराधियों में से सबसे पहले सामने आने वाला व्यक्ति एक परिवार का मुखिया था, एक चालीस वर्षीय व्यक्ति जिसने हमेशा अधिकारों के लिए बहादुरी से आवाज़ उठाई थी।
वह अपने वर्ग में सबसे श्रेष्ठ थे, इसलिए सभी ग्रामीणों द्वारा उनका बहुत सम्मान किया जाता था। उन्हें अदालत में पेश किया गया।
और उनके कपड़े उतार दिए गए, और फिर उन्हें लेटने का आदेश दिया गया।
किसान ने दया की भीख मांगने का प्रयास किया, लेकिन व्यर्थ देखकर उसने अपने शरीर पर क्रॉस का निशान बनाया और लेट गया।
नीचे। दो पुलिस कांस्टेबल उसे पकड़ने के लिए दौड़े। विद्वान डॉक्टर तैयार खड़े थे।
जब जरूरत हो तब वह अपनी सहायता और चिकित्सा विज्ञान का उपयोग करे। कैदियों ने अपने हाथों में थूका।
उन्होंने छड़ें लहराईं और कोड़े मारने लगे। हालाँकि, ऐसा प्रतीत हुआ कि बेंच बहुत संकीर्ण थी, और पीड़ित को उस पर तड़पते हुए रखना मुश्किल था। तब राज्यपाल ने उन्हें दूसरी बेंच लाने का आदेश दिया।
बेंच और उनके ऊपर एक तख्ता रखना। सैनिक, अपने हाथों को अपनी टोपी तक उठाए हुए, और सम्मानपूर्वक
“जी, महाराज,” की धीमी आवाज़ें सुनाई देती हैं और लोग आज्ञाकारी होकर इस आदेश का पालन करने के लिए जल्दी से आगे बढ़ते हैं। इस बीच, यातनाग्रस्त व्यक्ति, अधनंगा, पीला पड़ा हुआ और गुस्से से भरा हुआ, इंतज़ार करता खड़ा था, उसकी आँखें ज़मीन पर टिकी थीं और उसके दाँत किटकिटा रहे थे।
जब दूसरी बेंच लाई गई तो उन्होंने उसे फिर से लिटा दिया, और दोषी चोरों को फिर से
उसे कोड़े मारने लगे।
पीड़ित की पीठ, जांघें, टांगें और यहां तक कि उसके बगल के हिस्से भी धीरे-धीरे घावों से भर गए।
और घाव हो रहे थे, और हर वार के साथ गहरी कराहने की आवाज आ रही थी जिसे वह अब और रोक नहीं पा रहा था।
आस-पास खड़ी भीड़ में पत्नियों, माताओं, बच्चों और मृतकों के परिवारों के सिसकने की आवाजें सुनाई दे रही थीं।
प्रताड़ित व्यक्ति और सजा के लिए चुने गए अन्य सभी लोगों में से एक।
सत्ता के नशे में चूर बेचारा गवर्नर अपनी उंगलियों पर गिनती कर रहा था, और कभी भी

उसने सिगरेट पीना छोड़ दिया, जबकि कई दखलंदाज़ लोग उसे हर अवसर पर कुछ न कुछ भेंट करने के लिए तत्पर रहते थे।
उन्हें जलाने के लिए जलती हुई माचिस का इस्तेमाल किया गया। पचास से अधिक कोड़े मारे जाने के बाद, किसान ने चीखना और तड़पना बंद कर दिया, और डॉक्टर, जिसने अपने राजा की सेवा करने के लिए एक सरकारी संस्थान में शिक्षा प्राप्त की थी, ने भी राहत की सांस ली।
और अपने वैज्ञानिक ज्ञान के बल पर, वह अपने देश के लिए काम करते हुए पीड़ित के पास गए, उसकी नब्ज देखी, उसके दिल की धड़कन सुनी।
और अधिकारी के प्रतिनिधि को सूचित किया कि दंड भुगत रहे व्यक्ति ने चेतना खो दी है, और विज्ञान के निष्कर्षों के अनुसार, दंड जारी रखा जाए।
इससे पीड़ित की जान को खतरा हो सकता था। लेकिन बेचारा राज्यपाल, अब उस दृश्य से पूरी तरह मदहोश हो चुका था।
खून से लथपथ, आदेश दिया कि सजा जारी रखी जाए, और सत्तर तक कोड़े मारना जारी रखा गया।
कोड़ों की वह संख्या, जिसे राज्यपाल ने किसी कारणवश आवश्यक समझा था। सत्तरवाँ कोड़ा पड़ते ही राज्यपाल ने कहा, “बस! अगला!” और क्षत-विक्षत पीड़ित, उसकी पीठ
खून से लथपथ एक व्यक्ति को बेहोशी की हालत में उठाकर ले जाया गया, और दूसरे को लाया गया। सिसकियाँ और
भीड़ की कराहें और तेज होती गईं। लेकिन राज्य के प्रतिनिधि ने यातना देना जारी रखा।
इस प्रकार उन्होंने बारहवें तक प्रत्येक को कोड़े मारे, और प्रत्येक को सत्तर कोड़े पड़े।
सभी दया की भीख मांग रही थीं, चीख-पुकार मचा रही थीं और कराह रही थीं। महिलाओं की भीड़ की सिसकियाँ और चीखें तेज होती जा रही थीं और
हालात और भी भयावह होते गए, और पुरुषों के चेहरे और भी काले पड़ते गए। लेकिन वे सैनिकों से घिरे हुए थे, और यातना तब तक जारी रही जब तक कि वह उस सीमा तक नहीं पहुंच गई जो अधिकारियों की मनमानी से तय की गई थी।
वे उस दयनीय, अधमरा और पागल प्राणी को राज्यपाल कहते थे।

अधिकारियों, पदाधिकारियों और सैनिकों ने न केवल इसमें सहायता की, बल्कि वे इस घटना के लिए आंशिक रूप से जिम्मेदार भी थे, क्योंकि उनकी उपस्थिति ने भीड़ को किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप करने से रोका।
जब मैंने एक गवर्नर से पूछा कि जब लोगों के पास पहले से ही इस तरह की यातनाएं थीं, तब भी उन्होंने ऐसा क्यों किया, तो मुझे यह जानकर दुख हुआ कि...
जब किसानों ने पहले ही आत्मसमर्पण कर दिया था और गाँव में सैनिक तैनात थे, तो उन्होंने राज्य-प्रशासन की सभी बारीकियों को भली-भांति समझने वाले व्यक्ति के महत्वपूर्ण स्वर में उत्तर दिया कि यदि किसान पूरी तरह से आत्मसमर्पण नहीं करते,
कोड़े मारने से दब जाने पर वे फिर से अधिकारियों के फैसलों का विरोध करना शुरू कर देंगे।
उनमें से कुछ को बुरी तरह प्रताड़ित किया गया था, लेकिन उनके बीच राज्य की सत्ता हमेशा के लिए सुरक्षित रहेगी।
और इसीलिए टौला के गवर्नर अपने अधीनस्थ अधिकारियों के साथ बारी-बारी से जा रहे थे।
अधिकारियों और सैनिकों को भी इसी तरह का उपाय करने के लिए कहा गया। ठीक उसी तरीके से, यानी हत्या और

यातना देकर उच्च अधिकारियों के फैसले का पालन सुनिश्चित किया जाना था। और इस फैसले से एक लाख की आय वाले युवा जमींदार को तीन हजार रूबल का लाभ मिलना था।

ठंड और भूख से पीड़ित किसानों के पूरे समुदाय से जंगल चुराकर, उसे दो या

मॉस्को, सेंट पीटर्सबर्ग या पेरिस के शराबखानों में तीन सप्ताह। जिन लोगों से मैं मिला, वे यही करने वाले थे।

दो साल तक मेरे विचार एक ही दिशा में केंद्रित रहने के बाद, ऐसा लगा मानो भाग्य ने स्पष्ट रूप से मुझसे यह अपेक्षा कर दी हो कि...

इसने मुझे जीवन में पहली बार एक ऐसे तथ्य से रूबरू कराया जिसने मुझे व्यवहार में बिल्कुल स्पष्ट रूप से दिखा दिया कि हमारे समाज का संगठन

यह उन लोगों की तरह नहीं है जो वर्तमान व्यवस्था को बनाए रखने में रुचि रखते हैं और जैसा कि वे कल्पना करना पसंद करते हैं, बल्कि यह किसी निश्चित आधार पर टिका हुआ है।

न्यायशास्त्र के सिद्धांतों पर नहीं, बल्कि केवल क्रूर बल पर, मनुष्यों की हत्या और यातना पर।

वे लोग जिनके पास बड़ी-बड़ी जागीरें या धन-दौलत है, या जो जरूरतमंद वर्ग, यानी श्रमिक वर्ग से भारी आय प्राप्त करते हैं, साथ ही वे सभी लोग जो व्यापारी, डॉक्टर आदि हैं,

कलाकार, क्लर्क, विद्वान प्रोफेसर, कोचवान, रसोइया, लेखक, नौकर और वकील, अपनी आजीविका कमाते हैं।

इन धनी लोगों के बारे में, लोग यह मानना पसंद करते हैं कि उन्हें प्राप्त विशेषाधिकार बलपूर्वक नहीं, बल्कि सेवाओं के पूर्णतः स्वतंत्र और न्यायसंगत आदान-प्रदान से प्राप्त हुए हैं, और उनके लाभ बलपूर्वक प्राप्त किए गए लाभों से कहीं अधिक हैं।

इस वर्ष ओरेल और रूस के कई हिस्सों में हुई सजाएँ और हत्याएँ, हमेशा से ही होती रही हैं।

यूरोप और अमेरिका में घटित हो रही घटनाओं का इन हिंसक कृत्यों से किसी भी प्रकार का कोई संबंध नहीं है। वे यह मानना पसंद करते हैं कि उनके विशेषाधिकार अलग हैं और लोगों के बीच स्वतंत्र अनुबंध का परिणाम हैं; और यह कि

लोगों पर किए गए हिंसक अत्याचार भी अलग से मौजूद हैं और कुछ सामान्य न्यायिक प्रक्रियाओं का परिणाम हैं।

राजनीतिक या आर्थिक कानून। वे यह देखने की कोशिश नहीं करते कि वे सभी अपने विशेषाधिकारों का आनंद इन्हीं कानूनों के परिणामस्वरूप उठाते हैं।

यही वह तथ्य है जो उन किसानों को मजबूर करता है जिन्होंने जंगल की देखभाल की है और जिन्हें ईंधन के लिए इसकी सीधी आवश्यकता है, कि वे इसे एक धनी जमींदार को सौंप दें जिसने इसके विकास में कोई भूमिका नहीं निभाई है और जिसे इसकी कोई आवश्यकता नहीं है।

चाहे कुछ भी हो – मतलब यह है कि अगर वे इसे नहीं छोड़ते हैं तो उन्हें कोड़े मारे जाएंगे या मार डाला जाएगा।

फिर भी, यदि यह स्पष्ट है कि केवल धमकियों, मारपीट या हत्या के माध्यम से ही ओरेल की चक्की से अधिक आय प्राप्त हो सकी, या किसानों द्वारा लगाए गए जंगल उनकी संपत्ति बन गए, तो क्या यह सच है?

किसी भूस्वामी के लिए, यह भी उतना ही स्पष्ट होना चाहिए कि धनी लोगों द्वारा प्राप्त अन्य सभी अनन्य अधिकार,

गरीबों को उनकी आवश्यक वस्तुओं से वंचित करना, हिंसा के उसी आधार पर टिका है। यदि किसान, जिन्हें अपने परिवारों का भरण-पोषण करने के लिए भूमि की आवश्यकता होती है, अपने घरों के आसपास की भूमि पर खेती नहीं कर सकते, लेकिन एक रूसी व्यक्ति,

अंग्रेज, ऑस्ट्रियाई या कोई भी अन्य बड़ा भूस्वामी, एक हजार परिवारों का भरण-पोषण करने के लिए पर्याप्त भूमि का मालिक है।

भले ही वह स्वयं इसकी खेती न करता हो, और यदि कोई व्यापारी किसानों की दुर्दशा से लाभ कमा रहा हो,

वह किसानों से अनाज को उसके मूल्य के एक तिहाई दाम पर खरीदकर, उसे अपने भंडारों में पूरी सुरक्षा के साथ रख सकता है, जबकि उसके चारों ओर लोग भूख से मर रहे हैं, और फिर उसे उन्हीं किसानों को उसके मूल्य के तीन गुना दाम पर बेच सकता है।
जिससे खरीदा है, उससे स्पष्ट है कि यह सब भी उसी कारण से आता है। और अगर कोई व्यक्ति इसे नहीं खरीद सकता है
एक निश्चित सीमा रेखा के दूसरी ओर से आने वाली किसी वस्तु पर, जिसे सीमा कहा जाता है, बिना कुछ शुल्क चुकाए उन लोगों को बेचा जाता है जिन्होंने इसके उत्पादन में कोई भाग नहीं लिया है - और यदि लोगों को मजबूर किया जाता है तो
सरकार द्वारा अपने अधिकारियों में वितरित किए जाने वाले करों का भुगतान करने और उन्हें खर्च करने के लिए वे अपनी आखिरी गाय भी बेच देते हैं।
इन्हीं करदाताओं की हत्या करने के लिए सैनिकों को तैनात करना – यह स्वतः स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह सब किसी अमूर्त कानून के परिणामस्वरूप नहीं होता, बल्कि ओरेल में जो हुआ, उसी पर आधारित है, और जो हो सकता है

यह अनुष्ठान टौला में किया जाता है, और समय-समय पर किसी न किसी रूप में पूरी दुनिया में किया जाता है, जहाँ भी सरकार है, और जहाँ अमीर और गरीब दोनों हैं।
सिर्फ इसलिए कि बल प्रयोग द्वारा किए गए उत्पीड़न के हर मामले में यातना और हत्या का प्रयोग नहीं किया जाता है, इसका मतलब यह नहीं है कि
जो लोग शासक वर्गों के अनन्य विशेषाधिकारों का आनंद लेते हैं, वे स्वयं को और दूसरों को यह विश्वास दिलाते हैं कि उनके विशेषाधिकार यातना और हत्या पर आधारित नहीं हैं, बल्कि कुछ रहस्यमय सामान्य कारणों, अमूर्त कानूनों पर आधारित हैं।
और इसी तरह। फिर भी, कोई सोचेगा कि यह बिल्कुल स्पष्ट था कि यदि पुरुष, जो इसे अन्यायपूर्ण मानते हैं (और सभी
श्रमिक वर्ग (आजकल ऐसा ही मानता है) अभी भी अपने श्रम से प्राप्त उपज का अधिकांश हिस्सा पूंजीपति और जमींदार को दे देते हैं और कर चुकाते हैं, हालांकि वे जानते हैं कि इन करों का कितना गलत उपयोग होता है।
वे ऐसा अमूर्त नियमों की पहचान के कारण नहीं करते हैं जिनके बारे में उन्होंने कभी सुना ही नहीं है, बल्कि केवल
क्योंकि वे जानते हैं कि अगर वे ऐसा नहीं करेंगे तो उन्हें पीटा जाएगा और मार डाला जाएगा।
और अगर हर बार जब जमींदार किराया वसूलता है, हर बार जब रोटी की जरूरत वाले लोगों को किसी धोखेबाज व्यापारी को उसकी कीमत से तीन गुना अधिक कीमत चुकानी पड़ती है, तो लोगों को कैद करने, पीटने और जान से मारने की कोई जरूरत नहीं है, तो हर बार
कई बार कारखाने में काम करने वाले मजदूर को मालिक द्वारा अर्जित लाभ के आधे से भी कम वेतन पर संतोष करना पड़ता है।
और जब भी कोई गरीब आदमी करों में अपना आखिरी रूबल चुकाता है, तो इसका कारण यह होता है कि इन मांगों का विरोध करने की कोशिश करने वाले इतने सारे लोगों को पीटा और मार डाला गया है कि अब उन्हें यह सबक अच्छी तरह से सीख लिया गया है।
ठीक वैसे ही जैसे एक प्रशिक्षित बाघ, जो अपने नाक के नीचे रखा मांस नहीं खाता, लेकिन किसी शब्द पर छड़ी के ऊपर से कूद जाता है।
आदेश का पालन न करने पर, वह ऐसा इसलिए नहीं करता क्योंकि उसे यह पसंद है, बल्कि इसलिए करता है क्योंकि उसे हर बार अवज्ञा करने पर दी जाने वाली गर्म लोहे की बेड़ियों या उपवास की सजा याद रहती है; इसलिए जो लोग प्रतिकूल परिस्थितियों के आगे झुक जाते हैं

या फिर उनके लिए विनाशकारी भी, और उनके द्वारा अन्यायपूर्ण माने जाने वाले कार्य, ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि उन्हें याद रहता है कि उन्होंने क्या किया था।

इसका विरोध करने पर उन्हें कष्ट सहना पड़ा।

हिंसा के पूर्व कृत्यों से प्राप्त विशेषाधिकारों से लाभ उठाने वाले लोग अक्सर यह भूल जाते हैं और भूलना पसंद करते हैं कि ये विशेषाधिकार कैसे प्राप्त हुए। लेकिन इसके लिए केवल इतिहास के तथ्यों को याद करना ही पर्याप्त है, हिंसा के कृत्यों को नहीं।

यह विभिन्न शासक राजवंशों के कारनामों का इतिहास नहीं है, बल्कि वास्तविक इतिहास, उत्पीड़न का इतिहास है।

मुट्ठी भर लोगों द्वारा बहुमत को सत्ता में लाना, यह देखना कि अमीरों को गरीबों पर जो भी लाभ प्राप्त हैं, वे कोड़े मारने, कारावास और हत्या के अलावा किसी और चीज पर आधारित नहीं हैं।

हमें बस इस बात पर विचार करने की आवश्यकता है कि सभी लोग अपनी भौतिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए निरंतर और अथक संघर्ष करते रहते हैं।

आज के लोगों का मार्गदर्शक मकसद यही है कि वे इस बात से आश्वस्त रहें कि गरीबों पर अमीरों का वर्चस्व बल के अलावा किसी और चीज से कभी कायम नहीं रह सकता और न ही कभी रह सकता है।

उत्पीड़न, हिंसा और दंड के मामले हो सकते हैं, हालांकि वे दुर्लभ हैं, लेकिन उद्देश्य

जिसका उद्देश्य संपत्ति संपन्न वर्गों के विशेषाधिकारों को सुरक्षित करना नहीं है। लेकिन विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि किसी भी स्थिति में एक ऐसा समाज जहाँ सुख-सुविधाओं में जीवन व्यतीत करने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए दस ऐसे व्यक्ति हैं जो श्रम से थके हुए, ईर्ष्यालु, लोभी हैं और अक्सर अपने परिवारों के साथ प्रत्यक्ष अभाव से पीड़ित हैं, अमीरों के सभी विशेषाधिकारों, उनकी सभी विलासिताओं से वंचित हैं।

और अतिरिक्त धन-दौलत केवल यातनाओं, कारावास और हत्या के माध्यम से ही प्राप्त और बरकरार रखी जाती है।

9 सितंबर को मेरी मुलाकात उस ट्रेन से हुई जिसमें सैनिक, बंदूकें, कारतूस और लाठियां थीं, जो उस धनी जमींदार के कब्जे की पुष्टि करने जा रही थीं जिसने भूखे किसानों से एक छोटा सा जंगल छीन लिया था।

जिसकी उन्हें सबसे ज्यादा जरूरत थी, और उसे बिल्कुल भी जरूरत नहीं थी, यह इस बात का एक स्पष्ट प्रमाण था कि मनुष्य कैसे होते हैं।

वे अनजाने में ही अपने सिद्धांतों और अंतरात्मा के बिल्कुल विपरीत कार्य करने में सक्षम होते हैं।

विशेष ट्रेन में राज्यपाल, अधिकारियों और कर्मचारियों के लिए एक प्रथम श्रेणी का डिब्बा शामिल था, और

कई सामान ढोने वाली वैन सैनिकों से भरी हुई थीं। इनमें से कुछ होनहार युवा सैनिक अपने साफ-सुथरे नए कपड़ों में थे।

वर्दी पहने लोग समूहों में खड़े थे या सामान ढोने वाले डिब्बों के चौड़े खुले दरवाजों में पैर हिलाते हुए बैठे थे। कुछ धूम्रपान कर रहे थे, एक-दूसरे को कोहनी मार रहे थे, मजाक कर रहे थे, मुस्कुरा रहे थे और हंस रहे थे, जबकि अन्य...

वे बड़े ही सलीके से सूरजमुखी के बीज चबा रहे थे और उनके छिलके थूक रहे थे। उनमें से कुछ दौड़ रहे थे।

वहाँ रखे एक टब से पानी पीने के लिए वे चबूतरे पर गए, और जब वे अधिकारियों से मिले तो उन्होंने अपनी गति धीमी कर दी, अभिवादन का अपना मूर्खतापूर्ण इशारा किया, गंभीर चेहरों के साथ अपने हाथों को अपने सिर पर उठा लिया मानो

वे कोई अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य कर रहे थे। उन्होंने उन पर तब तक नजर रखी जब तक कि वे...

वे उनके पास से गुज़रे, और फिर और भी अधिक खुशी से दौड़ने लगे, प्लेटफार्म पर अपनी एड़ियों को पटकते हुए, स्वस्थ, मिलनसार युवकों की तरह हंसते और बातें करते हुए, जीवंत यात्रा कर रहे थे।

कंपनी।

वे अपने पिता या दादा की हत्या में सहायता करने जा रहे थे, मानो वे किसी मौज-मस्ती की पार्टी में जा रहे हों, या कम से कम किसी सामान्य काम के लिए जा रहे हों।

यही धारणा उन सुसज्जित पदाधिकारियों और अधिकारियों से भी उत्पन्न हुई जो

प्लेटफ़ॉर्म और प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बिखरी हुई बोतलें थीं। बोतलों से ढकी एक मेज पर गवर्नर बैठे थे, जो पूरे अभियान के प्रभारी थे, उन्होंने आधी सैन्य वर्दी पहनी हुई थी।

कुछ खाते हुए वह अपने कुछ परिचितों से मौसम के बारे में शांतिपूर्वक बातचीत कर रहा था।

हालांकि वह जिस काम में लगा हुआ था, वह इतना सरल और साधारण था कि इससे उसकी शांति और मौसम के बदलाव में उसकी रुचि पर कोई असर नहीं पड़ा।

मेज से थोड़ी दूरी पर पुलिस जनरल बैठे थे। वे कोई जलपान नहीं कर रहे थे।

और उनके चेहरे पर एक ऐसा भाव था जिसे समझना मुश्किल था, मानो वे जाने की औपचारिकताओं से थक चुके हों।

चारों ओर अधिकारी सुनहरी किनारी वाली लाल वर्दी में शोर मचाते हुए इधर-उधर भाग-दौड़ कर रहे थे; एक अधिकारी मेज पर बैठकर अपनी बीयर की बोतल खत्म कर रहा था, दूसरा बुफे में केक खा रहा था, और एक अधिकारी अपने दांतों को ब्रश कर रहा था।

उसने अपनी वर्दी से रोटी के टुकड़े झाड़े, आत्मविश्वास से भरे अंदाज़ में अपने पैसे नीचे फेंके; दूसरा व्यक्ति इठलाता हुआ आगे बढ़ रहा था।

हमारी ट्रेन के डिब्बे, महिलाओं के चेहरों को घूर रहे थे।

ये सभी लोग जो भूखे और असहाय प्राणियों की हत्या या उन्हें यातना देने जा रहे थे,

उन्हें उनका भरण-पोषण प्रदान करने वाले व्यक्तियों में यह भाव था कि वे भली-भांति जानते थे कि वे अपना कर्तव्य निभा रहे हैं।

और कुछ तो अपने काम पर गर्व भी कर रहे थे, उसे लेकर वे गौरव महसूस कर रहे थे।

इसका अर्थ क्या है?

ये सभी लोग उस स्थान से आधे घंटे की दूरी पर हैं जहाँ एक समृद्ध समुदाय को प्रदान करने के उद्देश्य से

एक युवक ने भूखे-प्यासे किसानों के पूरे समुदाय से तीन हजार रूबल चुराए थे, वे शायद

उन्हें सबसे भयानक कृत्य करने के लिए मजबूर किया जाता है, जैसे कि ओरेल में निर्दोष प्राणियों, उनके भाइयों की हत्या या यातना देना, जैसा कि किया गया था। और वे उस स्थान और समय को निश्चिंत शांति से आते हुए देखते हैं।

यह कहना कि इन सभी सरकारी अधिकारियों, पदाधिकारियों और सैनिकों को यह नहीं पता कि उनके सामने क्या है,

यह असंभव है, क्योंकि वे इसके लिए तैयार हैं। राज्यपाल ने छड़ों के बारे में निर्देश दिए होंगे, अधिकारियों ने उनका ऑर्डर भेजा होगा, उन्हें खरीदा होगा और अपने खातों में उस मद को दर्ज किया होगा।

सैन्य अधिकारियों ने कारतूसों के बारे में आदेश दिए और प्राप्त किए हैं। वे सभी जानते हैं कि वे क्या करने जा रहे हैं।

अपने भूखे-प्यासे साथी प्राणियों को यातना देना, शायद जान से मार देना, और उन्हें एक घंटे के भीतर काम पर लग जाना।

जैसा कि आमतौर पर कहा जाता है, और जैसा कि वे स्वयं दोहराएंगे, कि वे अपने दृढ़ विश्वास के आधार पर कार्य कर रहे हैं।

राज्य संगठन को समर्थन देने की आवश्यकता के बारे में बात करना एक गलती होगी। क्योंकि सबसे पहले, ये
पुरुषों ने शायद कभी राज्य संगठन और उसकी आवश्यकता के बारे में सोचा भी नहीं होगा; दूसरे में
इस स्थिति में, उन्हें यह विश्वास दिलाना असंभव है कि जिस कार्य में वे भाग ले रहे हैं, वह राज्य को बर्बाद करने के बजाय उसका समर्थन करेगा;
और तीसरी बात, वास्तविकता में, इन लोगों में से अधिकांश, यदि सभी नहीं, तो कभी भी
राज्य का समर्थन करने के लिए अपने स्वयं के सुख या शांति का त्याग करते हुए, लाभ कमाने का कोई भी अवसर न चूकें।
वे हर संभव तरीके से राज्य के खर्चे पर अपनी सुख-सुविधाओं को बढ़ाते हैं। इसलिए, वे राज्य के अमूर्त सिद्धांत के लिए ऐसा नहीं कर रहे हैं।
इसका अर्थ क्या है?
फिर भी मैं इन सभी पुरुषों को जानता हूँ। भले ही मैं उन सभी को व्यक्तिगत रूप से न जानता हूँ, लेकिन मैं उनके चरित्र, उनके अतीत और
उनकी सोच को लगभग अच्छी तरह से जानता हूँ। निश्चित रूप से उन सभी की माताएँ हैं, और उनमें से कुछ की पत्नियाँ भी हैं।
बच्चे। वे निश्चित रूप से अधिकतर अच्छे, दयालु, यहाँ तक कि कोमल हृदय वाले होते हैं, जो हर किसी से नफरत करते हैं।
एक तरह की क्रूरता, हत्या की तो बात ही छोड़िए; उनमें से कई लोग किसी जानवर को मारते या चोट नहीं पहुँचाते। इसके अलावा, वे
वे सभी ईसाई धर्म को मानने वाले लोग हैं और निहत्थे लोगों के खिलाफ निर्देशित किसी भी प्रकार की हिंसा को नीच और शर्मनाक मानते हैं।
निश्चित रूप से उनमें से कोई भी रोजमर्रा की जिंदगी में, अपने निजी लाभ के लिए, ऐसा करने में सक्षम नहीं होगा।
ओरेल के राज्यपाल ने जो किया, उसका सौवां हिस्सा भी नहीं। उनमें से हर कोई इस बात से अपमानित महसूस करेगा कि वह निजी जीवन में
ऐसा कुछ करने में सक्षम है।
और फिर भी वे उस स्थान पर पहुँचने से केवल आधा घंटा दूर हैं जहाँ उन्हें निम्नतम स्तर तक कम किया जा सकता है।
इस अपराध को करने की अपरिहार्य आवश्यकता।
इसका अर्थ क्या है?

लेकिन केवल यही लोग नहीं हैं जो हत्या और यातना के लिए तैयार होकर ट्रेन से जा रहे हैं। वे लोग जिन्होंने इस पूरे मामले की शुरुआत की,
ज़मींदार, आयुक्त, न्यायाधीश और वे सभी जिन्होंने इसमें योगदान दिया, वे भला कैसे बच सकते थे?
इस आदेश के लिए सरकार के मंत्री और ज़ार जिम्मेदार हैं, जो अच्छे लोग भी हैं।
स्वयं ईसाई होने का दावा करने वाले लोग, इसके परिणामों को जानते हुए भी, ऐसी योजना कैसे बना सकते थे और उस पर सहमति कैसे दे
सकते थे? यहाँ तक कि वे दर्शक भी, जिन्होंने इस मामले में कोई भूमिका नहीं निभाई, वे ऐसा कैसे कर सकते थे, जो किसी भी घटना को
देखकर क्रोधित हो जाते हैं?
निजी जीवन में क्रूरता, यहाँ तक कि घोड़े पर अत्यधिक भार डालना भी, ऐसे भयानक कृत्य को अंजाम देने की अनुमति कैसे दे सकता है?
क्या वे आक्रोश में उठ खड़े नहीं हुए और सड़कों को अवरुद्ध करके चिल्लाए, “नहीं; भूखे-प्यासे लोगों को कोड़े मारकर मार डालना, सिर्फ
इसलिए कि वे बिना प्रतिरोध के अपनी आखिरी संपत्ति को चोरी नहीं होने देंगे, हम नहीं करेंगे?”
अनुमति दो!” लेकिन ऐसा करने की संभावना बहुत कम है, यहाँ तक कि अधिकांश लोग, यहाँ तक कि वे लोग भी जो इस मामले के कारण थे,
जैसे कि आयुक्त, भूस्वामी, न्यायाधीश, और वे लोग जिन्होंने इसमें भाग लिया और इसे आयोजित किया,

राज्यपाल, सरकारी मंत्री और ज़ार पूरी तरह से शांत हैं और उन्हें ज़रा भी अंतरात्मा की आवाज़ नहीं आती। और जाहिर तौर पर इस अपराध को अंजाम देने वाले सभी लोग भी उतने ही बेफिक्र हैं।

जिन दर्शकों से यह उम्मीद की जा सकती थी कि इस मामले में उनकी कोई निजी दिलचस्पी नहीं होगी, वे कुछ इस तरह दिख रहे थे।

इस कुख्यात कृत्य को अंजाम देने की तैयारी कर रहे इन सभी लोगों के प्रति निंदा की बजाय सहानुभूति थी। मेरे साथ उसी डिब्बे में एक लकड़ी का व्यापारी था, जो एक किसान से उठ खड़ा हुआ था। उसने खुले तौर पर

उन्होंने इस तरह की सजाओं के प्रति अपनी सहानुभूति खुलकर व्यक्त की। उन्होंने कहा, "वे अधिकारियों की अवज्ञा नहीं कर सकते।"

“अधिकारियों का काम ही यही है। उन्हें सबक सिखाओ! उनकी चमड़ी भगा दो! वे हंगामा करना छोड़ देंगे, मैं आपको यकीन दिलाता हूँ। वे यही तो चाहते हैं।”

इसका अर्थ क्या है?

यह कहना संभव नहीं है कि वे सभी लोग जिन्होंने इस कृत्य को उकसाया, सहायता की या होने दिया, वे

ऐसे निकम्मे प्राणी जो अपने किए की सारी बदनामी जानते हुए भी अपने सिद्धांतों के विरुद्ध जाकर ऐसा करते हैं, कुछ पैसे और मुनाफे के लिए, तो कुछ सज़ा के डर से। ये सभी किसी न किसी रूप में

परिस्थितियाँ अपने सिद्धांतों पर अडिग रहना जानती हैं। इनमें से कोई भी अधिकारी पर्स नहीं चुराएगा।

किसी दूसरे का पत्र पढ़ना, या बिना बदला मांगे अपमान सहन करना। इनमें से कोई भी अधिकारी ताश में धोखा देने के लिए सहमत नहीं होगा, सम्मान का कर्ज चुकाने से इनकार नहीं करेगा, किसी साथी को धोखा नहीं देगा।

युद्ध के मैदान से भाग जाना, या झंडे को त्याग देना। इनमें से एक भी सैनिक पवित्र वचन नहीं त्यागेगा।

गुड फ्राइडे पर धार्मिक अनुष्ठान करना या मांस खाना। ये सभी लोग किसी भी प्रकार के अभाव, कष्ट या खतरे का सामना करने के लिए तैयार हैं, बजाय इसके कि वे उस काम को करने के लिए सहमत हों जिसे वे गलत मानते हैं। इसलिए उनमें प्रतिरोध करने की शक्ति है।

ऐसा करना जो उनके सिद्धांतों के विरुद्ध है।

यह दावा करना तो और भी मुश्किल है कि ये सभी पुरुष इतने क्रूर हैं कि यह स्वाभाविक है और घृणित नहीं।

उन्हें ऐसे काम करने के लिए उकसाया जाता है। इन लोगों से थोड़ी सी बात करने पर ही पता चलता है कि ये सभी, यहाँ तक कि ज़मींदार, न्यायाधीश, सरकारी मंत्री, ज़ार और सरकार, सभी,

अधिकारी और सैनिक न केवल अपने मन की गहराई में ऐसी बातों को अस्वीकार करते हैं, बल्कि उनसे पीड़ित भी होते हैं।

जब वे इन बातों के निहितार्थों को याद करते हैं, तो उन्हें अपनी भागीदारी का एहसास होता है। लेकिन वे इसके बारे में सोचने की कोशिश नहीं करते।

इस मामले में शामिल किसी भी व्यक्ति से बात करना ही काफी है, चाहे वह जमींदार हो या सबसे निचला स्तर का व्यक्ति।

चाहे वह पुलिसकर्मी हो या सैनिक, उन्हें यह देखना चाहिए कि अपने अंतर्मन में वे सभी जानते हैं कि यह एक बुरा काम है, कि इससे कोई लेना-देना न रखना ही बेहतर होगा, और वे इस ज्ञान से पीड़ित हैं।

उदारवादी विचारों वाली एक महिला, जो हमारे साथ उसी ट्रेन में यात्रा कर रही थी, ने राज्यपाल और

प्रथम श्रेणी के सैलून में मौजूद अधिकारियों ने अभियान का उद्देश्य जानकर, जानबूझकर उसे ऊपर उठाना शुरू कर दिया।

आवाज उठाई ताकि वे सुन सकें, मौजूदा व्यवस्था की निंदा की और ऐसे कार्यों में भाग लेने वाले पुरुषों पर शर्मिंदगी जताई। हर कोई असहज महसूस कर रहा था, किसी को समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें, लेकिन कोई भी
उन्होंने उसका खंडन किया। उन्होंने ऐसा दिखाने की कोशिश की मानो ऐसी टिप्पणियों का जवाब देना ज़रूरी ही नहीं है। लेकिन कोई भी उनके चेहरों और झुकी हुई आँखों से साफ पता चल रहा था कि वे शर्मिंदा थे। मैंने सैनिकों में भी यही बात देखी। वे भी जानते थे कि उन्हें जो काम करने के लिए भेजा गया था वह शर्मनाक था, लेकिन वे उसे करना नहीं चाहते थे।
उनके सामने क्या था, इसके बारे में सोचें।
जब लकड़ी के व्यापारी ने, जैसा कि मुझे संदेह है कि उसने केवल यह दिखाने के लिए बनावटी ढंग से कहा कि वह एक शिक्षित व्यक्ति था, ऐसे उपायों की आवश्यकता के बारे में बोलना शुरू किया, तो उसे सुनने वाले सभी सैनिक उससे मुंह फेर लिया।
तेवर चढ़ाकर और अनसुना करने का नाटक करते हुए।

वे सभी लोग जो जमींदार, आयुक्त, सरकारी मंत्री और ज़ार की तरह इस कृत्य को अंजाम देने के लिए जिम्मेदार थे, साथ ही वे लोग जो अब इसे अंजाम देने वाले थे, और यहां तक कि
जो लोग केवल इसके दर्शक थे, वे जानते थे कि यह एक दुष्टता है, और किसी भी प्रकार की भागीदारी करने में उन्हें शर्म आती थी।
इसमें हिस्सा लेना, और यहां तक कि इसमें उपस्थित रहना भी।
तो फिर उन्होंने ऐसा क्यों किया, या ऐसा होने की अनुमति क्यों दी?
उनसे यह सवाल पूछिए। और उस भूस्वामी से भी जिसने मामला शुरू किया, और उस न्यायाधीश से भी जिसने फैसला सुनाया।
यह निर्णय स्पष्ट रूप से अन्यायपूर्ण है, भले ही औपचारिक रूप से यह कानूनी हो, और वे लोग जिन्होंने इस निर्णय को लागू करने का आदेश दिया, और वे लोग जो पुलिसकर्मियों, सैनिकों और किसानों की तरह, अपने स्वार्थों से इस कार्य को अंजाम देंगे।
अपने भाइयों को कोड़े मारकर और जान से मारकर, उन सभी को जिन्होंने साजिश रची, उकसाया, आदेश दिया, निष्पादित किया या अनुमति दी, उन्हें दंडित किया जाएगा।
ऐसे अपराधों के लिए लगभग समान प्रतिक्रिया दी जाएगी।
इस मामले की शुरुआत करने वाले, योजना बनाने वाले और आदेश जारी करने वाले अधिकारी कहेंगे कि मौजूदा व्यवस्था को बनाए रखने के लिए ऐसे कार्य आवश्यक हैं; मौजूदा व्यवस्था को बनाए रखना आवश्यक है।
देश और मानवता के कल्याण के लिए, सामाजिक अस्तित्व और मानवीय अस्तित्व की संभावना के लिए
प्रगति।
गरीब वर्ग के लोग, किसान और सैनिक, जिन्हें हिंसा का यह कृत्य अंजाम देना होगा
वे अपने हाथों से ऐसा करते हैं, कहते हैं कि यह उनके उच्च अधिकारी का आदेश है, और
उच्च अधिकारी को पता है कि वह क्या कर रहा है। जो लोग सत्ता में हैं, उन्हें सत्ता में रहना चाहिए और वे जानते हैं कि वे क्या कर रहे हैं, यह उनके लिए एक ऐसा सत्य प्रतीत होता है जिस पर कोई संदेह नहीं हो सकता। यदि वे
यदि कोई व्यक्ति गलती या त्रुटि की संभावना को स्वीकार कर सकता है, तो वह केवल निचले स्तर के अधिकारियों में ही होगा;

वह सर्वोच्च प्राधिकारी जिस पर बाकी सब कुछ निर्भर करता है, उन्हें संदेह से परे बेदाग प्रतीत होता है।
हालांकि वे अपने आचरण के उद्देश्यों को अलग-अलग तरीके से व्यक्त करते हैं, लेकिन शीर्ष अधिकारी और उनके अधीनस्थ दोनों इस बात पर सहमत हैं कि वे ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि मौजूदा व्यवस्था ही वह व्यवस्था है जिसका पालन करना अनिवार्य है।
इसका वर्तमान समय में अस्तित्व होना चाहिए, और इसलिए इसका समर्थन करना प्रत्येक व्यक्ति का पवित्र कर्तव्य है।
मौजूदा व्यवस्था की आवश्यकता और इसलिए इसकी अपरिवर्तनीयता की इस स्वीकृति के आधार पर, सरकार द्वारा की गई हिंसा में भाग लेने वाले सभी लोग अपने द्वारा दिए गए तर्क को आधार बनाते हैं।
औचित्य। वे कहते हैं, "चूंकि मौजूदा व्यवस्था अपरिवर्तनीय है, इसलिए किसी एक व्यक्ति द्वारा इनकार करना
उस पर सौंपे गए कर्तव्यों का पालन करने से स्थिति में कोई बदलाव नहीं आएगा, बल्कि इसका मतलब केवल यह होगा कि उसकी जगह किसी और व्यक्ति को नियुक्त किया जाएगा जो काम को और भी बदतर, यानी और भी क्रूरता से, और भी अधिक बड़े पैमाने पर करेगा।
हिंसा की घटना के पीड़ितों को लगी चोट।"
यह दृढ़ विश्वास कि वर्तमान व्यवस्था आवश्यक है और इसलिए अपरिवर्तनीय व्यवस्था है, जो कि वास्तव में है।
प्रत्येक व्यक्ति का पवित्र कर्तव्य है कि वह समर्थन करे, यह उच्च सिद्धांतों वाले अच्छे लोगों को निजी जीवन में ओरेल में किए गए अपराध जैसे अपराधों में कमोबेश निश्चिंत होकर भाग लेने में सक्षम बनाता है, और वह भी जो...
टौला ट्रेन में सवार लोग इस अपराध को अंजाम देने जा रहे थे।
लेकिन यह विश्वास किस आधार पर है? यह समझना आसान है कि भूस्वामी मौजूदा व्यवस्था को अटल और अपरिवर्तनीय मानना पसंद करता है, क्योंकि इसी व्यवस्था से उसे आय प्राप्त होती है।
अपनी सैकड़ों-हजारों एकड़ भूमि से, जिसके माध्यम से वह अपना आदतन आलसी और
विलासितापूर्ण जीवन।
यह समझना आसान है कि न्यायाधीश चीजों की व्यवस्था की आवश्यकता में सहजता से विश्वास करता है।
जिस पर उसे सबसे मेहनती मजदूर की कमाई से पचास गुना अधिक मजदूरी मिलती है, और वही
यह सभी उच्च अधिकारियों पर लागू होता है। केवल वर्तमान व्यवस्था के तहत ही राज्यपाल, अभियोजक,
सीनेटर, विभिन्न परिषदों के सदस्य, उन्हें प्रति वर्ष कई हजार रूबल मिल सकते हैं, जिसके बिना वे और उनके परिवार तुरंत बर्बाद हो जाएंगे, क्योंकि यदि वे इस पद पर न होते तो
वे ऐसे पदों पर कब्जा कर लेंगे जिन्हें वे अपनी क्षमताओं, परिश्रम या उपलब्धियों के बल पर कभी भी अपने लक्ष्य के हजारवें हिस्से के बराबर भी हासिल नहीं कर पाएंगे।
वेतन। सरकारी मंत्री, सम्राट और सभी उच्च अधिकारी एक ही स्थिति में हैं। एकमात्र अंतर यह है कि उनका पद जितना ऊंचा और असाधारण होता है, वेतन में वृद्धि उतनी ही अधिक आवश्यक हो जाती है।
उन्हें यह विश्वास दिलाना कि वर्तमान व्यवस्था ही एकमात्र संभव व्यवस्था है। क्योंकि इसके बिना वे जीवित नहीं रह सकते।
वह न केवल समान पद प्राप्त करने में असमर्थ होगा, बल्कि अन्य सभी लोगों से भी नीचा पाया जाएगा। एक व्यक्ति जिसने अपनी स्वेच्छा से दस रूबल के वेतन पर पुलिस बल में प्रवेश किया है, जिसे वह आसानी से कमा सकता था।
किसी अन्य पद पर रहते हुए, वह मौजूदा शासन व्यवस्था के संरक्षण पर शायद ही निर्भर होता है, और इसलिए वह ऐसा नहीं कर सकता।

इसकी अपरिवर्तनीयता में विश्वास करें। लेकिन एक राजा या सम्राट, जिसे अपने पद के लिए लाखों मिलते हैं, और जो जानता है कि उसके चारों ओर हजारों लोग हैं जो उसे गद्दी से हटाकर उसकी जगह लेना चाहते हैं, वह कौन जानता है?

कौन जानता है, शायद उन्हें किसी और पद पर इतना वेतन या इतना सम्मान कभी न मिले।

अपने लगभग निरंकुश शासन के माध्यम से उसने जो मामले खड़े किए हैं, उनसे यह स्पष्ट होता है कि यदि उसे पद से हटा दिया गया तो उसे सत्ता के सभी दुरुपयोगों के लिए जवाबदेह ठहराया जाएगा – उसे मौजूदा व्यवस्था की आवश्यकता और यहां तक कि पवित्रता में विश्वास होना चाहिए।

किसी व्यक्ति की स्थिति जितनी ऊंची और लाभदायक होती है, वह उतनी ही अस्थिर और उतनी ही भयानक हो जाती है।

उसके लिए इससे गिरना उतना ही खतरनाक होता है, जितना अधिक दृढ़ विश्वास वह व्यक्ति मौजूदा व्यवस्था में रखता है, और इसलिए वह उतने ही सहज मन से क्रूर और दुष्ट कृत्यों को अंजाम दे सकता है, मानो वे

अपने स्वयं के हित में नहीं, बल्कि उस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए।

सत्ता में बैठे सभी पुरुषों के साथ यही स्थिति होती है, जो अपनी क्षमता से कहीं अधिक लाभप्रद पदों पर आसीन होते हैं।

वर्तमान शासन को छोड़कर, सबसे निचले स्तर के पुलिस अधिकारी से लेकर ज़ार तक, सभी सत्ता में हैं। वे सभी कमोबेश इस बात से आश्वस्त हैं कि मौजूदा व्यवस्था अपरिवर्तनीय है, क्योंकि - मुख्य कारण - यह उनके हित में है।

लेकिन किसान, सैनिक, जो सामाजिक पैमाने के सबसे निचले पायदान पर हैं, जिनके पास किसी भी प्रकार का लाभ नहीं है।

जो लोग अधीनता और अपमान की सबसे निचली स्थिति में हैं, वे मौजूदा व्यवस्था से क्या लाभ उठा सकते हैं? उन्हें यह मानने के लिए क्या मजबूर करता है कि जिस मौजूदा व्यवस्था में वे अपनी दयनीय स्थिति में हैं, वह उनके लिए उचित नहीं है?

प्रतिकूल स्थिति ही वह व्यवस्था है जो अस्तित्व में होनी चाहिए, और जिसका उन्हें हर कीमत पर समर्थन करना चाहिए।

क्या उन्होंने अपनी अंतरात्मा के विरुद्ध बुरे कार्य किए?

कौन सी बात इन लोगों को इस गलत तर्क की ओर धकेलती है कि मौजूदा व्यवस्था अपरिवर्तनीय है, और इसलिए

उन्हें इसका समर्थन करना चाहिए, जबकि इसके विपरीत यह इतना स्पष्ट है कि यह केवल इसलिए अपरिवर्तनीय है क्योंकि वे

क्या वे स्वयं इसका समर्थन करते हैं?

कल ही हल से उतारे गए और नीले कॉलर और सुनहरे बटनों वाले भद्दे और अशोभनीय वस्त्र पहनाए गए इन किसानों को बंदूकें और तलवारें लेकर अपने भूखे-प्यासे लोगों की हत्या करने के लिए कौन सी बात मजबूर करती है?

पिता और भाई? उन्हें किसी प्रकार का लाभ नहीं मिलता और उन्हें अपनी स्थिति खोने का कोई डर नहीं होता।

कब्जा कर लो, क्योंकि यह उस जगह से भी बदतर है जहाँ से उन्हें लिया गया है।

उच्च कोटि के प्राधिकारी व्यक्ति – जमींदार, व्यापारी, न्यायाधीश, सीनेटर, राज्यपाल,

सरकारी मंत्री, सरदार और अधिकारी ऐसे कार्यों में भाग लेते हैं क्योंकि मौजूदा व्यवस्था उनके हित में है।

लाभ। अन्य मामलों में वे अक्सर अच्छे और दयालु व्यक्ति होते हैं, और वे ऐसे कार्यों में अधिक सक्षम होते हैं क्योंकि उनमें उनकी भूमिका सुझावों, निर्णयों और आदेशों तक ही सीमित होती है।

अधिकार प्राप्त व्यक्ति स्वयं कभी भी वह कार्य नहीं करते जो वे सुझाते हैं, निर्णय लेते हैं या करने का आदेश देते हैं।
अधिकांशतः वे यह भी नहीं देख पाते कि उनके द्वारा सुझाए और अधिकृत किए गए सभी जघन्य कृत्य किस प्रकार परिणाम उत्पन्न कर रहे हैं।
लागू किया गया। लेकिन निम्न वर्ग के दुर्भाग्यशाली लोग, जिन्हें मौजूदा व्यवस्था से किसी प्रकार का लाभ नहीं मिलता, बल्कि इसके विपरीत, उनके साथ घोर तिरस्कारपूर्ण व्यवहार किया जाता है, वे इसे घसीटकर भी इसका समर्थन करते हैं।
लोगों को उनके ही हाथों से उनके परिवारों से अलग करना, उन्हें हथकड़ी पहनाना, जेल में डालना, पहरा देना।
उन्हें गोली मार रहे हैं।
वे ऐसा क्यों करते हैं? उन्हें ऐसा मानने के लिए क्या मजबूर करता है कि मौजूदा व्यवस्था अपरिवर्तनीय है और उन्हें ऐसा करना ही होगा?
क्या आप इसका समर्थन करते हैं?
हम जानते हैं कि सारी हिंसा उन्हीं लोगों की वजह से होती है जो मारपीट करते हैं, हथकड़ी पहनाते हैं, कैद करते हैं और अपने हाथों से हत्या करते हैं। अगर सैनिक या सशस्त्र पुलिसकर्मी न होते, जो मारने या अत्याचार करने के लिए तैयार हों, तो स्थिति और बिगड़ सकती थी।
किसी को भी आदेशानुसार काम नहीं करना है, उन लोगों में से किसी को भी नहीं जो मृत्युदंड, कारावास या अन्य सजाओं पर हस्ताक्षर करते हैं।
जीवन भर गुलामी करने वाला व्यक्ति उन लोगों में से हज़ारवें हिस्से को भी फाँसी देने, कैद करने या यातना देने का फैसला कर लेता।
वह चुपचाप अपने अध्ययन कक्ष में बैठा रहता है, और अब वह उसे तरह-तरह से यातना देने का आदेश देता है, सिर्फ इसलिए कि वह इसे न तो देखता है और न ही स्वयं करता है, बल्कि केवल दूर से इन दास जैसे औजारों के माध्यम से इसे करवाता है।
रोजमर्रा की जिंदगी में होने वाले सभी अन्याय और क्रूरता के कृत्यों का केवल यही अर्थ है कि
ये प्रथा इसलिए आम हो गई है क्योंकि ऐसे लोग हमेशा अन्याय और क्रूरता के ऐसे कृत्यों को अंजाम देने के लिए तैयार रहते हैं। अगर वे न होते, तो आज बीमार पड़े विशाल जनसमूह के खिलाफ हिंसा का इस्तेमाल करने की तो बात ही छोड़िए।
अगर उनके साथ ऐसा व्यवहार किया जाता, तो अब जो लोग उन्हें सजा सुनाने का आदेश दे रहे हैं, वे उन्हें सजा सुनाने का साहस भी नहीं करते, यहाँ तक कि नहीं करते।
वे जिस सहज आत्मविश्वास के साथ आज फैसले सुनाते हैं, उसके बारे में सपने देखने की हिम्मत भी नहीं कर सकते। और अगर ये लोग न होते, जो अपने कमांडर की इच्छा पर किसी को भी मारने या यातना देने के लिए तैयार रहते हैं, तो कोई भी यह दावा करने की हिम्मत नहीं करता, जैसा कि सभी
निष्क्रिय भूस्वामी इतने विश्वास के साथ दावा करते हैं कि किसानों से घिरी हुई एक जमीन का टुकड़ा, जो कि

भूमि के अभाव से उत्पन्न बदहाली उस व्यक्ति की संपत्ति है जो उस पर खेती नहीं करता, या किसानों से धोखाधड़ी करके लूटा गया अनाज का भंडार उस आबादी के बीच अछूता रहना चाहिए जो मर रही है।
भूखमरी क्योंकि व्यापारियों को अपना लाभ कमाना है। अगर ये चापलूस उपकरण न होते तो
अधिकारियों के विवेकाधिकार के बावजूद, जमींदार के मन में कभी यह विचार नहीं आया होगा कि वह किसानों से उनके द्वारा पोषित जंगल को छीन ले, और न ही अधिकारियों के मन में यह विचार आया होगा कि वे किसानों से लिए गए वेतन के हकदार हैं।
भुखमरी से मरते लोग, उनके उत्पीड़न की कीमत; किसी के मन में पुरुषों को मारने या निर्वासित करने का सपना भी नहीं आ सकता।

झूठ का पर्दाफाश करने और सच बताने के लिए। यह सब केवल इसलिए संभव है क्योंकि अधिकारियों को पूरा भरोसा है कि उनके पास हमेशा ये चापलूस लोग मौजूद हैं, जो उनकी सभी मांगों को पूरा करने के लिए तैयार हैं।

यातना और हत्या के माध्यम से इसे लागू किया जाता है।

नेपोलियन से लेकर एक कंपनी के सबसे निचले कमांडर तक, जो गोली चलाता है, सभी तानाशाहों के हिंसक कृत्य।

भीड़ पर उनके द्वारा किए गए अत्याचारों को केवल इन दासों पर उनकी पूर्ण शक्ति के मादक प्रभाव से ही समझाया जा सकता है। इसलिए, सारी शक्ति इन्हीं पुरुषों के हाथों में है, जो हिंसा के कृत्यों को अपने हाथों से अंजाम देते हैं।

वे पुरुष जो पुलिस या सेना में सेवा करते हैं, विशेषकर सेना में, क्योंकि पुलिस ही अपना काम करने का जोखिम उठाती है।

वे काम करेंगे क्योंकि सेना उनका समर्थन कर रही है।

तो फिर, इन ईमानदार लोगों के जनसमूह को, जिन पर सब कुछ निर्भर करता है, जो लाभ कमाते हैं, यहाँ तक कि किस कारण से ये लोग यहाँ आए हैं?

इसके अलावा और कुछ नहीं, और जिन्हें अपने हाथों से ये जघन्य कृत्य करने पड़ते हैं, उन्हें इस स्थिति तक क्या ले आया है?

क्या वे इस चौंकाने वाले भ्रम को स्वीकार करते हैं कि मौजूदा व्यवस्था, जो उनके लिए निष्फल, विनाशकारी और घातक है, वही व्यवस्था होनी चाहिए?

किसने उन्हें इस अद्भुत भ्रम में डाल दिया है?

वे कभी भी खुद को यह विश्वास नहीं दिला सकते थे कि उन्हें वह करना चाहिए जो उनकी अंतरात्मा के विरुद्ध है।

और साथ ही वे स्वयं के लिए और अपने पूरे वर्ग के लिए दुख और विनाश का स्रोत भी हैं, जो आबादी का नौ-दसवां हिस्सा हैं।

“जब परमेश्वर की आज्ञा में लिखा है, ‘तुम हत्या नहीं करोगे’, तो तुम लोगों को कैसे मार सकते हो?”

मैं अक्सर अलग-अलग सैनिकों से पूछताछ करता था। और मैं हमेशा उन्हें उन बातों की याद दिलाकर शर्मिंदा और भ्रमित कर देता था जिनके बारे में वे सोचना नहीं चाहते थे। वे जानते थे कि वे कानून से बंधे हुए हैं।

ईश्वर ने कहा था, "तुम हत्या नहीं करोगे," और वे यह भी जानते थे कि सैनिक होने के नाते वे अपने कर्तव्य से बंधे हुए हैं, लेकिन उन्होंने कभी भी मैंने इन कर्तव्यों के बीच विरोधाभास पर विचार किया। इस प्रश्न के जो दबे-कुचले उत्तर मुझे मिले, उनका सार लगभग यही था: युद्ध में हत्या करना और आदेश पर अपराधियों को फांसी देना, इन दोनों के बीच विरोधाभास है।

सरकारें हत्या के सामान्य निषेध में शामिल नहीं हैं। लेकिन जब मैंने यह अंतर बताया था

जो ईश्वर के नियम में नहीं बनाया गया था, और उन्हें भाईचारे और क्षमा के ईसाई कर्तव्य की याद दिलाई।

चोटें और प्यार, जिनका मेल हत्या से नहीं हो सकता था, इस बात से किसान आमतौर पर सहमत होते थे, लेकिन बदले में वे मुझसे सवाल पूछने लगे। उन्होंने पूछा, "ऐसा कैसे होता है कि सरकार (जो

उनके विचारों के अनुसार कोई गलती नहीं कर सकता) सेना को युद्ध में भेजता है और अपराधियों को फांसी देने का आदेश देता है।

जब मैंने जवाब दिया कि सरकार ऐसे आदेश देकर गलत कर रही है, तो किसान और भी ज्यादा भ्रमित हो गए, और या तो उन्होंने बातचीत बंद कर दी या मुझसे नाराज हो गए।

“उन्होंने इसके लिए कोई कानून जरूर ढूंढ लिया होगा। आर्कबिशप भी इसके बारे में उतना ही जानते हैं जितना हम जानते हैं, मुझे ऐसा लगता है।”

आशा," एक रूसी सैनिक ने एक बार मुझसे कहा था। और यह कहकर सैनिक ने स्पष्ट रूप से अपने मन को शांत कर लिया, इस पूर्ण विश्वास के साथ कि उसके आध्यात्मिक मार्गदर्शकों ने एक ऐसा नियम खोज निकाला था जो उसके पूर्वजों को अधिकार देता था, और
ज़ार और उनके वंशज, और लाखों पुरुष, उनकी सेवा में वैसे ही लगे रहे जैसे वह स्वयं कर रहे थे, और यह सवाल
मैंने जो उसे बताया था, वह मेरी ओर से एक तरह का धोखा या पहेली थी।
हमारे ईसाई समाज में हर कोई, चाहे परंपरा से हो, या ईश्वरीय संदेश से, या अंतरात्मा की आवाज से, यह जानता है कि हत्या सबसे जघन्य अपराधों में से एक है जो मनुष्य कर सकता है, जैसा कि सुसमाचार हमें बताता है, और
हत्या का पाप कुछ व्यक्तियों तक सीमित नहीं किया जा सकता, यानी हत्या कुछ लोगों के लिए पाप नहीं हो सकती।
दूसरों के लिए पाप नहीं। हर कोई जानता है कि अगर हत्या पाप है, तो यह हमेशा पाप ही रहेगा, चाहे पीड़ित कोई भी हो, ठीक वैसे ही जैसे व्यभिचार, चोरी या कोई अन्य पाप। साथ ही, बचपन से ही
पुरुषों को यह देखने को मिलता है कि हत्या न केवल जायज़ है, बल्कि उन लोगों के आशीर्वाद से स्वीकृत भी है जिनके वे सदस्य हैं।
वे अपने धर्मनिरपेक्ष नेताओं को ईश्वर द्वारा नियुक्त आध्यात्मिक मार्गदर्शक मानने के आदी हैं, और शांत आत्मविश्वास के साथ हत्याओं का आयोजन करते, हत्यारे हथियार धारण करने में गर्व महसूस करते और दूसरों से इसके नाम पर मांग करते हैं।
देश के कानूनों का, और यहाँ तक कि ईश्वर के कानूनों का भी उल्लंघन होता है, कि वे हत्या में भाग लें। लोग देखते हैं कि ऐसा होता है।

यहां कुछ असंगति है, लेकिन इसका विश्लेषण करने में असमर्थ होने के कारण, वे अनजाने में यह मान लेते हैं कि यह स्पष्ट असंगति केवल उनकी अज्ञानता का परिणाम है। इसकी घोर और स्पष्टता ही
असंगति उनके इस विश्वास को और पुष्ट करती है।
वे यह कल्पना भी नहीं कर सकते कि सभ्यता के नेता, शिक्षित वर्ग, ईसा मसीह के नियम और हत्या जैसे दो इतने विरोधी सिद्धांतों का इतने आत्मविश्वास से प्रचार कर सकते हैं। एक सरल, निष्कलंक युवक
वह कल्पना भी नहीं कर सकता कि जो लोग उसकी नज़र में इतने ऊंचे स्थान पर हैं, जिन्हें वह पवित्र या विद्वान पुरुष मानता है,
किसी भी उद्देश्य से उसे इतनी शर्मनाक तरीके से गुमराह किया जा सकता था। लेकिन उसके साथ हमेशा से यही होता आया है और होता रहेगा।
यह (1) बचपन से ही उदाहरण और प्रत्यक्ष निर्देश द्वारा,
उन कामकाजी लोगों में, जिनके पास नैतिक और धार्मिक प्रश्नों का स्वयं अध्ययन करने का समय नहीं है,
यह विचार कि यातना और हत्या ईसाई धर्म के अनुकूल हैं, और यह कि राज्य के कुछ उद्देश्यों के लिए यातना
और हत्या न केवल स्वीकार्य है, बल्कि इसका प्रयोग किया जाना चाहिए; और (2) कुछ लोगों में, जिन्होंने या तो स्वेच्छा से सेना में भर्ती कराया है या जबरदस्ती सेना में भर्ती कराया गया है, यह विचार पैदा करके कि
अपने हाथों से हत्या और यातना को अंजाम देना एक पवित्र कर्तव्य है, और यहां तक कि एक गौरवशाली उपलब्धि भी है।
प्रशंसा और पुरस्कार के योग्य।
यह सामान्य भ्रम सभी लोगों में धार्मिक शिक्षाओं या पुस्तकों के माध्यम से फैलाया जाता है, जो
आजकल इन्हें बच्चों की अनिवार्य शिक्षा के लिए उपयोग में लाया जाता है। इनमें यह बताया गया है कि

हिंसा, अर्थात् कारावास और मृत्युदंड, साथ ही गृहयुद्ध या विदेशी युद्ध में मौजूदा राज्य संगठन (चाहे वह पूर्ण राजतंत्र हो या सीमित राजतंत्र) की रक्षा और रखरखाव के लिए की गई हत्या।

नेपोलियन या बोलेंजर का सम्मेलन, वाणिज्य दूतावास, साम्राज्य, संवैधानिक राजतंत्र, कम्यून

गणतंत्र (या गणतंत्र) पूरी तरह से वैध है और नैतिकता और ईसाई धर्म के विपरीत नहीं है।

यह बात स्कूलों में इस्तेमाल होने वाली सभी धार्मिक शिक्षाओं या पुस्तकों में लिखी होती है। और लोग इस बात से इतने दृढ़ विश्वास रखते हैं कि वे इसी विश्वास के साथ बड़े होते हैं, जीते हैं और मरते हैं, बिना कभी इस पर संदेह किए।

यह धोखे का एक रूप है, वह सामान्य धोखा जो हर किसी में समाहित है, लेकिन एक और प्रकार भी है।

सैनिकों या पुलिसकर्मियों पर विशेष प्रकार का छल किया जाता है, जिन्हें किसी न किसी तरीके से चुनकर मौजूदा शासन की रक्षा और उसे बनाए रखने के लिए आवश्यक यातनाएं देने और हत्या करने के लिए लगाया जाता है।

सभी सैन्य निर्देशों में किसी न किसी रूप में रूसी भाषा में व्यक्त की गई बातें अवश्य दिखाई देती हैं।

निम्नलिखित शब्दों में सैन्य कोड:

अनुच्छेद 87. किसी वरिष्ठ अधिकारी के आदेशों का ठीक-ठीक और बिना टिप्पणी किए पालन करना, उसे पूरा करने का अर्थ है

किसी वरिष्ठ अधिकारी से प्राप्त आदेश को बिना यह विचार किए कि वह अच्छा है या नहीं, हूबहू लागू कर देना, और

क्या इसे पूरा करना संभव है? इसके परिणामों के लिए वरिष्ठ अधिकारी जिम्मेदार होगा।

वह जो आदेश देता है।

अनुच्छेद 88. अधीनस्थ को वरिष्ठ अधिकारी के आदेशों का पालन करने से कभी इनकार नहीं करना चाहिए, सिवाय इसके कि

जब वह स्पष्ट रूप से देखता है कि अपने वरिष्ठ अधिकारी के आदेश का पालन करने में वह (ईश्वर के नियम का) उल्लंघन कर रहा है।

अनजाने में अपेक्षा करता है; बिलकुल भी नहीं) ज़ार के प्रति उसकी निष्ठा और वफादारी की शपथ।

यहां यह कहा गया है कि एक सैनिक अपने वरिष्ठ अधिकारी के सभी आदेशों का पालन कर सकता है और उसे करना भी चाहिए।

बिना किसी अपवाद के। और चूंकि ये आदेश अधिकतर हत्या से संबंधित हैं, इसलिए यह स्वाभाविक है कि उसे ऐसा करना चाहिए।

वह ईश्वर और मनुष्य के सभी कानूनों को तोड़ सकता है। एकमात्र कानून जिसे वह नहीं तोड़ सकता, वह है उस व्यक्ति के प्रति निष्ठा और वफादारी का कानून जो उस समय सत्ता में हो।

सैन्य प्रशिक्षण के सभी नियमों में ठीक यही बात अलग-अलग शब्दों में कही गई है। और ऐसा हो भी नहीं सकता था।

अन्यथा, क्योंकि सेना और राज्य की पूरी शक्ति वास्तव में इसी भ्रामक धारणा पर आधारित है।

ईश्वर और अंतरात्मा के प्रति अपने कर्तव्य से मनुष्यों की मुक्ति, और अन्य सभी कर्तव्यों के स्थान पर अपने वरिष्ठ अधिकारी के प्रति कर्तव्य का आधिपत्य।

यही निम्न वर्गों के इस विश्वास का आधार है कि मौजूदा शासन व्यवस्था उनके लिए इतनी घातक है।

उनका मानना है कि यही वह शासन व्यवस्था है जो अस्तित्व में होनी चाहिए, और इसलिए उन्हें यातना और हत्या के माध्यम से भी इसका समर्थन करना चाहिए।

यह धारणा उच्च वर्गों द्वारा उन पर किए गए जानबूझकर धोखे पर आधारित है।

और ऐसा होना ही था। संख्या में अधिक निचले वर्गों को, यहाँ तक कि उनकी अंतरात्मा के विरुद्ध कार्यों की कीमत पर भी, खुद पर अत्याचार और दुर्व्यवहार करने के लिए विवश करने हेतु धोखा देना आवश्यक था।
उन्हें। और उसी के अनुसार कार्रवाई की गई है।

135

कुछ ही दिन पहले मैंने एक बार फिर इस बेशर्म धोखे को खुलेआम होते देखा, और एक बार फिर मुझे आश्चर्य हुआ कि इसे इतनी आसानी से और बेशर्मी से कैसे अंजाम दिया जा सकता है।
नवंबर की शुरुआत में, जब मैं टौला से गुजर रहा था, तो मैंने एक बार फिर द्वार पर देखा...
ज़ेम्स्की कोर्टहाउस में किसानों की वह भीड़ थी जिसे मैंने पहले भी कई बार देखा था, और पुरुषों की नशे में धुत्त चीखें उनकी पत्नियों और माताओं के दयनीय विलाप के साथ मिली हुई थीं। यह भर्ती सत्र था।
मैं इस नजारे को अनदेखा नहीं कर सकता। यह मुझे एक अजीब तरह के आकर्षण और घृणा से बांधे रखता है। मैं फिर गया।
मैं भीड़ में घुस गया, किसानों के बीच खड़ा हो गया, चारों ओर देखा और सवाल पूछे। और एक बार फिर मैं यह देखकर हैरान रह गया कि यह घिनौना अपराध दिन दहाड़े और भीड़ के बीच इतनी आसानी से कैसे अंजाम दिया जा सकता है।
बड़ा शहर।
हर साल की तरह, एक करोड़ रूसियों के सभी गांवों और बस्तियों में, हर साल की तरह,
1 नवंबर को, गांव के बुजुर्गों ने सूचियों में दर्ज युवकों को इकट्ठा किया, जिनमें अक्सर उनके अपने बेटे भी शामिल थे, और उन्हें शहर ले आए।
रास्ते में रंगरूट बिना रुके शराब पी रहे हैं, बड़ों की कोई रोक-टोक नहीं है, जो महसूस करते हैं कि
अगर वे ऐसा न करते तो ऐसे पागलपन भरे मिशन पर जाना, अपनी पत्नियों और माताओं को त्याग देना और अपने सभी पवित्र विश्वासों का त्याग करके विनाश का एक संवेदनहीन साधन बन जाना उनके लिए बहुत कष्टदायक होता।
शराब के नशे में चूर।
और वे यहाँ आए हैं, शराब पीते, गालियाँ देते, गाते, लड़ते और आपस में हाथापाई करते हुए। उन्होंने रात सराय में बिताई। सुबह वे नशे से बाहर आ गए और इकट्ठा हुए।
ज़ेम्स्की कोर्टहाउस में एक साथ।
उनमें से कुछ ने नई भेड़ की खाल से बनी कोट पहनी हुई थी, गले में बुने हुए स्कार्फ लपेटे हुए थे और उनकी आंखें सूजी हुई थीं।
शराब के नशे में चूर होकर, वे एक-दूसरे को अपनी हिम्मत दिखाने के लिए बेतहाशा चिल्ला रहे हैं; वहीं दरवाजे के पास भीड़ लगाए बैठे अन्य लोग चुपचाप और उदास होकर अपनी बारी का इंतजार कर रहे हैं, अपनी रोती हुई पत्नियों और माताओं के बीच (मैं संयोगवश वहाँ पहुँच गया था)
वास्तविक नामांकन के दिन, अर्थात् उन लोगों की परीक्षा के दिन जिनके नाम सूची में हैं);
इसी बीच अन्य लोग भर्ती कार्यालय के हॉल में जमा होने लगे थे।
दफ्तर के अंदर काम तेज़ी से चल रहा था। दरवाज़ा खुला और गार्ड ने पियोत्र को आवाज़ दी।
सिदोरोव। प्योत्र सिदोरोव चौंकता है, क्रॉस का निशान बनाता है और कांच के दरवाजे वाले एक छोटे से कमरे में चला जाता है, जहाँ...

भर्ती किए गए सैनिक कपड़े उतार रहे हैं। प्योत्र सिदोरोव का एक साथी, जिसे अभी-अभी सेवा के लिए चुना गया है और जो समीक्षा कार्यालय से नग्न अवस्था में बाहर आया है, जल्दी से कपड़े पहन रहा है, उसके दांत किटकिटा रहे हैं। सिदोरोव को पहले ही यह खबर मिल चुकी है। और उसके चेहरे से भी पता चलता है कि उसे अगवा कर लिया गया है। वह उससे सवाल पूछना चाहता है, लेकिन वे उसे जल्दी करने को कहते हैं।

और उससे जल्दी करने और कपड़े उतारने को कहा। उसने अपना कोट उतार दिया, अपने जूते पैरों से उतार दिए, और कपड़े उतार दिए। वह अपनी जैकेट उतारता है और कमीज़ को अपने सिर पर से खींच लेता है, और नग्न अवस्था में, पूरे शरीर में कंपन करते हुए, तंबाकू, शराब और पसीने की गंध छोड़ते हुए, संशोधन कार्यालय में जाता है, यह नहीं जानते हुए कि अपने बलवान नंगे बदन का क्या करे।

हथियार।

संशोधन कार्यालय में ठीक उनके सामने एक बड़े सुनहरे फ्रेम में ज़ार का पूर्ण वर्दी और अलंकरणों वाला चित्र लटका हुआ है, और कोने में कमीज़ और कांटों का ताज पहने हुए ईसा मसीह का एक छोटा सा चित्र है।

कमरे के बीचोंबीच हरे कपड़े से ढकी एक मेज है, जिस पर कागज पड़े हैं और एक तीन-

एक कोने पर बाज की आकृति वाला सजावटी आभूषण - ज़र्टज़ल। मेज के चारों ओर संशोधन अधिकारी बैठे हैं, जो शांत और उदासीन दिख रहे हैं। एक सिगरेट पी रहा है; दूसरा कुछ देख रहा है।

कागज़ात। ठीक उसी क्षण जब सिदोरोव अंदर आता है, एक गार्ड उसके पास जाता है और उसे नीचे रख देता है।

नापने के फ्रेम का उपयोग करते हुए, उसकी ठुड्डी के नीचे से उसे ऊपर उठाया और उसके पैरों को सीधा किया।

सिगरेट पकड़े हुए आदमी—वह डॉक्टर है—आता है, और रंगरूट के चेहरे को देखे बिना, बल्कि उसके चेहरे से परे कहीं, घृणा के भाव से उसके शरीर को टटोलता है, उसका नाप लेता है, उसकी जांच करता है, और फिर...

गार्ड उसे मुंह खोलने के लिए कहता है, सांस लेने और बोलने के लिए कहता है। कोई कुछ लिख लेता है। अंततः

डॉक्टर ने बिना उसकी आंखों में देखे कहा, "ठीक है। अगला!" और थके हुए अंदाज़ में मेज पर वापस बैठ गया। सैनिक फिर से लड़के को जल्दी करने लगे। किसी तरह उसने अपनी पैंट पहन ली।

वह अपने पैरों को चिथड़ों में लपेटता है, अपने जूते पहनता है, अपना स्कार्फ और टोपी ढूंढता है, और अपनी कोट को अपने नीचे दबा लेता है। फिर वे उसे मुख्य हॉल में ले गए, और उसे एक बेंच से अलग करके बाकियों से दूर खड़ा कर दिया, जिसके पीछे सेवा के लिए चुने गए सभी रंगरूट इंतज़ार कर रहे थे। उसी की तरह एक और गाँव का लड़का,

लेकिन एक दूरदराज के प्रांत से, अब एक सैनिक, जिसके पास एक बंदूक है जिसके अंत में एक नुकीली संगीन लगी है, उस पर नजर रखता है, और अगर वह भागने की कोशिश करे तो उसे मार डालने के लिए तैयार रहता है।

इसी बीच, पुलिस द्वारा धकेले गए पिता, माताओं और पत्नियों की भीड़ चारों ओर जमा हो गई है।

यह जानने के लिए दरवाजे खुले हैं कि किसका बेटा पकड़ा गया है और किसका छोड़ा गया है। अस्वीकृत लोगों में से एक बाहर आता है और घोषणा करता है कि प्योत्र को पकड़ लिया गया है, और तुरंत प्योत्र की युवा पत्नी की तीखी चीख सुनाई देती है, जिसके लिए 'पकड़ लिया गया' शब्द बहुत मायने रखता है।

इसका अर्थ है चार या पांच साल का अलगाव, एक सैनिक की पत्नी का नौकरानी के रूप में जीवन, अक्सर एक वेश्या के रूप में।
लेकिन तभी लहराते बालों और अजीबोगरीब पोशाक पहने एक आदमी सड़क पर आता है, जो अपनी गाड़ी से उतरकर ज़ेम्स्की कोर्टहाउस में चला जाता है। पुलिस भीड़ में से उसके लिए रास्ता साफ करती है।
वह 'आदरणीय पिता', जो शपथ दिलाने आए हैं। और यह 'पिता', जो राजी हो गए हैं...
कि वह विशेष रूप से और पूरी तरह से मसीह की सेवा के लिए समर्पित है, और जो अधिकांशतः ऐसा नहीं करता है
वह स्वयं उस धोखे को देखता है जिसमें वह जी रहा है, और उस हॉल में जाता है जहाँ रंगरूट प्रतीक्षा कर रहे हैं। वह अपने चारों ओर जकूज़ी का एक पर्दा डालता है, अपने लंबे बालों को उसके ऊपर फैलाता है, और स्वयं बाइबिल खोलता है।
जिस पर शपथ लेना मना है, वह क्रूस लेता है, वही क्रूस जिस पर ईसा मसीह को सूली पर चढ़ाया गया था क्योंकि वह
वह अपने इस झूठे सेवक की बातों को नहीं मानता और उन्हें मंच पर खड़ा कर देता है। और ये सभी अभागे, असहाय और गुमराह लड़के उसके झूठ को दोहराते हैं, जिसे वह आत्मविश्वास से बोलता है।
परिचितता का।
वह पढ़ता है और वे उसके बाद दोहराते हैं:
मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर की पवित्र सुसमाचार की शपथ लेता हूँ और प्रतिज्ञा करता हूँ," इत्यादि, "रक्षा करने के लिए," इत्यादि, और वह यह है कि मुझे जिसका भी आदेश दिया जाए, मैं उसकी हत्या कर दूंगी, और उन लोगों की हर बात मानूंगी जिन्हें मैं नहीं जानती और जो परवाह भी नहीं करते।
मेरे लिए तो वह सिर्फ एक साधन मात्र है, जिसके द्वारा वे अपराध करते हैं और जिनके द्वारा उन्हें उनके कब्जे में रखा जाता है।
सत्ता की स्थिति, और मेरे भाई उनकी दयनीय स्थिति में। सभी रंगरूट बिना सोचे समझे इन क्रूर शब्दों को दोहराते हैं। और फिर तथाकथित 'पिता' एक संतुष्टि की भावना के साथ चले जाते हैं।
उसने सही ढंग से और ईमानदारी से अपना कर्तव्य निभाया। और ये सभी बेचारे भ्रमित लड़के मानते हैं कि ये
उनके द्वारा अभी-अभी बोले गए निरर्थक और समझ से परे शब्द उन्हें उनकी सेवा की पूरी अवधि के लिए मनुष्य के रूप में उनके कर्तव्यों से मुक्त कर देते हैं, और उन पर सैनिक के रूप में नए और अधिक बाध्यकारी कर्तव्य डाल देते हैं।
और यह अपराध सार्वजनिक रूप से किया जाता है और कोई भी धोखेबाज और धोखे में आए व्यक्ति से यह नहीं कहता, "सोचो...
तुम जो कर रहे हो; यह सबसे नीच, सबसे झूठ है, जिससे न केवल शरीर बल्कि आत्मा भी नष्ट हो जाती है।"
ऐसा कोई नहीं करता। इसके विपरीत, जब सभी का नामांकन हो जाता है और उन्हें फिर से रिहा किया जाना होता है, तब...
एक सैन्य अधिकारी आत्मविश्वास और गरिमा के साथ उस हॉल में प्रवेश करता है जहाँ नशे में धुत, ठगे हुए लड़के मौजूद हैं।
चुप रहो, और एक साहसी, सैन्य स्वर में चिल्लाता है, "तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा रहे, मेरे जवानों! मैं तुम्हें देश की सेवा करने पर बधाई देता हूँ।"
ज़ार!'" और वे बेचारे (किसी ने उन्हें पहले ही इशारा दे दिया था), शराब से भरी भारी आवाज़ों में अजीब तरह से बुदबुदाते हैं, कुछ इस तरह कि वे खुश हैं।
इसी बीच पिता, माता और पत्नियों की भीड़ दरवाजे पर खड़ी होकर इंतजार कर रही है।

महिलाएं नम आंखों से दरवाजों पर टकटकी लगाए खड़ी हैं। आखिरकार दरवाजे खुलते हैं और सैनिक बाहर आते हैं, लड़खड़ाते हुए, लेकिन चेहरे पर सकारात्मक भाव बनाए रखने की कोशिश करते हुए। यहाँ प्योत्र, वानिया और मकर हैं जो अपनी आँखों में आँसू न देखने की कोशिश कर रहे हैं।

अपनों के चेहरे पर। पत्नियों और माताओं के विलाप के सिवा कुछ सुनाई नहीं देता। कुछ लड़के...

कुछ लोग उन्हें गले लगाते हैं और उनके साथ रोते हैं, कुछ लोग साहस का प्रदर्शन करते हैं, और कुछ लोग उन्हें सांत्वना देने की कोशिश करते हैं।

पत्नियां और माताएं, यह जानते हुए कि उन्हें तीन, चार या पांच साल तक अपने पति के बिना रहना पड़ेगा,

परिवार के कमाने वाले रोते हैं और अपने दुख ज़ोर-ज़ोर से सुनाते हैं। पिता बहुत कम बोलते हैं। वे बस एक हल्की सी आवाज़ निकालते हैं।

वे अपनी ज़ुबान से आवाज़ें निकालते हैं और शोक से आहें भरते हैं, यह जानते हुए कि वे उन स्थिर लड़कों को फिर कभी नहीं देख पाएंगे।

उन्होंने उन्हें पालने-पोसने और प्रशिक्षित करने का काम किया है, लेकिन वे शांत और मेहनती मजदूर बनकर नहीं लौटेंगे, बल्कि उनमें से

अधिकतर अहंकारी और नैतिक रूप से भ्रष्ट होकर लौटेंगे, जो उनके सरल जीवन के लिए अनुपयुक्त होंगे।

और फिर सारी भीड़ अपनी-अपनी स्लेज में बैठकर सड़क पर बने शराबखानों की ओर चल पड़ती है।

शराबखानों में, पहले से कहीं अधिक तेज़ आवाज़ में गाने और रोने की आवाज़ें, नशे में धुत्तों की चीखें, पत्नियों और माताओं का विलाप,

अकॉर्डियन की आवाज़ें और गालियाँ सुनाई देती हैं। वे सभी सराय में बदल जाते हैं।

जिसका राजस्व सरकार के पास जाता है, और फिर शराब पीने का दौर शुरू हो जाता है, जो उनकी चेतना को दबा देता है।

उनके साथ गलत व्यवहार किया जा रहा है।

दो या तीन सप्ताह तक वे घर पर ही रहते हैं, और उस समय का अधिकांश भाग वे 'घूमने-फिरने' में बिताते हैं, यानी

पीना।

एक निश्चित दिन पर वे उन्हें इकट्ठा करते हैं, भेड़ों के झुंड की तरह एक साथ हांकते हैं, और उन्हें सैन्य अभ्यास और प्रशिक्षण देना शुरू करते हैं।

उनके शिक्षक उन्हीं की तरह के लोग होते हैं, बस धोखे में आ जाते हैं और

दो या तीन साल पहले क्रूरता का शिकार हुए। शिक्षा के साधन हैं: छल, बेहोशी, मार-पीट, और

वोदका। और एक साल बीतने से पहले ही ये अच्छे, बुद्धिमान, स्वस्थ मानसिकता वाले लड़के अपने प्रशिक्षकों की तरह ही क्रूर प्राणी बन जाएंगे।

मैंने एक युवा सैनिक से पूछा, “मान लो, तुम्हारे पिता को गिरफ्तार कर लिया जाए और वे अपना मुकदमा चलाने की कोशिश करें।”

पलायन?"

“मुझे उसे अपनी संगीन से मार डालना चाहिए,” उसने अपनी विशिष्ट मूर्खतापूर्ण स्वर में उत्तर दिया।

सैनिकों से बात करते हुए उसने आगे कहा, "और अगर वह भाग निकला, तो मुझे उसे गोली मार देनी चाहिए," जाहिर तौर पर उसे यह जानकर गर्व हो रहा था कि उसे क्या करना है।

अगर उसके पिता भाग रहे होते तो वह क्या करता।

और जब एक नेक दिल लड़के को जानवर से भी बदतर हालत में ला दिया जाता है, तो वह उन लोगों के लिए बिल्कुल सही होता है जो उसे हिंसा के हथियार के रूप में इस्तेमाल करते हैं। वह तैयार है; वह इंसान नष्ट हो चुका है और

हिंसा का एक नया हथियार बना दिया गया है। और यह सब हर साल, हर शरद ऋतु में होता है।
पूरे रूस में, दिन दहाड़े, बड़े-बड़े शहरों के बीचोंबीच, जहाँ हर कोई इसे देख सकता है, हर जगह, और यह छल इतना चालाकी भरा, इतना कुशल है कि यद्यपि सभी लोग अपने दिलों में इसकी घिनौनी हरकत को जानते हैं, और देखते हैं
इसके सभी भयानक परिणामों के बावजूद, वे इसे त्याग कर मुक्त नहीं हो सकते।
जब हमारी आँखें हम पर किए जा रहे इस भयानक धोखे के प्रति खुल जाती हैं, तो आश्चर्य होता है कि ईसाई धर्म और नैतिकता के शिक्षक, युवाओं के प्रशिक्षक, या यहाँ तक कि नेक दिल और बुद्धिमान लोग भी ऐसा क्यों करते हैं।
माता-पिता, जो हर समाज में पाए जाते हैं, किसी भी समाज में नैतिकता की शिक्षा दे सकते हैं।
खुले तौर पर स्वीकार किया जाता है (सभी सरकारों और सभी चर्चों के अधीन ऐसा ही स्वीकार किया जाता है) कि हत्या और यातना
यह सभी के जीवन का एक अपरिहार्य तत्व है, और यह कि हमेशा ऐसे विशेष पुरुषों की आवश्यकता होती है जिन्हें अपने साथियों को मारने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है, और हममें से किसी को भी ऐसा प्रशिक्षित हत्यारा बनना पड़ सकता है।
बच्चों, युवाओं और आम लोगों को किसी भी प्रकार की नैतिकता कैसे सिखाई जा सकती है - नैतिकता की बात तो छोड़ ही दीजिए।
ईसाई धर्म की भावना से शिक्षा देना - इस सिद्धांत के साथ-साथ कि हत्या सार्वजनिक कल्याण के लिए आवश्यक है, और इसलिए वैध है, और यह कि ऐसे मनुष्य हैं, जिनमें से हममें से प्रत्येक को एक होना पड़ सकता है।
जिनका कर्तव्य है हत्या करना, यातना देना और सत्ता में बैठे लोगों की इच्छा के अनुसार हर तरह के अपराध करना।
अधिकार का कब्ज़ा। यदि ऐसा है, और कोई हत्या और यातना कर सकता है और उसे ऐसा करना चाहिए, तो किसी भी प्रकार का नैतिक कानून नहीं है, और न ही हो सकता है, बल्कि केवल यही कानून है कि जिसकी लाठी उसकी भैंस। और यही वास्तविकता है।
वास्तविकता, यानी वह सिद्धांत – जिसे कुछ लोग अस्तित्व के संघर्ष के सिद्धांत द्वारा उचित ठहराते हैं – जो सर्वोपरि है।
हमारे समाज में।
और वास्तव में, किस प्रकार का नैतिक सिद्धांत किसी भी उद्देश्य के लिए हत्या की वैधता को स्वीकार कर सकता है? यह उतना ही असंभव है जितना कि गणित का कोई सिद्धांत यह स्वीकार करे कि दो तीन के बराबर है।
यह बात शायद गणितीय रूप से कुछ हद तक स्वीकार की जा सकती है कि दो तीन के बराबर है, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं हो सकता।
गणित का वास्तविक विज्ञान। और नैतिकता का केवल एक दिखावा ही हो सकता है जिसमें युद्ध के रूप में हत्या और अपराधियों को फांसी देना तो जायज़ है, लेकिन सच्ची नैतिकता नहीं। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की मान्यता
मनुष्य को पवित्र मानना ही समस्त नैतिकता का प्रथम और एकमात्र आधार है।
आँख के बदले आँख और दाँत के बदले दाँत का सिद्धांत ईसाई धर्म द्वारा निरस्त कर दिया गया है, क्योंकि यह अनैतिकता का औचित्य सिद्ध करता है, न्याय का मात्र एक दिखावा है, और इसका कोई वास्तविक अर्थ नहीं है। जीवन एक
वह मूल्य जिसका कोई भार या आकार नहीं है, और जिसकी तुलना किसी अन्य से नहीं की जा सकती, इसलिए उसका कोई अर्थ नहीं है।
एक जान के बदले एक जान लेना। इसके अलावा, हर सामाजिक कानून का उद्देश्य मनुष्य के जीवन को बेहतर बनाना है। किस तरीके से?
तो क्या कुछ लोगों के जीवन का विनाश करके अन्य लोगों के जीवन में सुधार लाया जा सकता है? जीवन का विनाश जीवन में सुधार का साधन नहीं हो सकता; यह तो आत्मघाती कृत्य है।

न्याय के नाम पर किसी दूसरे का जीवन नष्ट करना ऐसा है मानो कोई व्यक्ति अपने द्वारा खोई हुई विपत्ति की भरपाई करने के लिए ऐसा कर रहा हो।

एक हाथ को न्याय के नाम पर दूसरे हाथ को काट देना चाहिए।

लेकिन लोगों को सबसे जघन्य अपराध को कर्तव्य मानने के लिए गुमराह करने के पाप को एक तरफ रखते हुए,

ईसा मसीह के नाम और अधिकार का दुरुपयोग करके उस चीज़ को मंजूरी देना, जिसकी उन्होंने सबसे अधिक निंदा की थी, एक घृणित पाप है।

उन लोगों पर लानत है जो इन 'छोटे बच्चों' को अपराध करने के लिए उकसाते हैं – जो लोग अपनी जीवनशैली, अपनी प्रगति, यहाँ तक कि अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा को भी महत्व देते हैं, वे भला कैसे इसकी अनुमति दे सकते हैं?

एक ऐसी भारी और निरर्थक शक्ति के बीच में एक गठन, जो हर तरह से संवेदनहीन, क्रूर और विनाशकारी है।

138

क्या सरकार का गठन सेना के आधार पर किया जाता है? डाकुओं का सबसे क्रूर गिरोह भी ऐसी सरकार जितना भयावह नहीं होता।

प्रत्येक डाकू सरदार की शक्ति कम से कम इतनी सीमित होती है कि उसके गिरोह के सदस्य कम से कम

कुछ हद तक मानवीय स्वतंत्रता का पालन करते हुए, वे अपनी अंतरात्मा के विरुद्ध कार्य करने से इनकार कर सकते हैं। लेकिन, सेना के अनुशासन को जिस पूर्णता तक पहुँचाया गया है, उसके कारण ऐसे लोगों को नियंत्रित करने की कोई सीमा नहीं है जो अनैतिक आचरण करते हैं।

नियमित रूप से संगठित सरकार का हिस्सा। कोई भी अपराध इतना जघन्य नहीं होता कि वे आसानी से ऐसा न करें।

ये कृत्य उन व्यक्तियों द्वारा किए जा सकते हैं जो किसी सरकार या सेना का हिस्सा हैं, और किसी भी ऐसे व्यक्ति (जैसे कि बोलेंजर, नेपोलियन, या पौगाशेफ) की इच्छा पर किए जा सकते हैं जो संयोगवश उस समय उनके प्रमुख पद पर हो।

अक्सर जब कोई अनिवार्य सैन्य भर्ती, सैन्य अभ्यास और युद्धाभ्यास देखता है, तो पुलिस अधिकारी हथियारों से लैस दिखाई देते हैं।

रिवाल्वर और पहरेदार अपनी चौकियों पर राइफलों पर संगीनें लगाए तैनात थे; जब कोई पूरे दिन लगातार सुनता रहता है

समय (जैसा कि मैं हामोवनिकी में सुनता हूँ जहाँ मैं रहता हूँ) गेंदों की सीटी और रेत में गिरने की धीमी सी आवाज़; जब कोई किसी ऐसे शहर के बीच में देखता है जहाँ आत्मरक्षा में हिंसा का कोई भी प्रयास निषिद्ध है,

जहां पाउडर और रसायनों की बिक्री होती है, जहां तेज गति से गाड़ी चलाना और बिना लाइसेंस के डॉक्टर के रूप में काम करना प्रतिबंधित है।

डिप्लोमा आदि की अनुमति नहीं है, हजारों अनुशासित सैनिक, हत्या करने के लिए प्रशिक्षित, और एक व्यक्ति की इच्छा के अधीन; कोई स्वयं से पूछता है कि जो लोग अपनी सुरक्षा को महत्व देते हैं वे चुपचाप इसे कैसे स्वीकार कर सकते हैं और सहन कर सकते हैं।

इसके साथ? इसकी अनैतिकता और बुरे प्रभावों के अलावा, इससे ज़्यादा असुरक्षित कुछ भी नहीं हो सकता। क्या हैं?

लोग क्या सोच रहे हैं? मेरा मतलब आज के ईसाईयों, धर्मगुरुओं, परोपकारियों और नैतिकतावादियों से नहीं है, बल्कि उन लोगों से है जो अपने जीवन, अपनी सुरक्षा और अपने आराम को महत्व देते हैं। यह संगठन,

हम जानते हैं कि यह एक व्यक्ति के हाथों में उतना ही अच्छा काम करेगा जितना दूसरे के हाथों में। आज, मान लीजिए, सत्ता किसी के हाथ में है।

एक ऐसे शासक के हाथों में जिसे सहन किया जा सकता है, लेकिन कल शायद उस पर बिरोन, एलिजाबेथ या किसी और का कब्जा हो जाए।

कैथरीन, एक पौगाशेफ, एक नेपोलियन प्रथम, या एक नेपोलियन तृतीय।
और सत्ता में बैठा व्यक्ति, जो आज सहनीय है, कल क्रूर बन सकता है, या उसका स्थान कोई और ले सकता है।
एक पागल या मंदबुद्धि उत्तराधिकारी, जैसे बवेरिया का राजा या हमारा पॉल प्रथम।
और न केवल सर्वोच्च अधिकारी, बल्कि हर जगह फैले हुए सभी छोटे-मोटे सरदार, जैसे कि कई जनरल बरानोव, गवर्नर, पुलिस अधिकारी और कंपनियों के कमांडर भी, ये सब अपराध कर सकते हैं।
पद से हटाए जाने से पहले ही अधिकांश जघन्य अपराध हो जाते हैं। और यही बात है।
लगातार होता रहता है।
अनायास ही मन में यह प्रश्न उठता है, "पुरुष इसे कैसे जारी रहने दे सकते हैं, न केवल उच्चतर विचारों के कारण, बल्कि इसके कारण भी?"
अपनी सुरक्षा के प्रति उनका क्या सम्मान है?
इस प्रश्न का उत्तर यह है कि सभी लोग इसे सहन नहीं करते (कुछ लोग - अधिकांश लोग)
अनुपात – भ्रमित और आज्ञाकारी, जिनके पास कोई विकल्प नहीं है और उन्हें सब कुछ सहन करना पड़ता है)। इसे वे लोग सहन करते हैं जो केवल ऐसे संगठन के तहत लाभ का पद प्राप्त कर सकते हैं। वे इसे सहन करते हैं, क्योंकि
उन्हें सरकार या सेना के मुखिया के रूप में किसी मूर्ख या क्रूर व्यक्ति के होने के जोखिमों से अवगत कराना।
संगठन के नष्ट होने से उन्हें जिन नुकसानों का सामना करना पड़ेगा, उनकी तुलना में ये नुकसान हमेशा कम ही होते हैं।
एक न्यायाधीश, पुलिस कमांडर, राज्यपाल या अधिकारी अपने पद पर यथावत बने रहेंगे।
चाहे बुलंगर हो या गणतंत्र, पौगाशेफ के अधीन हो या कैथरीन के। यदि मौजूदा व्यवस्था, जिसने उसे यह लाभ दिलाया था, नष्ट हो जाती है, तो वह निश्चित रूप से अपनी लाभकारी स्थिति खो देगा। और इसलिए इन सभी लोगों को कोई चिंता नहीं है।
संगठन के मुखिया कौन हैं, इस बारे में अनिश्चितता के बावजूद, वे किसी के भी अनुरूप ढल जाएंगे; वे केवल
संगठन के पतन का भय होता है, और यही कारण है – हालांकि अक्सर यह एक अचेतन कारण होता है –
कि वे इसका समर्थन करते हैं।
अक्सर यह सवाल उठता है कि स्वतंत्र लोग, जिन पर ऐसा करने के लिए किसी भी तरह का दबाव नहीं होता, वे तथाकथित
समाज के अभिजात वर्ग को रूस, इंग्लैंड, जर्मनी, ऑस्ट्रिया और यहां तक कि फ्रांस की सेना में जाना चाहिए, और
हत्यारे बनने के अवसर तलाशते हैं। आखिर उच्च सिद्धांतों वाले माता-पिता भी अपने बेटों को सैन्य विद्यालयों में क्यों भेजते हैं? माताएं अपने बच्चों के लिए खिलौने के हेलमेट, बंदूकें और तलवारें क्यों खरीदती हैं?
(वैसे, किसान के बच्चे कभी सैनिक बनकर नहीं खेलते)। अच्छे पुरुष और यहाँ तक कि महिलाएं भी, जो
जिन लोगों को युद्ध में कोई दिलचस्पी नहीं है, वे स्कोबेलोफ़ और अन्य लोगों के कारनामों पर इतना मुग्ध क्यों हो जाते हैं और उनकी महिमा करने में एक-दूसरे से होड़ क्यों लगाते हैं? वे लोग, जो ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं हैं और जिन्हें इसके लिए कोई शुल्क नहीं मिलता, ऐसा क्यों करते हैं?
रूस के कुलीन वर्ग के मार्शलों की तरह, वे भी शारीरिक रूप से सक्रिय किसी व्यवसाय में पूरे महीने परिश्रम करते हैं।

क्या सैनिकों की भर्ती अप्रिय और नैतिक रूप से कष्टदायक है? सभी राजा और सम्राट सैन्य वर्दी क्यों पहनते हैं? वे सभी सैन्य समीक्षाएँ क्यों करते हैं, वे युद्धाभ्यास क्यों आयोजित करते हैं, और सैनिकों का वितरण क्यों करते हैं?
क्या अमीर लोग सेना को पुरस्कार देते हैं, और जनरलों और सफल कमांडरों के सम्मान में स्मारक बनवाते हैं? अमीर लोग ऐसा क्यों करते हैं?
क्या स्वतंत्र स्थिति वाले पुरुष राजकवि व्यक्तियों की सेवा में सेवक के कर्तव्यों का पालन करना, उनकी चापलूसी करना, उनके सामने गिड़गिड़ाना और उनकी विशिष्ट श्रेष्ठता में विश्वास करने का दिखावा करना सम्मान की बात समझते हैं?
जो लोग मध्ययुगीन चर्च के अंधविश्वासों में विश्वास करना छोड़ चुके हैं, और जो ऐसा नहीं कर सकते, वे ऐसा क्यों करते हैं?
क्या सच में सरकारें ही नहीं, बल्कि वे लोग भी चर्च जैसी अनैतिक और ईशनिंदा वाली संस्था में विश्वास करने और उसे समर्थन देने का दिखावा करते हैं? ऐसा क्यों है कि न केवल सरकारें बल्कि
उच्च वर्ग के निजी व्यक्ति जनता की अज्ञानता को इतनी ईर्ष्यापूर्वक बनाए रखने का प्रयास क्यों करते हैं?
वे धार्मिक अंधविश्वासों को तोड़ने या वास्तव में लोगों को ज्ञान प्रदान करने के किसी भी प्रयास पर इतनी उग्रता से टूट पड़ते हैं।
लोग? इतिहासकार, उपन्यासकार और कवि, जिन्हें चापलूसी से कुछ भी हासिल होने की उम्मीद नहीं होती, वे अतीत के राजाओं, सम्राटों और विजेताओं को नायक क्यों बनाते हैं? वे लोग, जो कहते हैं
स्वयं विद्वान, अपना पूरा जीवन इस बात को साबित करने के लिए सिद्धांत बनाने में समर्पित कर देते हैं कि हिंसा का प्रयोग
जनता के विरुद्ध सत्ता का प्रयोग हिंसा नहीं, बल्कि एक विशेष अधिकार है? अक्सर आश्चर्य होता है कि एक फैशनेबल महिला या कलाकार, जिनसे उम्मीद की जाती है कि उन्हें राजनीति या सैन्य मामलों में कोई दिलचस्पी नहीं होगी, ऐसा क्यों करती हैं?
सवाल यह है कि कामगारों की हड़तालों की हमेशा निंदा करनी चाहिए और युद्ध का बचाव करना चाहिए; और हमेशा होना चाहिए
बिना किसी संकोच के एक का विरोध किया और दूसरे का समर्थन किया।
लेकिन जब यह एहसास होता है कि उच्च वर्गों में अचूक सहज ज्ञान होता है, तो आश्चर्य की कोई बात नहीं रह जाती।
उन कारकों के बारे में जो संगठन को बनाए रखने में सहायक होते हैं और उन कारकों के बारे में जो उस संगठन को नष्ट करने में सहायक होते हैं जिसके बल पर वे लाभ उठाते हैं।
उनके विशेषाधिकार। उस फैशनेबल महिला ने निश्चित रूप से यह नहीं सोचा था कि अगर पूंजीपति नहीं होते और
उनकी रक्षा के लिए कोई सेना नहीं होगी, उनके पति की संपत्ति खत्म हो जाएगी, और वह अपने मनोरंजन और नृत्य-परिधानों के लिए उपयुक्त पोशाकें नहीं पहन पाएंगी। और कलाकार निश्चित रूप से यह तर्क नहीं देता कि उसे पूंजीपतियों और सैनिकों की आवश्यकता है।
उनका बचाव करने के लिए, ताकि वे उसकी तस्वीरें खरीद सकें। लेकिन इस मामले में तर्क की जगह सहज प्रवृत्ति ने मार्गदर्शन किया।
वे उनका अचूक समर्थन करते हैं। और यही सहज प्रवृत्ति है जो कुछ अपवादों को छोड़कर सभी मनुष्यों को उन सभी धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक संस्थानों का समर्थन करने के लिए प्रेरित करती है जो उनके हित में हैं।
लेकिन क्या यह संभव है कि उच्च वर्ग मौजूदा व्यवस्था का समर्थन केवल इसलिए करते हैं क्योंकि यह उनके लिए उचित है?
क्या उन्हें इससे कोई फायदा है? क्या वे यह नहीं देख सकते कि यह व्यवस्था मूलतः तर्कहीन है, कि यह लोगों द्वारा प्राप्त नैतिक विकास के स्तर और जनमत के अनुरूप नहीं है, और यह कि यह
खतरों से भरा हुआ? शासक वर्ग, या कम से कम उनमें से अच्छे, ईमानदार और बुद्धिमान लोग,
उन्हें इन मूलभूत विसंगतियों से पीड़ित होना होगा और उन खतरों को देखना होगा जिनसे वे ग्रस्त हैं।

और क्या यह संभव है कि निम्न वर्गों के लाखों लोग सजा के डर से यातना और हत्या जैसे स्पष्ट रूप से जघन्य अपराध करते समय अपने अंतरात्मा को शांत रख सकें? वास्तव में, ऐसा नहीं हो सकता;
न तो पहले वाले और न ही दूसरे वाले अपने आचरण की अतार्किकता को अनदेखा कर सकते थे, यदि जटिलता को ध्यान में रखा जाए तो।
सरकारी संगठन ने अपने कार्यों की अस्वाभाविक निरर्थकता को छिपाने की कोशिश नहीं की।
इन सभी कृत्यों को अंजाम देने के लिए इतने सारे लोग उकसाते हैं, सहायता करते हैं या समर्थन देते हैं कि कोई भी व्यक्ति जो
जो व्यक्ति इनमें शामिल होता है, वह स्वयं को इसके लिए नैतिक रूप से जिम्मेदार महसूस करता है।
हत्यारों में यह प्रथा होती है कि वे हत्या के सभी गवाहों को मृतक पर हमला करने के लिए बाध्य करते हैं, ताकि जिम्मेदारी को यथासंभव अधिक से अधिक लोगों में विभाजित किया जा सके।
इस सिद्धांत को विभिन्न रूपों में सरकारी संगठन के अंतर्गत अपराध करने में लागू किया जाता है।
ऐसे अपराध जिनके बिना कोई भी सरकारी संगठन अस्तित्व में नहीं रह सकता। शासक हमेशा अधिक से अधिक लोगों को फंसाने की कोशिश करते हैं।
नागरिकों को यथासंभव उन सभी अपराधों में दोषी ठहराया जाना चाहिए जो उनके समर्थन में किए गए हों।
हाल ही में यह प्रवृत्ति सभी नागरिकों के दायित्व के माध्यम से बहुत स्पष्ट रूप से व्यक्त की गई है।
न्यायिक प्रक्रिया में जूरी सदस्य के रूप में, सेना में सैनिक के रूप में, स्थानीय सरकार में या विधायिका में भाग लेना।
विधानसभा में, मतदाताओं या सदस्यों के रूप में।
जैसे किसी बेंत की टोकरी में सारे सिरे इस तरह छिपे होते हैं कि उन्हें ढूंढना मुश्किल होता है, वैसे ही इस अवस्था में भी।
इस संगठन में किए गए अपराधों की जिम्मेदारी इस कदर छिपाई जाती है कि लोग अपराध करने के लिए मजबूर हो जाते हैं।
वे अपनी जिम्मेदारी को समझे बिना ही सबसे जघन्य कृत्यों को अंजाम देते हैं।
प्राचीन काल में अत्याचारियों को उनके द्वारा किए गए अपराधों के लिए श्रेय मिलता था, लेकिन हमारे समय में सबसे जघन्य अपराध
नीरो के शासनकाल में अकल्पनीय घिनौने कृत्य किए जाते हैं और इसके लिए किसी को भी दोषी नहीं ठहराया जाता।

एक समूह ने सुझाव दिया, दूसरे समूह ने प्रस्ताव रखा, तीसरे समूह ने रिपोर्ट दी, चौथे समूह ने निर्णय लिया, पाँचवें समूह ने पुष्टि की, छठे समूह ने आदेश दिया, और सातवें समूह ने उसे अंजाम दिया। उन्हें फाँसी दी गई।
वे महिलाओं, बूढ़े पुरुषों और निर्दोष लोगों को कोड़े मारकर मौत के घाट उतार देते हैं, जैसा कि हाल ही में रूस में हमारे बीच हुआ था।
युज़ोव्स्की कारखाने में, और यूरोप और अमेरिका में हर जगह अराजकतावादियों और मौजूदा व्यवस्था के खिलाफ सभी अन्य विद्रोहियों के संघर्ष में हमेशा यही किया जाता है; वे सैकड़ों लोगों को गोली मारते हैं और फांसी देते हैं।
हजारों लोगों को मार गिराना, या युद्ध में लाखों का नरसंहार करना, या एकांत कारावास में लोगों के दिलों को तोड़ देना और उन्हें बर्बाद कर देना।
एक सैनिक के जीवन में भ्रष्टाचार के कारण आत्माएं प्रभावित होती हैं, और इसके लिए कोई जिम्मेदार नहीं है।
सामाजिक स्तर के सबसे निचले पायदान पर, बंदूकों, पिस्तौलों और तलवारों से लैस सैनिक, लोगों को घायल करते हैं और उनकी हत्या करते हैं।
लोगों को इन तरीकों से सेना में भर्ती होने के लिए मजबूर करते हैं, और उन्हें पूरा विश्वास है कि

इन कार्रवाइयों की जिम्मेदारी पूरी तरह से उन अधिकारियों पर है जो उनका नेतृत्व करते हैं।
सबसे ऊपर – ज़ार, राष्ट्रपति, सरकारी मंत्री और संसद इन यातनाओं, हत्याओं और सैन्य भर्ती का फरमान जारी करते हैं, और पूरी तरह से आश्वस्त हैं कि चूंकि वे या तो
उन्हें ईश्वर की कृपा से या उस समाज द्वारा अधिकार प्राप्त है जिसका वे शासन करते हैं, और जो उनसे ऐसे फरमान जारी करने की मांग करता है।
उन्हें जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। इन दोनों चरम सीमाओं के बीच वे मध्यस्थ होते हैं जो हत्याओं और हिंसा के अन्य कृत्यों की निगरानी करते हैं और पूरी तरह आश्वस्त होते हैं कि जिम्मेदारी उनसे हट गई है।
इसका कुछ भार उनके वरिष्ठ अधिकारियों पर होता है जिन्होंने आदेश दिया है, और कुछ इस तथ्य पर कि ऐसे आदेश
उनसे यही उम्मीद की जाती है, उन सभी लोगों को जो समाज के सबसे निचले पायदान पर हैं।
आदेश देने वाला प्राधिकारी और उन्हें क्रियान्वित करने वाला प्राधिकारी, ये दोनों ही चरम सीमाओं पर स्थित हैं।
राज्य संगठन, एक अंगूठी के दो सिरों की तरह आपस में मिलते हैं; वे एक दूसरे का सहारा लेते हैं और एक दूसरे पर टिके रहते हैं और
उस घेरे के भीतर मौजूद सभी चीजों को घेर लें।
इस विश्वास के बिना कि कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह है जो उसके कृत्यों की पूरी जिम्मेदारी लेगा, कोई भी सैनिक कभी भी हत्या या हिंसा का कोई अन्य कृत्य करने के लिए हाथ नहीं उठाएगा।
इस दृढ़ विश्वास के बिना कि पूरी जनता को यही उम्मीद है, एक भी राजा, सम्राट, राष्ट्रपति नहीं हो सकता,
अन्यथा संसद हत्याओं या हिंसा के कृत्यों का आदेश देगी।
इस विश्वास के बिना कि उच्च श्रेणी के ऐसे व्यक्ति मौजूद हैं जो जिम्मेदारी संभालेंगे, और
निम्न वर्ग के जिन लोगों को अपने कल्याण के लिए ऐसे कार्यों की आवश्यकता होती है, मध्यवर्ती वर्ग का कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं करेगा।
ऐसे कार्यों की निगरानी करना।
राज्य की संरचना इस प्रकार है कि सामाजिक पैमाने पर व्यक्ति की स्थिति चाहे जो भी हो, उसकी गैर-जिम्मेदारी ही उसका मुख्य कारण होती है।
वही बात है। उसका ग्रेड जितना ऊंचा होगा, वह नीचे से आने वाली मांगों के प्रभाव में उतना ही अधिक होगा, और उतना ही कम वह
ऊपर से मिले आदेशों द्वारा नियंत्रित, और इसके विपरीत भी।
इस प्रकार, राज्य संगठन से बंधे सभी मनुष्य अपने कार्यों की जिम्मेदारी एक-दूसरे पर डालते हैं, किसान सैनिक अपने अधिकारी कुलीन या व्यापारी पर, और अधिकारी अपने अधिकारी पर।
वह कुलीन व्यक्ति जिसे राज्यपाल नियुक्त किया गया है, राज्यपाल उस कुलीन व्यक्ति या अधिकारी के पुत्र पर जो है
सरकारी मंत्री, शाही परिवार के उस सदस्य पर सरकारी मंत्री जो ज़ार के पद पर आसीन है, और फिर ज़ार इन सभी अधिकारियों, रईसों, व्यापारियों और किसानों पर। लेकिन बात यहीं खत्म नहीं होती।
इस तरह से पुरुष न केवल अपने कार्यों के प्रति जिम्मेदारी की भावना से मुक्त हो जाते हैं, बल्कि वे और भी बहुत कुछ खो देते हैं।
उनकी नैतिक जिम्मेदारी की भावना भी इस तथ्य से उत्पन्न होती है कि स्वयं को एक राज्य संगठन के रूप में गठित करते हुए वे स्वयं को और एक दूसरे को लगातार और अथक रूप से यह विश्वास दिलाते रहते हैं कि वे सभी समान नहीं हैं।

लेकिन "जैसे तारे अलग-अलग हों," वैसे ही वे स्वयं भी इस पर सचमुच विश्वास करने लगते हैं। इस प्रकार कुछ लोग आश्वस्त हो जाते हैं कि वे अन्य लोगों की तरह साधारण लोग नहीं हैं, बल्कि विशेष लोग हैं जिन्हें विशेष सम्मान दिया जाना चाहिए।

एक अन्य समूह के लोगों के मन में हर संभव तरीके से यह बात बिठा दी जाती है कि वे दूसरों से हीन हैं, और इसलिए उन्हें अपने वरिष्ठों द्वारा दिए गए हर आदेश का बिना किसी शिकायत के पालन करना चाहिए।

मुख्यतः इसी असमानता पर, कुछ लोगों के उत्थान और दूसरों के पतन पर, सब कुछ टिका हुआ है।

मनुष्य में जीवन की मौजूदा व्यवस्था की पागलपन भरी प्रकृति और एक समूह द्वारा दूसरे समूह पर किए जाने वाले छल और अपराध की तमाम क्रूरता को अनदेखा करने की क्षमता होती है।

वे लोग जिनके मन में यह विचार बैठा दिया गया है कि उनमें एक विशेष अलौकिक भव्यता निहित है।

और परिणामस्वरूप वे अपनी काल्पनिक गरिमा की भावना से इतने मदहोश हो जाते हैं कि वे अपने कार्यों के लिए अपनी जिम्मेदारी को महसूस करना बंद कर देते हैं।

दूसरी ओर, वे लोग जिनमें यह धारणा पोषित की जाती है कि वे हीन प्राणी हैं, जो हर बात में अपने से श्रेष्ठों की आज्ञा मानने के लिए बाध्य हैं, इस निरंतर अपमान के कारण एक विचित्र स्थिति में पड़ जाते हैं।

वे स्तब्ध होकर गुलामी की अवस्था में आ जाते हैं, और इस स्तब्ध अवस्था में वे अपने कार्यों का महत्व नहीं समझ पाते और सब कुछ खो देते हैं। अपने कार्यों के प्रति जिम्मेदारी की भावना।

मध्यवर्ती वर्ग, जो एक ओर अपने वरिष्ठों के आदेशों का पालन करते हैं और दूसरी ओर उनका सम्मान करते हैं

दूसरी ओर, स्वयं को श्रेष्ठ प्राणी मानते हुए, वे सत्ता के नशे में चूर और गुलामी के नशे में चूर हो जाते हैं।

साथ ही साथ वे अपनी जिम्मेदारी का बोध भी खो देते हैं।

समीक्षा के दौरान कमांडर-इन-चीफ पर एक नजर डालने मात्र से ही आत्ममहत्व के नशे में चूर व्यक्ति का हाल पता चल जाता है।

उनके दल के सभी सदस्य भव्य और रंग-बिरंगे सजे-धजे घोड़ों पर सवार होकर, शानदार वर्दी पहने हुए उनके पीछे-पीछे चल रहे थे।

सजावटों को देखें, और देखें कि वे संगीत की सुरीली और गंभीर धुनों पर सैनिकों की कतारों के सामने कैसे सवारी करते हैं।

सभी सैनिक हथियार ताने खड़े हैं और अधीनता से भयभीत हैं। इस दृश्य को देखकर ही समझा जा सकता है कि ऐसे क्षणों में, जब वे पूर्णतः मदहोशी की अवस्था में होते हैं,

कमांडर-इन-चीफ, सैनिक और मध्यवर्ती अधिकारी सभी अपराध करने में सक्षम होंगे।

अन्य परिस्थितियों में वे इसकी कभी कल्पना भी नहीं कर सकते थे।

परेड, प्रदर्शनियों, धार्मिक समारोहों आदि जैसे उत्तेजकों से उत्पन्न नशा

राज्याभिषेक के दौरान होने वाली बीमारी, हालांकि, एक तीव्र और अस्थायी स्थिति है; लेकिन दीर्घकालिक बीमारी के अन्य रूप भी हैं।

स्थायी नशा, जिसके लिए वे सभी उत्तरदायी हैं जिनके पास किसी भी प्रकार का अधिकार है, चाहे वह ज़ार का हो या गली के कोने पर खड़ा सबसे निचला पुलिस अधिकारी, और साथ ही वे लोग भी जो सत्ता के अधीन हैं।

और वे स्तब्ध दासता की अवस्था में होते हैं। बाद वाले, सभी दासों की तरह, हमेशा अपने कार्यों के लिए कोई न कोई औचित्य ढूंढ लेते हैं।

अपने सेवकों को यथासंभव सर्वोच्च सम्मान और महत्व प्रदान करने में चाटुकारिता।
मुख्यतः असमानता की इस झूठी धारणा और उससे उत्पन्न सत्ता और गुलामी के नशे के कारण ही राज्य संगठन में जुड़े लोग अपने अधिकारों के विरुद्ध कार्य करने में सक्षम हो जाते हैं।
बिना किसी संकोच या पछतावे के अंतरात्मा की आवाज सुनना।
इस नशे के प्रभाव में, पुरुष स्वयं को केवल मनुष्य नहीं बल्कि कुछ विशेष प्राणी समझने लगते हैं – जैसे कि कुलीन व्यक्ति, व्यापारी, राज्यपाल, न्यायाधीश, अधिकारी, ज़ार, सरकार।
मंत्री हों या सैनिक – अब वे सामान्य मानवीय कर्तव्यों से बंधे नहीं हैं, बल्कि कहीं अधिक महत्वपूर्ण अन्य कर्तव्यों से बंधे हैं।
– किसी कुलीन व्यक्ति, व्यापारी, राज्यपाल, न्यायाधीश, अधिकारी, ज़ार, सरकारी मंत्री या सैनिक के विशिष्ट कर्तव्य।
इस प्रकार, जंगल पर दावा करने वाले भूस्वामी ने ऐसा इसलिए किया क्योंकि वह खुद को
एक साधारण व्यक्ति, जिसे अपने आस-पास रहने वाले किसानों और अन्य सभी लोगों के समान जीवन के अधिकार प्राप्त हैं, लेकिन एक
एक महान जमींदार, कुलीन वर्ग का सदस्य, और सत्ता के नशे में चूर होकर उसने किसानों के दावों से अपनी गरिमा को ठेस पहुँचने का आहत महसूस किया। केवल इसी भावना के कारण, बिना विचार किए, उसने किसानों के दावों पर विचार किया।
इसके संभावित परिणामों को देखते हुए, उसने अपने कथित अधिकारों को बहाल करने के लिए एक दावा प्रस्तुत किया।
ठीक उसी तरह, जिन न्यायाधीशों ने गलत तरीके से जंगल को मालिक के पक्ष में घोषित किया, उन्होंने ऐसा केवल इसलिए किया क्योंकि वे खुद को अन्य लोगों की तरह साधारण मनुष्य नहीं समझते थे, और इसलिए वे दूसरों के मार्गदर्शन में चलने के लिए बाध्य थे।
सब कुछ केवल उसी आधार पर होता है जिसे वे सही मानते हैं, लेकिन सत्ता के मादक प्रभाव में आकर वे कल्पना करते हैं।
स्वयं को उस न्याय के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत करते हुए जो कभी त्रुटि नहीं कर सकता; चाटुकारिता के मादक प्रभाव में आकर वे स्वयं को एक निश्चित दस्तावेज़ में लिखे निर्देशों का अक्षरशः पालन करने के लिए बाध्य समझते थे।
किताब, तथाकथित कानून। उसी तरह, जो भी इस तरह के मामले में भाग लेता है, उच्चतम स्तर से।
अध्यक्ष की ओर से रिपोर्ट पर अपनी सहमति देने वाले प्राधिकारी के प्रतिनिधि द्वारा
भर्ती सत्रों से लेकर, रंगरूटों को गुमराह करने वाले पुजारी तक, और यहाँ तक कि सबसे निचले स्तर के सैनिक तक, जो अब अपने ही भाइयों पर गोली चलाने को तैयार है, सत्ता या चापलूसी के नशे में यह कल्पना करते हैं कि वे कुछ हैं।
वे पारंपरिक पात्र हैं। वे उस प्रश्न का सामना नहीं करते जो उनके सामने प्रस्तुत किया जाता है, कि वे ऐसा करते हैं या नहीं।
उन्हें अपने विवेक के अनुसार एक बुरे कार्य में भाग लेना चाहिए, लेकिन वे स्वयं को विभिन्न पारंपरिक व्यक्तित्वों के रूप में देखते हैं - एक जैसे कि ज़ार, ईश्वर का अभिषेक प्राप्त व्यक्ति, एक असाधारण प्राणी, जिसे सुख-सुविधाओं की रक्षा के लिए बुलाया गया है।
एक सौ मिलियन पुरुषों में से; दूसरा कुलीन वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में; तीसरा एक पुजारी के रूप में, जिसके पास
उन्हें दीक्षा प्राप्त होने से विशेष कृपा प्राप्त हुई; दूसरे को एक सैनिक के रूप में, अपनी सैन्य शपथ से बंधे होने के कारण बिना सोचे-समझे सभी आदेशों का पालन करने का दायित्व प्राप्त हुआ।

सत्ता के नशे में चूर या अपनी काल्पनिक स्थिति की गुलामी में ही ये सभी लोग ऐसा व्यवहार कर सकते हैं।

यदि वे सभी इस बात से पूरी तरह आश्वस्त नहीं थे कि ज़ार, सरकारी मंत्री,
राज्यपाल, न्यायाधीश, कुलीन व्यक्ति, जमींदार, अधीक्षक, अधिकारी और सैनिक, ये सभी वास्तविक और महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं; इनमें से कोई भी अपने कार्यों में भाग लेने के बारे में भय और घृणा के बिना सोच भी नहीं सकता।
अब।
सैकड़ों वर्षों से स्थापित, सदियों से सभी द्वारा मान्यता प्राप्त, विशेष नामों और पोशाकों से सुशोभित और हर प्रकार के समारोहों द्वारा पुष्ट की गई पारंपरिक भूमिकाएँ,
यह मनुष्यों के मन में उनकी इंद्रियों के माध्यम से इस प्रकार प्रवेश कर गया कि वे जीवन की सामान्य परिस्थितियों को भूल गए।
सभी में एक बात समान है, वे खुद को और सभी को केवल इसी पारंपरिक दृष्टिकोण से देखते हैं, और
वे अपने और दूसरों के कार्यों का आकलन करते समय इस पारंपरिक मानक से निर्देशित होते हैं।
इस प्रकार हम एक ऐसे व्यक्ति को देखते हैं जो पूर्णतः स्वस्थ और परिपक्व आयु का है, केवल इसलिए कि उसने कुछ लच्छेदार चीजें पहन रखी हैं।
या उसके कोट के पिछले हिस्से पर कढ़ाई की हुई चाबियाँ हों, या कोई रंगीन रिबन हो जो केवल किसी सजी-धजी लड़की के लिए ही उपयुक्त हो, और उसे बताया जाता है
अगर कोई यह दावा करता है कि वह एक जनरल है, एक चैंबरलेन है, सेंट एंड्रयू के ऑर्डर का एक नाइट है, या इसी तरह की कोई बकवास बात है, तो वह अचानक आत्म-महत्वपूर्ण, घमंडी और यहां तक कि खुश हो जाता है, या इसके विपरीत, उदास और निराश हो जाता है।
अपेक्षित सम्मान या उपाधि प्राप्त न कर पाने के कारण इतना दुखी होना कि बीमार पड़ जाना।
इससे भी अधिक आश्चर्यजनक बात यह है कि एक युवक, जो अन्य सभी मामलों में पूरी तरह से स्वस्थ, स्वतंत्र और अभाव के भय से मुक्त है, केवल इसलिए न्यायिक अभियोजक या जिला कमांडर नियुक्त किया गया है।
एक गरीब विधवा को उसके छोटे बच्चों से अलग कर दिया जाता है और उसे जेल में बंद कर दिया जाता है, जिससे उसके बच्चे बेसहारा रह जाते हैं।
क्योंकि उस अभागी महिला ने शराब का गुप्त व्यापार किया और इस तरह राजस्व को नुकसान पहुंचाया।
पच्चीस रूबल, और उसे जरा भी पछतावा नहीं होता। या इससे भी अधिक आश्चर्यजनक बात यह है कि एक समझदार और नेक दिल इंसान, सिर्फ इसलिए कि उसे पहनने के लिए एक बैज या वर्दी दी जाती है, और उसे कहा जाता है
वह एक गार्ड या सीमा शुल्क अधिकारी है, लोगों पर गोली चलाने के लिए तैयार है, और न तो वह और न ही उसके आसपास के लोग
उसे इसके लिए दोषी मानते हैं, लेकिन इसके विपरीत, अगर उसने गोली नहीं चलाई होती तो भी उसे दोषी मानते। उन न्यायाधीशों और जूरी सदस्यों की तो बात ही छोड़िए जो लोगों को मौत की सजा सुनाते हैं, और उन सैनिकों की जो हजारों लोगों को मार डालते हैं।
बिना किसी संकोच के, केवल इसलिए कि उनके मन में यह बात बिठा दी गई है कि वे केवल मनुष्य नहीं हैं।
लेकिन जूरी सदस्य, न्यायाधीश, सेनापति और सैनिक।
राज्य संगठन के अधीन पुरुषों की यह विचित्र और असामान्य स्थिति आमतौर पर इस प्रकार व्यक्त होती है:
निम्नलिखित शब्द: "एक मनुष्य के रूप में, मुझे उस पर दया आती है; लेकिन एक रक्षक, न्यायाधीश, सेनापति, राज्यपाल, ज़ार या सैनिक के रूप में, यह मेरा कर्तव्य है।"

उसे मार डालना या यातना देना उसका कर्तव्य है।" ठीक वैसे ही जैसे कुछ पद प्रदान किए जाते हैं और मान्यता प्राप्त होते हैं, जो इससे हम सभी अपनी साझा मानवता के कारण हममें से प्रत्येक पर निहित दायित्वों से मुक्त हो जाएंगे।

तो, उदाहरण के लिए, हमारे सामने जो मामला है, उसमें पुरुष भूखे-प्यासे लोगों की हत्या और उन्हें यातना देंगे, और वे यह स्वीकार करें कि किसानों और जमींदार के बीच विवाद में किसान सही हैं (वे सभी जो कमान ने मुझसे यही कहा था। वे जानते हैं कि किसान दयनीय, गरीब और भूखे हैं, और जमींदार धनी है और किसी के प्रति सहानुभूति नहीं जगाता। फिर भी वे तीन सत्ता हथियाने के लिए किसानों को मारने जा रहे हैं।

जमींदार के लिए हजार रूबल, केवल इसलिए कि उस क्षण वे खुद को पुरुष नहीं समझते बल्कि राज्यपाल, अधिकारी, पुलिस जनरल, सिपाही और सैनिक, क्रमशः, स्वयं को मनुष्य की अंतरात्मा की शाश्वत मांगों का नहीं, बल्कि अपने आकस्मिक, अस्थायी दायित्वों का पालन करने के लिए बाध्य मानते हैं।

अधिकारी या सैनिक के रूप में पद।

यह भले ही अजीब लगे, लेकिन इस आश्चर्यजनक घटना का एकमात्र स्पष्टीकरण यही है कि वे इसमें हैं।

सम्मोहित व्यक्ति की वह स्थिति, जिसके बारे में कहा जाता है कि वह सम्मोहनकर्ता द्वारा निर्देशित प्राणियों की तरह महसूस करता है और व्यवहार करता है। उदाहरण के लिए, जब सम्मोहित व्यक्ति को यह बताया जाता है कि वह लंगड़ा है, तो वह वह लंगड़ाकर चलने लगता है; वह अंधा हो जाता है और देख नहीं पाता; वह एक जंगली जानवर बन जाता है और काटने लगता है।

यह स्थिति न केवल इस अभियान पर जाने वालों की है, बल्कि उन सभी पुरुषों की है जो अपने मानवीय कर्तव्यों की उपेक्षा करते हुए और उन्हें हानि पहुँचाते हुए अपने राजकीय और सामाजिक कर्तव्यों का निर्वाह करते हैं।

इस अवस्था का सार यह है कि एक सुझाव के प्रभाव में आकर वे अपनी शक्ति खो देते हैं।

उनके कार्यों की आलोचना करते हुए, और इसलिए बिना सोचे-समझे, वे हर वह काम करते हैं जो उदाहरण, उपदेश या संकेत के माध्यम से उन्हें दिए गए सुझाव के अनुरूप होता है।

वैज्ञानिक सम्मोहन द्वारा सम्मोहित व्यक्तियों और राज्य सम्मोहन के प्रभाव में रहने वाले व्यक्तियों के बीच अंतर यह है कि पहले प्रकार के सम्मोहन में रहने वाले व्यक्तियों को एक काल्पनिक स्थिति का सुझाव अचानक एक व्यक्ति द्वारा बहुत ही संक्षिप्त रूप में दिया जाता है। थोड़े समय के अंतराल में, सम्मोहन की अवस्था हमें एक आकर्षक और आश्चर्यजनक रूप में दिखाई देती है, जबकि राज्य के प्रभाव से उत्पन्न काल्पनिक स्थिति धीरे-धीरे, थोड़ा-थोड़ा करके, बचपन से ही अगोचर रूप से, कभी-कभी वर्षों तक, या यहाँ तक कि पीढ़ियों तक, और केवल एक व्यक्ति में ही नहीं बल्कि पूरे समाज में उत्पन्न होती है।

समाज।

लेकिन," यह कहा जाएगा, "हर समय, हर समाज में, अधिकांश व्यक्ति – सभी बच्चे, बच्चों को जन्म देने और पालने-पोसने में लगी सभी महिलाएं, श्रमसाध्य आबादी का विशाल जनसमूह, जो निरंतर और थकाऊ शारीरिक श्रम करने के लिए बाध्य हैं, और वे सभी जो कमजोर चरित्र के हैं, प्रकृति, वे सभी लोग जो निकोटीन, शराब, अफीम के प्रभावों से बौद्धिक रूप से असामान्य रूप से कमजोर हो गए हैं,

या अन्य नशीले पदार्थों का सेवन करने वाले लोग हमेशा स्वतंत्र रूप से सोचने की क्षमता खो देते हैं, और या तो उच्च बौद्धिक स्तर वाले लोगों के अधीन होते हैं, या फिर पारिवारिक या सामाजिक दबाव में रहते हैं।
परंपराओं में, जिसे जनमत कहा जाता है, कुछ भी अस्वाभाविक या असंगत नहीं है।
अधीनता।"
और वास्तव में इसमें कुछ भी अस्वाभाविक नहीं है, और कम बौद्धिक क्षमता वाले पुरुषों की प्रवृत्ति
बुद्धि के उच्च स्तर पर मौजूद लोगों का अनुसरण करना एक अटल नियम है, और इसी के कारण मनुष्य
अल्पसंख्यक समुदाय सभी समाजों में और समान सिद्धांतों पर रह सकते हैं। अल्पसंख्यक समुदाय जानबूझकर तर्क के अनुरूप कुछ तर्कसंगत सिद्धांतों को अपनाता है, जबकि बहुसंख्यक समुदाय उन्हीं सिद्धांतों पर कार्य करता है।
यह अनजाने में होता है क्योंकि जनमत इसकी मांग करता है।
बुद्धिहीन लोगों द्वारा जनमत के प्रति इस प्रकार का समर्पण किसी अप्राकृतिकता को नहीं दर्शाता।
इस चरित्र को लेकर तब तक बहस चलती रहेगी जब तक जनमत दो भागों में विभाजित न हो जाए।
लेकिन कई बार ऐसा होता है कि कोई उच्च सत्य, जो पहले कुछ ही लोगों को प्रकट होता है, धीरे-धीरे व्यापक होता जाता है।
जब तक यह इतने लोगों में फैल न जाए कि निम्न स्तर पर आधारित पुरानी जनमत बदल जाए।
सत्यों का आधार डगमगाने लगता है और नया आधार उसकी जगह लेने के लिए तैयार है, लेकिन अभी तक मजबूती से स्थापित नहीं हुआ है।
यह संक्रमण का समय वसंत ऋतु जैसा है, जब विचारों की पुरानी व्यवस्था पूरी तरह से टूटी नहीं है और
नई बात अभी पूरी तरह से अपनी जगह नहीं बना पाई है। लोग नई सच्चाई की रोशनी में अपने कार्यों की आलोचना करने लगे हैं, लेकिन
इस बीच, व्यवहार में, जड़ता और परंपरा के कारण, वे उन सिद्धांतों का पालन करना जारी रखते हैं जो कभी तर्कसंगत चेतना के उच्चतम बिंदु का प्रतिनिधित्व करते थे, लेकिन अब इसके साथ घोर विरोधाभास में हैं।
तब पुरुष एक असामान्य, अनिश्चित स्थिति में होते हैं, और उन्हें नए आदर्श का पालन करने की आवश्यकता महसूस होती है।
और फिर भी उनमें पुरानी स्थापित परंपराओं को तोड़ने का साहस नहीं है।
टौला समूह के लोगों का ही नहीं, बल्कि हमारे समय के अधिकांश लोगों का, चाहे वे उच्च वर्ग के हों या निम्न वर्ग के, ईसाई धर्म की सच्चाई के प्रति यही दृष्टिकोण है।
शासक वर्ग के लोगों के पास लाभप्रद पदों पर बने रहने का अब कोई उचित औचित्य नहीं रह गया है।
वे उन पदों पर कब्जा कर लेते हैं, उन्हें बनाए रखने के लिए मजबूर हो जाते हैं, प्रेम करने की अपनी उच्च तर्कसंगत क्षमता को दबा देते हैं, और खुद को यह विश्वास दिलाते हैं कि उनके पद अपरिहार्य हैं। और निचले वर्गों के लोग, थक चुके हैं
निर्धारित उद्देश्य से विवश होकर परिश्रम और क्रूरता का शिकार होना, स्थायी धोखे में रहना, जानबूझकर अभ्यास किया जाना और
उच्च वर्गों द्वारा उन पर निरंतर अत्याचार किया जाता रहा।
केवल इसी तरह से हमारे जीवन में व्याप्त अद्भुत विरोधाभासों की व्याख्या की जा सकती है, और जिनसे हमारा जीवन भरा हुआ है।
9 सितंबर को मेरी मुलाकात जिस अभियान दल से हुई, उसने मुझे एक शानदार उदाहरण प्रस्तुत किया; अच्छा, शांतिपूर्ण
मेरे व्यक्तिगत रूप से परिचित पुरुष, निडर शांति के साथ सबसे क्रूर अपराध करने के लिए निकल पड़ते हैं,

ये अपराध संवेदनहीन और घिनौने हैं। यदि उनके पास अपनी अंतरात्मा को दबाने का कोई साधन न होता, तो उनमें से कोई भी इस तरह के जघन्य अपराध का सौवां हिस्सा भी करने में सक्षम न होता।

ऐसा नहीं है कि उनमें कोई अंतरात्मा नहीं है जो उन्हें ऐसा करने से रोकती हो, ठीक वैसे ही जैसे तीन या चार भी ऐसा करने से मना करते हैं। सौ साल पहले, जब लोग आदमियों को आग में जलाते और यातना देते थे, तब उनके अंदर एक अंतरात्मा होती थी जो ऐसा करने से रोकती थी; अंतरात्मा अभी भी मौजूद है, लेकिन सत्ता में बैठे लोगों ने उसे सुला दिया है।

मनोवैज्ञानिक इसे स्व-सुझाव कहते हैं; सैनिकों में, यह प्रत्यक्ष सचेत सम्मोहन द्वारा होता है।

उच्चतर वर्ग।

हालांकि वे सो रहे होते हैं, फिर भी अंतरात्मा मौजूद होती है, और सम्मोहन के बावजूद वह उनमें पहले से ही बोल रही होती है।

और यह जाग सकता है।

144

ये सभी पुरुष सम्मोहन के अधीन व्यक्ति जैसी स्थिति में हैं, जिन्हें कुछ ऐसा करने का आदेश दिया गया है जो उनके लिए हर उस चीज के विपरीत है जिसे वे अच्छा और तर्कसंगत मानते हैं, जैसे कि अपनी माँ या अपने बच्चे की हत्या करना।

सम्मोहित व्यक्ति स्वयं को सुझाव का पालन करने के लिए बाध्य महसूस करता है – उसे लगता है कि वह रुक नहीं सकता – लेकिन जैसे-जैसे वह घटना के समय और स्थान के करीब पहुँचता है, वैसे-वैसे उसकी सुप्त अंतरात्मा जागने लगती है, विरोध करने लगती है और जागृत होने का प्रयास करने लगती है। और कोई भी पहले से नहीं कह सकता कि वह सुझाव को अमल में लाएगा या नहीं।

या नहीं – किसकी जीत होगी, तर्कसंगत अंतरात्मा की या अतार्किक सुझाव की? यह सब

यह उनकी सापेक्षिक शक्ति पर निर्भर करता है।

टौला ट्रेन में सवार पुरुषों के साथ और सामान्य तौर पर ऐसे कृत्यों को अंजाम देने वाले हर व्यक्ति के साथ यही स्थिति है।

हमारे समय में राज्य द्वारा की जाने वाली हिंसा।

एक समय ऐसा था जब हत्या और हिंसा के उद्देश्य से निकले पुरुष, एक

उदाहरण के लिए, वे तब तक वापस नहीं लौटे जब तक उन्होंने अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर लिया, और फिर, बिना किसी संदेह या संकोच के, शांतिपूर्वक लोगों को कोड़े मारकर मौत के घाट उतारने के बाद, वे घर लौट आए और अपने बच्चों को दुलार कर हँसे।

वे अपना मनोरंजन करते थे और पारिवारिक जीवन के शांतिपूर्ण सुखों का आनंद लेते थे। उन दिनों यह बात कभी दिमाग में नहीं आई।

इन अपराधों से लाभ कमाने वाले जमींदारों और धनी व्यक्तियों को यह विश्वास नहीं था कि उनके विशेषाधिकारों का इन अत्याचारों से कोई सीधा संबंध है। लेकिन अब ऐसा नहीं है। लोग अब यह जानते हैं, या इसके करीब हैं।

वे जानते हैं कि वे क्या कर रहे हैं और किस उद्देश्य से कर रहे हैं। वे अपनी आँखें बंद कर सकते हैं और खुद को मजबूर कर सकते हैं।

अंतरात्मा को शांत रखना होगा, लेकिन जब तक उनकी आंखें खुल जाएंगी और उनकी अंतरात्मा फिर से जागृत हो जाएगी, तब तक उन सभी को - चाहे वे इन अपराधों को अंजाम देने वाले हों या इनसे लाभ उठाने वाले - इनका महत्व समझना होगा।

कभी-कभी उन्हें अपराध होने के बाद ही इसका एहसास होता है, कभी-कभी उन्हें अपराध होने से ठीक पहले इसका एहसास होता है।

इसके अंजाम देने वाले। इस प्रकार, निजनी-नोवगोरोड, सारातोव में हाल ही में हुई हिंसा की घटनाओं के लिए जिम्मेदार लोग।

ओरेल और युज़ोव्स्की कारखाने को इन अपराधों के अंजाम के बाद ही इनकी अहमियत का एहसास हुआ, और अब इन अपराधों का आदेश देने वाले और इन्हें अंजाम देने वाले लोग जनता और अपने सामने शर्मिंदा हैं।

अंतरात्मा। मैंने उन सैनिकों से बात की है जिन्होंने इन अपराधों में भाग लिया था। वे हमेशा सावधानीपूर्वक अपनी अंतरात्मा की ओर मुड़ जाते थे।

बातचीत विषय से भटक गई, और जब उन्होंने इसके बारे में बात की तो वे भयभीत और अचंभित थे। ऐसे मामले भी होते हैं जब अपराध करने से ठीक पहले व्यक्ति को होश आ जाता है। इस प्रकार मैं

उस सार्जेंट-मेजर के मामले के बारे में जानें जिसे दमन के दौरान दो किसानों ने पीटा था।

उसने अव्यवस्था के बारे में शिकायत दर्ज कराई थी। अगले दिन, अन्य किसानों पर हुए अत्याचारों को देखकर, उसने अपनी टुकड़ी के कमांडर से विनती की कि वह उसकी शिकायत को फाड़ दे और उन दोनों को छोड़ दे।

किसान। मुझे ऐसे मामले पता हैं जब सैनिकों ने गोली चलाने का आदेश मिलने पर भी आज्ञा मानने से इनकार कर दिया, और मुझे ऐसे कई मामले पता हैं।

उन अधिकारियों के बारे में जिन्होंने यातना और हत्या के अभियानों का नेतृत्व करने से इनकार कर दिया है। परिणामस्वरूप, पुरुषों

कभी-कभी वे सुझाए गए अपराध को अंजाम देने से बहुत पहले ही होश में आ जाते हैं, कभी-कभी अपराध करने से ठीक पहले, और कभी-कभी उसके बाद ही।

टौला ट्रेन में यात्रा कर रहे लोग अपने साथियों को मारने और घायल करने के उद्देश्य से जा रहे थे।

प्राणी, लेकिन कोई नहीं बता सकता था कि वे अपना उद्देश्य पूरा करेंगे या नहीं। इस मामले में उनकी ज़िम्मेदारी प्रत्येक के लिए कितनी भी अस्पष्ट क्यों न हो, और उन सभी में यह विचार कितना भी मज़बूत क्यों न बैठा हो कि वे

पुरुष नहीं, बल्कि राज्यपाल, अधिकारी, पदाधिकारी और सैनिक, और ऐसे प्राणी हर मानवीय दायित्व का उल्लंघन कर सकते हैं।

जैसे-जैसे वे अपने कर्तव्य के प्रति सजग होते जाते हैं, वैसे-वैसे उनके मन में इसके उचित होने को लेकर संदेह बढ़ता जाता है, और यह संदेह उस समय अपने चरम पर पहुंच जाएगा जब इसे अंजाम देने का क्षण आ जाएगा।

अपने आसपास के तमाम भयावह माहौल के बावजूद, राज्यपाल हिचकिचाने से खुद को रोक नहीं पाता जब

अंतिम निर्णायक आदेश देने का समय आ गया है। वह जानता है कि ओरेल के गवर्नर की कार्रवाई

इस वजह से उन्हें सर्वोपरि लोगों की नाराजगी का सामना करना पड़ा है, और स्वयं भी, अपने सामाजिक परिवेश की जनमत से प्रभावित होकर, एक से अधिक बार उनके प्रति अपनी असहमति व्यक्त कर चुके हैं।

जानता है कि अभियोजक, जिसे आना चाहिए था, ने इस मामले से पूरी तरह से इनकार कर दिया।

क्योंकि वह इसे शर्मनाक मानता था। वह यह भी जानता है कि सरकार में किसी भी दिन बदलाव हो सकता है, और जो कल उन्नति का कारण था, वही कल अपमान का कारण बन सकता है।

कल। और वह जानता है कि प्रेस, अगर रूस में नहीं तो कम से कम विदेशों में तो है ही, जो इसकी रिपोर्ट कर सकता है।

इस मामले से उसे हमेशा के लिए बदनामी का सामना करना पड़ेगा। वह पहले से ही जनमत में आए बदलाव से अवगत है, जो उस चीज़ की निंदा करता है जिसे पहले कर्तव्य माना जाता था। इसके अलावा, वह पूरी तरह से आश्वस्त नहीं हो सकता कि उसके सैनिक इस स्थिति में उसका साथ देंगे।

अंतिम क्षण में उसकी बात मानो। वह दुविधा में है, और कोई पहले से नहीं कह सकता कि वह क्या करेगा।

145

उसके साथ आए सभी अधिकारी और पदाधिकारी कमोबेश एक जैसी भावनाओं का अनुभव करते हैं। अपने मन की गहराई में वे सभी जानते हैं कि वे जो कर रहे हैं वह शर्मनाक है, कि ऐसा करना

इसमें हिस्सा लेना उन लोगों की नजरों में बदनामी और कलंक है जिनकी राय उनके लिए मायने रखती है। वे जानते हैं

कि निहत्थों की हत्या और यातना देने के बाद, उनमें से प्रत्येक को अपनी मंगेतर या प्रेमिका का सामना करने में शर्म आएगी। और इसके अलावा, राज्यपाल की तरह, उन्हें भी संदेह है कि सैनिकों के...

आदेशों का पालन सुनिश्चित किया जा सकता है। यह उस आत्मविश्वासपूर्ण रवैये से कितना विरोधाभास है जो वे सभी दिखाते हैं।

वे स्टेशन और प्लेटफार्म पर इठलाते हुए घूम रहे थे! भीतर से वे न केवल पीड़ा में थे बल्कि अनिश्चितता की स्थिति में भी थे। दरअसल, उन्होंने यह साहसी और संयमित व्यवहार केवल अपने भीतर की दुविधा को छिपाने के लिए ही अपनाया था।

और जैसे-जैसे वे घटनास्थल के करीब पहुंचते गए, यह भावना और भी तीव्र होती गई।

और यह भले ही अगोचर था, और ऐसा कहना भले ही अजीब लगे, लेकिन सैनिकों का वह पूरा समूह, जो

वे इतने विनम्र प्रतीत होते थे, लेकिन उनकी स्थिति बिल्कुल एक जैसी थी।

ये पुराने जमाने के सैनिक नहीं हैं, जिन्होंने उद्योग का प्राकृतिक जीवन त्यागकर अपना जीवन समर्पित कर दिया था।

रोमन सैनिकों या योद्धाओं की तरह, उनका पूरा जीवन व्यभिचार, लूटपाट और हत्या में व्यतीत होता था।

तीस वर्षीय युद्ध, या फिर हाल के समय के वे सैनिक जिन्होंने पच्चीस वर्षों तक सेना में सेवा की। उनमें से अधिकतर हाल ही में अपने परिवारों से बिछड़े हैं, और वे स्मृतियों से भरे हुए हैं।

वे अपने पीछे एक अच्छा, तर्कसंगत और प्राकृतिक जीवन छोड़ आए हैं।

ये सभी लड़के, जिनमें से अधिकतर किसान हैं, जानते हैं कि वे किस काम के लिए आए हैं; वे जानते हैं कि जमींदार हमेशा उनके भाई किसानों पर अत्याचार करते हैं, और इसलिए यह बहुत संभव है

यहां भी वही बात है। इसके अलावा, उनमें से अधिकांश अब पढ़ सकते हैं, और वे जो किताबें पढ़ते हैं वे सभी नहीं हैं।

जैसे कि सैन्य जीवन की प्रशंसा करने वाले; कुछ लोग इसकी अनैतिकता की ओर इशारा करते हैं। इनमें अक्सर स्वतंत्र लोग शामिल होते हैं।

चाहे वे विचारशील साथी हों – जिन्होंने स्वेच्छा से भर्ती कराया हो – या उदार विचारों वाले युवा अधिकारी हों, उनके निःशर्त वैधता और गौरव के संबंध में संदेह का पहला बीज पहले ही बोया जा चुका है।

पेशा।

यह सच है कि वे सभी सदियों से विकसित उस भयानक, कुशल शिक्षा से गुज़रे हैं, जो मनुष्य में पहल करने की सारी क्षमता को खत्म कर देती है, और उन्हें यांत्रिक आज्ञाकारिता के लिए इस तरह प्रशिक्षित किया जाता है कि

“गोली चलाओ! पूरी पंक्ति! गोली चलाओ!” और इसी तरह के आदेश के शब्द सुनते ही, उनकी बंदूकें अपने आप उठ उठेंगी और

सामान्य गतिविधियाँ दोहराई जाएँगी। लेकिन अब "गोली चलाओ!" का मतलब मनोरंजन के लिए रेत पर गोली चलाना नहीं है, बल्कि इसका मतलब है अपने टूटे-फूटे, शोषित पिताओं और भाइयों पर गोली चलाना जिन्हें वे वहाँ देखते हैं।

भीड़ में महिलाएं और बच्चे चिल्ला रहे थे और अपने हाथ लहरा रहे थे। ये रहे वे - एक अपने साथ
कम दाढ़ी, पैबंद लगा कोट और सरकंडे की बुनी हुई जूतियाँ, बिल्कुल वैसे ही जैसे पिता कज़ान में घर पर रह गए थे।
रियाज़ान प्रांत; एक सफ़ेद दाढ़ी वाला, झुकी हुई कमर वाला, बूढ़े दादाजी की तरह लाठी के सहारे खड़ा; एक नौजवान, बूट और लाल कमीज़ पहने, ठीक वैसा ही जैसा वह एक साल पहले था - वह सैनिक जिसे गोली चलानी है
उसके ऊपर। वहाँ भी, सरकंडे के जूते और पन्योवा पहने एक महिला थी, बिल्कुल वैसी ही जैसी घर पर छूटी हुई माँ थी।
क्या ऐसा संभव है कि उन्हें उन पर गोली चलानी ही पड़े? और कोई नहीं जानता कि आखिरी क्षण में हर सैनिक क्या करेगा। एक छोटा सा शब्द, एक छोटा सा इशारा भी उन्हें रोकने के लिए काफी होगा।
अंतिम क्षण में वे सभी स्वयं को एक सम्मोहित व्यक्ति की स्थिति में पाएंगे, जिसके लिए यह स्थिति उत्पन्न हो चुकी है।
एक व्यक्ति को लकड़ी काटने का सुझाव दिया गया है। जब वह उस स्थान पर पहुँचता है जिसे लकड़ी बताया गया है और कुल्हाड़ी पहले से ही वार करने के लिए उठाई हुई है, तो वह देखता है कि वह लकड़ी नहीं बल्कि उसका सोता हुआ भाई है। वह वह कार्य कर सकता है जो
उसे यह सुझाव दिया गया है, और हो सकता है कि वह इसे करते समय ही होश में आ जाए।
या तो ये सभी लोग समय के साथ अपनी गलती सुधार लेंगे या फिर वे अंत तक जीते रहेंगे।
यदि वे होश में नहीं आते, तो ओरेल की तरह सबसे भयानक अपराध होगा, और फिर जिस सम्मोहनकारी प्रभाव के तहत वे कार्य करते हैं, वह अन्य सभी लोगों में भी मजबूत हो जाएगा। यदि वे होश में आ जाते हैं
न केवल वे स्वयं इस भयानक अपराध को अंजाम नहीं देंगे, बल्कि इसके बारे में सुनकर कई लोग भी अपना रुख बदल लेंगे।
इस मामले के बाद वे उस सम्मोहक प्रभाव से मुक्त हो जाएंगे जिसमें वे जकड़े हुए थे, या कम से कम उससे मुक्त होने के करीब पहुंच जाएंगे।
भले ही कुछ लोग ही अपनी गलती का एहसास करें और साहसपूर्वक दूसरों को इस तरह के सभी बुरे कामों के बारे में बताएं।
अगर अपराध होता है, तो इन कुछ लोगों का प्रभाव दूसरों को भी इस नियंत्रणकारी सुझाव से मुक्त होने के लिए प्रेरित कर सकता है, और इस तरह वह अत्याचार नहीं होगा।

इससे भी बढ़कर, अगर कुछ लोग, यहाँ तक कि वे भी जो इस मामले में सीधे तौर पर शामिल नहीं हैं बल्कि केवल इसकी तैयारियों में मौजूद हैं, या जिन्होंने अतीत में इस तरह की घटनाओं के बारे में सुना है, उदासीन न रहें।
लेकिन वे ऐसे अपराधों के प्रति अपनी घृणा को उन लोगों के सामने स्पष्ट और निडरता से व्यक्त करते हैं जिन्हें उन्हें अंजाम देना है, और उन्हें इन कृत्यों की निरर्थकता, क्रूरता और दुष्टता के बारे में बताएं, केवल यही परिणाम देगा।
हमारे सामने जो मामला था, उसमें यही हुआ था। कुछ लोगों के लिए, जिनमें से कुछ व्यक्तिगत रूप से शामिल थे, यह काफी था।
इस मामले से जुड़े लोगों और अन्य बाहरी लोगों ने अन्यत्र हुई कोड़ेबाजी की घटनाओं के प्रति अपनी असहमति और उन्हें अंजाम देने वालों के प्रति अपनी घृणा और तिरस्कार व्यक्त किया।
टौला मामले में कुछ व्यक्तियों द्वारा इसमें किसी भी प्रकार की भागीदारी के प्रति अपनी अरुचि व्यक्त करना; एक महिला के लिए
ट्रेन से यात्रा कर रहे लोगों और स्टेशन पर मौजूद कुछ अन्य राहगीरों ने उन लोगों के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करने के लिए, जिन्होंने गठन किया था

अपने कार्यों के प्रति उनकी घृणा को व्यक्त करना; एक कंपनी के कमांडरों में से एक, जिसे व्यवस्था बहाल करने के लिए सैनिकों की मांग की गई थी, ने जवाब दिया कि सैनिकों को कसाई नहीं होना चाहिए - और धन्यवाद
इन सम्मोहित पुरुषों पर पड़ने वाले इन और कुछ अन्य प्रतीत होने वाले महत्वहीन प्रभावों के कारण,
मामला पूरी तरह से अलग मोड़ ले गया, और जब सैनिक उस स्थान पर पहुंचे, तो उन्होंने कोई दंड नहीं दिया, बल्कि जंगल को काटकर उसे भूस्वामी को सौंपकर ही संतोष कर लिया।
यदि कुछ लोगों को इस बात का स्पष्ट ज्ञान न होता कि वे जो कर रहे हैं वह गलत है, और
परिणामस्वरूप, यदि वे एक दूसरे को उस दिशा में प्रभावित करते, तो ओरेल में जो हुआ, वही टोला में भी होता। यदि यह चेतना और भी प्रबल होती, और परिणामस्वरूप प्रभाव और भी अधिक होता।
पहले की तुलना में, यह संभव था कि राज्यपाल अपने सैनिकों के साथ वहां जाने का साहस भी न करता।
जंगल काटकर उसे ज़मींदार को दे दो। अगर यह चेतना और भी प्रबल होती, तो शायद ऐसा हो पाता।
ऐसा भी हो सकता था कि राज्यपाल ने घटनास्थल पर जाने का साहस ही न किया होता; यहाँ तक कि सरकारी मंत्री ने भी यह निर्णय लेने का साहस न किया होता और ज़ार ने इसकी पुष्टि न की होती।
इसलिए, सब कुछ प्रत्येक व्यक्ति में ईसाई सत्य की चेतना की शक्ति पर निर्भर करता है।
एक व्यक्ति।
और इसलिए, कोई यह सोच सकता था कि आज के उन सभी लोगों के प्रयास जो दावा करते हैं कि
मानवता के कल्याण के लिए काम करने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को इस चेतना को मजबूत करने की दिशा में निर्देशित किया जाना चाहिए था।
स्वयं में और दूसरों में ईसाई सत्य का प्रसार करना।
लेकिन, हैरानी की बात यह है कि ठीक वही लोग हैं जो स्थिति में सुधार के लिए सबसे अधिक चिंता व्यक्त करते हैं।
मानव जीवन को बचाने के लिए, और उन्हें जनमत के नेताओं के रूप में माना जाता है, जो यह दावा करते हैं कि ऐसा करने की कोई आवश्यकता नहीं है।
और पुरुषों की स्थिति में सुधार के लिए अन्य अधिक प्रभावी साधन भी मौजूद हैं। वे इस बात की पुष्टि करते हैं कि
मानव जीवन का सुधार व्यक्तिगत प्रयासों से सत्य को पहचानने और प्रचारित करने से नहीं, बल्कि जीवन की सामान्य परिस्थितियों में क्रमिक परिवर्तन से होता है, और इसलिए
व्यक्तियों के प्रयासों को बाहरी परिस्थितियों में धीरे-धीरे बदलाव लाने की दिशा में निर्देशित किया जाना चाहिए।
बेहतर। उनका मानना है कि किसी व्यक्ति द्वारा मौजूदा व्यवस्था के विपरीत किसी सत्य की वकालत करना न केवल व्यर्थ है बल्कि हानिकारक भी है, क्योंकि इससे सरकार की ओर से दंडात्मक उपाय किए जाने की संभावना बढ़ जाती है।
अधिकारियों द्वारा इन व्यक्तियों को समाज के हित में कोई भी कार्य जारी रखने से प्रतिबंधित किया जा रहा है। इसके अनुसार
इस सिद्धांत के अनुसार, मानव जीवन में होने वाले सभी परिवर्तन ठीक उन्हीं नियमों के कारण होते हैं जो पशुओं के जीवन में लागू होते हैं।
परिणामस्वरूप, इस सिद्धांत के अनुसार, मूसा और अन्य धर्मों के सभी संस्थापकों को धर्म के संस्थापकों के रूप में मान्यता प्राप्त है।
कन्फ्यूशियस, लाओ-त्से, बुद्ध, ईसा मसीह और अन्य पैगंबरों ने अपने सिद्धांतों का प्रचार किया और उनके अनुयायियों को प्रेरित किया।

उन्होंने इन्हें इसलिए स्वीकार किया, क्योंकि वे सत्य से प्रेम नहीं करते थे, बल्कि इसलिए कि जिन लोगों के बीच ये धर्म उत्पन्न हुए, उनकी राजनीतिक, सामाजिक और सबसे बढ़कर आर्थिक परिस्थितियाँ इनके उद्भव के लिए अनुकूल थीं।
विकास।
और इसलिए, इस सिद्धांत के अनुसार, समाज की सेवा करने और मानवता की स्थिति में सुधार लाने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति के मुख्य प्रयास सत्य के स्पष्टीकरण और प्रचार की ओर निर्देशित नहीं होने चाहिए।
लेकिन बाहरी राजनीतिक, सामाजिक और सबसे बढ़कर आर्थिक स्थितियों में सुधार के लिए। और
इन स्थितियों में संशोधन आंशिक रूप से सरकार की सेवा करने और उसमें उदार और प्रगतिशील सिद्धांतों को लागू करने के माध्यम से, और आंशिक रूप से उद्योग के विकास को बढ़ावा देने और प्रचार-प्रसार के माध्यम से किया जाता है।
समाजवादी विचारों के प्रसार से, और सबसे बढ़कर विज्ञान के प्रसार से। इस सिद्धांत के अनुसार, इसका कोई महत्व नहीं है।

147

इसका परिणाम यह होगा कि आप अपने सामने प्रकट हुए सत्य को स्वीकार करते हैं और इसलिए उसे अपने जीवन में साकार करते हैं, या कम से कम सत्य के विरुद्ध कार्य करने से परहेज करते हैं, जैसे कि सरकार की सेवा करना और
जब आप इसे हानिकारक मानते हैं तो इसकी सत्ता को मजबूत करना, जब आप पूंजीवादी व्यवस्था से लाभ उठाते हैं तो ऐसा करना।
इसे गलत मानना, उन विभिन्न समारोहों के प्रति श्रद्धा दिखाना जिन्हें आप अपमानजनक अंधविश्वास मानते हैं, उस कानून का समर्थन करना जिसे आप त्रुटि पर आधारित मानते हैं, सैनिक के रूप में सेवा करना,
शपथ लेना, झूठ बोलना और सामान्यतः स्वयं को नीचा दिखाना। इन सब से परहेज करना व्यर्थ है; जो मायने रखता है वह क्या है?
उपयोग का अर्थ जीवन के मौजूदा स्वरूपों को बदलना नहीं है, बल्कि अपनी मान्यताओं के विरुद्ध उनके प्रति समर्पण करना, मौजूदा संस्थानों में उदारवाद का परिचय देना, वाणिज्य को बढ़ावा देना और समाजवाद का प्रचार करना है।
और जिसे विज्ञान कहा जाता है उसकी विजय और शिक्षा का प्रसार। इस सिद्धांत के अनुसार एक
वह भूस्वामी, व्यापारी, निर्माता, न्यायाधीश, सरकारी वेतनभोगी अधिकारी, सिपाही या सैनिक बना रह सकता है।
और फिर भी न केवल एक मानवतावादी व्यक्ति बनें, बल्कि एक समाजवादी और क्रांतिकारी भी बनें।
पाखंड, जिसका पहले केवल मूल पाप और मोचन के सिद्धांत में धार्मिक आधार था,
और चर्च ने हमारे समय में एक नया वैज्ञानिक आधार प्राप्त कर लिया है और परिणामस्वरूप उसने अपने जाल में सभी को फंसा लिया है।
वे लोग जो विकास के इतने उच्च स्तर पर पहुँच चुके थे कि अब उन्हें धार्मिक पाखंड में सहारा नहीं मिल सकता था। परिणामस्वरूप, जबकि पूर्वकाल में चर्च के धर्म का पालन करने वाला व्यक्ति भाग ले सकता था
राज्य के सभी अपराधों को अंजाम देना, उनसे लाभ उठाना और फिर भी स्वयं को पाप के किसी भी दाग से मुक्त मानना,
जब तक वह अपने धर्म के बाहरी अनुष्ठानों का पालन करता रहा, आजकल चर्च के ईसाई धर्म में विश्वास न करने वाले सभी लोग विज्ञान में इसी प्रकार के सुस्थापित और अकाट्य कारण पाते हैं।
अपने कुकर्मों में सहभागिता के बावजूद वे स्वयं को निर्दोष और यहाँ तक कि अत्यंत नैतिक भी मानते हैं।
सरकार और उनसे प्राप्त होने वाले लाभ।

एक धनी जमींदार – न केवल रूस में, बल्कि फ्रांस, इंग्लैंड, जर्मनी या अमेरिका में भी – अपनी जमीन पर रहने वाले लोगों से वसूले गए किराए पर जीवन यापन करता है, और इन आम तौर पर गरीब लोगों को लूटता है।

वह उनसे जो कुछ भी प्राप्त कर सकता है। भूमि में इस व्यक्ति का संपत्ति का अधिकार इस तथ्य पर आधारित है कि हर संभव प्रयास पर उत्पीड़ित लोगों के हिस्से को, उनकी सहमति के बिना, उस भूमि का उपयोग करने के लिए जिसे वे अपना मानते हैं, सैनिकों को बुलाकर उन्हें दंडित और हत्या का शिकार बनाया जाता है। किसी ने सोचा होगा कि यह स्पष्ट था कि

इस प्रकार जीवन जीने वाला मनुष्य दुष्ट, अहंकारी प्राणी था और वह स्वयं को ईसाई नहीं मान सकता था।

या फिर एक उदारवादी। यह स्पष्ट माना जा सकता था कि यदि ऐसा व्यक्ति ईसाई धर्म या उदारवाद के करीब आना चाहता है, तो उसे सबसे पहले लूटपाट और अत्याचार के कृत्यों के माध्यम से लोगों को बर्बाद करना बंद करना होगा।

भूमि पर अपने दावे के समर्थन में राज्य हिंसा। और ऐसा ही होता अगर तर्क के कारण ऐसा न होता।

पाखंड, जो यह तर्क देता है कि धार्मिक दृष्टिकोण से भूमि का स्वामित्व या गैर-स्वामित्व

मोक्ष के लिए इसका कोई परिणाम नहीं है, और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से, भूमि का स्वामित्व त्यागना एक व्यर्थ व्यक्तिगत त्याग है, और इस तरह से मानव जाति का कल्याण नहीं होता है, बल्कि इससे एक

बाह्य रूपों में क्रमिक परिवर्तन। और इस प्रकार हम इस व्यक्ति को देखते हैं, बिना किसी मानसिक परेशानी के।

मुझे संदेह है कि लोग उसकी ईमानदारी पर विश्वास करेंगे, चाहे वह कृषि प्रदर्शनी का आयोजन करे, या संयम समिति बनाए, या अपनी पत्नी या बच्चों के माध्यम से तीन बूढ़ी महिलाओं को कुछ सूप और मोज़े भेजे, और वह भी साहसपूर्वक।

अपने परिवार के साथ, ड्राइंग रूम में, समितियों में और प्रेस में, सुसमाचार या मानवतावादी विचारधारा का समर्थन करते हुए।

आम तौर पर अपने पड़ोसी के प्रति और विशेष रूप से कृषि श्रमिक आबादी के प्रति प्रेम का सिद्धांत, जिसका वह लगातार शोषण और उत्पीड़न कर रहा है। और अन्य लोग जो उसी स्थिति में हैं।

उस पर विश्वास करो, उसकी प्रशंसा करो और उससे गंभीरतापूर्वक स्थिति में सुधार लाने के उपायों पर चर्चा करो।

श्रमिक वर्ग, जिनके शोषण पर उनका पूरा जीवन टिका हुआ है, हर संभव तरीके अपना रहा है।

इसके अलावा, एक ऐसा उपाय है जिसके बिना उनकी स्थिति में कोई सुधार असंभव है, अर्थात् उनसे उनकी जीविका के लिए आवश्यक भूमि न लेना। (इस पाखंड का एक ज्वलंत उदाहरण)

पिछले साल रूसी जमींदारों द्वारा दिखाई गई चिंता और अकाल से निपटने के उनके प्रयास ही सराहनीय थे।

उन्होंने ही यह सब किया था और इससे उन्हें लाभ हुआ, वे न केवल रोटी को उच्चतम कीमत पर बेचते थे, बल्कि ठंड से ठिठुर रहे किसानों को ईंधन के रूप में आलू की बालियाँ भी पाँच रूबल प्रति डेसियाटिन 17 की दर से बेचते थे।

या फिर एक ऐसे व्यापारी को लें जिसका पूरा व्यापार – वास्तव में सभी व्यापारों की तरह – छल-कपट की एक श्रृंखला पर आधारित है, जिसके माध्यम से, वह दूसरों की अज्ञानता या आवश्यकता का लाभ उठाकर, वस्तुओं को उनके मूल्य से कम पर खरीदता है और बेचता है।

17 लगभग 2.8 एकड़।

उन्हें उनकी कीमत से अधिक दाम पर फिर से बेच देना चाहिए। यह बात स्पष्ट ही थी कि जिस व्यक्ति का पूरा व्यवसाय उसी भाषा में धोखाधड़ी पर आधारित हो, यदि वह अन्य परिस्थितियों में किया जाए, तो उसे ऐसा करना चाहिए।

उसे अपनी स्थिति पर शर्म आनी चाहिए, और जब तक वह व्यापारी बना रहता है, तब तक वह किसी भी तरह से खुद को एक व्यापारी के रूप में पेश नहीं कर सकता।

ईसाई या उदारवादी।

लेकिन पाखंड की कुतर्क यह तर्क देती है कि व्यापारी बिना कुछ दिए भी एक गुणी व्यक्ति होने का दिखावा कर सकता है।

उसके हानिकारक कार्यों को रोकने के लिए; एक धार्मिक व्यक्ति को केवल आस्था की आवश्यकता होती है और एक उदार व्यक्ति को केवल बाह्य परिस्थितियों में संशोधन को बढ़ावा देना – उद्योग की प्रगति। और इसलिए हम व्यापारी को देखते हैं (जो अक्सर इससे आगे बढ़कर प्रत्यक्ष बेईमानी के कृत्य करता है, मिलावटी माल बेचता है, झूठे तरीके अपनाता है)।

वजन और माप, और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक उत्पादों, जैसे शराब और अफीम का व्यापार) बेखौफ होकर

स्वयं के बारे में और दूसरों द्वारा देखे जाने के बारे में, जब तक वह अपने सहयोगियों को सीधे तौर पर धोखा नहीं देता, तब तक वह सही है।

व्यापार को ईमानदारी और सदाचार के प्रतीक के रूप में देखा जाता है। और यदि वह अपनी चोरी की संपत्ति का हजारवां हिस्सा भी किसी सार्वजनिक संस्था, अस्पताल, संग्रहालय या विद्यालय पर खर्च करता है, तो उसे समाज का परोपकारी भी माना जाता है।

जिन लोगों के शोषण और भ्रष्टाचार पर उसकी पूरी समृद्धि टिकी हुई है। यदि वह

यदि वह व्यक्ति अपने अवैध रूप से अर्जित धन का एक हिस्सा चर्च और गरीबों पर खर्च करता है, तो वह एक अनुकरणीय ईसाई है।

एक निर्माता वह व्यक्ति होता है जिसकी पूरी आय श्रमिकों से निकाले गए मूल्य से प्राप्त होती है, और

जिसका पूरा व्यवसाय जबरन, अप्राकृतिक श्रम पर आधारित है, जो पुरुषों की पूरी पीढ़ियों को थका देता है। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यदि यह व्यक्ति किसी भी ईसाई या उदारवादी सिद्धांतों का पालन करता है, तो उसे सबसे पहले त्याग करना होगा।

अपने स्वार्थ के लिए वह मानव जीवन को बर्बाद कर रहा है। लेकिन मौजूदा सिद्धांत के अनुसार वह उद्योग को बढ़ावा दे रहा है, और वह

उसे अपना लक्ष्य नहीं छोड़ना चाहिए। ऐसा करना समाज के लिए हानिकारक होगा। और इसलिए हम यह देखते हैं।

वह व्यक्ति, हजारों लोगों का क्रूर गुलाम मालिक, अपने लिए परिश्रम करते-करते थक चुके मजदूरों के लिए दो गज के छोटे-छोटे बगीचों वाले भिक्षागृह, एक बैंक, एक गरीबखाना और एक अस्पताल बनवाता है।

मुझे पूरा विश्वास है कि उसने इस प्रकार सभी मानव जीवन के नैतिक और शारीरिक पापों का पर्याप्त प्रायश्चित कर दिया है।

उसके कारण सब कुछ बर्बाद हो गया – और वह शांति से अपना कारोबार चला रहा है, उस पर गर्व कर रहा है।

सरकार द्वारा नियुक्त कोई भी नागरिक, धार्मिक या सैन्य अधिकारी, जो राज्य की सेवा अहंकार से करता है, या

जैसा कि अक्सर होता है, केवल थके-हारे और परिश्रमी श्रमिकों से जबरन वसूले गए वेतन के लिए ही ऐसा किया जाता है।

वर्ग (सभी कर, चाहे चाहे किसी भी प्रकार से बढ़ाए गए हों, हमेशा श्रम पर ही पड़ते हैं), यदि वह, जैसा कि बहुत कम ही होता है, सामान्य तरीके से सीधे सरकार को लूटता नहीं है, तो वह स्वयं को और अपने साथियों द्वारा एक

समाज का सबसे उपयोगी और गुणी सदस्य।

एक न्यायाधीश या लोक अभियोजक जानता है कि उसके फैसले या उसके अभियोजन के माध्यम से सैकड़ों या

हजारों गरीब अभागे लोगों को एक ही पल में उनके परिवारों से अलग कर दिया जाता है और जेल में डाल दिया जाता है, जहाँ वे अपना मानसिक संतुलन खो सकते हैं, टूटे हुए कांच के टुकड़ों से आत्महत्या कर सकते हैं या भूख से मर सकते हैं; वह जानता है कि
उनकी पत्नियां, माताएं और बच्चे हैं, जिनसे बिछड़ने के कारण वे अपमानित और दुखी हैं।
वे व्यर्थ ही उनके लिए क्षमा या सजा में कुछ कमी की भीख मांग रहे हैं, और यह न्यायाधीश या यह अभियोक्ता अपने पाखंड में इतना कठोर है कि वह और उसके साथी, उसकी पत्नी और उसका पूरा परिवार
मुझे पूरा विश्वास है कि वह एक अत्यंत अनुकरणीय व्यक्ति हो सकता है। पाखंड के तत्वमीमांसा के अनुसार यह है
उसका कहना था कि वह जनहित का काम कर रहा है। और यह आदमी, जिसने सैकड़ों-हजारों लोगों को बर्बाद कर दिया है, जो उसकी हरकतों से उसे कोसते हैं और हताशा में डूब जाते हैं, प्रार्थना सभा में जाता है, चेहरे पर दयालुता की चमकती मुस्कान लिए।
अपने शांत चेहरे पर, अच्छाई और ईश्वर में पूर्ण विश्वास रखते हुए, वह सुसमाचार सुनता है, अपने बच्चों को दुलारता है।
वह उन्हें नैतिक सिद्धांतों का उपदेश देता है और काल्पनिक कष्टों से विचलित हो जाता है।
ये सभी पुरुष और उन पर निर्भर रहने वाले लोग, उनकी पत्नियाँ, शिक्षक, बच्चे, रसोइया, अभिनेता, जॉकी इत्यादि, उस रक्त पर जीवित हैं जो किसी न किसी माध्यम से, रक्त चूसने वालों के एक समूह के द्वारा प्राप्त किया जाता है।
दूसरा वर्ग श्रमिक वर्ग से आता है, और उनकी रोजमर्रा की खुशियों की कीमत सैकड़ों या हजारों डॉलर होती है।
श्रम के दिन। वे इन मजदूरों और उनके बच्चों, उनके बूढ़ों, उनकी पत्नियों और उनके बीमारों के कष्ट और अभाव देखते हैं; वे इस संगठित व्यवस्था का विरोध करने वालों को दी जाने वाली सजाओं को जानते हैं।
लूटपाट जारी है, और अपनी विलासिता को कम करने या छिपाने के बजाय, वे इसे इन लोगों के सामने बेशर्मी से प्रदर्शित करते हैं।
उत्पीड़ित मजदूर जो उनसे नफरत करते हैं, मानो जानबूझकर अपने उद्यानों और महलों, रंगमंचों, शिकार और दौड़ के वैभव से उन्हें उकसा रहे हों।
साथ ही वे खुद को और
अन्य लोग कहते हैं कि वे सभी इन श्रमिक वर्गों के कल्याण के बारे में बहुत चिंतित हैं, जिनके साथ उन्होंने काम किया है।

हमेशा उनके पैरों तले रौंदा जाता है, और रविवार को, शानदार वस्त्र पहनकर, वे भव्य गाड़ियों में बैठकर ईसाई धर्म का मज़ाक उड़ाते हुए बने ईश्वर के घरों में जाते हैं, और वहाँ इस काम के लिए प्रशिक्षित लोगों को सुनते हैं।
धोखेबाज, जो सफेद टाई या कढ़ाई वाले वस्त्रों में, अपने संप्रदाय के अनुसार, उपदेश देते हैं।
अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम, जिसे वे अपने जीवन में हर तरह से नकारते हैं। और ये लोग अपनी भूमिका में इस कदर डूब चुके हैं कि उन्हें सचमुच विश्वास हो गया है कि वे वही हैं जो वे होने का दिखावा करते हैं।
हमारे आधुनिक समाज के सभी वर्गों के रग-रग में पाखंड इस कदर समा गया है कि
यह इस हद तक पहुँच गया है कि अब इस तरह की कोई भी बात आक्रोश पैदा नहीं कर सकती। यूनानी भाषा में पाखंड का अर्थ है 'अभिनय करना', और अभिनय करना - एक भूमिका निभाना - हमेशा संभव है। मसीह के प्रतिनिधि अपना
अपने ही भाइयों के खिलाफ बंदूकें ताने हत्यारों की कतारों को आशीर्वाद; 'प्रार्थना के लिए' पुजारी।
विभिन्न ईसाई संप्रदायों के मंत्री, फांसी देने वाले की तरह ही अपरिहार्य रूप से, फांसी के समय हमेशा मौजूद रहते हैं।

और उनकी उपस्थिति से हत्या और ईसाई धर्म की संगति को मंजूरी मिलती है (अमेरिका में बिजली से हत्या के प्रयास में एक पादरी ने सहायता की थी) - लेकिन ऐसे तथ्य किसी को भी आश्चर्यचकित नहीं करते हैं।

हाल ही में पीटर्सबर्ग में यातना उपकरणों की एक अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनी आयोजित की गई थी।

हथकड़ियां, एकांत कोठरियों के मॉडल, अर्थात् यातना के ऐसे उपकरण जो कोड़े या छड़ियों से भी बदतर थे, और संवेदनशील महिलाएं और पुरुष उन्हें देखकर अपना मनोरंजन करते थे।

स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की मान्यता के साथ-साथ उदारवादी विचारधारा को अपनाने में किसी को आश्चर्य नहीं होता।

विज्ञान को युद्ध, दंड, रीति-रिवाजों, निंदा, वेश्यावृत्ति के नियमन, सस्ते विदेशी श्रमिकों के बहिष्कार, प्रवास पर रोक, आदि की आवश्यकता को सिद्ध करना चाहिए।

औपनिवेशीकरण, जो विष देकर और जंगली कहे जाने वाले मनुष्यों की पूरी नस्लों को नष्ट करने पर आधारित था, इत्यादि।

लोग उस समय की बात करते हैं जब सभी मनुष्य ईसाई धर्म का पालन करेंगे (अर्थात, विभिन्न धर्मों का)।

(जब सभी एक-दूसरे के विरोधी धर्मों के अनुयायी होंगे), जब सभी को भरपेट भोजन और वस्त्र मिलेंगे, जब दुनिया के एक छोर से दूसरे छोर तक सभी टेलीग्राफ और टेलीफोन से जुड़े होंगे और संवाद करने में सक्षम होंगे।

गुब्बारों के द्वारा, जब सभी श्रमिक वर्ग समाजवादी सिद्धांतों से प्रभावित हो जाते हैं, जब ट्रेड यूनियनें

जब हर कोई शिक्षित हो, सभी समाचार पत्र पढ़ सकें और सभी विज्ञान सीख सकें, तब उसके पास लाखों सदस्य और लाखों रूबल होंगे।

लेकिन इन सभी सुधारों से क्या लाभ या लाभ हो सकता है, यदि मनुष्य अपने अनुसार न बोले और न ही कार्य करे?

क्या यह उनके द्वारा सत्य माने जाने वाले तथ्यों के अनुरूप है?

मनुष्यों की यह स्थिति उनके आपसी मतभेद का परिणाम है। उनका यह मतभेद उनके अनुसरण न करने के कारण उत्पन्न होता है।

सत्य एक है, परन्तु असत्य अनेक हैं। मनुष्यों को एकजुट करने का एकमात्र साधन उनका एकत्व है।

सत्य। और इसलिए मनुष्य जितनी ईमानदारी से सत्य की ओर प्रयास करते हैं, वे एकता के उतने ही निकट पहुँचते हैं।

लेकिन मनुष्य सत्य में एकजुट कैसे हो सकते हैं या उसके निकट भी कैसे पहुँच सकते हैं, यदि वे अपने ज्ञात सत्य को व्यक्त ही न करें, बल्कि यह मानें कि ऐसा करने की कोई आवश्यकता नहीं है, और जो वे मानते हैं उसे सत्य होने का दिखावा करें।

क्या यह गलत है?

और इसलिए, जब तक मनुष्य पाखंडी हैं और स्वयं से सत्य छिपाते हैं, जब तक वे यह नहीं पहचानते कि उनका मिलन और इसलिए उनका कल्याण तभी संभव है, तब तक कोई सुधार संभव नहीं है।

सत्य में विश्वास रखो, और उन्हें प्रकट किए गए सत्य की मान्यता और घोषणा को अपने से अधिक महत्व न दो।

सबकुछ दूसरा।

धार्मिक और वैज्ञानिक व्यक्तियों द्वारा परिकल्पित सभी भौतिक सुधारों को प्राप्त किया जा सकता है;

सभी लोग ईसाई धर्म को स्वीकार कर सकते हैं, और बेलामी परिवार द्वारा वांछित सभी सुधार किए जा सकते हैं।

हर संभव सुधार और संवर्धन, लेकिन अगर आज भी प्रचलित पाखंड कायम है, अगर पुरुष ऐसा करते हैं

यदि वे अपने ज्ञान को सत्य के रूप में प्रकट नहीं करते, बल्कि जिस बात पर वे विश्वास नहीं करते उसका दिखावा करते हैं और जिस बात का वे सम्मान नहीं करते उसका आदर करते हैं, उसका ढोंग करते रहते हैं, तो उनकी स्थिति वैसी ही रहेगी, या और भी बदतर होती जाएगी।

जितने अधिक टेलीग्राफ, टेलीफोन, किताबें, अखबार और पत्रिकाएँ उपलब्ध होंगी, उतने ही अधिक लोग अभाव से मुक्त होंगे।
जितने अधिक साधन होंगे असंगत झूठ और पाखंड फैलाने के, उतने ही अधिक लोग विभाजित और परिणामस्वरूप दुखी हो जाएंगे, जो वास्तव में हम होते हुए देख रहे हैं।
ये सभी भौतिक सुधार भले ही साकार हो जाएं, लेकिन मानवता की स्थिति में कोई सुधार नहीं होगा।
बस प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुसार अपने जीवन में उस सत्य को तुरंत जान ले जिसे वह जानता है, या कम से कम सत्य के स्थान पर जिन झूठों का वह समर्थन कर रहा है, उनका समर्थन करना बंद कर दे, और इसी क्षण, वर्ष 1893 में, हम

हमें ऐसे सुधार देखने चाहिए जिनकी हम एक सदी के भीतर भी आशा करने का साहस नहीं करते - मनुष्यों की मुक्ति और पृथ्वी पर सत्य का शासन।
पाखंडियों के विरुद्ध ईसा मसीह की एकमात्र कठोर और धमकी भरी फटकार बिना किसी उचित कारण के निर्देशित नहीं थी।
और पाखंड। यह न तो चोरी है, न डकैती, न हत्या, न व्यभिचार, बल्कि झूठ है, पाखंड का विशेष झूठ, जो मनुष्यों को भ्रष्ट करता है, उन्हें क्रूर बनाता है और उन्हें प्रतिशोधी बनाता है, सब कुछ नष्ट कर देता है।
उनके अंतरात्मा में सही और गलत के बीच का भेद उन्हें जीवन के सच्चे अर्थ से वंचित कर देता है।
यह वास्तविक मानवीय जीवन को प्रभावित करता है, और उन्हें पूर्णता की ओर सभी प्रकार की प्रगति से वंचित करता है।
सत्य से अनभिज्ञ होकर बुराई करने वाले लोग अपने पीड़ितों के प्रति सहानुभूति जगाते हैं और
उनके कार्यों के प्रति घृणा के कारण, वे केवल उन्हीं को नुकसान पहुंचाते हैं जिन पर वे हमला करते हैं; लेकिन जो लोग सच्चाई जानते हैं और पाखंड की आड़ में बुराई करते हैं, खुद को और अपने पीड़ितों को, साथ ही हजारों अन्य पुरुषों को भी नुकसान पहुंचाते हैं।
जो उस झूठ के झांसे में आकर गुमराह हो जाते हैं जिसके द्वारा कुकर्म को छिपाया जाता है।
चोर, लुटेरे, हत्यारे और धोखेबाज, जो स्वयं द्वारा मान्यता प्राप्त अपराध करते हैं और
अन्य सभी को बुरा बताकर, उन्हें यह उदाहरण दें कि क्या नहीं करना चाहिए, और दूसरों को भी इसी तरह के कार्यों से रोकें।
अपराध। लेकिन जो लोग सभी जमींदारों, व्यापारियों की तरह ही चोरी, डकैती, हत्या और अन्य अपराध करते हैं, उन्हें धार्मिक, वैज्ञानिक या मानवीय औचित्य के तहत छिपाते हैं,
निर्माता और सरकारी अधिकारी दूसरों को अनुकरण करने के लिए उकसाते हैं, और इस प्रकार न केवल नुकसान पहुंचाते हैं बल्कि
न केवल वे लोग जो सीधे तौर पर उनके अपराधों के शिकार होते हैं, बल्कि हजारों-लाखों लोग भी उनके द्वारा सही और गलत के बीच के अंतर की भावना को मिटाकर भ्रष्ट हो जाते हैं।
लोगों के लिए आवश्यक वस्तुओं या उनके लिए हानिकारक वस्तुओं के व्यापार से अर्जित की गई एक ही संपत्ति।
प्रभावों से, या वित्तीय अटकलों से, या कम कीमत पर जमीन खरीदकर जिसका मूल्य बढ़ जाता है
जनसंख्या की आवश्यकताओं के कारण, या किसी ऐसे उद्योग के कारण जो उसमें कार्यरत लोगों के स्वास्थ्य और जीवन के लिए हानिकारक हो, या राज्य की सैन्य या नागरिक सेवा के कारण, या किसी ऐसे रोजगार के कारण जो मनुष्यों की बुरी प्रवृत्तियों का फायदा उठाता हो –
इनमें से किसी भी तरीके से अर्जित की गई एक भी संपत्ति, न केवल स्वीकृति से, बल्कि अनुमोदन से भी प्राप्त की गई हो।

समाज के प्रमुख व्यक्तियों द्वारा परोपकार के दिखावे के पीछे किए गए भ्रष्टाचार के कृत्य, कानून के विरुद्ध किए गए लाखों अपराधों और डकैतियों से कहीं अधिक लोगों को भ्रष्ट करते हैं।

और इन्हें अपराध के रूप में दंडनीय माना जाएगा।

एक ही व्यक्ति द्वारा की गई एक हत्या, जो धनी, शिक्षित और आवेशहीन पुरुषों द्वारा ईसाई पादरियों की स्वीकृति और सहायता से की गई थी, और जिसे आवश्यक और यहां तक कि न्यायसंगत बताया गया था।

यह अशिक्षित लोगों द्वारा की गई हजारों हत्याओं की तुलना में पुरुषों के लिए कहीं अधिक भ्रष्ट और क्रूर है।

जुनून के प्रभाव में काम करने वाले लोग। जुकोवस्की द्वारा प्रस्तावित निष्पादन के समान एक निष्पादन।

जो दर्शकों में धार्मिक भावना का भी संचार कर सके, वह कल्पना से परे सबसे विकृत कृत्यों में से एक होगा। (जोकोवस्की की रचनाओं का खंड 4 देखें।)

प्रत्येक युद्ध, चाहे वह कितना भी मानवीय तरीके से लड़ा गया हो, अपने सभी सामान्य परिणामों के साथ, विनाश का कारण बनता है।

फसलें, लूटपाट, व्यभिचार और अनैतिकता, और हत्या, उसकी आवश्यकता और न्याय के औचित्य के साथ, सैन्य कारनामों का महिमामंडन और महिमामंडन, ध्वज की पूजा, देशभक्ति

भावनाएं, घायलों के प्रति बनावटी सहानुभूति, इत्यादि एक वर्ष में ही पुरुषों के चरित्र को विकृत करने में बहुत योगदान देती हैं।

सैकड़ों वर्षों के दौरान जुनून के प्रभाव में आए व्यक्तियों द्वारा किए गए हजारों डकैतियों, हत्याओं और आगजनी की घटनाओं की तुलना में कहीं अधिक भयावह घटनाएँ हैं।

एक प्रतिष्ठित और तथाकथित सम्माननीय परिवार का विलासितापूर्ण व्यय, यहाँ तक कि उसके भीतर भी

पारंपरिक सीमाओं के भीतर, यह उतने दिनों के श्रम के उत्पादन का उपभोग करता है जितना पर्याप्त होगा

आस-पास अभावग्रस्त जीवन जी रहे हजारों लोगों की देखभाल करना, उन हजारों हिंसक अय्याशों, अशिष्ट व्यापारियों, अधिकारियों और कामगारों की शराबी और भ्रष्ट आदतों से कहीं अधिक लोगों के दिमाग को विकृत करता है, जो

मनोरंजन के लिए गिलास और बर्तनों को तोड़ दें।

एक गंभीर धार्मिक जुलूस, एक धार्मिक अनुष्ठान, वेदी की सीढ़ियों या मंच से दिया गया एक उपदेश, जिसमें उपदेशक स्वयं विश्वास नहीं करता, हजारों धोखाधड़ी के हथकंडों की तुलना में कहीं अधिक बुराई उत्पन्न करता है।

खाद्य पदार्थों में मिलावट, इत्यादि।

हम फरीसियों के पाखंड की बात करते हैं। लेकिन हमारे समाज का पाखंड फरीसियों के अपेक्षाकृत निर्दोष पाखंड से कहीं अधिक है। उनके पास कम से कम एक बाहरी धार्मिक कानून तो था,

जिसकी पूर्ति ने उन्हें अपने पड़ोसियों के प्रति अपने दायित्वों को समझने से रोक दिया। इसके अलावा, ये

उनके समय में दायित्व इतने स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं थे। आजकल हमारे पास ऐसा कोई धार्मिक कानून नहीं है जो हमें अपने पड़ोसियों के प्रति अपने कर्तव्यों से मुक्त कर सके (मैं यहाँ असभ्य और अज्ञानी व्यक्तियों की बात नहीं कर रहा हूँ)।

जो अब भी यह मानते हैं कि उनके पाप किसी पादरी के सामने स्वीकारोक्ति करने या पोप द्वारा क्षमादान प्राप्त करने से माफ हो सकते हैं।

इसके विपरीत, सुसमाचार का वह नियम जिसे हम सभी किसी न किसी रूप में मानते हैं, सीधे तौर पर इन कर्तव्यों को परिभाषित करता है।
इसके अलावा, वे कर्तव्य जिन्हें उस समय कुछ भविष्यवक्ताओं द्वारा केवल अस्पष्ट और रहस्यमय ढंग से व्यक्त किया गया था।
अब ये बातें इतनी स्पष्ट रूप से प्रतिपादित हो चुकी हैं, इतने सर्वमान्य सत्य बन चुकी हैं कि इन्हें दोहराया भी जाता है।
स्कूली छात्र और पत्रकार। और इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि आज के पुरुष यह दिखावा नहीं कर सकते कि वे इन कर्तव्यों से अनजान हैं।
आधुनिक दुनिया का एक ऐसा व्यक्ति जो हिंसा पर आधारित व्यवस्था से लाभ उठाता है, और साथ ही साथ
समय यह कहकर विरोध करता है कि वह अपने पड़ोसी से प्यार करता है और उसके दैनिक जीवन में उसके द्वारा किए जा रहे कार्यों पर ध्यान नहीं देता।
पड़ोसी, उस डाकू की तरह है जिसने अपना पूरा जीवन लोगों को लूटने में बिताया है, और जो अंत में चाकू हाथ में लिए, अपने चीखते हुए शिकार पर वार करते हुए पकड़ा गया, और फिर यह घोषणा करे कि उसे पता ही नहीं था कि वह क्या कर रहा है।
जिस व्यक्ति को उसने लूटा था, उससे उसका व्यवहार अप्रिय था और वह उसकी हत्या करने को तैयार था। ठीक उसी तरह जैसे इस लुटेरे और हत्यारा उस बात से इनकार नहीं कर सकता था जो सबके सामने स्पष्ट थी, इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि शोषित वर्गों की कठिनाइयों पर जीवन यापन करने वाला व्यक्ति स्वयं को और दूसरों को यह विश्वास नहीं दिला सकता कि वह समाज के कल्याण की इच्छा रखता है।
वह जिनका शोषण करता है, और उसे यह नहीं पता होता कि उसे जो लाभ प्राप्त होते हैं, वे उसे कैसे मिलते हैं।
यह मानना असंभव है कि हम यह नहीं जानते कि अकेले रूस में ही हमारी संपत्ति और शांति की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक लाख लोग जेल में बंद हैं, और यह कि हम यह नहीं जानते।
उन विधि न्यायाधिकरणों में जिनमें हम भाग लेते हैं, और जो हमारी पहल पर उन लोगों की निंदा करते हैं जिन्होंने
हमारी संपत्ति या हमारी सुरक्षा पर हमला करने वालों को कारावास, निर्वासन या जबरन श्रम की सजा दी गई, जिससे उन लोगों की तुलना में बदतर स्थिति में कोई भी व्यक्ति नहीं था।
जो लोग उनकी निंदा करते हैं वे बर्बाद और भ्रष्ट हो जाते हैं; या फिर हम यह नहीं जानते कि हमारे पास जो कुछ भी है वह केवल इसलिए है क्योंकि इसे हत्या और हिंसा के माध्यम से हासिल किया गया है और हमारे लिए इसकी रक्षा की गई है।
हम यह दिखावा नहीं कर सकते कि हम अपने नीचे गश्त लगाने वाले सशस्त्र पुलिसकर्मियों को नहीं देख रहे हैं।
खिड़कियाँ हमारी सुरक्षा की गारंटी देती हैं, चाहे हम अपना शानदार भोजन कर रहे हों, या थिएटर में नया नाटक देख रहे हों, या हमें उन सैनिकों के अस्तित्व का पता न हो जो बंदूकों के साथ प्रकट होंगे।
और ठीक उसी समय कारतूस भी मौजूद थे जब हमारी संपत्ति पर हमला हुआ।
हम अच्छी तरह जानते हैं कि हमें अपना रात का खाना खाने, नया नाटक पूरा देखने, या बॉल, क्रिसमस मेले, सैरगाह, दौड़ या शिकार का अंत तक आनंद लेने की अनुमति केवल तभी मिलती है, जब हम ऐसा कर पाते हैं।
पुलिसकर्मी का रिवॉल्वर या सैनिक की राइफल, जो उस भूखे-प्यासे, बेघर व्यक्ति को मार गिराएगी जो
उसका हिस्सा छीन लिया गया है, और जो हमारी खुशियों को लालची निगाहों से देखता है, तैयार है
यदि वहां मौजूद पुलिसकर्मी और सैनिक हमारी पहली मदद की गुहार पर तुरंत पहुंचने के लिए तैयार न होते, तो उन्हें तुरंत रोक दिया जाता।
और इसलिए, जिस प्रकार दिन दहाड़े रंगे हाथों पकड़ा गया डाकू हमें यह विश्वास नहीं दिला सकता कि उसने ऐसा नहीं किया, ठीक उसी प्रकार, जैसे दिनदहाड़े रंगे हाथों पकड़ा गया डाकू हमें यह विश्वास नहीं दिला सकता कि उसने ऐसा नहीं किया।

जिस व्यक्ति ने अपने शिकार से पर्स छीनने के लिए चाकू उठाया और उसे मारने का कोई विचार नहीं किया, उसी तरह हम भी, ऐसा लगता है, खुद को या दूसरों को यह समझाने में असमर्थ हैं कि हमारे आसपास मौजूद सैनिक और पुलिसकर्मी हमारी रक्षा के लिए नहीं हैं।
लेकिन केवल विदेशी शत्रुओं से रक्षा के लिए, और यातायात, उत्सवों और परेडों को विनियमित करने के लिए; हम ऐसा नहीं कर सकते
हम खुद को और दूसरों को यह विश्वास नहीं दिला सकते कि मनुष्य भूख से मरना पसंद नहीं करते, उस धरती से अपनी आजीविका कमाने के अधिकार से वंचित होना पसंद नहीं करते जिस पर वे रहते हैं; कि वे काम करना पसंद नहीं करते।
भूमिगत, पानी में, या दम घोंटने वाली गर्मी में, दिन में दस से चौदह घंटे तक, रात में कारखानों में
हम अपनी खुशी के लिए वस्तुओं का निर्माण करते हैं। जो बात इतनी स्पष्ट है, उसे नकारना असंभव लगता है। फिर भी
इसका खंडन किया जाता है।
फिर भी, अमीरों में, विशेषकर युवाओं में, और महिलाओं में, ऐसे लोग हैं जिनसे मैं परिचित हूँ।
उन लोगों से बार-बार मिलकर खुशी होती है, जिन्हें यह दिखाया जाता है कि किस तरह से और किस कीमत पर उनका
सुख-सुविधाएँ खरीदी जाती हैं, सच्चाई को छिपाने की कोशिश मत करो, बल्कि अपना सिर हाथों में छिपाकर रोते हुए कहो, "अरे! इसके बारे में बात मत करो। अगर ऐसा है तो जीवन असंभव है।" लेकिन फिर भी ऐसे सच्चे लोग भी हैं जो
हालांकि वे अपनी गलती को नकार नहीं सकते, कम से कम उसे स्वीकार तो करते हैं, लेकिन आधुनिक दुनिया के अधिकांश पुरुष ऐसा नहीं मानते।
वे अपने पाखंड में इस कदर डूब चुके हैं कि वे उस सच्चाई को खुलेआम नकार रहे हैं जो सबके सामने है।

वे कहते हैं, "यह सब अन्यायपूर्ण है; कोई भी लोगों को जमींदारों और निर्माताओं के लिए काम करने के लिए मजबूर नहीं करता। यह स्वतंत्र अनुबंध का मामला है। बड़ी संपत्ति और धन आवश्यक हैं, क्योंकि
वे श्रमिक वर्गों के लिए काम उपलब्ध कराते हैं और उसका आयोजन करते हैं। और कारखानों और कार्यशालाओं में श्रम करना अनिवार्य नहीं है। यह उतना भयानक नहीं है जितना आप इसे बता रहे हैं। भले ही कारखानों में कुछ दुर्व्यवहार होते हों, सरकार और जनता उन्हें दूर करने और कारखाना श्रमिकों के श्रम को बहुत आसान बनाने के लिए कदम उठा रहे हैं।
और यहां तक कि सहमत भी। श्रमिक वर्ग शारीरिक श्रम का आदी है, और अब तक इसके लिए उपयुक्त है।
और कुछ नहीं। जनता की गरीबी निजी भूमि स्वामित्व या पूंजीवादी उत्पीड़न का परिणाम नहीं है, बल्कि अन्य कारणों से है। यह अज्ञानता, क्रूरता और अतिभोग का परिणाम है।
लोग। और हम, जो सत्ता में हैं और बुद्धिमानी से लोगों की इस गरीबी के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं।
कानून, हम पूंजीपति जो उपयोगी आविष्कारों के विस्तार द्वारा इसका मुकाबला कर रहे हैं, हम पादरी लोग
धार्मिक शिक्षा के माध्यम से, और हम उदारवादी लोग ट्रेड यूनियनों के गठन और शिक्षा के प्रसार द्वारा, अपनी स्थिति में बदलाव किए बिना लोगों की समृद्धि बढ़ा रहे हैं। हम ऐसा नहीं करते।
हम चाहते हैं कि सभी लोग गरीबों की तरह गरीब हों; हम चाहते हैं कि सभी लोग अमीरों की तरह अमीर हों। जहाँ तक इस दावे का सवाल है कि मनुष्य

अमीरों के लाभ के लिए काम करवाने हेतु उनके साथ दुर्व्यवहार करना और उनकी हत्या करना, यह एक कुतर्क है। सेना को भीड़ के विरुद्ध तभी बुलाया जाता है, जब लोग अपने हितों की अनदेखी करते हुए अशांति फैलाते हैं।

और जन कल्याण के लिए आवश्यक शांति को नष्ट कर देता है। उसी प्रकार, यह भी आवश्यक है कि इसे बनाए रखा जाए।

उन अपराधियों को नियंत्रित करने के लिए जिनके लिए जेलें और फांसी के फंदे स्थापित किए गए हैं। हम स्वयं भी सजा के इन रूपों को समाप्त करना चाहते हैं और उस दिशा में काम कर रहे हैं।

आज के समय में पाखंड को दो पक्षों का समर्थन प्राप्त है: झूठे धर्म और झूठे विज्ञान द्वारा। और यह

यह स्थिति इतनी विकराल रूप ले चुकी थी कि यदि हम इसके बीच में न रह रहे होते, तो हम विश्वास ही नहीं कर पाते कि मनुष्य ऐसा कर सकते हैं।

आत्म-धोखे की ऐसी पराकाष्ठा तक पहुँच गए हैं। आज के मनुष्य ऐसी असाधारण स्थिति में आ गए हैं, उनके हृदय इतने कठोर हो गए हैं कि देखते हुए भी वे नहीं देखते, सुनते हुए भी वे नहीं सुनते, और वे

समझ में नहीं आया।

मनुष्य लंबे समय से अपनी अंतरात्मा के विरुद्ध जीवन जी रहे हैं। पाखंड के कारण ही वे ऐसा जीवन जी रहे हैं। अंतरात्मा के विरुद्ध यह सामाजिक संगठन उन्हें इसी राह पर आगे बढ़ाता रहता है।

इसका अस्तित्व पाखंड के आवरण में छिपा हुआ है।

और वास्तविक जीवन और मनुष्य की अंतरात्मा के बीच जितना अधिक अंतर होता है, पाखंड उतना ही अधिक फैलता है। लेकिन पाखंड की भी सीमाएँ होती हैं। और मुझे लगता है कि हम उन सीमाओं तक पहुँच चुके हैं।

वर्तमान दिन।

आज के प्रत्येक व्यक्ति में ईसाई सिद्धांत अनजाने में समाहित हो चुके हैं।

अंतरात्मा स्वयं को ठीक उसी स्थिति में पाती है जैसे कोई सोता हुआ व्यक्ति सपने में देखता है कि उसे कुछ ऐसा करना है जो सपने में भी वह जानता है कि उसे नहीं करना चाहिए। वह अपने अंतर्मन की गहराई में यह जानता है।

अंतरात्मा की आवाज के बावजूद, वह अपनी स्थिति बदलने में असमर्थ प्रतीत होता है; वह रुक नहीं सकता और काम करना बंद नहीं कर सकता।

उसे क्या नहीं करना चाहिए। और ठीक सपने की तरह, उसकी स्थिति और भी कष्टदायक होती जाती है, अंततः इतनी तीव्र हो जाती है कि वह कभी-कभी जो हो रहा है उसकी वास्तविकता पर संदेह करने लगता है।

वह उस दुःस्वप्न से छुटकारा पाने के लिए नैतिक प्रयास करता है जो उसे सता रहा है।

यही हमारे ईसाई समाज के आम आदमी की हालत है। उसे लगता है कि वह जो कुछ भी खुद करता है और उसके आसपास जो कुछ भी होता है, वह सब बेतुका, घिनौना, असंभव और उसकी सोच के विपरीत है।

अंतरात्मा; उसे लगता है कि उसकी स्थिति दिन-ब-दिन असहनीय होती जा रही है और संकट की ओर बढ़ रही है।

तीव्रता।

यह संभव नहीं है कि हम आधुनिक मनुष्य, जिनके मन और शरीर में ईसाई धर्म की मानवीय गरिमा और समानता की भावना व्याप्त है, और जिन्हें राष्ट्रों के बीच शांतिपूर्ण संबंध और एकता की आवश्यकता है,

क्या हम सचमुच इस तरह से जीना जारी रख सकते हैं कि हमें मिलने वाला हर सुख, हर संतुष्टि कष्टों के बदले ही प्राप्त हो?
हमारे साथी मनुष्यों के जीवन की कसम, और उससे भी बढ़कर, हम हर पल एक-दूसरे पर टूट पड़ने के कगार पर हैं, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र पर जंगली जानवरों की तरह, निर्दयता से मनुष्यों के जीवन को नष्ट कर रहे हैं और
श्रम, केवल इसलिए कि किसी अज्ञानी राजनयिक या शासक ने किसी दूसरे समान रूप से मूर्खतापूर्ण बात कह दी या लिख दी।
अज्ञानी राजनयिक या शासक।
यह असंभव है। फिर भी हमारे समय का हर व्यक्ति यह जानता है कि ऐसा ही है और विपत्ति की प्रतीक्षा कर रहा है। और
स्थिति दिन-ब-दिन असहनीय होती जा रही है।

153

और जिस प्रकार स्वप्न देखने वाला व्यक्ति यह विश्वास नहीं करता कि जो उसे दिखाई देता है वह वास्तव में वास्तविकता हो सकता है और वह वास्तविक दुनिया में वापस आने के लिए जागने का प्रयास करता है, उसी प्रकार आधुनिक युग का औसत व्यक्ति भी ऐसा नहीं कर सकता।
वह दिल से मानता है कि वह जिस भयानक स्थिति में है और जो बदतर होती जा रही है,
इससे भी बदतर वास्तविकता हो सकती है, और वह अपने अंतरात्मा में मौजूद वास्तविक जीवन को समझने की कोशिश करता है।
और जिस प्रकार स्वप्न देखने वाले को केवल नैतिक प्रयास करने और स्वयं से यह पूछने की आवश्यकता होती है, "क्या यह एक सपना नहीं है?"
जो परिस्थिति उसे इतनी निराशाजनक लग रही थी, वह पल भर में गायब हो जाएगी, और वह शांतिपूर्ण वातावरण में जागेगा।
सुखद वास्तविकता, इसलिए आधुनिक दुनिया के मनुष्य को केवल अपने स्वयं के पाखंड और अपने आसपास के सामान्य पाखंड द्वारा प्रस्तुत वास्तविकता पर संदेह करने के लिए नैतिक प्रयास करने की आवश्यकता है, और स्वयं से यह पूछने की आवश्यकता है, "क्या यह सुखद वास्तविकता नहीं है?"
क्या यह सब एक भ्रम है?" और वह तुरंत, जागते हुए स्वप्नद्रष्टा की तरह, खुद को एक अलग दुनिया में महसूस करेगा।
काल्पनिक और भयावह दुनिया से सच्ची, शांत और सुखी वास्तविकता की ओर।
और ऐसा करने के लिए किसी व्यक्ति को कोई महान उपलब्धि या कारनामा करने की आवश्यकता नहीं है। उसे केवल नैतिक प्रयास करने की आवश्यकता है।
लेकिन क्या कोई पुरुष इतना प्रयास कर सकता है?
पाखंड को समर्थन देने के लिए आवश्यक मौजूदा सिद्धांत के अनुसार, मनुष्य स्वतंत्र नहीं है और बदल नहीं सकता।
उसकी ज़िंदगी।
मनुष्य अपना जीवन नहीं बदल सकता, क्योंकि वह स्वतंत्र नहीं है। वह स्वतंत्र नहीं है, क्योंकि उसके सभी कर्म नियंत्रित हैं।
पहले से मौजूद कारणों से प्रभावित। और मनुष्य चाहे जो भी करे, उसके कुछ न कुछ कारण हमेशा मौजूद रहते हैं।
“या किसी अन्य माध्यम से वह ये या वो कार्य करता है, और इसलिए मनुष्य स्वतंत्र नहीं हो सकता और अपना जीवन नहीं बदल सकता,” पाखंड के सिद्धांत के समर्थक कहते हैं। और यदि मनुष्य स्वतंत्र होता तो वे बिल्कुल सही होते।
एक ऐसा प्राणी जिसमें विवेक नहीं है और जो सत्य की ओर बढ़ने में असमर्थ है; यानी, यदि इसके बाद

एक नए सत्य को पहचानते हुए भी, मनुष्य नैतिक विकास के उसी चरण में बना रहा। लेकिन मनुष्य एक
मनुष्य एक विवेकशील प्राणी है जो सत्य की उच्चतर अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम है। इसलिए, भले ही मनुष्य इन या उन कार्यों को करने के संबंध में स्वतंत्र न हो, क्योंकि इसके पीछे एक पूर्व कारण मौजूद है।
प्रत्येक कार्य के लिए, उसके कार्यों के मूल कारण, जो विवेकशील व्यक्ति के लिए होते हैं,
इस या उस सत्य की पहचान करना उसके अपने नियंत्रण में है।
इसलिए, यद्यपि मनुष्य अपने कार्यों के निष्पादन के संबंध में स्वतंत्र नहीं हो सकता है, फिर भी वह स्वतंत्र है क्योंकि
यह उस आधार को ध्यान में रखता है जिस पर वे कार्य किए जाते हैं। ठीक वैसे ही जैसे एक मैकेनिक जिसे संशोधन करने की स्वतंत्रता नहीं है। जब इंजन गति में होता है, तो उसकी गति को नियंत्रित करने की स्वतंत्रता होती है, ताकि मशीन को पहले से ही विनियमित किया जा सके और यह निर्धारित किया जा सके कि गति क्या होगी।
सचेत मनुष्य जो कुछ भी करता है, वह ठीक उसी तरह से कार्य करता है, न कि किसी अन्य तरीके से, केवल इसलिए कि वह
वह मानता है कि जैसा वह कर रहा है वैसा करना सत्य के अनुरूप है, या क्योंकि उसने किसी समय इसे पहचान लिया है।
पहले की तरह, अब वह केवल जड़ता, आदत के कारण, सत्य की अपनी पिछली पहचान के अनुसार कार्य कर रहा है।
किसी भी स्थिति में, उसके इस कृत्य का कारण किसी पूर्व तथ्य में नहीं, बल्कि इसमें निहित है।
सत्य के साथ दिए गए संबंध की चेतना, और परिणामस्वरूप इस या उस तथ्य को कार्रवाई के लिए पर्याप्त आधार के रूप में मान्यता देना।
चाहे कोई व्यक्ति खाए या न खाए, काम करे या आराम करे, जोखिम उठाए या उनसे बचे, यदि उसमें अंतरात्मा है तो
वह ऐसा केवल इसलिए करता है क्योंकि वह इसे सही और तर्कसंगत मानता है, क्योंकि वह मानता है कि ऐसा करना सत्य के अनुरूप है, या फिर क्योंकि उसने अतीत में इस पर विचार किया है।
किसी सत्य को स्वीकार करना या न स्वीकार करना बाहरी कारणों पर नहीं, बल्कि कुछ निश्चित कारकों पर निर्भर करता है।
अन्य कारण स्वयं व्यक्ति के भीतर ही होते हैं। परिणामस्वरूप, कभी-कभी बाहरी परिस्थितियों में जो देखने में बहुत ही असामान्य प्रतीत होती हैं। सत्य की पहचान के लिए अनुकूल परिस्थितियों में भी, एक व्यक्ति उसे नहीं पहचानता, और दूसरा, इसके विपरीत, सबसे प्रतिकूल परिस्थितियों में भी, बिना किसी स्पष्ट कारण के, उसे पहचान लेता है। जैसा कि सुसमाचार में कहा गया है,
“कोई भी मेरे पास नहीं आ सकता, जब तक कि मुझे भेजने वाला पिता उसे अपनी ओर आकर्षित न करे।” यानी, पहचान
सत्य, जो मानव जीवन की सभी अभिव्यक्तियों का कारण है, बाहरी घटनाओं पर निर्भर नहीं करता, बल्कि मनुष्य के कुछ आंतरिक आध्यात्मिक गुणों पर निर्भर करता है जो हमारी दृष्टि से परे हैं।
और इसलिए मनुष्य, यद्यपि अपने कार्यों में स्वतंत्र नहीं है, फिर भी वह अपने कार्यों के उद्देश्य में स्वयं को हमेशा स्वतंत्र महसूस करता है।
कर्म – सत्य की पहचान या उसकी पहचान न करना। और वह स्वयं को न केवल अपने व्यक्तित्व से परे तथ्यों से, बल्कि अपने स्वयं के कार्यों से भी स्वतंत्र महसूस करता है।

इस प्रकार, जो व्यक्ति आवेश में आकर सत्य के विरुद्ध कार्य करता है, वह फिर भी उसे स्वीकार करने या न स्वीकार करने के लिए स्वतंत्र रहता है; अर्थात्, वह इनकार करके

वह सत्य को पहचान सकता है और अपने कार्य को आवश्यक और न्यायसंगत मान सकता है, या वह सत्य को पहचान सकता है और अपने कृत्य को गलत समझना और उसके लिए स्वयं की निंदा करना।

इस प्रकार, जुआरी या शराबी जो प्रलोभन का विरोध नहीं करता और अपनी वासना के आगे झुक जाता है, वह अभी भी स्वतंत्र है। जुए और शराबखोरी को गलत मानना या उन्हें हानिरहित शौक समझना। पहले मामले में भले ही वह तुरंत अपने जुनून से उबर न पाए, लेकिन जैसे-जैसे वह इसके बारे में सच्चाई को ईमानदारी से स्वीकार करता है, वैसे-वैसे वह इससे मुक्त होता जाता है; दूसरे मामले में वह अपने दुर्गुण में और मजबूत हो जाएगा और वंचित कर देगा। उसने खुद को इससे उबरने की हर संभावना से वंचित कर दिया।

ठीक उसी तरह, एक आदमी जो आग लगे घर से अकेले भाग निकला हो, जिसके पास कोई साधन न हो... अपने मित्र को बचाने का साहस दिखाते हुए, स्वतंत्र रहता है, इस सत्य को पहचानते हुए कि मनुष्य को अपने जीवन को जोखिम में डालकर भी दूसरे का जीवन बचाना चाहिए, अपने इस कार्य को बुरा मानता है और इसके लिए स्वयं की निंदा करता है, या फिर इसे न पहचानते हुए। इस सत्य को मानते हुए, वह अपने कार्य को स्वाभाविक और आवश्यक समझे और स्वयं को उसका औचित्य सिद्ध करे। पहले मामले में, यदि वह एक मामले में, यदि वह सत्य से विमुख होने के बावजूद उसे पहचान लेता है, तो वह सत्य की इस पहचान से उत्पन्न होने वाले आत्म-बलिदान के कार्यों की एक पूरी श्रृंखला के लिए भविष्य में स्वयं को तैयार करता है; दूसरे मामले में, एक पूरी श्रृंखला अहंकारपूर्ण कृत्यों की श्रृंखला।

ऐसा नहीं है कि मनुष्य को हर सत्य को स्वीकार करने या अस्वीकार करने की पूरी स्वतंत्रता होती है। कुछ सत्य ऐसे होते हैं जिन्हें वह बहुत पहले से ही पहचान चुका होता है या जो उसे शिक्षा और परंपरा के माध्यम से प्राप्त हुए होते हैं। उन्होंने इसे आस्था के साथ स्वीकार किया है, और इन सत्यों का पालन करना उनकी आदत बन गई है, उनके लिए एक स्वाभाविक प्रवृत्ति बन गई है; और कुछ सत्य हैं, जिन्हें वह केवल अस्पष्ट रूप से, मानो दूर से ही समझ पाता है। वह व्यक्ति उन्हें अस्वीकार करने के लिए स्वतंत्र नहीं है। न तो प्रथम श्रेणी के सत्यों को पहचानना, न ही द्वितीय श्रेणी के सत्यों को। परन्तु एक तृतीय श्रेणी के सत्य भी हैं, जो अभी तक अचेतन क्रिया का प्रेरक नहीं बने हैं, परन्तु फिर भी उसके समक्ष इतने स्पष्ट रूप से प्रकट हुए हैं कि वह उन्हें अनदेखा नहीं कर सकता, और उसे अनिवार्य रूप से कुछ न कुछ करना ही पड़ता है, पहचानना है या नहीं। इन्हें पहचानें। और इन्हीं सत्यों के संदर्भ में मनुष्य की स्वतंत्रता प्रकट होती है।

अपने जीवनकाल में प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को सत्य के संदर्भ में एक ऐसे व्यक्ति की स्थिति में पाता है जो राह पर चल रहा हो। उसके सामने लालटेन से रोशनी पड़ रही है, लेकिन अंधेरा छाया हुआ है। वह उस चीज़ को नहीं देख पा रहा है जो अभी तक रोशन नहीं हुई है। लालटेन की रोशनी में ऊपर; वह अंधेरे में छिपी हुई चीज़ों को नहीं देख पाता; लेकिन अपनी यात्रा के हर पड़ाव पर वह लालटेन की रोशनी से जगमगाती चीज़ों को देख पाता है, और वह हमेशा एक तरफ या दूसरी तरफ चुन सकता है। सड़क।

मनुष्य की बौद्धिक दृष्टि से अभी तक प्रकट न हुए अनदेखे सत्य हमेशा मौजूद रहते हैं, अन्य सत्य भी मौजूद होते हैं। कुछ सत्य उसके द्वारा भुला दिए गए हैं, आत्मसात कर लिए गए हैं, और कुछ सत्य ऐसे भी हैं जो उसकी बुद्धि के प्रकाश में उभरते हैं और उसकी पहचान की मांग करते हैं। और इन्हीं सत्यों की पहचान या अस्वीकृति में ही यह बात निहित है।

कि जिसे हम उसकी स्वतंत्रता कहते हैं, वह प्रकट हो।
मनुष्य की स्वतंत्रता के प्रश्न की सारी कठिनाई और प्रतीत होने वाली अघुलनशीलता उन लोगों के कारण है जिन्होंने सत्य के साथ अपने संबंध में मनुष्य को स्थिर मानकर इस प्रश्न को हल करने का प्रयास किया।
यदि हम मनुष्य को स्थिर मान लें और यह भूल जाएं कि मनुष्य का जीवन और उसके
मानवता अंधकार से प्रकाश की ओर, सत्य के निम्नतम स्तर से उच्चतर स्तर की ओर, त्रुटियों से अधिक मिश्रित सत्य से त्रुटियों से अधिक शुद्ध सत्य की ओर एक निरंतर गति के अलावा और कुछ नहीं है।
यदि मनुष्य को सत्य का बिल्कुल भी ज्ञान न हो तो वह स्वतंत्र नहीं होगा, और उसी प्रकार वह स्वतंत्र भी नहीं होगा।
अगर उसे जीवन में मार्गदर्शन देने वाला पूरा सच पता होता, तो उसे स्वतंत्रता का कोई विचार भी नहीं होता।
यह बात उसे एक बार और हमेशा के लिए, बिना किसी त्रुटि के, अपनी संपूर्ण शुद्धता में प्रकट हुई।
सौभाग्यवश, सत्य के संबंध में मनुष्य स्थिर नहीं है, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन के विभिन्न चरणों से गुजरते हुए स्थिर हो जाता है।
जीवन, और उसी प्रकार संपूर्ण मानवता, निरंतर एक महानतम ज्ञान की ओर अग्रसर है।
सत्य की मात्रा, और त्रुटियों से अधिकाधिक मुक्त होना।
इसलिए मनुष्य सत्य के साथ त्रिविध संबंध में हैं। कुछ सत्य उनके द्वारा इस प्रकार आत्मसात कर लिए गए हैं।
कुछ लोग क्रिया के अचेतन आधार बन चुके हैं, जबकि अन्य लोग अभी-अभी उस मुकाम पर पहुँचने वाले हैं।
उसके सामने एक तीसरे वर्ग का खुलासा हुआ है, हालांकि उसने अभी तक उसे आत्मसात नहीं किया है, लेकिन उसके सामने इतनी स्पष्टता से इसका खुलासा हुआ है कि उसे या तो उन्हें स्वीकार करने या उन्हें स्वीकार करने से इनकार करने का निर्णय लेने के लिए मजबूर होना पड़ा है।
तो, ये वे सत्य हैं जिन्हें मनुष्य स्वीकार करने या अस्वीकार करने के लिए स्वतंत्र है।

मनुष्य की स्वतंत्रता जीवन की प्रगति और उससे उत्पन्न होने वाले प्रभावों से स्वतंत्र रूप से कार्य करने की क्षमता में निहित नहीं है, बल्कि प्रकट सत्य को पहचानने और स्वीकार करने की क्षमता में निहित है।
उसके लिए, और ईश्वर के शाश्वत और अनंत कार्य में स्वतंत्र और आनंदमय भागीदार बनकर, जीवन
या फिर दुनिया के प्रति; या फिर सच्चाई को पहचानने से इनकार करने के कारण, और इस प्रकार एक दयनीय और अनिच्छुक गुलाम बनकर उस जगह घसीटे जाने के कारण जहां वह जाना नहीं चाहता।
सत्य न केवल उस मार्ग को दर्शाता है जिस पर मानव जीवन को आगे बढ़ना चाहिए, बल्कि एकमात्र मार्ग का भी खुलासा करता है।
वह मार्ग जिस पर यह आगे बढ़ सकता है। और इसलिए सभी मनुष्यों को स्वेच्छा से या अनिच्छा से सत्य के मार्ग पर चलना चाहिए, कुछ लोग सहज रूप से जीवन में निर्धारित कार्य को पूरा करते हैं, जबकि अन्य अनैच्छिक रूप से इसके प्रति समर्पित हो जाते हैं।
जीवन का नियम। मनुष्य की स्वतंत्रता इसी चुनाव की शक्ति में निहित है।
इन सीमित सीमाओं के भीतर मिली यह स्वतंत्रता मनुष्यों को इतनी महत्वहीन लगती है कि वे इसे महसूस ही नहीं करते।
कुछ लोग – नियतिवादी – इस स्वतंत्रता को इतना तुच्छ मानते हैं कि वे इसे बिल्कुल भी मान्यता नहीं देते। वहीं दूसरी ओर – पूर्ण स्वतंत्र इच्छाशक्ति के समर्थक – अपनी दृष्टि अपनी काल्पनिक स्वतंत्र इच्छाशक्ति पर ही केंद्रित रखते हैं और

उस स्वतंत्रता की उपेक्षा करना जो उन्हें इतनी तुच्छ लगती थी।
सत्य की पूर्ण अज्ञानता और सत्य के एक अंश की पहचान की सीमाओं के बीच सीमित यह स्वतंत्रता, शायद ही स्वतंत्रता प्रतीत होती है, विशेष रूप से इसलिए कि, चाहे कोई व्यक्ति इच्छुक हो या अनिच्छुक,
यदि वह अपने सामने प्रकट हुए सत्य को पहचान लेता है, तो उसे अनिवार्य रूप से जीवन में उसका पालन करना ही पड़ेगा।
एक घोड़ा जो अन्य घोड़ों के साथ गाड़ी से जुता हुआ है, गाड़ी को आगे बढ़ने से रोकने के लिए स्वतंत्र नहीं है। यदि वह आगे नहीं बढ़ता है, तो गाड़ी उसे गिरा देगी और उसे अपने साथ घसीटती चली जाएगी, चाहे वह चाहे या न चाहे। लेकिन
घोड़ा चाहे तो गाड़ी को खुद खींच सकता है या गाड़ी के साथ खिंच सकता है। और मनुष्य के साथ भी ऐसा ही है।
चाहे यह स्वतंत्रता उस अद्भुत स्वतंत्रता की तुलना में कितनी भी कम या अधिक हो, जो हमें मिलनी चाहिए
जिसे आप पाना चाहते हैं, वही एकमात्र ऐसी स्वतंत्रता है जो वास्तव में मौजूद है, और उसी में मनुष्य द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली एकमात्र खुशी निहित है।
और इससे भी बढ़कर, यह स्वतंत्रता ही जीवन के दिव्य कार्य को पूरा करने का एकमात्र साधन है।
दुनिया।
ईसा मसीह के सिद्धांत के अनुसार, वह व्यक्ति जो जीवन के महत्व को उस क्षेत्र में देखता है जिसमें वह है
जो कर्मों के क्षेत्र में स्वतंत्र नहीं है, उसमें सच्चा जीवन नहीं है। ईसाई धर्म के अनुसार
यह सिद्धांत कहता है कि मनुष्य सत्य में जी रहा है, जिसने अपने जीवन को उस क्षेत्र में स्थानांतरित कर दिया है जहाँ वह स्वतंत्र है - कारणों का क्षेत्र, अर्थात् जीवन में ज्ञान और पहचान, व्यवसाय और प्राप्ति का क्षेत्र।
सत्य का खुलासा हुआ।
अपना जीवन सांसारिक कार्यों में व्यतीत करते हुए, मनुष्य क्षणिक सुख पर निर्भर कार्यों में लगा रहता है।
इसके पीछे के कारण उसके बाहर हैं। वह वास्तव में स्वयं कुछ नहीं करता; वह केवल कुछ करने का दिखावा करता है। वास्तविकता में, उसके द्वारा किए गए प्रतीत होने वाले सभी कार्य एक उच्च शक्ति का कार्य हैं, और वह स्वयं उनका निर्माता नहीं है।
जीवन का गुलाम तो बनो, लेकिन उसका दास। अपना जीवन उस सत्य की पहचान और पूर्ति के लिए समर्पित कर दो जो उसे प्रकट हुआ है।
वह स्वयं को सार्वभौमिक जीवन के स्रोत से जोड़ता है और ऐसे कार्य करता है जो व्यक्तिगत नहीं होते और स्थान एवं समय की परिस्थितियों पर निर्भर नहीं होते, बल्कि पूर्ववर्ती कारणों से अप्रतिबंधित होते हैं, ऐसे कार्य जो...
ये सभी चीजों के कारण हैं, और इनका अनंत, असीमित महत्व है।
“स्वर्ग का राज्य हिंसा का शिकार हुआ है, और हिंसा करने वालों ने उसे बलपूर्वक छीन लिया है।” (मत्ती 11:12)
बाह्य परिस्थितियों से ऊपर उठकर सत्य की पहचान और प्राप्ति के लिए किया गया यह हिंसक प्रयास ही है।
जिसके द्वारा स्वर्ग का राज्य छीन लिया जाता है, और यही हिंसा का प्रयास है जो हमारे जीवन में अवश्य किया जाना चाहिए और किया जा सकता है।
बार।
पुरुषों को बस इतना समझना होगा, उन्हें उन बाहरी परिस्थितियों के बारे में चिंता करना बंद करना होगा जिनमें वे स्वतंत्र नहीं हैं, और अपनी व्यर्थ ऊर्जा का सौवां हिस्सा ही सही दिशा में लगाना होगा।

उन भौतिक वस्तुओं से उस चीज़ की ओर जिसमें वे स्वतंत्र हैं, उस सत्य की पहचान और अहसास की ओर जो
उनके सामने है, और स्वयं को और दूसरों को छल और पाखंड से मुक्त करने का मार्ग है, और बिना किसी प्रयास या संघर्ष के, जीवन की उस झूठी व्यवस्था का तुरंत अंत हो जाएगा जो मनुष्यों को बनाती है।
दयनीय स्थिति में, और भविष्य में उन्हें और भी भयानक विपत्तियों की धमकी देता है। और तब परमेश्वर का राज्य
इसका साकार होना, या कम से कम इसका वह पहला चरण जिसके लिए मनुष्य अब अपनी अंतरात्मा के विकास के स्तर के अनुसार तैयार हैं।

156

जिस प्रकार किसी द्रव में नमक की मात्रा अधिक होने पर एक ही झटके से वह तुरंत क्रिस्टलों में परिवर्तित हो जाता है, उसी प्रकार अब जब सत्य पहले ही प्रकट हो चुका है, तो शायद एक छोटा सा प्रयास ही पर्याप्त हो सकता है।
पुरुष सैकड़ों, हजारों, लाखों पुरुषों पर प्रभुत्व प्राप्त कर सकते हैं, जिसके अनुरूप जनमत बना रहे।
अंतरात्मा की आवाज़ को बुलंद किया जा सकता है, और जनमत में इस बदलाव के माध्यम से जीवन की संपूर्ण व्यवस्था को रूपांतरित किया जा सकता है। और यह प्रयास करना हम पर निर्भर करता है।
आइए हम सब ईसाई सत्य को समझने और स्वीकार करने का प्रयास करें, जो विभिन्न रूपों में मौजूद है।
यह हमें चारों ओर से घेरे हुए है और हम पर अपना प्रभाव डालता है; आइए हम झूठ बोलना और यह दिखावा करना बंद कर दें कि हम इस सत्य को नहीं देखते या इसे समझना नहीं चाहते, कम से कम उस अर्थ में जो यह हमसे सबसे अधिक मांगता है; बस आइए हम
जिस सत्य की ओर हमें बुलाया गया है, उसे स्वीकार करें और निडरता से उसका प्रचार करें, और हम तुरंत पाएंगे कि सैकड़ों
हजारों-लाखों पुरुष हमारी ही तरह इस स्थिति में हैं, वे भी सच्चाई को हमारी ही तरह देखते हैं और डरते हैं।
इसे पहचानने वाले हम अकेले हैं, और हमारी तरह ही दूसरे भी इसे पहचानने का इंतजार कर रहे हैं।
यदि मनुष्य पाखंड करना छोड़ दें, तो वे तुरंत समझ जाएंगे कि यह क्रूर सामाजिक व्यवस्था
जो उन्हें बंधन में रखता है, और जिसे उनके सामने स्थिर, आवश्यक और नियतिबद्ध वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
ईश्वर का वह सिद्धांत पहले से ही लड़खड़ा रहा है और केवल पाखंड के झूठ के सहारे टिका हुआ है, जिसका समर्थन हम और हमारे जैसे अन्य लोग करते हैं।
लेकिन अगर ऐसा है, अगर यह सच है कि जीवन की मौजूदा व्यवस्था को तोड़ना हम पर निर्भर करता है, तो क्या
क्या हमें इसे नष्ट करने का अधिकार है, जबकि हमें यह स्पष्ट रूप से पता नहीं है कि हम इसके स्थान पर क्या स्थापित करेंगे? जब वर्तमान व्यवस्था का अंत हो जाएगा तो मानव समाज का क्या होगा?
“जिस दुनिया को हम त्याग रहे हैं, उसकी दीवारों के दूसरी ओर हमें क्या मिलेगा?”
“हम पर भय छा जाएगा – एक शून्य, एक विशाल खालीपन, स्वतंत्रता – हम आगे कैसे बढ़ें?
हमें पता है कि हम कहाँ जा रहे हैं, फिर भी नुकसान का सामना कैसे करें, लाभ की कोई उम्मीद न देखते हुए?... अगर कोलंबस ने ऐसा सोचा होता तो वह कभी लंगर नहीं उठाता। मार्ग जाने बिना समुद्र में निकल पड़ना पागलपन था।
उस सागर पर, जिस पर आज तक कोई नहीं गया था, एक ऐसे देश की ओर यात्रा करना जिसका अस्तित्व संदिग्ध था।

पागलपन में उसने एक नई दुनिया की खोज की। निःसंदेह, यदि दुनिया के लोग एक सुसज्जित हवेली से दूसरी और बेहतर हवेली में आसानी से स्थानांतरित हो सकें, तो यह बहुत आसान हो जाएगा; लेकिन
दुर्भाग्यवश, मानवता के नए निवास को तैयार करने वाला कोई नहीं है। भविष्य तो पहले से भी बदतर है।
महासागर – वहाँ कुछ भी नहीं है – यह वही होगा जो मनुष्य और परिस्थितियाँ इसे बना देंगी।
"यदि आप पुरानी दुनिया से संतुष्ट हैं, तो इसे संरक्षित करने का प्रयास करें; यह बहुत बीमार है और ज्यादा समय तक टिक नहीं सकती।"
और अधिक समय तक। लेकिन यदि आप अपने विश्वासों और अपने जीवन के बीच निरंतर असंगति में जीना सहन नहीं कर सकते,
एक बात सोचकर दूसरी बात करना, मध्ययुगीन सफेदी से पुती कब्रों से बाहर निकलो और अपने भविष्य का सामना करो।
डर। मुझे अच्छी तरह पता है कि यह आसान नहीं है।
अपने आप को उन सभी चीजों से अलग कर लेना कोई छोटी बात नहीं है जिनकी किसी व्यक्ति को आदत हो गई हो।
जन्म, जिसके साथ वह परिपक्व हुआ है। पुरुष भारी बलिदानों के लिए तैयार हैं, लेकिन इसके लिए नहीं।
क्या वे जीवन की उन मांगों को पूरा करने के लिए तैयार हैं जो उनसे अपेक्षित हैं? क्या वे आधुनिक सभ्यता, अपनी जीवनशैली, अपने धर्म और प्रचलित नैतिकता का त्याग करने के लिए तैयार हैं?
"क्या हम उन सभी परिणामों को छोड़ने के लिए तैयार हैं जो हमने इतने प्रयासों से प्राप्त किए हैं, वे परिणाम जो हमने
तीन शताब्दियों से शेखी बघारते आ रहे हैं; अपने जीवन के हर सुख-सुविधा और आकर्षण को त्यागने की, सभ्यता के बुढ़ापे के पतन के बजाय जंगली यौवन को चुनने की, और अपने पूर्वजों द्वारा हमारे लिए बनाए गए महल को ध्वस्त करने की।
केवल एक नए घर की नींव रखने में हाथ बटाने के सुख के लिए, जो निस्संदेह बहुत लंबे समय तक बनेगा।
हमारे जाने के बाद क्या होगा?" (हर्ज़ेन, खंड 5, पृष्ठ 55)
लगभग आधी सदी पहले रूसी लेखक ने यही लिखा था, जिन्होंने दूरदर्शी अंतर्दृष्टि से उस समय स्पष्ट रूप से देखा था, जो आज सबसे उदासीन व्यक्ति भी देखता है: जीवन का अपने पुराने स्वरूप में जारी रहना असंभव है।
आधार, और जीवन के नए स्वरूपों की स्थापना की आवश्यकता।
अब सबसे सरल, सबसे सामान्य दृष्टिकोण से भी यह स्पष्ट है कि ऐसी इमारत की छत के नीचे रहना मूर्खता है जो अपना भार सहन नहीं कर सकती, और हमें इसे छोड़ देना चाहिए। और वास्तव में यह सही है।
आज ईसाई जगत की स्थिति से अधिक दयनीय स्थिति की कल्पना करना कठिन है, जिसमें उसके राष्ट्र भी शामिल हैं।
एक दूसरे के खिलाफ हथियारों से लैस, अपनी सेनाओं को बनाए रखने के लिए लगातार बढ़ते करों के साथ, अमीरों के प्रति श्रमिक वर्ग की नफरत लगातार बढ़ती जा रही है, युद्ध की तलवार हमेशा के लिए मंडरा रही है।
सबके सिर पर मंडरा रहा है, हर पल गिरने को तैयार, देर-सवेर गिरना तय है।

हमारी जीवनशैली की वर्तमान व्यवस्था, या यों कहें कि अव्यवस्था, जिसमें दैनिक रूप से थका देने वाले और अप्राकृतिक परिश्रम, गरीबी आदि का सामना करना पड़ता है, उससे अधिक विनाशकारी क्रांति आम जनता के लिए शायद ही कोई हो सकती है।
नशेबाजी और अय्याशी, साथ ही युद्ध की तमाम भयावहताएँ जो एक पल में सबको निगल जाएंगी

इस वर्ष में सदी की सभी क्रांतियों की तुलना में अधिक लोग मारे गए।
यदि हममें से प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर द्वारा अपेक्षित कर्तव्य का पालन करे तो मानवता का क्या होगा?
क्या हमारे भीतर अंतरात्मा का निराकरण किया गया है? क्या नुकसान नहीं होगा यदि मैं पूरी तरह से एक स्वामी के वश में होकर, उसे ढोऊं?
बाहर, उनके द्वारा स्थापित और निर्देशित कार्यशाला में, वे मुझे जो आदेश देते हैं, भले ही वे मुझे अजीब लगें, क्योंकि मैं गुरु के अंतिम उद्देश्यों को नहीं जानता?
लेकिन जब लोग अपने दायित्वों को पूरा करने में हिचकिचाते हैं, तो उन्हें यह सवाल भी परेशान नहीं करता कि "क्या होगा?"
वे ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध हैं। वे इस प्रश्न से परेशान हैं कि जीवन की उन अभ्यस्त परिस्थितियों के बिना कैसे जिया जाए।
जिसे हम सभ्यता, संस्कृति, कला और विज्ञान कहते हैं। हम स्वयं जीवन के सभी बोझ को महसूस करते हैं; हम यह भी देखते हैं कि यदि जीवन की यह व्यवस्था जारी रही तो यह अनिवार्य रूप से हमारा विनाश करेगी। उसी समय
हम इस संगठन से उत्पन्न होने वाली अपनी जीवन स्थितियों को चाहते हैं - हमारी सभ्यता, संस्कृति, कला और...
विज्ञान – अक्षुण्ण बना रहे। यह ऐसा ही है मानो कोई व्यक्ति एक पुराने घर में रह रहा हो और उसमें ठंड और हर तरह की असुविधाओं से पीड़ित हो, यह जानते हुए भी कि वह घर ढहने की कगार पर है, फिर भी उसके पतन के लिए सहमति दे दे।
इसका पुनर्निर्माण किया जा रहा है, लेकिन केवल इस शर्त पर कि उसे इसे छोड़ने के लिए मजबूर नहीं किया जाएगा - एक ऐसी शर्त जो इसका मतलब है कि इसे पूरी तरह से दोबारा बनाने से इनकार करना।
लेकिन अगर मैं घर छोड़ दूं और कुछ समय के लिए सारी सुख-सुविधाओं का त्याग कर दूं, और नया घर भी वैसा न हो तो क्या होगा?
क्या इसे इस तरह से बनाया गया है, या इसे किसी अलग योजना के अनुसार बनाया गया है कि मुझे इसमें वे सुख-सुविधाएँ नहीं मिलतीं जिनकी मुझे आदत है?
लेकिन चूंकि सामग्री और बिल्डर यहां मौजूद हैं, इसलिए पूरी संभावना है कि नया घर बन जाएगा।
इसके विपरीत, यह पुराने वाले से बेहतर बना हो सकता है। और साथ ही, इस बात की न केवल संभावना है बल्कि निश्चितता भी है कि पुराना घर गिर जाएगा और उसमें रहने वालों को कुचल देगा।
क्या जीवन की पुरानी अभ्यस्त स्थितियों को बरकरार रखा जाता है, या उन्हें समाप्त कर दिया जाता है और पूरी तरह से नई स्थितियां स्थापित की जाती हैं?
बेहतर परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं; किसी भी स्थिति में, इसमें कोई संदेह नहीं है कि हमें जीवन के उन पुराने स्वरूपों को छोड़ना ही पड़ेगा जो असंभव और घातक हो चुके हैं, और भविष्य का सामना करने के लिए आगे बढ़ना होगा। "सभ्यता, कला, विज्ञान,
संस्कृति लुप्त हो जाएगी!" हाँ, लेकिन हम जो कुछ भी जानते हैं, वह सत्य की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ मात्र हैं, और
हमारे सामने जो परिवर्तन है, वह केवल सत्य की निकटता से प्राप्ति और अनुभूति के लिए ही किया जाना चाहिए। तो फिर सत्य की अभिव्यक्तियाँ हमारे द्वारा उसे जानने से कैसे लुप्त हो सकती हैं? ये अभिव्यक्तियाँ
वे भिन्न, उच्चतर, बेहतर हो सकते हैं, लेकिन उनका अस्तित्व समाप्त नहीं होगा। केवल उनमें जो असत्य है, वही नष्ट होगा;
उनमें निहित सभी सत्य और भी अधिक मजबूत और समृद्ध होंगे।
हे मनुष्यों, विचार करो और सुसमाचार में विश्वास रखो, जिसकी शिक्षा में ही तुम्हारा सुख है। यदि तुम विचार नहीं करोगे, तो तुम भी उसी प्रकार नष्ट हो जाओगे जैसे वे लोग नष्ट हुए, जो पिलातुस के हाथों मारे गए या मीनार के नीचे दबकर नष्ट हो गए।

सिलोम; लाखों लोग मारे गए हैं, हत्यारे और मारे गए, फांसी देने वाले और फांसी दिए गए, यातना देने वाले और
सभी को एक समान यातनाएं दी गईं, ठीक उसी तरह जैसे उस मूर्ख व्यक्ति की मृत्यु हुई जिसने अपने अन्न भंडार भर लिए थे और लंबी आयु की तैयारी कर ली थी, और जिस रात उसने अपना जीवन शुरू करने की योजना बनाई थी, उसी रात उसकी मृत्यु हो गई। विचार करो और सुसमाचार में विश्वास रखो।
ईसा मसीह ने अठारह सौ साल पहले यह बात कही थी, और अब विपत्तियों के बाद वे इसे और भी अधिक बलपूर्वक कह रहे हैं।
उनकी भविष्यवाणी सच हो गई है, और हमारे जीवन की निरर्थकता पीड़ा और पागलपन की चरम सीमा तक पहुँच गई है।
आज, सदियों से मूर्तिपूजा के माध्यम से हमारे जीवन को सुरक्षित बनाने के व्यर्थ प्रयासों के बाद,
जीवन के संगठन के संदर्भ में, यह सभी के लिए स्पष्ट होना चाहिए कि उस दिशा में किए गए सभी प्रयास केवल नई चुनौतियों को ही जन्म देते हैं।
ये व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में खतरे पैदा करते हैं, और इसे किसी भी तरह से अधिक सुरक्षित नहीं बनाते हैं।
हम चाहे जो भी नाम धारण करें, चाहे जो भी वर्दी पहनें, चाहे जो भी पुरोहितों का अभिषेक करें
चाहे हमारे पास कितने ही लाखों रुपये हों, चाहे हमारी सुरक्षा के लिए कितने ही पहरेदार तैनात हों, हम खुद को पहले ही चुनौती देते हैं।
चाहे कितने ही पुलिसकर्मी हमारी संपत्ति की रक्षा करें, चाहे हम कितने ही तथाकथित अपराधियों, क्रांतिकारियों और अराजकतावादियों को दंडित करें, चाहे हमने कितने ही कारनामे किए हों, चाहे हमने कितने ही राज्य स्थापित किए हों,
हमने चाहे कितने भी किले और मीनारें खड़ी की हों – बाबेल से लेकर एफिल टावर तक – दो अपरिहार्य बातें हैं।
जीवन की वे परिस्थितियाँ, जिनका हम सभी को सामना करना पड़ता है, जो इसके संपूर्ण अर्थ को नष्ट कर देती हैं: (1) मृत्यु, जो किसी भी क्षण हम में से प्रत्येक पर आ सकती है; और (2) हमारे सभी कार्यों की क्षणभंगुर प्रकृति, जो बहुत जल्द ही समाप्त हो जाते हैं।
और कोई निशान न छोड़ें। चाहे हम कुछ भी करें – कंपनियां स्थापित करें, महल और स्मारक बनाएं, या लिखें।

गीत और कविताएँ – ये सब क्षणभंगुर हैं। जल्द ही ये लुप्त हो जाते हैं, कोई निशान नहीं छोड़ते। और इसलिए, चाहे हम इसे अपने आप से कितना भी छिपा लें, हम इस बात से अनभिज्ञ नहीं हो सकते कि हमारे जीवन का महत्व गीतों और कविताओं में निहित नहीं हो सकता।
हमारा व्यक्तिगत शारीरिक अस्तित्व, जो असाध्य पीड़ा और अपरिहार्य मृत्यु का शिकार है, न ही किसी सामाजिक
संस्था या संगठन। आप जो भी हों, जो भी इन पंक्तियों को पढ़ रहे हैं, अपनी स्थिति और अपने कर्तव्यों के बारे में सोचें - न कि जमींदार, व्यापारी, न्यायाधीश, सम्राट, राष्ट्रपति या सरकार के रूप में अपनी स्थिति के बारे में।
मंत्री, पुजारी या सैनिक, जिसे मनुष्यों द्वारा अस्थायी रूप से आपको सौंपा गया है, न कि काल्पनिक रूप से।
उन पदों द्वारा आप पर लगाए गए कर्तव्यों के अलावा, अनंत काल में आपकी वास्तविक स्थिति एक ऐसे प्राणी के रूप में है जिसे किसी की इच्छा से अनंत काल तक अस्तित्वहीन रहने के बाद अचेतनता से बाहर बुलाया गया है, जहाँ आप
वह अपनी इच्छा से किसी भी क्षण लौट सकता है। अपने कर्तव्यों के बारे में सोचो - न कि भूस्वामी के रूप में अपने कथित कर्तव्यों के बारे में।
एक व्यापारी के रूप में अपने व्यवसाय के लिए, सम्राट के रूप में, सरकारी मंत्री के रूप में, या राज्य के अधिकारी के रूप में आपकी संपत्ति, लेकिन

आपके वास्तविक कर्तव्यों के बारे में - वे कर्तव्य जो जीवन में बुलाए गए और तर्क और प्रेम से संपन्न प्राणी के रूप में आपकी वास्तविक स्थिति से उत्पन्न होते हैं।

क्या आप वही कर रहे हैं जो आपको संसार में भेजने वाले और जिसके पास आप जल्द ही लौटेंगे, उससे अपेक्षित है?

क्या आप वापसी कर रहे हैं? क्या आप वही कर रहे हैं जो वह चाहता है? क्या आप उसकी इच्छा का पालन कर रहे हैं, जब आप जमींदार या निर्माता के रूप में गरीबों को उनकी मेहनत के फल से वंचित करते हैं, श्रमिकों की इस लूट पर अपना जीवन यापन करते हैं, या जब आप न्यायाधीश के रूप में

या फिर राज्यपाल के रूप में, आप पुरुषों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं, उन्हें मृत्युदंड देते हैं, या जब आप सैनिकों के रूप में युद्ध की तैयारी करते हैं, हत्या और लूटपाट?

आप कहेंगे कि दुनिया की बनावट ही ऐसी है कि यह अपरिहार्य है, और आप यह अपनी मर्जी से नहीं करते।

स्वतंत्र इच्छाशक्ति नहीं, बल्कि मजबूरीवश। लेकिन क्या ऐसा हो सकता है कि आपको इतनी तीव्र घृणा हो?

पुरुषों के कष्टों, दुर्व्यवहार और हत्याओं को देखते हुए, आपको प्रेम और सहयोग की इतनी तीव्र आवश्यकता है।

अपने साथियों के साथ यह स्पष्ट रूप से समझें कि सभी की समानता को मान्यता देने और पारस्परिक सेवा के द्वारा ही अधिकतम सुख प्राप्त किया जा सकता है; कि आपका मस्तिष्क और आपका हृदय, आपका विश्वास

वे यही दावा करते हैं, और स्वयं विज्ञान भी यही कहता है, फिर भी इन सबके बावजूद आप इससे विवश हो सकते हैं।

इन सबके सीधे विरोध में कार्य करने के लिए कुछ भ्रमित और जटिल तर्क; कि जमींदार या पूंजीपति के रूप में आप अपना पूरा जीवन जनता के दमन पर आधारित करने के लिए बाध्य हैं; कि सम्राट के रूप में या

राष्ट्रपति, आपको सेनाओं की कमान संभालनी है, अर्थात् हत्यारों का मुखिया और सेनापति बनना है; या फिर जैसे

सरकारी अधिकारी के रूप में, आपको गरीबों से उनका आखिरी पैसा भी छीनकर अमीरों को लाभ पहुंचाने और आपस में बांटने के लिए मजबूर किया जाता है; या न्यायाधीश या जूरी सदस्य के रूप में, आपको गलती करने वाले व्यक्तियों को बुरे दंड देने के लिए मजबूर किया जा सकता है।

उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया और उनकी मृत्यु हो गई क्योंकि उन्हें सत्य प्रकट नहीं किया गया था, या सबसे बढ़कर, क्योंकि यही सब कुछ का आधार है।

यह बुराई है कि आपको जबरन सैनिक बनाया जा सकता है, और आपको अपनी स्वतंत्र इच्छा और मानवीय अधिकारों का त्याग करना पड़ सकता है।

क्या भावनाओं के बल पर कोई व्यक्ति दूसरों के आदेश पर किसी को भी मार सकता है?

ये नहीं हो सकता।

भले ही आपको यह कहा जाए कि यह सब मौजूदा व्यवस्था को बनाए रखने के लिए आवश्यक है, और

कि यह सामाजिक व्यवस्था, जिसमें दरिद्रता, अकाल, कारागार, फांसी, सेना और युद्ध शामिल हैं, समाज के लिए आवश्यक है; कि यदि इस संगठन को नष्ट कर दिया जाए तो और भी बड़ी आपदाएँ आएंगी; बस इतना ही कहा गया है।

इस संगठन से लाभ कमाने वालों की संख्या उन लोगों से आती है जो इससे पीड़ित हैं – और उनकी संख्या दस गुना अधिक है।

कई लोग इसके बिल्कुल विपरीत सोचते और कहते हैं। और अपने मन में आप स्वयं जानते हैं कि यह सच नहीं है, कि मौजूदा संगठन का समय समाप्त हो चुका है, और अनिवार्य रूप से इसका पुनर्गठन किया जाना चाहिए।

नए सिद्धांत, और इसलिए आपको अपनी भावनाओं का त्याग करने की कोई बाध्यता नहीं है।

मानवता को इसका समर्थन करना होगा।

सबसे बढ़कर, भले ही आप यह मानते हों कि यह संगठन आवश्यक है, फिर भी आप अपनी भावनाओं की कीमत पर इसे बनाए रखना अपना कर्तव्य क्यों समझते हैं? आपको इस बीमार व्यक्ति की देखभाल का जिम्मा किसने सौंपा है?

और क्या आप किसी मरणासन्न संगठन की ज़िम्मेदारी ले रहे हैं? न समाज ने, न राज्य ने, न ही किसी और ने; किसी ने भी आपसे यह ज़िम्मेदारी लेने को नहीं कहा है।

आप जो जमींदार, व्यापारी, सम्राट, पुजारी या सैनिक के रूप में अपना पद धारण करते हैं, यह भली-भांति जानते हैं कि आप जीवन की व्यवस्था को बनाए रखने के निस्वार्थ उद्देश्य से उस पद पर आसीन नहीं हैं।

पुरुषों की खुशी के लिए आवश्यक, लेकिन केवल अपने स्वार्थ के लिए, अपनी लोभ को संतुष्ट करने के लिए।

अहंकार, महत्वाकांक्षा, आलस्य या कायरता। यदि आप उस पद की इच्छा नहीं रखते, तो उसे बनाए रखने के लिए आप अपना पूरा प्रयास नहीं करते। क्रूर, विश्वासघाती और नीच कृत्यों को करना बंद करने का प्रयोग करके देखें।

यदि आप अपनी स्थिति बनाए रखने के लिए लगातार ऐसे कार्य करते रहेंगे, तो आप उसे तुरंत खो देंगे।

एक सरकारी अधिकारी के रूप में झूठ बोलना छोड़ देने और फाँसी तथा हिंसा के कृत्यों में भाग लेने से इनकार करने का सरल प्रयोग करके देखें; एक पुजारी के रूप में छल छोड़ देने का; एक सैनिक के रूप में हत्या छोड़ देने का;

चाहे आप भूस्वामी हों या निर्माता, धोखाधड़ी और बल प्रयोग से अपनी संपत्ति की रक्षा करने का प्रयास न करें; और आप ऐसा करेंगे

एक बार आप उस पद को खो दें जिसे आप दिखावा करते हैं कि आप पर थोपा गया है, और जो आपको बोझिल लगता है।

किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध ऐसी स्थिति में नहीं डाला जा सकता जो उसकी अंतरात्मा के विरुद्ध हो।

यदि आप स्वयं को ऐसी स्थिति में पाते हैं, तो इसका कारण यह नहीं है कि यह किसी के लिए भी आवश्यक है, बल्कि केवल इसलिए कि...

क्योंकि आप ऐसा चाहते हैं। और इसलिए यह जानते हुए कि आपकी स्थिति आपके हृदय, आपके मस्तिष्क, आपकी आस्था और यहाँ तक कि उस विज्ञान के भी विपरीत है जिसमें आप विश्वास करते हैं, आप इस पर विचार करने से खुद को रोक नहीं सकते।

इस बात पर सवाल उठाएं कि इसे बनाए रखने में, और सबसे बढ़कर इसे सही ठहराने की कोशिश में, क्या आप वही कर रहे हैं जो आपको करना चाहिए।

यदि आपके पास अपनी गलती को देखने और सुधारने का समय होता, और यदि आप उसे चलाते, तो आपसे गलती होने का जोखिम हो सकता था।

किसी मूल्यवान चीज़ के लिए जोखिम उठाना। लेकिन जब आपको इस बात का पूरा यकीन हो कि आप किसी भी क्षण गायब हो सकते हैं, और न तो आपके लिए और न ही उन लोगों के लिए जिन्हें आप अपने साथ इस गलती में फंसा रहे हैं, कोई संभावना न हो, तो...

गलती को सुधारना, जब आप जानते हैं कि जीवन के बाहरी संगठन में आप जो कुछ भी करें,

अगर सब कुछ उतनी ही जल्दी और निश्चित रूप से गायब हो जाएगा जितनी जल्दी और निश्चित रूप से आप खुद गायब हो जाएंगे, और कोई निशान नहीं छोड़ेगा, तो यह स्पष्ट है कि आपके पास इस तरह की भयानक गलती का जोखिम उठाने का कोई उचित आधार नहीं है।
यह बिल्कुल सरल और स्पष्ट होता यदि आप अपने पाखंड से उस सच्चाई को न छिपाते जो इतनी स्पष्ट है
यह बात हमें स्पष्ट रूप से पता चल चुकी है।
अपने पास जो कुछ भी है, दूसरों के साथ बाँटें, धन का संचय न करें, चोरी न करें, किसी को कष्ट न पहुँचाएँ,
हत्या मत करो, दूसरों के साथ वैसा व्यवहार मत करो जैसा तुम नहीं चाहते कि वे तुम्हारे साथ करें, यह सब अठारह नहीं कहा गया है
सौ नहीं, बल्कि पाँच हज़ार साल पहले, और इस नियम की सत्यता पर कोई संदेह नहीं हो सकता था यदि ऐसा न होता।
पाखंड के कारण। पाखंड के बिना मनुष्य असफल नहीं हो सकता था, यदि वह कानून को व्यवहार में न भी लाए, तो कम से कम उसे पहचानने और यह स्वीकार करने में असफल नहीं हो सकता था कि उसे व्यवहार में न लाना गलत है।
लेकिन आप कहेंगे कि जनहित को भी ध्यान में रखना होगा, और इसी कारण से ऐसा नहीं करना चाहिए।
और इन सिद्धांतों का पालन नहीं करना चाहिए; जनहित के लिए हिंसा और हत्या जैसे कृत्य भी किए जा सकते हैं। तुम कैफास की तरह कहोगे, "एक व्यक्ति का मरना पूरे जनसमुदाय के नाश होने से बेहतर है।"
आप एक, दूसरे और तीसरे व्यक्ति की मृत्युदंड की सजा पर हस्ताक्षर करते हैं; आप इस व्यक्ति के विरुद्ध अपनी बंदूक लोड करते हैं।
जो जनहित के लिए बलिदान देने को तैयार है, उसे आप कैद कर लेते हैं, उसकी संपत्ति छीन लेते हैं। आप कहते हैं कि आप ये क्रूरतापूर्ण कृत्य इसलिए करते हैं क्योंकि आप समाज और राज्य का हिस्सा हैं; कि यह आपका कर्तव्य है।
उनकी सेवा करो, और जमींदार, न्यायाधीश, सम्राट या सैनिक के रूप में उनके कानूनों का पालन करो। लेकिन इसके अलावा
राज्य से संबंधित होने और उस पद द्वारा सृजित कर्तव्यों का पालन करने के साथ-साथ, आप अनंत काल और ईश्वर से भी संबंधित हैं।
जो आप पर कर्तव्य भी डालता है। और जिस प्रकार आपके परिवार और समाज के प्रति आपके कर्तव्य राज्य के प्रति आपके उच्चतर कर्तव्यों के अधीन हैं, उसी प्रकार बाद वाले भी अनिवार्य रूप से आपके कर्तव्यों के अधीन होने चाहिए।
यह आपको शाश्वत जीवन और ईश्वर द्वारा निर्देशित किया गया है। और ठीक वैसे ही जैसे टेलीग्राफ को उखाड़ फेंकना निरर्थक होगा।
जिस प्रकार सार्वजनिक हितों की कीमत पर किसी परिवार या समाज के कल्याण को बढ़ाने के लिए ईंधन के स्रोत उपलब्ध कराना और इस प्रकार उसका कल्याण बढ़ाना व्यर्थ है, उसी प्रकार हिंसा करना, फांसी देना और हत्या करना भी निरर्थक है।
राष्ट्र के हित में ऐसा करना अनुचित है, क्योंकि ऐसा करना मानवता के हितों की कीमत पर होगा।
एक नागरिक के रूप में आपके कर्तव्य ईश्वर के शाश्वत जीवन के सर्वोच्च दायित्वों के अधीन होने चाहिए, और उनके विपरीत नहीं हो सकते।
जैसा कि अठारह शताब्दियों पहले मसीह के शिष्यों ने कहा था, "चाहे वह
परमेश्वर की दृष्टि में यह उचित है कि हम परमेश्वर की अपेक्षा तुम्हारी बात अधिक सुनें, इसका निर्णय तुम स्वयं करो," (प्रेरितों के काम 4:19)
और, "हम
हमें मनुष्यों की अपेक्षा परमेश्वर की आज्ञा माननी चाहिए। (प्रेरितों के काम 5:29)
यह दावा किया जाता है कि दुनिया के एक कोने में कुछ लोगों के लिए स्थापित अस्थिर व्यवस्था को नष्ट होने से बचाने के लिए, आपको हिंसा के ऐसे कृत्य करने चाहिए जो शाश्वत और
ईश्वर और तर्क द्वारा स्थापित अपरिवर्तनीय व्यवस्था। क्या ऐसा संभव हो सकता है?

इसलिए आपको जमींदार, निर्माता, न्यायाधीश, सम्राट, राष्ट्रपति, सरकारी मंत्री, पुजारी या सैनिक के रूप में अपनी स्थिति पर विचार करना चाहिए, जो हिंसा, छल और
हत्या, और इसकी गैरकानूनीता को पहचानना।
मैं यह नहीं कहता कि यदि आप भूस्वामी हैं तो आपको अपनी जमीनें तुरंत गरीबों को दे देनी चाहिए; यदि आप पूंजीपति या निर्माता हैं तो अपना पैसा अपने कामगारों को दे देना चाहिए; या यदि आप ज़ार हैं तो सरकार को
मंत्री, अधिकारी, न्यायाधीश या सेनापति, आप अपने पदों के लाभों को तुरंत त्यागने के लिए बाध्य हैं।

या यदि कोई सैनिक, जिस पर हिंसा की पूरी व्यवस्था आधारित है, अवज्ञा के सभी खतरों के बावजूद तुरंत आज्ञा मानने से इनकार कर दे।
यदि आप ऐसा करते हैं, तो आप सर्वोत्तम संभव कार्य कर रहे होंगे। लेकिन ऐसा हो सकता है, और इसकी संभावना सबसे अधिक है, कि आपमें ऐसा करने की शक्ति नहीं होगी। आपके रिश्तेदार हैं, परिवार है, अधीनस्थ और वरिष्ठ अधिकारी हैं; आप एक ऐसे शक्तिशाली प्रभाव में हैं जिससे आप छुटकारा नहीं पा सकते; लेकिन आप हमेशा सच्चाई को पहचान सकते हैं।
और इसके बारे में झूठ बोलने से इनकार करें। आपको यह घोषित करने की आवश्यकता नहीं है कि आप भूस्वामी, निर्माता बने रहेंगे,
आप व्यापारी, कलाकार या लेखक इसलिए बनें क्योंकि यह मानवता के लिए उपयोगी है; आप शासक, अभियोजक या ज़ार इसलिए न बनें क्योंकि यह आपको पसंद है, क्योंकि आप इसके आदी हैं, बल्कि जनहित के लिए बनें; आप बने रहें
आप सैनिक इसलिए नहीं बनते कि आपको सजा का डर है, बल्कि इसलिए कि आप सेना को समाज के लिए आवश्यक मानते हैं।
स्वयं से और दूसरों से इस प्रकार झूठ बोलने से हमेशा बचें, और आपको ऐसा करना चाहिए; क्योंकि इसका एक ही उद्देश्य है
आपका जीवन झूठ से स्वयं को शुद्ध करने और सत्य को स्वीकार करने में व्यतीत होना चाहिए। आपको बस इतना ही करना है, और आपकी परिस्थिति स्वतः ही बदल जाएगी।
जीवन में केवल एक ही बात है, और वह एक ही बात है, जिसमें आपको स्वतंत्र होने का अधिकार प्राप्त है, बाकी सब कुछ शून्य है।
यह आपके बस से परे है: यानी सत्य को पहचानना और उसका अभिस्वरूप बोलना।
और फिर भी, केवल इस तथ्य से कि अन्य मनुष्य भी आपकी ही तरह गुमराह और दयनीय प्राणी हैं,
यदि आपको सैनिक, ज़ार, ज़मींदार, पूंजीपति, पुजारी या सेनापति बनाया गया है, तो आप ऐसे कृत्यों को अंजाम देने का वचन देते हैं।
हिंसा स्पष्ट रूप से आपकी बुद्धि और आपके हृदय के विरुद्ध है, दूसरों के दुर्भाग्य पर अपना अस्तित्व आधारित करना और सबसे बढ़कर, अपने जीवन के एकमात्र कर्तव्य, सत्य को पहचानना और उसका प्रचार करना, को पूरा करने के बजाय हिंसा का सहारा लेना गलत है।
आप इसे पहचानने से इनकार करते हैं और इसे खुद से और दूसरों से छुपाते हैं।
और आप किन परिस्थितियों में ऐसा कर रहे हैं? आप, जो किसी भी क्षण मर सकते हैं, आप हस्ताक्षर करें।
तुम मृत्युदंड देते हो, युद्ध की घोषणा करते हो, उसमें भाग लेते हो, न्याय करते हो, दंड देते हो, मेहनतकश लोगों को लूटते हो, गरीबों के बीच विलासितापूर्ण जीवन जीते हो, और तुम पर भरोसा रखने वाले कमजोर लोगों को शिक्षा देते हो।
यह अवश्य ही होना चाहिए, कि पुरुषों का कर्तव्य यही है, और फिर भी यह ठीक उसी क्षण घटित हो सकता है जब

आप इस तरह व्यवहार कर रहे हैं कि कोई जीवाणु या बैल आप पर हमला कर दे और आप गिरकर मर जाएं, और दूसरों को, और सबसे बढ़कर खुद को, जो नुकसान आपने पहुंचाया है, उसकी भरपाई करने का मौका हमेशा के लिए खो दें।
वह जीवन जो आपको अनंत काल में केवल एक बार दिया गया है, और आपने वह एकमात्र काम भी पूरा नहीं किया जो आपको करना चाहिए था।
करने के लिए।
चाहे यह हमें कितना भी सामान्य और पुराना लगे, चाहे हम इससे कितने भी भ्रमित क्यों न हों
पाखंड और उससे उत्पन्न सम्मोहक प्रभाव से, इस बात की निश्चितता को कोई नष्ट नहीं कर सकता।
सरल और स्पष्ट सत्य। कोई भी बाहरी परिस्थितियाँ हमारे जीवन की गारंटी नहीं दे सकतीं, जो हमारे साथ जुड़ा हुआ है।
अपरिहार्य पीड़ाएँ जिनका अंत निश्चित रूप से मृत्यु से होता है, और इसलिए जिनका कोई महत्व नहीं हो सकता सिवाय उस शक्ति द्वारा अपेक्षित कार्यों की निरंतर पूर्ति के, जिसने हमें इस स्थान पर स्थापित किया है।
जीवन में एकमात्र निश्चित मार्गदर्शक होता है - तर्कसंगत अंतरात्मा।
इसीलिए वह सत्ता हमसे वह नहीं मांग सकती जो तर्कहीन और असंभव हो: हमारे अस्थायी बाहरी जीवन, समाज के जीवन या राज्य के संगठन की। वह सत्ता हमसे केवल वही मांगती है जो संभव है।
तर्कसंगत, निश्चित और संभव: ईश्वर के राज्य की सेवा करना, अर्थात् उसकी स्थापना में योगदान देना।
सभी जीवित प्राणियों के बीच संभवतम एकता की प्राप्ति - एक ऐसी एकता जो केवल सत्य में ही संभव है; और प्रकट सत्य को पहचानना और उसका प्रतिपादन करना, जो सदा हमारे वश में है।
परन्तु सर्वप्रथम परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता को खोजो, और ये सब वस्तुएँ तुम्हें दी जाएँगी।
तुम।" (मत्ती 6:33)
जीवन का एकमात्र अर्थ ईश्वर के राज्य की स्थापना में योगदान देकर मानवता की सेवा करना है, जो केवल प्रत्येक मनुष्य द्वारा सत्य को पहचानने और स्वीकार करने से ही संभव है।
"परमेश्वर का राज्य दिखावे से नहीं आता; न ही वे कहेंगे, 'यहाँ देखो!' या
"वहाँ देखो! क्योंकि देखो, परमेश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है।" (लूका 17:20-21)

समाप्त